ग्रेट ब्रिटेन का आधुनिक इतिहास

(१६०३–१८१५ ई०)

लेखक

प्रो० राधाकृष्ण शर्मा, एम० ए०

अध्यक्ष, इतिहास विभाग, राजेन्द्र कालेज, छपरा

|||

कि ता ब म ह ल

इ ला हा बा द

प्रकाशक—किताब महल, इलाहाबाद।
मुद्रक—ए० डब्ल्यू० आर० प्रेस, इलाहाबाद।

पूज्य पिता

स्वर्गीय श्री रामाज्ञा शर्मा जी

की

पुण्य एवं पावन स्मृति में

प्राक्कथन

एक सफल और सुयोग्य नागरिक बनने के लिये इतिहास का अध्ययन प्रत्येक व्यक्ति के लिये आवश्यक है। इतिहास से मेरा मतलब केवल घटनाओं, तिथियों तथा राजाओं के जीवन-वृत्तों से ही नहीं है, बल्कि मानव की उन्नति के क्रमिक विकास से है। वास्तव में यह तो 'मानवता में परिवर्त्तन का ही अध्ययन' है।

विश्व के आधुनिक इतिहास में ग्रेट ब्रिटेन का एक विशेष और महत्त्वपूर्ण स्थान है। पाँच बातों के लिये यह बहुत प्रसिद्ध है :—

(१) लोक तन्त्र शासन, (२) वैज्ञानिक उन्नति, (३) औद्योगिक क्रान्ति (४) साम्राज्य विस्तार और (५) औपनिवेशिक स्वराज्य। प्रायः इन पाँचों क्षेत्रों में संसार ने ब्रिटेन से बहुत कुछ सीखा है। विश्व के कई प्रमुख देशों ने इसकी ही राजनीतिक प्रणाली की नकल की है क्योंकि इसकी राजनीतिक प्रणाली हजारों वर्षों की पुरानी है। अमेरिका जैसे सर्वसम्पन्न देश का विधान भी ब्रिटिश विधान की ही पृष्ठभूमि पर आधारित है। विज्ञान तथा उद्योग के क्षेत्रों में भी ग्रेट ब्रिटेन ने विश्व का नेतृत्व और पथप्रदर्शन किया है। इसके साम्राज्य की भुजा की छाया पृथ्वी के अधिकांश भागों पर पड़ी है। इसने दुनिया को 'औपनिवेशिक स्वराज्य' नाम की एक नई चीज प्रदान की है। कहाँ समुद्र में एक छोटा सा द्वीप और कहाँ सारी दुनिया में इसका चमत्कारपूर्ण प्रभाव ? ऐसे द्वीप का इतिहास सचमुच किसी भी व्यक्ति के लिये शिक्षाप्रद, लाभदायी और उपयोगी सिद्ध होगा।

उपर्युक्त अधिकांश बातों का विकास १६०३ से १८१५ ई० के ही बीच में हुआ। विशेषकर ब्रिटेन की आधुनिक शासन प्रणाली की नींव इसी युग में दृढ़ हुई है। अतः इस युग का इतिहास अधिक महत्त्वपूर्ण है।

राष्ट्रभाषा में इस विषय पर सुन्दर पुस्तकों का अभाव सा है। हिन्दी साहित्य के इसी अभाव की पूर्त्ति के हेतु इस ग्रन्थ की रचना हुई है। विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के हित को विशेषरूप से ध्यान में रखा गया है। महत्वपूर्ण विषयों की विशद विवेचना की गई है तथा उन्हें स्पष्ट और रोचक बनाने का समुचित प्रयास किया गया है। सभी आवश्यक बातों की पूर्ण व्याख्या हो जाने के कारण दुरूह स्थल भी सरस हो गये हैं। विद्यार्थियों के लाभार्थ पुस्तक के अन्त में प्रमुख विश्वविद्यालयों में

पूछे जाने वाले सभी प्रश्न दे दिये गये हैं। इसके सिवा इस विषय के विशेषज्ञों के बहुत से उद्धरण (Quotations) भी संकलित हैं जिनसे विद्यार्थियों को विभिन्न परीक्षाओं में पर्याप्त सुविधा होगी।

इस ग्रन्थ के लिखने में मैं कहाँ तक सफल हुआ हूँ, इसका निर्णय तो पाठक वृन्द ही कर सकेंगे। पर यदि इससे विद्यार्थी समाज का कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूंगा। भविष्य में भी यदि कोई विद्वान् इस पुस्तक में किसी तरह की त्रुटि की ओर ध्यान आकृष्ट करेंगे या कोई नया सुझाव उपस्थित करेंगे तो मैं उनका कृतज्ञ हूँगा।

इस पुस्तक की रचना में मुझे वार्नर, मार्टिन और मूर; टी० एस० टाउन; पार्टर और मीयर्स तथा रैन्जेमूर प्रभृति विद्वानों की कृतियों से विशेष सहायता मिली है, अतएव मैं उनका आभारी हूँ।

इस पुस्तक के लिखने में मुझे अपने एक होनहार और प्रिय विद्यार्थी विश्वनाथ कुवँर से पर्याप्त सहायता मिली है। अतः वे हमारे धन्यवाद के विशेष पात्र हैं।

इतिहासविभाग
राजेन्द्र कालेज, छपरा
रविवार, ४ मार्च १९५१ ई०

राधाकृष्ण शर्मा

विषय-सूची

परिशिष्ट सूची

मानचित्र-सूची

अध्याय १

सत्रहवीं सदी के पहले का इंगलैंड

परिचय

५ वीं सदी तक की स्थिति—इंगलैंड यूरोप के पश्चिमी हिस्से में एक छोटा सा द्वीप है। प्राचीन काल में जब भारत, चीन, ग्रीस आदि देश सभ्यता तथा संस्कृति के शिखर पर पहुँचे हुए थे, तब इंगलैंड जंगली और असभ्य देश था। ब्रिटेन में रोमनों के आने के समय तक ऐसी ही स्थिति रही। वहाँ के आदिम निवासियों के विषय में पूरा और ठीक ठीक हाल नहीं मिला है। किन्तु ईसा के लगभग दो हजार वर्ष पूर्व के रहने वाले लोग पुराने पत्थर युग के निवासी कहे जाते हैं। वे लोग गुफाओं में रहते थे, चमड़ा ओढ़ते थे और कच्चा मांस खाकर अपने दिन काटते थे। ईसा से करीब एक हजार वर्ष पूर्व ब्रिटेन में एक नई जाति के लोग आये जो आइबीरियन कहलाते थे। ये लोग पुराने पत्थर युग के लोगों से अधिक सभ्य थे। ये लोग जानवर पालते, खेत जोतते और कपड़ा बुनते थे। अतः इन लोगों के आने के साथ साथ नया पत्थर युग प्रारम्भ हुआ। इसके एक आध सौ वर्ष बाद आर्य जाति के लोगों ने ब्रिटेन पर आक्रमण किया और वहाँ बस भी गये। ये लोग केल्ट कहे जाते थे। ये लोग फ्रांस से दो दलों में आये। पहले दल का नाम गेल था और दूसरे दल का ब्रिटन। केल्ट लोग सभ्य तो थे लेकिन देश की राजनीति में इनकी कोई खास देन नहीं थी। इनमें ब्रिटन लोग अधिक प्रसिद्ध थे और उनकी संख्या भी विशेष थी। अतः उन्हीं के नाम पर द्वीप का नाम ब्रिटेन पड़ा। परन्तु केल्ट लोग भी रोमनों के आक्रमण के शिकार हुए। रोमनों ने पहली सदी में उन्हें परास्त कर ब्रिटेन में अपना शासन स्थापित किया। इनके समय में ब्रिटेन की हर तरह से उन्नति हुई क्योंकि रोमन लोग सभ्यता तथा राजनीति में बहुत आगे बढ़े हुए थे। लेकिन अपने ही देश की रक्षा करने के लिये ४१० ई० में रोमन लोगों को ब्रिटेन से स्वदेश लौट जाना पड़ा।

ट्युटनों का आगमन—ब्रिटेन से रोमनों के हट जाने पर वहाँ के लोगों की हालत बुरी हो गई। विदेशियों का आक्रमण होने लगा और अपनी रक्षा करने में वे असमर्थ हो गये। उन दिनों जर्मनी में आर्यों की एक शाखा—ट्युटन जाति—के लोग बसते थे। इस जाति में जूट, ऐंग्ल और सैक्सन अधिक प्रसिद्ध थे। ब्रिटेन ने अपनी रक्षा के लिये जूटों को बुलाया। जूटों ने उनकी रक्षा विदेशियों से तो की, लेकिन इसके बाद उनकी जगह उन्होंने स्वयं दखल कर लिया। जूटों के बाद ऐंग्ल और सैक्सन भी आकार बस गये। पीछे ये लोग आपस में मिलजुल गये और इंगलिश कहलाने लगे।

तथा ब्रिटेन का नाम इंगलैंड पड़ गया। पहले तो ये लोग बड़े ही असभ्य एवं निर्दयी थे, किन्तु इसाई धर्म स्वीकार करने के बाद से ये लोग सभ्य बन गये और उन्नति करने लगे। आठवीं सदी में इनकी सात रियासतें थीं और अन्त में वेसेक्स घराने के राजा एगबर्ट ने सभी रियासतों को अपने अधिकार में कर एकतंत्र राज्य स्थापित किया।

सरदारों का प्रभाव—इसके बाद कुछ समय तक कैन्यूट के नेतृत्व में डेनों ने अपना राज्य स्थापित किया, किन्तु वह बहुत समय तक न टिक सका और सैक्सनों की प्रधानता पुनः कायम हो गई। लेकिन धीरे धीरे वे लोग भी कमजोर होने लगे थे और सरदारों का प्रभाव क्रमशः बढ़ने लगा था। हैरोल्ड नाम के एक सरदार ने देश में अपनी पूरी धाक जमा ली जिसे देखकर दूसरे सरदार द्वेष करने लगे। अतः पारस्परिक झगड़ा बढ़ने लगा। इससे लाभ उठाकर नौर्मंडी के ड्यूक विलियम ने इंगलैंड पर हमला कर दिया, हैरोल्ड को मार डाला और राजगद्दी पर स्वयं आरूढ़ हो गया।

नर्मन युग (१०६६–११५४ ई०)—अब नार्मन राजाओं का शासन शुरू हुआ (१०६६ ई०)। अब तक इंगलैंड में सामन्तशाही प्रथा प्रचलित हो गई थी और नार्मनों के आने से उसकी प्रगति विशेष रूप से हुई। देश की सारी जमीन पर राजाओं का अधिकार स्थापित हो गया। ऐंग्लो सैक्सन जमाने में केन्द्रीय सरकार कमजोर और स्थानीय सरकार मजबूत थी। लेकिन अब स्थिति बदल गई। केन्द्रीय सरकार मजबूत हो गयी, राजाओं की सहायता करने के लिये एक ग्रेट कौंसिल थी जो राजा के मत को निषेध नहीं कर सकती थी। बड़े बड़े जमीदार (बैरन) तथा पादरी राजा के आधीन थे। चर्च की स्वतंत्रता छीन ली गई थी।

किन्तु १२ वीं सदी के मध्य में गद्दी के लिये स्टीफन और मैटील्डा में झगड़ा शुरू हो गया और दलबन्दी होने लगी। इस गृहयुद्ध के कारण देश में भी भीषण अव्यवस्था फैल गई और बैरनों तथा पादरियों ने अपना प्रभाव स्थापित कर लिया।

प्लेंटेजनेट युग (११५४ १३९९ ई०)—इसी समय देश का शासन सूत्र प्लेंटेजनेट या एंजीविन राजघराने के हाथ में चला आया। इस घराने का राज्य सन् ११५४ से १३६६ ई० तक रहा और इसमें कई योग्य राजा हुए। अब अव्यवस्था समाप्त कर दी गई, देश में सुदृढ़ शासन स्थापित हुआ और न्यायालय तथा कानून का संगठन किया गया। पादरियों तथा बैरनों की शक्ति कमजोर कर दी गई। इसी समय में पार्लियामेंट का भी विकास होने लगा था। राजाओं के अधिकार पर भी प्रतिबन्ध लगाया गया था और कई अवसरों पर राजाओं को बैरनों, चर्च तथा जनता के प्रतिनिधियों के सामने झुकना पड़ा था।

लंकास्टर तथा यार्क घराना (१३९९-१४६१ ई० तथा १४६१ १४८५ ई०)—सन् १३६६ ई० में लंकास्ट्रियन घराने का शासन प्रारम्भ हुआ जो ६२ वर्षों तक

जारी रहा। इस घराने के राजाओं का गद्दी पर अधिकार कमजोर था, अतः ये पार्लियामेंट तथा बैरनों को खुश रख कर ही शासन करने की कोशिश करते थे। इसके फलस्वरूप इस समय में पार्लियामेंट की शक्ति बहुत बढ़ गई। बैरनों का भी प्रभाव बढ़ गया लेकिन उनका प्रभाव राष्ट्रहित में अच्छा नहीं हुआ। वे बड़े ही स्वार्थी बन गये थे और अपने स्वार्थ साधन में राष्ट्रहित की उपेक्षा करते थे। वे अन्याय और अत्याचार कर जनता को सताने लगे। उनके बीच दो विरोधी दल कायम हो गये और दोनों ने दो विरोधी राजघराने का पक्ष लिया। इस प्रकार १४५५ ई० में लंकास्टर तथा यार्क घराने के बीच भीषण गृह युद्ध छिड़ गया जो गुलाबों के युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है। यह युद्ध ३० वर्षों तक चलता रहा। इस बीच १४६१ ई० में यार्क घराने का राज्य स्थापित हो गया। किन्तु १४८५ ई० में बोसवर्थ के मैदान में तीसरे रिचर्ड को हरा कर ट्यूडर घराने का हेनरी गद्दी पर आसीन हुआ।

ट्यूडरों का युग (१४८५-१६०३ ई०) इंगलैंड के इतिहास में ट्यूडरों का शासन बहुत ही महत्त्व पूर्ण है। इस घराने में ५ बादशाह हुए जिनमें प्रथम तीन पुरुष थे और अन्तिम दो स्त्रियाँ थीं। करीब करीब सभी बादशाह बड़े ही योग्य थे। अतः प्रत्येक दिशा में इंगलैंड ने अपूर्व उन्नति की। बैरनों की शक्ति कमजोर कर दी गई और समुचित न्यायालय स्थापित किये गये। देश में सर्वत्र शान्ति तथा व्यवस्था स्थापित हो गई। अतः देश के व्यापार में बड़ी ही वृद्धि हुई। इंगलैंड के महान् शत्रु स्पेन का गर्व चूर चूर कर दिया गया और फ्रांस से मित्रता की गई। अब समुद्र पर भी इंगलैंड की प्रधानता स्थापित हो गई। इस प्रकार व्यापारिक वृद्धि के कारण देश समृद्धिशाली बन गया।

इस समय राजाओं तथा पार्लियामेंट के बीच घनिष्ट सम्बन्ध रहा और पारस्परिक सहयोग से दोनों ही को विशेष लाभ हुए। ट्यूडरों ने जनता को भी शासन सम्बन्धी शिक्षा दी। स्थानीय शासन का भार जनता के हाथों में ही सौंपा गया था।

इतना ही नहीं, सभ्यता तथा संस्कृति के क्षेत्र में भी देश की उन्नति हुई। इस समय बड़े बड़े लेखक तथा कलाकार पैदा हुए थे। सुप्रसिद्ध नाटककार शेक्सपीयर भी इसी समय वर्तमान था।

इस घराने की अन्तिम शासक रानी एलिजाबेथ सन्तान हीन थी। गद्दी का निकटतम उत्तराधिकारी स्कॉटलैंड का छटा जेम्स था। अतः १६०३ ई० में एलिजाबेथ की मृत्यु के बाद छठा जेम्स जेम्स प्रथम के नाम से इंगलैंड की गद्दी पर आरूढ़ हुआ। इस प्रकार अब स्टुअर्ट घराने का शासन इंगलैंड में प्रारम्भ हुआ।

अध्याय २

गृहनीति (१६०३-४९ ई०)

सत्रहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में इंगलैंड की गद्दी पर दो राजा बैठे—जेम्स प्रथम (१६०३-२५) और चार्ल्स प्रथम (१६२५-४९)। यों तो किसी भी देश का इतिहास वहाँ के शासकों या राजाओं के चरित्र से विशेष प्रभावित होता है, लेकिन इंगलैंड के इतिहास के लिये सत्रहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में यह बात खास महत्त्व रखती है। अतः सर्व प्रथम उन दोनों राजाओं के चरित्र पर विचार करना चाहिये।

जेम्स प्रथम का चरित्र—जेम्स स्कॉटलैंड के स्टुअर्ट वंश का आदमी था और वहाँ वह जेम्स छठा के नाम से प्रसिद्ध था। वह ट्यूडर राजाओं के निरंकुश शासन का डाही था और वैसे ही शासन, शानशौकत और अधिकार के लिये लालायित था। इसकी वजह यह थी कि उसे वहाँ के अमीर और प्रेस्बाइटर सरदार बहुत तंग करते थे। सौभाग्य वश उसे इंगलैंड की गद्दी प्राप्त हो गई। अब उसकी खुशी की हद न रही और वह इसे ईश्वरीय दान समझने लगा। उस समय उसकी अवस्था ३७ वर्ष की थी।

गुण—जेम्स ऊँचे दर्जे का एक विद्वान था। वह विद्याव्यसनी था। वह ब्रह्मविद्या, धर्मशास्त्र, इतिहास आदि कई विषयों का अच्छा ज्ञाता था। उसके गद्यलेख और भाषण ओज पूर्ण और सारगर्भित होते थे और वह कविता भी करता था। वैदेशिक नीति में भी वह पारंगत था। उसके विचार विस्तृत थे। कई बातों में अपने समय से वह बहुत आगे था और कट्टरता के युग में वह शान्ति और सहिष्णुता का दूत था। वह पोप के साथ सुलह कर धार्मिक झगड़ों का अन्त करना चाहता था। वह यूरोप का शान्ति संस्थापक बनना चाहता था। वही एक व्यक्ति था जो उस समय इंगलैंड और स्कॉटलैंड की राजनैतिक एकता के असली महत्त्व को समझता था और जिसने सर्वप्रथम अपने को 'ग्रेट ब्रिटेन का राजा' कहा।

वह कोरा विद्या और पुस्तक प्रेमी ही नहीं था, वह व्यायाम प्रेमी भी था। वह एक शिकारी और अच्छा घुड़सवार था। वह हँसी मजाक भी करता था। वह सज्जन, गम्भीर और कर्त्तव्य शील व्यक्ति था। इन सब गुणों की वजह से यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि वह एक सफल और सुयोग्य प्रोफेसर हो सकता था।

दोष—लेकिन ईश्वर की लीला भी बड़ी विचित्र है। जेम्स के दोष उसके गुणों से कहीं अधिक थे। यह बड़े ही दुर्भाग्य की बात थी। शारीरिक दृष्टि से जेम्स का व्यक्तित्व सुन्दर तथा मन मोहक नहीं था। उसका रूप रंग भद्दा था। इसके अलावा स्कॉट होने की वजह से वह अंगरेजों के रस्म रिवाजों और भाषाओं से पूर्ण परिचित नहीं था। वह न किसी परिस्थिति की सूक्ष्मता समझता था और न राजकीय मामलों के लिये योग्य व्यक्ति को ही नियुक्त करता था। इसकी वजह यह थी कि वह बड़ा अहंकारी व्यक्ति था, उसे अपनी विद्वता पर गर्व था और वह अपनी योग्यता में आवश्यकता तथा सीमा से अधिक विश्वास करता था। वह दूसरे के विचारों पर ध्यान नहीं देता था। वह बड़ा वक्ता था और प्रत्येक चीज को परिभाषा रूप देना चाहता था। दिल का तो साफ था पर दिमाग का नहीं; उसके विचार अच्छे होते थे, किन्तु उसकी योजनायें नहीं। वह सुस्त मिज़ाज का आदमी था और ऐशआराम पसन्द करता था। वह हठी स्वभाव का व्यक्ति था। वह अपनी ही बातों को करना चाहता था, लेकिन उनके नतीजों पर विचार नहीं करता था। वह अदूरदर्शी और कल्पना हीन था। उसमें निर्णयात्मक शक्ति और व्यावहारिक चातुरी का अभाव था। वह स्वार्थी और खुशामद पसंद भी था। वह व्यक्तिगत और सार्वजनिक स्वार्थों में भेद समझता था और खुशामदी मन्त्रियों के ऊपर विशेष कृपा रखता था। दरबारी उसे 'इंगलैंड का सोलोमन' कहा करते थे और वह घमंड से फूल उठता था।

इस प्रकार जेम्स के व्यक्तित्व में गुण और दोष दोनों का ही विचित्र समन्वय था। इसी वजह से फ्रांस के राजा हेनरी ने ठीक ही उसे 'इसाई दुनियाँ का सबसे अक्लमंद बेवकूफ' कहा था।

प्रथम चार्ल्स का चरित्र और गुण—जेम्स प्रथम के मरने के बाद उसका लड़का प्रथम चार्ल्स के नाम से गद्दी पर बैठा। उसमें कई मानुषिक गुण थे। वह अपनी सन्तानों और परिवारों के प्रति हार्दिक प्रेम रखता था। उसमें भी सज्जनता भरी हुई थी। वह कला और साहित्य का शौकीन था। खास कर शेक्सपीयर के साहित्य से उसे अधिक प्रेम था। उसकी चित्रशाला यूरोप में प्रसिद्ध थी। उसका चाल-चलन अच्छा था, वह अपने धर्म में दिल से विश्वास करता था और अपने मित्रों और प्रेमियों के ऊपर विशेष कृपा रखता था। वह परिश्रमी था और राजकीय मामलों में काफी दिलचस्पी लेता था। शारीरिक दृष्टि से जेम्स की अपेक्षा उसका व्यक्तित्व भी अधिक आकर्षक था।

दोष—लेकिन इन सभी गुणों के होते हुए भी चार्ल्स त्रुटियों से मुक्त नहीं था। जेम्स की तरह ही उसमें भी कई त्रुटियाँ थीं जिनकी वजह से वह सफल शासक नहीं

हो सका। वह अपने पिता से भी बढ़कर अहंकारी, कट्टर और ज़िद्दी था। वह भी अदूरदर्शी और कल्पना हीन व्यक्ति था। उसका पिता बहुत बड़ा बकवादी था लेकिन चार्ल्स चुप्पा था। वह बहुत कम बोलता था अतः कोई भी उसके दिल-दिमाग की बात ठीक से नहीं समझ सकता था। इसके अलावा वह वादा करने में बड़ा तेज था लेकिन उसे पूरा करने में बड़ा ही मन्द। इसके फलस्वरूप वह अपने मित्रों और समर्थकों का विश्वासपात्र न रहा। वह अव्यावहारिक आदमी था, उसके दिमाग में कितनी योजनायें बनती थीं लेकिन एक को भी कार्य रूप में वह नहीं ला सकता था। वह कमजोर व्यक्तित्व का आदमी था और अपने खुशामदियों के जाल में बहुत जल्द फँस जाता था।

जेम्स के राज्य का महत्त्व—जेम्स प्रथम का राज्यकाल 'प्रारम्भ का समय' कहा जा सकता है। इंगलैंड के इतिहास में सत्रहवीं सदी का महत्त्व तीन बातों में है।

(१) तीनों द्वीपों के संयोग का बीजारोपण—इंगलैंड, स्कॉटलैंड और आयरलैंड के बीच संयोग शुरू हुआ। इंगलैंड और स्कॉटलैंड का संयोग १७०७ ई० में तथा इंगलैंड और आयरलैंड का संयोग १८०० ई० में हुआ। लेकिन इन संयोगों का प्रारम्भ जेम्स प्रथम के ही राज्यकाल में हो गया। आयरलैंड और स्कॉटलैंड दोनों ही विशेष रूप से इंगलैंड के निकट सम्पर्क में आ गये। जेम्स के राज्यारोहण के साथ इंगलैंड और स्कॉटलैंड का मुकुट एक हो गया। जेम्स स्कॉटलैंड की रानी मेरी का ज्येष्ठ पुत्र था। लेकिन मेरी ट्यूडर वंश के सातवें हेनरी की बड़ी पुत्री मारगरेट की पोती थी। इसलिये एलिजाबेथ के मरने पर पार्लियामेंट ने इंगलैंड की गद्दी जेम्स को ही दे दी क्योंकि एलिज़ाबेथ के कोई सन्तान नहीं थी। इस प्रकार इंगलैंड और स्कॉटलैंड जो पहले दुश्मन थे, अब मित्र बन गये। लेकिन अभी दोनों द्वीपों के नियम, कानून, पार्लियामेंट आदि पृथक ही रखे गये।

(२) बादशाह और पार्लियामेंट के बीच झगड़ा—दूसरी विशेषता है—बादशाह और पार्लियामेंट के बीच झगड़ा। सत्रहवीं सदी की यह एक मशहूर चीज समझी जाती है। जेम्स का राज्यकाल एलिज़ाबेथ और प्रथम चार्ल्स के राज्यों के बीच संक्रान्तिकाल (transition) है। बादशाह और पार्लियामेंट के बीच झगड़े के लक्षण जेम्स के समय में ही दीख पड़ने लगे। जेम्स के समय में हवा शुरू हुई और प्रथम चार्ल्स के समय में वह तूफान के रूप में परिणित हो गई। जेम्स ने बीज बोया और चार्ल्स ने फसल काटी। इसीलिए ठीक ही कहा गया है—"यद्यपि

जेम्स के राज्य में क्रान्ति नहीं हुई तथापि राजा और प्रजा के बीच सहानुभूति का बन्धन ढीला हो गया जो प्रायः क्रान्ति का ही सूचक है।"[1]

(३) साम्राज्य और व्यापार की उन्नति—सत्रहवीं सदी की तीसरी विशेषता है—साम्राज्य और व्यापार में उन्नति। यों तो उपनिवेश कायम करने का कार्य एलिज़ाबेथ के ही समय में शुरू हो गया था, लेकिन सफलता प्राप्त नहीं हुई। साम्राज्य और व्यापार की दृढ़ नींव जेम्स के ही समय में पड़ी। उसी के समय में उत्तरी अमेरिका में प्रसिद्ध 'न्यूइंगलैंड' नामक उपनिवेशों का बसना शुरू हुआ। इसी के समय में १६१२ ई० में ईस्ट इंडिया कम्पनी ने हिन्दुस्तान में सूरत में पहले पहल अपनी तिजारती कोठी कायम की।

जेम्स के मंत्री और कृपापात्र

लार्ड सेलिसबरी (१६०३-१२ ई०)—लार्ड सेलिसबरी ६ वर्षों तक जेम्स का मन्त्री रहा। वह एलिज़ाबेथ के प्रधान मन्त्रियों में से एक था। वह चतुर, परिश्रमी और अच्छा प्रबन्धकर्ता था। उसे अर्थशास्त्र का अच्छा ज्ञान था। उसने घरेलू क्षेत्र में अच्छा कार्य किया और वैदेशिक क्षेत्र में शान्ति की नीति अपनाई। यह १६१२ ई० में मर गया।

कार और बकिंघम (१६१२-२५ ई०)—सेलिसबरी के मरने के बाद जेम्स मन्त्रियों के बदले कृपापात्रों को बहाल करने लगा। इसकी वजह यह थी कि वह अपने स्वेच्छाचारी शासन में मन्त्रियों को बाधक समझता था। अतः उसने पहले कार नामक एक स्कॉट को बहाल किया। जेम्स ने उसे पहले रॉचेस्टर के लार्ड और पीछे समरसेट के अर्ल की पदवी दी। लेकिन चार वर्ष के अन्दर ही वह पदच्युत कर दिया गया। लेडी एसेक्स अपने प्रथम पति को तलाक देकर कार से विवाह करना चाहती थी। कार के ओवरबरी नाम के एक मित्र ने इसका विरोध किया था, लेकिन विवाह हो ही गया। एक दिन मौका पाकर लेडी एसेक्स ने भोजन में विष देकर ओवरबरी की हत्या कर डाली। इसी वजह से १६१६ ई० में जेम्स ने कार को बर्खास्त कर कैद में दे दिया।

जेम्स ने कार के बाद जार्ज विलियर्स नाम के एक व्यक्ति को बहाल किया। वह बकिंघम के ड्यूक के नाम से मशहूर है। वह एक कुशल सिपाही और शक्तिशाली लार्ड हाई ऐडमिरल था। उसका व्यक्तित्व भी आकर्षक था। वह बड़े-बड़े लोगों की

[1] गार्डिनर।

संगत करता था। राज्य में उसने अपनी बड़ी धाक जमा ली। पहले पुरस्कार प्रदान करने वाले विभाग से उसका सरोकार था और बहुतों की तरक्की उसी के बदौलत हुई। कुछ समय तक तो शासन की बागडोर उसी के हाथ में रही। बादशाह उसके हाथ के खिलौने बन रहे थे। लेकिन इस तरक्की से वह उतावला और दम्भी बन गया और मन्त्री की हैसियत से वह असफल रहा। वह बहुत ही अयोग्य व्यक्ति था। एक लेखक के शब्दों में 'यदि उसे मन्त्री कहा जाय तो वह उस सदी या किसी दूसरी सदी के अयोग्य मन्त्रियों में गिना जाय।'

फ्रांसिस बेकन (१५६१-१६२६ ई०)—जेम्स के राज्यकाल में बेकन भी एक बड़ा विद्वान व्यक्ति था। वह निबन्ध लेखक, इतिहासकार और दार्शनिक था। वह बहुत योग्य विस्तृत विचार का व्यक्ति था। वह राजतन्त्र का समर्थक था लेकिन जेम्स के राज्य के शुरू में वह तरक्की नहीं कर सका क्योंकि उसका चचेरा भाई लार्ड सेलिसबरी उससे बड़ी डाह रखता था। लेकिन उसके मरते ही १६१३ ई० में वह एटर्नी जेनरल हुआ और १६१८ ई० से १६२१ ई० तक लार्ड चांसलर के पद पर रहा। इस प्रकार उसने अपने समय के कानूनों को बड़ा प्रभावित किया है। उसका विचार था कि जज सिंह के जैसा है, लेकिन राजा की अधीनता में ही। जजों को राजा के स्वार्थ के विरुद्ध नहीं जाना चाहिए। वह राजा और पार्लियामेंट के बीच एकता चाहता था। उसके विचार के मुताबिक पार्लियामेंट का यह कर्त्तव्य था कि वह राजा को प्रजा की हालत से और प्रजा को राजा की नीति से बराबर परिचित रखे।

प्रथम जेम्स के समय के धार्मिक दल और प्रत्येक के साथ जेम्स का सम्बन्ध

मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन में धर्म का महत्त्व कुछ न कुछ अंश में बराबर ही रहता है। यह बात प्रत्येक युग में मनुष्यों के लिये लागू है। लेकिन १७ वीं सदी में इंगलैंड में इसका खास स्थान था। धर्म का प्रभाव लोगों के जीवन तक ही सीमित नहीं था, बल्कि राजनीति भी पूरे तौर से प्रभावित हो रही थी।

उस समय इंगलैंड में कई धार्मिक दल थे लेकिन निम्नलिखित मशहूर हैं :—

(१) कैथोलिक दल—कैथोलिक दल बहुत पुराना दल था। कैथोलिक धर्म का सबसे बड़ा नेता रोम का पोप था। कैथोलिक लोग उसी पोप की प्रधानता में विश्वास रखते थे और वे रोम के चर्च के सिद्धान्तों के समर्थक थे। लेकिन जेम्स के राज्यकाल के बहुत पहले ही से इस धर्म की श्रेष्ठता समाप्त हो गयी थी। इसमें बहुत बुराइयाँ घुस गई थीं। वास्तविकता के बदले कृत्रिमता की मात्रा बढ़ने लगी

थी। इस वजह से इसका विरोध होने लगा था। सर्वप्रथम विरोध की लहर जर्मनी में उठी और धीरे धीरे इंग्लैंड आदि देशों में भी फैल गई।

(२) प्रोटेस्टेंट—दूसरा प्रधान दल प्रोटेस्टेंट दल था। इस दल के लोग प्रोटेस्टेंट इसलिये कहे जाते थे कि उन लोगों ने रोमन चर्च के सिद्धान्तों और पोप की प्रधानता का विरोध (प्रोटेस्ट Protest) किया था। यह दल मुख्यतः दो भागों में बँटा हुआ था—ऐंग्लिकन और प्यूरिटन।

(क) ऐंग्लिकन शाखा—इंगलैंड में इस शाखा का मजबूत स्थान था। इसी शाखा के बहुत से लोग समर्थक थे क्योंकि इंगलैंड का यही स्थापित चर्च था। इस शाखा को आर्मीनियन शाखा भी कहा जाता था क्योंकि आर्मीनियस नाम के एक डच प्रोफेसर इसके बड़े नेता थे। प्रथम चार्ल्स के राज्यकाल में इस शाखा का प्रधान विलियम लॉड था जिसकी असहिष्णुता की वजह से इसकी बड़ी बदनामी हुई। इसके समर्थक पोप के बदले राजा को अपना प्रधान मानते थे और राजा के दैवी अधिकार के सिद्धान्त में भी विश्वास करते थे। ये लोग चर्च का प्रबन्ध विशपों के हाथ में रखना चाहते थे और समझते थे कि विशपों और पुरोहितों को विशेषाधिकार प्राप्त है। ये लोग प्रारब्ध में नहीं बल्कि कर्म में विश्वास रखते थे। धर्मसुधार का समर्थक होते हुए भी पूजापाठ में विस्तृत रस्मरिवाजों को पसन्द करते थे, सामूहिक प्रार्थना को ईश्वरीय कृपा का विशेष साधन समझते थे; और अंगरेजी चर्च के ऐतिहासिक विकास तथा मध्यकालीन चर्च के साथ सम्बन्ध पर पूरा जोर देते थे। इसी वजह से इन लोगों ने कुछ पुराने नियमों को भी स्वीकार कर लिया जैसे ईसा की यादगारी में भोजन के समय घुटने टेकना, विवाह में अंगूठी पहनना, चर्च में बाजा, पूजा के समय पादरियों का खास पहिनावा आदि।

(ख) प्यूरिटन शाखा—ये लोग प्यूरिटन इस लिये कहे जाते थे क्योंकि ये लोग पूजा पाठ के तरीकों को विशेष रूप से शुद्ध (Purify) करना चाहते थे। १७ वीं सदी के शुरू में 'प्यूरिटन' शब्द एक बुरा शब्द समझा जाता था और स्थापित चर्च के विरोधियों के लिये कटाक्ष के रूप में व्यवहार किया जाता था। लेकिन धीरे-धीरे प्यूरिटन शब्द सार्थक अर्थ में प्रचलित हो गया।

प्यूरिटनों के सम्बन्ध में यह एक विचित्र अवफाह फैली हुई थी कि वे सभी नीचे दर्जे के लोग थे और सभी ऐश आराम तथा मनोविनोद के विरोधी थे। लेकिन ऐसी बात बिल्कुल नहीं थी। कुलीन श्रेणी के भी बहुत लोग प्यूरिटन मत के थे। प्यूरिटन सभी मनोविनोद के साधनों के विरोधी नहीं थे। वे सिर्फ हानिकारक साधनों के ही विरोधी थे। इसके अलावा प्यूरिटन शाखा के अन्दर भिन्न-भिन्न विचार रखने वाले लोग भी मौजूद थे। गृहयुद्ध के बाद, अनुमानतः इस सम्प्रदाय में डेढ़ सौ से अधिक

भिन्न विचार वाले लोग थे। लेकिन इनमें से विशेष लोग अभी इंगलैंड के स्थापित चर्च के ही अनुयायी थे। इनका विरोधियों (Nonconfirmists) के साथ दूसरे चार्ल्स के राज्यकाल के बाद ही गहरा सम्बन्ध हुआ। निम्नलिखित दलबन्दियाँ विशेष रूप से मशहूर हैं:—

(क) कुछ प्यूरिटन बिशपों के नर्म शासन के समर्थक थे लेकिन कुछ प्यूरिटन उतना भी सहने के लिये तैयार नहीं थे और वे सदा बिशपों की कड़ी आलोचना करते रहते थे।

(ख) कुछ प्यूरिटन लोग चर्च में बिशपों का शासन तथा राजा की प्रधानता नहीं चाहते थे। ये लोग धार्मिक समूह (Congregation) के सदस्यों के द्वारा चर्च की व्यवस्था चाहते थे। इन लोगों को प्रेस्बिटेरियन कहते हैं। धीरे-धीरे आम लोगों में प्रेस्बिटेरियन मत का विशेष रूप से प्रचार होने लगा।

(ग) कुछ ऐसे प्यूरिटन थे जो राजा, पादरी या सरदार—किसी के द्वारा भी चर्च की व्यवस्था नहीं चाहते थे। इनका विचार था कि प्रत्येक धार्मिक समूह को अपनी व्यवस्था करने के लिये पूरी स्वतन्त्रता रहे। इन लोगों को ब्राउनिस्ट या इन्डिपेंडेंट कहते हैं। ये कैथोलिकों को छोड़ कर औरों भी के लिये सहिष्णुता चाहते थे। धीरे-धीरे सैनिकों में इस मत का विशेष रूप से प्रचार होने लगा।

(घ) उग्रविचार के भी कुछ प्यूरिटन थे जो किसी प्रकार की व्यवस्था के पक्षपाती नहीं थे। ये व्यवस्था के मार्ग में बाधक थे। इन्हें उग्र या स्वच्छन्दी कहते हैं।

इन विभिन्न धार्मिक दलों के बीच एक विचित्र विशेषता यह थी कि हर एक दल अपने लिये सहिष्णुता चाहता था और दूसरे दल को कुचल देना या अपने अधीन कर लेना चाहता था। लेकिन ब्राउनिस्ट दल इस संकीर्णता से परे था।

इन विभिन्नताओं के होते हुए भी कई बातों में इनमें गहरी समताएँ भी थीं।

सभी प्यूरिटन सम्प्रदाय वाले रोमन कैथोलिक धर्म और पोप को घृणा की दृष्टि से देखते थे। उन सबों के विचार में इस धर्म को स्वीकार करना वैसा था मानों देश को गढ़े में ढकेल देना था। वे इसे देश के लिये हानिकारक समझते थे। देश के अन्दर जो भी बुराई होती थी, उसकी जवाबदेही कैथोलिकों के मत्थे मढ़ी जाती थी। सभी प्यूरिटन पोप को ईसा का दुश्मन और पादरियों को दुष्ट, पाखंडी तथा धोखेबाज समझते थे।

इसके अलावा सभी प्यूरिटन कुछ न कुछ अंश में कालविन के समर्थक थे। दूसरे शब्दों में कालविनिस्टों के जैसा वे सभी प्रारब्ध में विश्वास करते थे। वे सभी बिशपों के विशेषाधिकारों में विश्वास नहीं करते थे और बौद्धों के जैसा चर्च के

विस्तृत रस्म रिवाज और कर्मकांड को ना पसन्द करते थे। वे पूजा पाठ का तरीका सीधा सादा चाहते थे। वे आचार और कर्म पर विशेष जोर देते थे। वे सामूहिक प्रार्थना को ईसा की मृत्यु का स्मारक चिन्ह समझते थे, ईश्वर की कृपा का साधन नहीं। बाइबिल और ईश्वर में उन सबों का दृढ़ विश्वास था। वे सभी हानिकारक मनोविनोद के विरोधी थे।

जेम्स और कैथोलिक—कैथोलिकों के साथ एलिज़ाबेथ के समय में बहुत कड़ा व्यवहार किया गया था। उनके ऊपर कई प्रतिबंध लगाए गये थे। जेम्स से कैथोलिकों को बड़ी आशा थी क्यों कि जेम्स की माता मेरी कट्टर कैथोलिक थी। इसके अलावा इंगलैंड की गद्दी पर बैठने के पहले जेम्स सहिष्णुता की नीति की बड़ी प्रशंसा किया करता था। लेकिन कैथोलिकों की आशा पर पानी ही फिर कर रहा। उन्हें कुछ भी लाभ न हुआ। इस पर रंज और हतोत्साह होकर कैथोलिक षड्यन्त्र रचने लगे। इस प्रकार जेम्स के विरुद्ध तीन षड्यन्त्र रचे गये।

बाई प्लॉट—पहला षड्यन्त्र बाई प्लॉट के नाम से मशहूर है। इसका रचयिता वाट्सन नामक एक पादरी था। इसका उद्देश्य यह था कि जेम्स को ग्रीनविच ले जाकर लंदन के टावर पर अधिकार कर लिया जाय और जेम्स को मजबूर कर कैथोलिकों के लिये सुविधायें प्राप्त की जायँ। लेकिन जासूसों के द्वारा षड्यन्त्र के विषय में सरकार को सूचना मिल गई। उसके नेता पकड़ कर जेल में रख दिए गये और उन पर मुकदमा चलने लगा।

मेन प्लॉट—इसी मुकदमे की सुनवाई के बीच में एक दूसरे षड्यन्त्र के विषय में सन्देह हुआ जिसे मेन प्लॉट कहते हैं। इसका रचयिता लार्ड कोमम नाम का एक पादरी समझा जाता है। इसका उद्देश्य यह था कि जेम्स की चचेरी बहन—लेडी अराबेला—को स्पेन की मदद से इंगलैंड की गद्दी दी जाय। अराबेला भी उसी वंश की लड़की थी जिस वंश का जेम्स था, लेकिन उसका जन्म इंगलैंड में ही हुआ था। यही बात अराबेला के पक्ष में विशेष थी। लेकिन यह षड्यन्त्र भी असफल रहा। लेडी अराबेला कैद कर ली गई। लेकिन इस षड्यन्त्र के विषय में विशेष प्रमाण नहीं मिलता है। इसी षड्यन्त्र के सिलसिले में प्रसिद्ध सर वाल्टर रैले का भी नाम आता है।

सर वाल्टर रैले—रैले एलिज़ाबेथ के समय का एक प्रसिद्ध योद्धा, नाविक और विद्वान था। इसी ने तम्बाकू और आलू की फसल को अमेरिका से इंगलैंड में प्रचलित किया। जेम्स उससे नाखुश रहता था क्योंकि वह जेम्स के एक घनिष्ट मित्र एसेक्स का दुश्मन था।

मेनप्लॉट के सिलसिले में उसे अपराधी घोषित कर फाँसी की सजा दी गई। लेकिन जेम्स के हुक्म से वह आजीवन कैद में रख दिया गया। कैद का समय उसने संसार का एक इतिहास लिखने और रसायन सम्बन्धी प्रयोग करने में व्यतीत किया। १३ वर्ष बाद १६१६ ई० में उसे कैद से छुटकारा मिला क्योंकि उसने दक्षिण अमेरिका की ओरीनिको नदी की उपत्यका में जाकर सोने की खान खोजने के लिये प्रतिज्ञा की। लेकिन जेम्स ने एक शर्त यह रखी थी कि वहाँ के स्पेन वासियों से किसी प्रकार झगड़ा न हो। लेकिन दुर्भाग्य वश रैले की यात्रा सफल न रही। बीमारी होने के कारण उसके बहुत से योग्य आदमी मर गये। कुछ आदमियों से स्पेनवासियों के साथ मुठभेड़ भी हो गई। कुछ स्पेन वासी मारे भी गये। अतः सोने की खान का बिना पता लगाये ही रैले को इंगलैंड लौटना पड़ा। लौटने पर स्पेनी राजदूत ने रैले की सजा की माँग पेश की। उसी समय जेम्स स्पेन के साथ वैवाहिक सम्बन्ध कायम करने की बात चीत चला रहा था। अतः स्पेनवासियों तथा स्पेनी सरकार को खुश करने के लिये १६१८ ई० में जेम्स ने रैले को पुराने अपराध में ही फाँसी की सजा दे दी। इससे इंगलैंड में जेम्स की बड़ी बदनामी हुई।

गनपाउडर प्लॉट और कारण—जेम्स के खिलाफ कैथोलिकों के उपर्युक्त दोनों षड्यन्त्र असफल रहे लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से जेम्स के ऊपर कुछ असर अवश्य पड़ा। जेम्स ने कैथोलिकों के लिये सहिष्णुता की नीति अपनाई। उनके विरुद्ध जो कड़े कड़े नियम थे उनके व्यवहार में अब कड़ाई न रह गई, कैथोलिकों से जुर्माना नहीं लिया जाने लगा। इसका नतीजा यह हुआ कि कैथोलिक लोग उत्साहित होकर अपनी पूजा करने लगे और बाहर से इंगलैंड में कैथोलिकों का बड़ा बड़ा झुण्ड पहुँचने लगा। प्रोटेस्टेंट विरोध करने लगे और जेम्स भी घबड़ाने लगा। अतः जेम्स ने फिर से पुराने नियमों को कड़ाई से चालू किया और बाहर से आए हुए कैथोलिकों को इंगलैंड से फिर चले जाने का हुक्म दिया। इस पर बहुत क्रुद्ध होकर कैथोलिकों ने जेम्स के विरुद्ध तीसरा षड्यन्त्र रचा जिसे 'गन पाउडर प्लॉट' कहा जाता है।

इसके दो बड़े नेता थे—राबर्ट कैटेस्बी, जो मिडलैंड के जमींदार घराने का निवासी था और गाई फौक्स जो यार्कशायर घराने का व्यक्ति था। इसका उद्देश्य यह था कि जेम्स को मार कर उसके पुत्र चार्ल्स को गद्दी देकर कैथोलिक सरकार कायम की जाय। इसकी योजना यह थी कि जब राजा और दोनों सभाओं के सदस्य एक साथ सभा भवन में बैठें तो उस सभा भवन को बारूद से उड़ा दिया जाय। १६०५ ई० की ५ नवम्बर को ऐसी ही एक सभा लार्डों के सभा भवन में होने वाली थी।

योजना—षड्यन्त्रकारियों ने समीप के एक घर से लार्ड सभा की दीवाल के नीचे नीचे एक सुरंग खोद डाली। इसके बाद लार्ड सभा के नीचे के हिस्से में एक कोठरी भाड़े पर ली गई और उसमें ३६ पीपों के अन्दर करीब दो टन बारूद भर कर रख दी गई। आग लगाने का काम गाई फोक्स को दिया गया था। लेकिन प्लाट का भण्डा फूट गया। षड्यन्त्रकारियों में से एक का सम्बन्धी लार्ड सभा का सदस्य था। उसे बचाने के ख्याल से उसने अपने सम्बन्धी को षड्यन्त्र की सूचना दे दी। उस व्यक्ति ने उस सूचना को सरकार के पास भेज दिया। सरकार सावधान हो गई और चारों तरफ दूत नियुक्त कर दिये गये। गाई फोक्स पकड़ कर फाँसी पर लटका दिया गया। और भी बहुत से कैथोलिक पकड़े और मारे गये।

फल—इस प्रकार कैथोलिकों का यह तीसरा प्लाट भी बुरी तरह असफल रहा। इस असफलता के फलस्वरूप उनका बड़ा नुकसान हुआ। पुराने नियम फिर से कड़े कर दिये गये। वे कैद और जुर्माने के शिकार होने लगे। उन्हें व्यापार के अलावा किसी दूसरे उद्देश्य से लंदन के दस मील के अन्दर आने के लिये मना कर दिया गया। उनके लिये कई पेशे बन्द कर दिये गये। वे जनता की दृष्टि से गिर गये। जनता उन्हें खूनी और बागी समझ कर उनसे घृणा करने लगी।

लेकिन जेम्स की नीति के कारण इन कड़े नियमों का ठीक से व्यवहार न हो सका। जब वह स्पेन के साथ वैवाहिक सम्बन्ध कायम करने के लिये दृढ़ हो गया तब वह कैथोलिकों के प्रति उदार होने लगा। किन्तु पार्लियामेंट इस उदार नीति को ना पसन्द करती थी और इस प्रकार बादशाह और पार्लियामेंट के बीच झगड़ों की वजहों में से यह भी एक वजह होगई।

जेम्स और प्रोटेस्टेंट तथा ऐंग्लिकन—जेम्स स्थापित चर्च का समर्थक था और इस प्रकार वह ऐंग्लिकन था। धार्मिक तथा राजनीतिक दोनों ही दृष्टि बिन्दुओं से ऐंग्लिकनों और राजा के विचार एक थे। ऐंग्लिकन दल वाले चर्च का प्रबन्ध बिशपों के द्वारा चाहते थे जो राजा को ही अपना सर्वेसर्वा मानते थे। इसके अलावा वे सभी राजा के दैवी हक के सिद्धान्त के भी समर्थक थे। राजा भी अपने और बिशपों के स्वार्थ को एक ही दृष्टि से देखता था। उसका ख्याल था कि 'यदि बिशप नहीं तो राजा भी नहीं।' इस तरह ऐंग्लिकन दल का पक्षपाती होने के कारण जेम्स ने ऐंग्लिकनों के साथ सहनशीलता दिखलाई और उन्हें कई सुविधायें दीं।

प्यूरिटन—एलिज़ाबेथ के समय में कैथोलिकों के ऐसे ही प्यूरिटनों के बहुत बुरे दिन थे। उनके विरुद्ध भी बहुत से कड़े नियम लागू किये गये थे। जेम्स के राजा होने से प्यूरिटन भी बहुत खुश हुये क्योंकि जेम्स स्कॉटलैंड का रहने वाला था जहाँ प्रेस्बिटे-

रियन धर्म प्रचलित था। अतः इन्हें बड़ी आशा हुई कि जेम्स उनके प्रति सहानुभूति रखेगा। लेकिन उनकी आशा पर भी पानी ही फिर गया।

जेम्स के राज्य के शुरू में ही प्यूरिटनों ने एक प्रार्थना पत्र पेश किया। इसे 'मिलेनरी पिटीशन' कहते हैं क्योंकि कुछ लोगों के अनुमान से इस पर एक हजार आदमियों के हस्ताक्षर थे। लेकिन यथार्थ में इतना किसी का भी हस्ताक्षर नहीं था यद्यपि ८०० व्यक्तियों ने इसका समर्थन किया था। इस प्रार्थना पत्र में उनकी मांगें बहुत साधारण थीं। वे अपने विचारों तथा स्वच्छ विचारों के लिये स्वतन्त्रता चाहते थे। उन्होंने बिशपों को चर्च से हटाने की कट्टर पुरानी मांग नहीं पेश की थी। इस बार यदि उनकी मांगें पूरी हो जातीं तो वे सन्तुष्ट हो जाते।

प्रार्थना पत्र पर विचार करने के लिये हैम्पटन कोर्ट में एक सभा बुलाई गई जिसमें दोनों दल के प्रतिनिधि शामिल हुये। एक तरफ तो आर्क बिशप और ९ बिशप तथा दूसरी तरफ चार प्यूरिटन थे। इस सभा का सभापति जेम्स स्वयं हुआ। पहले दिन तो कार्य सुचारु रूप से हुआ लेकिन दूसरे दिन की बैठक में गड़बड़ी हो गई। किसी प्यूरिटन ने 'प्रेसबिटरी' (धर्म सभा) शब्द का व्यवहार कर दिया। जेम्स ने इसे सुन लिया। वह प्रेसबिटेरियन धर्म के संगठन से घृणा करता था क्योंकि वह प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों पर कायम था। लेकिन प्यूरिटनों को इस बात की पूरी जानकारी नहीं थी। प्रेसबिटरी शब्द सुनते ही जेम्स बहुत क्रुद्ध हो गया और उसने कहा "एक स्कोट प्रेस्बिटरी राजतन्त्र से उतना ही सहमत होता है जितना ईश्वर शैतान से।" तब उसने सभी प्यूरिटनों को सभा से निकाल बाहर कर दिया।

फल

(क) प्यूरिटनों का विरोध—इस प्रकार प्यूरिटनों को कोई लाभ न हुआ और निराश होना पड़ा। जेम्स के साथ उनका विरोध बढ़ गया और वे कॉमन्स सभा के विरोधी दल में शामिल होने लगे।

(ख) प्रार्थना पुस्तक में परिवर्तन—प्रार्थना पुस्तक में कुछ परिवर्तन किये गये। लेकिन इनसे भी प्यूरिटन सन्तुष्ट न हुये और उन्हें मानने के लिये तैयार नहीं थे। इस प्रकार तीन सौ पादरी बर्खास्त कर दिये गये और वे स्थापित चर्च से अलग हो गये। उन्हें 'ननकन्फर्मिस्ट' या 'डिसेंटर' कहते हैं।

(ग) विदेश-यात्रा—अब जेम्स का विश्वास 'न बिशप, न राजा' के सिद्धान्त में पक्का हो गया। वह प्यूरिटनों पर अधिक अत्याचार करने लगा। निराश और दुखी होकर बहुत से प्यूरिटन इंगलैंड छोड़ कर हालैंड चले गये। उनमें से कितने प्यूरिटन फिर इंगलैंड से बहुत से प्यूरिटनों को साथ लेकर १६२० ई० में 'मेफ्लावर'

नाम के जहाज से अमेरिका चले गये। इन प्यूरिटनों को पिलग्रिम फादर्स या धर्म यात्री कहते हैं।

(घ) बाइबल का अनुवाद—नये ढंग से बाइबिल का अनुवाद करने के लिये प्यूरिटनों को आज्ञा मिली। यह अनुवाद 'अथराइज्ड वरशन' (authorised version) के नाम से १६११ ई० में प्रकाशित हुआ। इस अनुवाद को बहुत लोकप्रियता प्राप्त हुई। इससे अंगरेजी भाषा और जनता के जीवन दोनों ही बहुत प्रभावित हुये। यह सीधी साधी भाषा में लिखा गया था और जनता इसे बड़ी दिलचस्पी के साथ पढ़ने लगी और इससे लोंगों की विचार शक्ति का विकास होने लगा। इस प्रकार प्यूरिटनों के लिये यह बड़ा लाभदायक साबित हुआ क्योंकि इससे उनके विचारों का पूरा प्रचार होने लगा।

अध्याय ३

राजा और पार्लियामेंट (१६०३-२६ ई०)

राजा और पार्लियामेंट के बीच संघर्ष—१७ वीं सदी की एक मुख्य घटना यह है कि राजा और पार्लियामेंट के बीच बराबर संघर्ष होता रहा। यह संघर्ष स्टुअर्ट वंश के प्रथम बादशाह जेम्स प्रथम के राज्य काल में शुरू हुआ और उसके लड़के चार्ल्स के राज्य द्वितीय काल में अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया। १६८८ ई० की महान् क्रांति के साथ इस संघर्ष का अन्त हुआ।

(१) **मूल कारण ट्यूडरों का सुशासन**—ट्यूडरों का राज्यकाल संकटों और कठिनाइयों से भरा हुआ था। लंकास्ट्रियन जमाने में बैरनों का जोर बाला हो गया था, वे स्वार्थी बन गये थे और खूब मनमाना करते थे। देश में अराजकता फैली हुई थी। धन और जन दोनों ही असुरक्षित हो गये थे। गुलाबों के युद्ध से जनता को बड़ी तकलीफें हुई थीं।

लेकिन ट्यूडरों के राज्यकाल में बैरनों की शक्ति जाती रही। गुलाबों के युद्ध में ही बहुत से बैरन मारे गये थे। सातवें हेनरी ने बचे हुए बैरनों की ताकत को तोड़ दिया। मठों की जमीन जायदाद पर जो नये बैरन कायम किये गये वे राजा पर ही निर्भर रहे। इस प्रकार देश में शान्ति और सुव्यवस्था कायम हो गई और जब स्टुअर्ट वंश का शासन शुरू हुआ तब स्वेच्छाचारी शासन की कोई जरूरत नहीं रह गई। पार्लियामेंट अपने पुराने हक और अधिकार के लिये उतावला होने लगी।

(२) **गद्दी और धर्म के लिये आन्तरिक संघर्ष का अभाव**—ट्यूडरों के जमाने में बैरनों के अत्याचार के अलावा गद्दी और धर्म के लिये गृह युद्ध का भय था। गद्दी के लिये कई अधिकारी उपस्थित थे। सातवें हेनरी, मेरी तथा एलिज़ाबेथ—इन सबों को उनका सामना करना पड़ा था।

धार्मिक क्षेत्र में कैथोलिकों और प्रोटेस्टेंटों के बीच बड़ा मतभेद था। दोनों एक दूसरे के कट्टर दुश्मन हो रहे थे। लेकिन जेम्स के गद्दी पर बैठने के साथ ही गृह-युद्ध का भय जाता रहा। जेम्स ट्यूडर और स्टुअर्ट दोनों ही वंशों का प्रतिनिधि था। अब गद्दी के लिये कोई प्रमुख हकदार नहीं था। एलिज़ाबेथ धार्मिक समस्या भी हल कर चुकी थी।

(३) राष्ट्रीय चरित्र का विकास और मध्यम वर्ग का अभ्युदय—१६ वीं सदी में अंगरेजों के राष्ट्रीय चरित्र का विकास हुआ। दूसरे शब्दों में उसी सदी में आधुनिक अंगरेज जाति का जन्म हुआ। स्पेनी खतरे के कारण राष्ट्रीय भावना जाग्रत हो उठी। अंगरेजों की दृष्टि में स्पेन के साथ युद्ध धार्मिक युद्ध नहीं था बल्कि वह जीवन मरण का प्रश्न था। अतः अंगरेजों ने अपने छोटे मोटे झगड़ों और मतभेदों को भूल कर स्पेन के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा पेश किया। उन्हें जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में—व्यापार, समुद्र-यात्रा, कला, साहित्य—अपनी अनुपम शक्ति का पूरा परिचय मिलने लगा। सुधार और पुनरुत्थान की लहर के कारण अब उन्हें संरक्षणता की जरूरत न रही। अब वे सोचने विचारने, तर्क वितर्क करने की शक्ति अपने मन में महसूस करने लगे। अब वे विशेष रूप से आत्म-विश्वासी और स्वावलम्बी बन गए। इसका फल यह हुआ कि अंगरेज लोग अब अपने देश के शासन का उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिये अपने को योग्य समझने लगे और इसकी प्राप्ति के लिये कोशिश भी करने लगे।

१६ वीं सदी की एक खास विशेषता तो मध्यम वर्ग का अभ्युदय है। इस वर्ग में ज़मींदार, व्यापारी और वकील लोग थे। ये लोग शासन में हाथ बँटाना चाहते थे। ट्यूडरों ने इन्हें हुकूमत के क्षेत्र में शिक्षित और अनुभवी बना दिया था। यद्यपि ये लोग ऊँचे दर्जे के विद्वान् और अनुभवी नहीं थे, फिर भी ये सभी चरित्रवान् और ईमानदार थे। ये स्वतन्त्र मिजाज के और धैर्यशील होते हुए नम्र और दृढ़ थे। इसी वर्ग से कॉमन्स सभा के अधिक सदस्य आते थे। १७ वीं सदी के संघर्ष में इस वर्ग के लोगों का विशेष हाथ रहा। वाक् पटुता में तो वकीलों ने सबों को मात किया। बेकन के शब्दों में वे सभा के स्वर थे और दूसरे सदस्य व्यंजन मात्र थे। लेकिन युद्ध-क्षेत्र में जब हथियारों से लड़ाई होती थी तो ग्राम के भद्र पुरुष ही काम आते थे।

(४) बाहरी खतरे का अभाव—यह कहा जाता है कि अंगरेज लोग एक समय में एक ही विषय पर सोचते हैं या कोई कार्य करते हैं। बात ठीक ही है। ट्यूडरों के राज्यकाल के अधिकांश भाग में इंगलैंड के ऊपर बाहरी खतरे का भूत सवार था। यह खतरा खास कर स्पेन और स्कॉटलैंड की तरफ से उपस्थित था। अंगरेज लोग रात दिन इन खतरों से बचने के विषय पर ही सोचा करते थे। स्वतन्त्रता और अधिकार के विषय पर सोचने के लिए उपयुक्त समय नहीं था।

लेकिन १६०३ ई० तक परिस्थिति बदल गई। ये सभी खतरे दूर हो गये। रानी एलिज़ाबेथ के बुद्धिमतापूर्ण और सक्रिय शासन के कारण देश में शान्ति और रक्षा का राज्य कायम हो सका। उसने स्पेन और स्कॉटलैंड दोनों को कमजोर कर दिया।

१५८८ ई० में आर्मेडा की हार से स्पेन के राजा फिलिप के हौसले ही नष्ट नहीं हुए बल्कि ट्यूडरों के स्वेच्छाचारी शासन का भी नाश हुआ। अब निरंकुशता की आवश्यकता ही नहीं रह गई। अब अपने देश के आन्तरिक मामलों पर विचार करने के लिये अंगरेजों को पूर्ण अवकाश मिल गया।

तात्कालिक कारण

धार्मिक—(१) युद्धकारी प्यूरिटन सम्प्रदाय—कामन्स सभा में प्यूरिटन मात्रा की प्रधानता थी। हैम्पटन कोर्ट की सभा भंग होने के बाद प्यूरिटन विशेष रूप से जेम्स के विरुद्ध होते गये। उनका रुख आक्रमणात्मक होता गया। पार्लियामेंट ने उनके साथ सहानुभूति दिखलाई और उनकी स्वार्थसिद्धि में अपने स्वार्थ को भी देखने लगी। इस पर पूर्वकालीन स्टुअर्ट राजा प्रथम जेम्स और प्रथम चार्ल्स ऐंग्लिकन दल के निकट आते गये और उनकी सहनुभूति उस दल के साथ दिनों दिन दृढ़ होती गई।

इसके अलावा पार्लियामेंट कैथोलिकों की विरोधी थी और राजा उनके पक्षपाती थे।

(२) वैदेशिक नीति—धार्मिक मतभेद का वैदेशिक नीति पर भी गहरा असर पड़ा। इंगलैंड की जनता प्रोटेस्टेंट धर्म की समर्थक होने की वजह से चाहती थी कि राजा भी उसी धर्म को माने और सभी जगह उसी का पक्ष भी ले।

स्पेन कैथोलिक प्रधान देश था और वह इंगलैंड का पुराना दुश्मन भी था। जनमत स्पेन के साथ युद्ध की नीति चाहता था, लेकिन स्टुअर्ट बादशाह ने जनमत की परवाह नहीं की। युद्ध तो दूर रहा, जेम्स स्पेन के साथ वैवाहिक सम्बन्ध कायम करना चाहता था और उसे खुश करने के लिये ही रैले जैसे प्रसिद्ध योद्धा को उसने फाँसी भी दे दी। प्रथम चार्ल्स ने फ्रांसीसी कैथोलिक महिला से अपना विवाह करही लिया। लेकिन पार्लियामेंट राजाओं की इस नीति से बिल्कुल असन्तुष्ट थी।

आर्थिक—(३) धन का अभाव—पूर्वकाली स्टुअर्टों को धन का सदा अभाव रहता था। इसके कई कारण थे। (क) राजा खर्चीले स्वभाव का था। वह अनावश्यक बातों में भी बहुत खर्च करता था। (ख) इस समय अमेरिका में सोने चाँदी की बहुत खानों का पता लगाया गया था। स्पेन के जरिये सोना चाँदी यूरोप में प्रचुर मात्रा में पहुँचता था। इससे मुद्रा की कीमत कम हो गई। (ग) सरकार का कार्य दिनों दिन बढ़ता जा रहा था। (घ) लेकिन शासन के खर्च के लिये आमदनी के पुराने निश्चित साधन मौजूद रहे। इनमें कोई परिवर्त्तन नहीं हुआ।

अतः राजाओं को विकट आर्थिक कठिनाई का सामना करना पड़ा। शासन

कार्य करना मुश्किल होने लगा। युद्ध काल की बात कौन कहे, शान्ति काल में भी प्रजा पर नये टैक्स लगाने की आवश्यकता आ पड़ी। लेकिन टैक्स लगाना राजाओं के अधिकार के बाहर की बात थी। यह तो पार्लियामेंट के अधिकार की चीज थी। अतः राजाओं के सामने दो ही रास्ते खुले हुए थे। पार्लियामेंट को बार-बार बुलाना या गैरकानूनी टैक्स वसूल करना। पहली हालत में पार्लियामेंट के सदस्यों को सम्मिलित होकर विचार विनिमय करने का सुअवसर प्राप्त होता था। राजा की आर्थिक कठिनाई से लाभ उठा कर वे अपनी शिकायतों को दूर करने के लिये राजा पर दबाव डालते थे। लेकिन राजा उनकी माँगों पर ध्यान नहीं देता था जिसके फलस्वरूप पार्लियामेंट भी धन नहीं देती थी।

दूसरी हालत में पार्लियामेंट और साथ ही सम्पूर्ण राष्ट्र राजा के तरीकों का घोर विरोध करते थे।

इस प्रकार किसी भी रास्ते पर चलना राजा के लिये लाभदायक नहीं था और दोनों ही हालतों में राजा और पार्लियामेंट के बीच मतभेद बढ़ता जाता था और संघर्ष की सम्भावना दृढ़ होती थी।

राजनीतिक—(४) (क) पार्लियामेंट के विशेषाधिकारों का प्रश्न— पार्लियामेंट को कुछ विशेषाधिकार पहले से प्राप्त थे, जैसे भाषण देने, चुनाव सम्बन्धी झगड़ों का फैसला करने और कैद न होने की स्वतन्त्रता। जेम्स का कहना था कि राजाओं के ही कारण पार्लियामेंट को ये विशेषाधिकार प्राप्त हैं। वे राजाओं की कृपा और आज्ञा के ही सूचक हैं। अतः राजा अपनी इच्छानुसार उन्हें वापस ले सकता है।

लेकिन पार्लियामेंट का ख्याल ठीक इसका उल्टा था। उसका कहना था कि ये सभी विशेषाधिकार जनता के पुराने और जन्मसिद्ध अधिकार हैं। कोई भी ताकत इन्हें वापस नहीं ले सकती।

(ख) राजा के दैवी अधिकार का प्रश्न—राजा स्वेच्छाचारिता में विश्वास करता था। वह राजतन्त्र के दैवी अधिकार के सिद्धान्त का कट्टर समर्थक था। वह इस सिद्धान्त की पुष्टि इतिहास और धर्मशास्त्र में पाता था। उसका यह तर्क था कि पैतृक राजतन्त्र ईश्वरीय संस्था है। किसी का राजा होना ईश्वर की कृपा है। आम जनता का इसमें कोई हाथ नहीं है। अतः राजा अपने अच्छे या बुरे कार्यों के लिये ईश्वर के प्रति ही उत्तरदायी है, जनता के प्रति किसी अंश में नहीं। जनता तो राजा की नौकर है। राजा उसे जैसे चाहे रख सकता है। शाही आफिस व्यक्तिगत चीज है, सार्वजनिक नहीं।

लेकिन पार्लियामेंट का ख्याल इसके विपरीत था। उसकी दृष्टि में शाही आफिस

सार्वजनिक चीज है, न कि व्यक्तिगत। आम जनता सुविधा के लिये किसी को राजा बनाती है। अतः राजा अपने अच्छे या बुरे कार्यों के लिये जनता के प्रति ही उत्तरदायी है। असन्तोषजनक कार्य होने पर जनता राजा को पदच्युत कर दूसरे को चुन सकती है।

पार्लियामेंट अपने तर्क की पुष्टि मैग्ना कार्टा में पाती थी।

(ग) राजा के विशेषाधिकार का प्रश्न (Prerogative)—राजा के दल का यह तर्क था कि राजा में सुरक्षित शक्ति मौजूद है जिसके द्वारा वह मनमाना जो चाहे कर सकता है और राज्य के स्वार्थ के लिये साधारण कानूनों को भी ठुकरा सकता है। राजा कानून की परिधि से बाहर है। उसका कार्य कानून के दायरे में सीमित नहीं हो सकता।

पार्लियामेंट के दल का विपरीत तर्क था। इस दल को राजा की ऐसी शक्ति में विश्वास नहीं था। इस दल के ख्याल में राजा के अधिकार भी कानून के द्वारा ही निर्धारित किये गये थे। एक साधारण व्यक्ति के जैसा राजा भी कानून की सीमा के भीतर था। देश का कानून सर्वोपरि था और उसके लिये कोई भी व्यक्ति अपवाद स्वरूप नहीं हो सकता था।

व्यक्तिगत (४) राजाओं के चरित्र—राजा और पार्लियामेंट के बीच संघर्ष होने के ये सभी कारण मौजूद थे। पूर्व कालीन स्टुअर्टों के चरित्र ने अग्नि का काम किया। संघर्ष के चिन्ह तो एलिज़ाबेथ के शासन के अन्तिम भाग में ही दीख पड़ने लगे थे लेकिन उसकी बुद्धिमत्ता के कारण संघर्ष प्रकट न हुआ। ट्यूडर बादशाह अधिकार की वास्तविकता से ही सन्तुष्ट थे, वे सिद्धान्त के पीछे पड़ कर बहस नहीं किया करते थे। लेकिन पूर्वकालीन स्टुअर्ट राजा विचार शून्य और अदूरदर्शी थे। वे समय की गति से अनभिज्ञ थे। वे शक्ति की वास्तविकता से ही सन्तुष्ट नहीं थे, बल्कि वे राज्य की प्रत्येक शक्ति के अधिकार की व्याख्या चाहते थे। जेम्स बड़ा बका और विद्वान था और वह राजकीय चीज को परिभाषा का रूप देना चाहता था। इस पर दो विरोधी दलों के बीच गरम बहस होती थी, जिसके फलस्वरूप कटुता बढ़ती जाती थी। इसलिये किसी लेखक ने कहा है कि राजा और प्रजा के अधिकार के सामञ्जस्य के लिये सर्वोत्तम तरीका मौनावलम्बन ही है।

जेम्स और पार्लियामेंट—विकट प्रश्न—जेम्स के राज्य के प्रारम्भ में ही कॉमन्स सभा ने यह घोषणा कर दी कि एलिजाबेथ के राज्य काल में जिन कार्यों की उपेक्षा की गई है, अब उन पर ध्यान देने का उपयुक्त अवसर आ गया है। कुछ बड़े ही विकट प्रश्न उपस्थित हुए। क्या राजा पैतृक दैवी अधिकार के द्वारा या पार्लियामेंट के

कानून के द्वारा शासन करता है? राजा देश के साधारण कानून के अधीन है या उससे मुक्त है? राजसत्ता की स्थिति सिर्फ राजा में या राजा और पार्लियामेंट दोनों में मौजूद है? इन्हीं प्रश्नों के उत्तर पर दूसरे व्यावहारिक प्रश्नों के उत्तर भी निर्भर करते थे—जैसे पार्लियामेंट की बिना राय के राजा का कर वसूल करने का अधिकार या बिना अभियोग के किसी को कैद में रखने का अधिकार; कामों के उत्तरदायित्व मंत्रियों के ऊपर कायम करने के लिये पार्लियामेंट का अधिकार।

उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर सहज नहीं थे। दोनों दलों के बीच मतभेद बढ़ता गया और अन्तिम निर्णय के लिये तलवार की ही शरण लेनी पड़ी।

पहली पार्लियामेंट (१६०४–११ ई०) चुनाव का प्रश्न और गौडविन का मामला—जेम्स की पहली पार्लियामेंट का अधिवेशन १६०४ ई० में शुरू हुआ और यह पार्लियामेंट १६११ ई० तक जारी रही। सर्व प्रथम चुनाव के प्रश्न को लेकर झगड़ा हुआ। बकिंघम शायर के लोगों ने गौडविन नामक एक व्यक्ति को पार्लियामेंट के लिये अपना प्रतिनिधि चुना। लेकिन राजद्रोही होने के कारण गौडविन कानून के दायरे के बाहर कर दिया गया था। जेम्स ने ऐसे व्यक्ति के चुनाव के लिये मनाही कर दी थी। अतः गौडविन का चुनाव गैर कानूनी घोषित कर दिया गया। लेकिन पार्लियामेंट ने इसका विरोध किया। उसका कहना था कि चुनाव सम्बन्धी झगड़ों का फैसला करना पार्लियामेंट का ही अधिकार है। जेम्स ने उत्तर दिया कि उस अधिकार का स्रोत राजा है। अतः राजा के स्वार्थ के विरुद्ध, उस अधिकार का व्यवहार नहीं होना चाहिये। ऐसा होने पर राजा उन्हें रद्द कर सकता है। इस पर पार्लियामेंट ने एक क्षमा पत्र (Form of Apology) पेश कर राजा को उत्तर दिया कि उसके अधिकार स्थापित हो चुके हैं जिन्हें कोई शक्ति रद्द नहीं कर सकती। बहुत वाद विवाद के बाद जेम्स को पार्लियामेंट के विचार से सहमत होना पड़ा और पार्लियामेंट विजयी हुई। लेकिन तो भी यह घटना होने वाले अमंगल की सूचना मात्र थी।

स्कॉटलैंड के प्रति नीति का प्रश्न—जेम्स इंगलैण्ड और स्कॉटलैंड के बीच पूर्ण एकता कायम करना चाहता था। अतः उसका विचार था कि दोनों देशों के बीच व्यापारिक स्वतन्त्रता कायम हो और दोनों देशों के बाशिन्दों को समान अधिकार प्राप्त हों। लेकिन स्कॉटलैंड इंगलैंड का पुराना दुश्मन था जिसे भूलना आसान काम न था। ब्रिटिश पार्लियामेंट अभी भी स्कॉटलैंड को शंका की दृष्टि से देखती थी। अतः पार्लियामेंट इतनी दूर नहीं जाना चाहती थी और उसने जेम्स की माँगों को अस्वीकार कर दिया जिससे जेम्स असन्तुष्ट हो गया।

टैक्स का प्रश्न और बेट का मामला—जेम्स ने पार्लियामेंट के टैक्स लगाने के अधिकार पर भी हस्तक्षेप किया। राजा के साधारण और निश्चित राज्य कर के दो साधन थे। एक साधन तो था—शाही जमीन और सामन्तशाही कर। दूसरा साधन था—कुछ आयातों (Imports) पर कर जो 'टनेज' और 'पाउन्डेज' के नाम से प्रसिद्ध था। इस कर का यह नाम इसलिए था कि यह एक टन शराब पर और एक पौंड तिजारती चीज पर वसूल किया जाता था। दोनों साधनों से क्रमशः ढाई लाख और डेढ़ लाख पौंड प्राप्त होता था। गद्दी पर बैठने के एकाध वर्ष बाद जेम्स बहुत सी चीजों पर निश्चित से अधिक कर लगाने लगा। इस अधिक कर को 'इम्पोजीशन' (Imposition) कहा जाता है। बेट नाम के एक व्यापारी ने किशमिश पर लगे हुए इम्पोजीशन का घोर विरोध किया। बेट पर मुकदमा चलाया गया लेकिन जजों का निर्णय जेम्स के पक्ष में ही हुआ। निर्णय यह था कि ऐसा कर लगाना उचित और कानूनी है क्योंकि राजा ही बन्दरगाह का मालिक है जिसके जरिये माल पास होता है और देश के व्यापार का प्रबन्ध राजा अपनी बुद्धि के मुताबिक करता है। इससे उत्साहित होकर राजा ने दरों की एक किताब प्रकाशित की (१६०८ ई०) जिसके अनुसार कितनी ही दूसरी चीजों पर नये टैक्स लगाये गये। राज्य कर बढ़ने लगा। पार्लियामेंट ने विरोध किया लेकिन वह जजों के निर्णय को तो नहीं पलट सकती थी। फिर भी राजा का काम चलने वाला नहीं था। अतः राजा की तरफ से एक महान् नियम पत्र (Great Contract) पेश किया गया। इसके अनुसार यदि राजा के सभी कर्ज चुका दिये जाते और उसकी वार्षिक आमदनी में दो लाख पौंड की वृद्धि हो जाती तो वह सामन्तशाही करों को छोड़ देता और बहुत से नये टैक्सों को हटा लेता। यह बात १६१० ई० में हो रही थी। लेकिन अभी नियम पत्र पर विचार हो ही रहा था कि राजा और पार्लियामेंट के बीच कुछ दूसरी बातों को लेकर झगड़ा बढ़ चला और राजा ने पार्लियामेंट को १६११ ई० में भंग कर दिया।

दूसरी पार्लियामेंट (१६१४ ई०)—नये टैक्स हटाने की मांग—तीन वर्षों तक तो जेम्स ने पार्लियामेंट नहीं बुलाई, लेकिन धन के अभाव से मजबूर होकर सन् १६१४ ई० में फिर पार्लियामेंट बुलानी ही पड़ी। पिछली पार्लियामेंट के कुछ सदस्यों के साथ जेम्स ने सन्धि की। उन सदस्यों ने जेम्स को पार्लियामेंट से रुपया दिलाने का वादा किया, यदि जेम्स उन्हें कुछ सुविधाएँ देता। उन लोगों को ठेकेदार (Undertakers) कहते हैं। लेकिन बात दूसरी ही हुई। नई पार्लियामेंट इन ठेकेदारों को धोखेबाज समझने लगी और उसने यह घोषणा की कि जब तक नये टैक्स नहीं हटाये जायँगे तब तक राजा को रुपया नहीं मिलेगा। राजा ने रुष्ट होकर

इसे भी भंग कर दिया। यह पार्लियामेंट दो ही महीने तक बैठी थी अतः इसे एडल्ड (Addled) या ऊसर पार्लियामेंट कहा जाता है।

जेम्स का निरंकुश शासन—इसके बाद सात वर्षों तक जेम्स ने निरंकुश शासन किया—यानी बिना पार्लियामेंट के मनमाने तरीके से राज्य किया। इस समय वह कुछ खुशामदी मंत्रियों के हाथ का खिलौना रहा। उन्हीं की राय से वह सब कुछ करता था। राजा ने कई गैरकानूनी तथा अत्याचारी तरीकों से रुपया जमा करने की कोशिश की। वह प्रजा से जबर्दस्ती कर्ज वसूल करता था, कड़ा जुर्माना लेता था, व्यापार के एकाधिकार (Monopoly) को सौदागरों से बहुत रुपया लेकर बेचता था, रईसों से रुपया लेकर उपाधियाँ देता था, सामन्तशाही करों को और नये-नये टैक्सों को बड़ी कड़ाई से वसूल करता था। इसके अलावा जिन जजों ने उसके नये टैक्सों का विरोध किया उन्हें सीधे बरखास्त कर दिया गया। इसी समय में स्पेन को खुश करने के लिये उसने रैले को फाँसी दे दी। अपनी सैनिक शक्ति को मजबूत करने की कोशिश भी की।

तीसरी पार्लियामेंट (१६६१ ई०)—तीस वर्षीय युद्ध में इंगलैंड के शामिल होने की सम्भावना बहुत विकट थी। इसके लिये बड़ी रकम की जरूरत थी। अतः १६२१ ई० में जेम्स ने अपनी तीसरी पार्लियामेंट बुलाई। वैधानिक दृष्टि से इस पार्लियामेंट का बड़ा महत्त्व है। एक तरफ रुपये के लिये युद्ध के ख्याल से जेम्स ने पार्लियामेंट को बुलाया, दूसरी तरफ वह शान्ति पर भी जोर देता था। उसकी इस दोहरी नीति से पार्लियामेंट असन्तुष्ट हो उठी और इसकी प्रतिक्रिया घरेलू क्षेत्र में दीख पड़ने लगी।

अभियोग लगाने के अधिकार का पुनर्जन्म—पार्लियामेंट ने मंत्रियों और दूसरे सरकारी अफसरों पर अभियोग (इम्पीचमेंट Impeachment) चलाने के अपने पुराने अधिकार को फिर से कायम किया। पार्लियामेंट के हाथ में यह एक बड़ा ही प्रभावशाली अस्त्र था। लेकिन १४५९ ई० से इसका उपयोग नहीं हुआ था। १६२१ ई० में इसका उपयोग फिर से शुरू हो गया।

एकाधिकारियों पर अभियोग—एकाधिकार की प्रथा पर पार्लियामेंट की दृष्टि गड़ी हुई थी। कई एकाधिकारियों पर अभियोग चलाया गया। इनमें मौम्पेसन नाम का व्यक्ति बड़ा मशहूर था। उसे शराब के लिए एकाधिकार प्राप्त था। बहुत से एकाधिकारियों को कड़ी सजा मिली और कुछ लोगों को भागकर अपने प्राण बचाने पड़े। जेम्स ने भी एकाधिकार हटा देने का वादा की।

बेकन पर अभियोग—सब से प्रसिद्ध तो है बेकन पर लगाया गया अभियोग। बेकन के व्यक्तित्व के विषय में हम ने पहले ही जानकारी प्राप्त कर ली है। वह एक बड़ा

विद्वान और लेखक था। जेम्स के समय में वह लार्ड चांसलर और प्रधान जज भी था। उस पर घूसखोरी का अपराध लगाया गया। लेकिन असल में वह पूरा दोषी नहीं था। उसके पक्ष में कई बातें थीं। उसने कई मौकों पर उपहार अवश्य लिये थे, लेकिन भेंट के रूप में, घूस के रूप में नहीं। दूसरी बात यह थी कि उस समय उपहार लेने की प्रथा विशेष रूप से प्रचलित थी। तीसरी बात यह थी कि बेकन ने उपहार लेकर कोई अन्याय नहीं किया था, न्याय का गला नहीं घोंटा था। लेकिन पार्लियामेंट तो उस मौके से फ़ायदा उठाना चाहती थी, और अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने के लिये उत्सुक थी। उस पर अभियोग चलाया गया। राजा उसे बचाने की कोशिश कर रहा था लेकिन बेकन ने अपना दोष स्वीकार कर लिया। उसे चांसलर के पद से हटा दिया गया। शारीरिक और आर्थिक दोनों प्रकार का दण्ड दिया गया। लेकिन जेम्स ने उसे दोनों दण्डों से मुक्त कर दिया।

भाषण की स्वतन्त्रता—इस पार्लियामेंट ने अपनी भाषण की स्वतन्त्रता भी हासिल की। पार्लियामेंट कैथोलिकों और स्पेनवासियों से बहुत विरोध रखती थी। इस समय जेम्स दोहरी नीति का अनुसरण कर रहा था। वह स्पेन से युद्ध करने के लिये पार्लियामेंट से रुपया चाहता था, साथ ही शान्ति की तरफ भी विशेष रूप से आकृष्ट था। उसने स्पेन के किनारों से ब्रिटिश जहाजों को हटा दिया और स्पेन से युद्ध चाहने वाले मन्त्रियों को भी बरखास्त करने लगा। स्पेन के साथ वैवाहिक सम्बन्ध कायम करने के लिये भी वह आकाश पाताल एक करने लगा।

प्रार्थनापत्र—इस पर कॉमन्स सभा ने जेम्स के पास एक प्रार्थना पत्र भेजा। इसमें विनती की गई कि राजा अपने पुत्र का विवाह किसी प्रोटेस्टेंट युवती से करे, कैथोलिकों के विरुद्ध कड़ाई से कानूनों का उपयोग किया जाय और स्पेन के विरुद्ध शीघ्र लड़ाई घोषित की जाय। ऐसा प्रार्थनापत्र पाकर जेम्स क्रोध से आग बबूला हो गया और पार्लियामेंट के पास शीघ्र ही उत्तर भेजा। उसने पार्लियामेंट को भविष्य में राज्य सम्बन्धी गहरे मामलों पर विचार और बहस करने के लिये मना कर दिया क्योंकि उसकी दृष्टि में सभा के सदस्य इस योग्य नहीं थे।

उज्रनामा—पार्लियामेंट राजा की इस धमकी से डरने वाली नहीं थी। उसने प्रोटेस्टेशन (Protestation) नाम का एक उज्रनामा तैयार कर राजा को जवाब दिया। उसमें यह कहा गया था कि पार्लियामेंट के सदस्यों को स्वतन्त्रता पूर्वक भाषण देने के लिये विशेषाधिकार प्राप्त है और सार्वजनिक महत्व के किसी भी विषय पर बहस करने और सलाह देने का उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। जेम्स बड़ा ही क्रुद्ध

हुआ और उसी आवेश में उज्रनामे को फाड़ दिया। इतना ही नहीं, उसने पार्लियामेंट को भी भंग कर दिया।

चौथी पार्लियामेंट (१६२४-२५ ई०)—अपर्याप्तधन के लिये स्वीकृति तथा मिडिल सेक्स पर अभियोग—सन् १६२४ ई० में चौथी पार्लियामेंट बैठी। इस बार राजा और पार्लियामेंट के बीच एकता थी। स्पेन के साथ वैवाहिक सम्बन्ध असफल होने के कारण स्पेन के विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया गया था। इससे पार्लियामेंट बहुत खुश थी। इसने युद्ध के लिये राजा को रुपया भी मंजूर कर दिया। लेकिन ये रुपये काफी नहीं थे और इसी के लिये जेम्स को कई शर्तें भी स्वीकार करनी पड़ीं, जैसे इन रुपयों को खर्च करने का भार पार्लियामेंट के द्वारा नियुक्त खजांची के हाथ में सौंपा गया और ये रुपये पार्लियामेंट द्वारा सहमत हुए ही कार्यों में खर्च हो सकते थे। इतना होने पर भी पार्लियामेंट जेम्स को सन्देह की ही दृष्टि के देखती थी।

इसी बीच पार्लियामेंट को खबर मिली कि लौर्ड ट्रेजरर, मिडलसेक्स का अर्ल स्पेन के साथ मित्रता कायम करने के लिये कोशिश कर रहा है। उस पर दुर्व्यवहार का अपराध लगा कर पार्लियामेंट ने अभियोग चला दिया और उसे बर्खास्त कर दिया। बकिंघम और राजकुमार चार्ल्स ने पार्लियामेंट के इस कार्य का समर्थन किया था।

एकाधिकार की समाप्ति—इस पार्लियामेंट ने एकाधिकार को भी गैरकानूनी घोषित कर दिया। तब तक १६२५ ई० के मार्च में जेम्स की मृत्यु हो गई।

सारांश—इस प्रकार जेम्स के ही राज्यकाल में राजा और पार्लियामेंट का झगड़ा शुरु हो गया जिसमें पार्लियामेंट की जीत रही। इसने अपने विशेषाधिकारों की रक्षा की, अभियोग चलाने के अधिकार को पुनर्जीवित किया और इसकी बिना राय के लगे हुये नये टैक्सों का विरोध किया। इसने यह दिखला दिया कि देश के अन्दर एक ऐसी जगह है जहाँ जनता को बोलने की स्वतन्त्रता प्राप्त है।

चार्ल्स प्रथम और पार्लियामेंट : संक्षिप्त इतिहास—जेम्स के मरने के बाद उसका लड़का चार्ल्स गद्दी पर बैठा। अपने राज्यकाल के प्रथम चार वर्षों में उसने तीन बार पार्लियामेंट बुलाई और हर एक के साथ झगड़ा हुआ। उसके बाद ११ वर्षों तक (१६२९-४० ई०) उसने बिना पार्लियामेंट के ही शासन किया। १६४० ई० में स्कॉटलैंड के साथ युद्ध करने के लिये रुपये की बड़ी जरुरत आ पड़ी, अतः उसने दो बार पार्लियामेंट बुलाई। एक को छोटी या शार्ट पार्लियामेंट और दूसरी को बड़ी या लौंग पार्लियामेंट कहते हैं। बड़ी पार्लियामेंट किसी न किसी रूप में २० वर्षों तक यानी १६६० ई० तक कायम रही। १६४२ ई० में राजा और पार्लियामेंट के बीच भीषण युद्ध छिड़ गया जिसके फलस्वरूप १६४९ ई० में चार्ल्स को फाँसी के तख्ते

पर लटकना पड़ा। चार्ल्स का अपनी पार्लियामेंट के साथ सम्बन्ध का यही संक्षिप्त इतिहास है।

चार्ल्स के समय झगड़े के कारण—जहाँ तक दोनों के बीच झगड़े के कारणों का सम्बन्ध है, जेम्स के समय के साधारण कारणों के अलावा चार्ल्स के समय में कुछ विशेष कारण भी उपस्थित हो गये।

(१) जेम्स की तरह चार्ल्स भी ऐंग्लिकन हाई चार्च का समर्थक था। लेकिन उसने एक कैथोलिक राजकुमारी हेनरिटा मेरिया से अपनी शादी की थी। अतः उसे कैथोलिकों के प्रति सहनशील होना पड़ा। लेकिन पार्लियामेंट कैथोलिकों के विरोध में थी।

(२) शुरू में बकिंघम और पीछे स्ट्रैफर्ड तथा लार्ड चार्ल्स उसके मन्त्री थे। दूसरों की दृष्टि में उन मन्त्रियों की योग्यता जो कुछ भी हो, चार्ल्स की दृष्टि में वे सभी बड़े ही योग्य और विश्वासपात्र थे। लेकिन पार्लियामेंट उन लोगों को अयोग्य समझ कर उनकी नीति की बुरी तरह से समालोचना करती थी और पद से हटाने की भी माँग करती थी। राजा के विचार में यह पार्लियामेंट की धृष्ठता थी।

(३) चार्ल्स के राज्य के प्रारम्भ में राजाओं की वैदेशिक नीति की असफलता के कारण पार्लियामेंट असन्तुष्ट और रुष्ट थी ही, पीछे भी विदेशी शक्तियों के साथ दरबार की गुप्त दृष्टि के कारण उसका असन्तोष और क्रोध बढ़ता ही गया।

पहली पार्लियामेंट १६२५ ई० बुलाने के कारण अपर्याप्तधन की मंजूरी—चार्ल्स के गद्दी पर बैठने के पहले ही स्पेन के विरुद्ध युद्ध घोषित हो चुका था। तीस वर्षीय युद्ध में डेनमार्क का राजा प्रोटेस्टेंटों की तरफ से शामिल हुआ था। चार्ल्स ने उसे बहुत धन से सहायता करने के लिये प्रतिज्ञा की और वह स्पेन पर भी चढ़ाई करना चाहता था। अतः धन की अधिक आवश्यकता होने के कारण चार्ल्स ने १६२५ ई० में पार्लियामेंट बुलाई। पार्लियामेंट ने आवश्यकतानुसार धन नहीं दिया। जितने रुपये की जरुरत थी उसका सातवाँ हिस्सा ही मन्जूर हुआ। इसके अलावा टनेज और पाउँडेज लेने के लिये चार्ल्स को एक वर्ष के लिये अधिकार दिया गया, लेकिन दो सदियों से पार्लियामेंट राजाओं को यह अधिकार जीवनभर के लिये देती थी।

इसके कारण—पार्लियामेंट के इस रुख के लिये चार्ल्स स्वयं ही उत्तरदायी था। (क) वह बकिंघम की राय से कार्य करता था लेकिन पार्लियामेंट उस पर विश्वास नहीं करती थी और उसे राज्य की कई बुराइयों का कारण समझती थी। (ख) दूसरी बात यह थी कि चार्ल्स ने पार्लियामेंट में अपनी नीति को न तो स्वयं स्पष्ट किया और न अपने मन्त्री द्वारा स्पष्ट कराया। अतः सदस्यों को वास्तविक परिस्थिति की कुछ भी जानकारी नहीं थी। एक सदस्य का तो कहना था कि कितने ही लोगों को अपने

दुश्मनों के विषय में भी कुछ ज्ञान न था। (ग) चार्ल्स ने अपनी जरूरतों का भी स्पष्ट रूप से विश्लेषण नहीं किया। गोलमाल तरीके से उसने पर्याप्त धन के लिये अपनी माँग पेश की।

धार्मिक झंझट—इसी पार्लियामेंट में धार्मिक झंझट भी पैदा हुई। लोगों की दृष्टि में आरमीनियन सम्प्रदाय दूसरे वेश में कैथोलिक सम्प्रदाय ही था। लेकिन चार्ल्स इस सम्प्रदाय का कट्टर समर्थक था। उसने मौंटेग नामक एक आर्मीनियन को अपने पुरोहित के पद पर नियुक्त किया। कैथोलिक से विवाह करने के कारण पार्लियामेन्ट पहले से असन्तुष्ट थी ही, अब चार्ल्स से और भी ज्यादा बिगड़ गई। वह कैथोलिकों के प्रति कड़े व्यवहार के लिये माँग करने लगी।

अविश्वासी मंत्रियों के बरखास्त की माँग—इसी बीच पार्लियामेंट की एक बैठक ऑक्सफोर्ड में हुई क्योंकि लंदन में महामारी हुई थी। चार्ल्स ने रुपये के लिए निवेदन किया लेकिन पार्लियामेंट तब तक कुछ भी सुनने के लिये तैयार नहीं थी जब तक कि वह अविश्वासी मन्त्रियों को राज्य से हटा ने को तैयार नहीं था। ऐसी आशा व्यर्थ थी। चार्ल्स ने पार्लियामेंट को ही भंग कर दिया।

दूसरी पार्लियामेंट (१६२६ ई०)—विषम परिस्थिति-बकिंघम पर अभियोग—स्पेन से लड़ने के लिये रुपये की सख्त जरूरत थी। अतः पहली पार्लियामेंट को बर्खास्त करने के छः महीने बाद चार्ल्स ने १६२६ ई० में अपनी दूसरी पार्लियामेंट बुलाई। लेकिन परिस्थिति विषम थी। इसी समय ह्युजनों (Huguenots फ्रांसीसी प्रोटेस्टेंट) के विरुद्ध फ्रांस के राजा की सहायता में अंग्रेजी जहाज भेजा गया था। दूसरी तरफ केडिज के हमले में अंगरेजों की बुरी तरह हार हुई थी। यह पार्लियामेंट भी पहली पार्लियामेंट के समान ही कट्टर साबित हुई। रुपया स्वीकार करने के पहले इसने केडिज की दुर्घटना की जाँच और उसमें बकिंघम के उत्तरदायित्व पर विचार करने की माँग पेश की। लेकिन चार्ल्स अपने किसी भी कर्मचारी की पार्लियामेंट द्वारा आलोचना करने के लिये तैयार नहीं था। बकिंघम तो उसका परम प्रिय और पूर्ण विश्वास पात्र ही था। पार्लियामेंट भी अपनी जगह पर दृढ़ थी। इसने इलियट के नेतृत्व में बकिंघम पर अभियोग चला दिया। सभा भवन में इलियट ने बकिंघम को बहुत बुरा भला कहा। चार्ल्स के क्रोध की सीमा न रही। उसने इलियट सहित दो सदस्यों को गिरफ्तार करवा कर जेल में भेज दिया। पार्लियामेंट में खलबली मच गई। अपने सदस्यों को मुक्ति के लिये यह शोरगुल करने लगी। दो सप्ताह के अन्दर ही सदस्यों को मुक्त करना पड़ा। लेकिन इससे पार्लियामेंट प्रभावित नहीं हुई। वह

बकिंघम को राज्य से बिना हटाये धन स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं थी। चार्ल्स ने निराश और क्रुद्ध हो कर पार्लियामेंट को ही भंग कर दिया।

चार्ल्स के अनुचित काम—डार्नले या पाँच सरदारों का मामला—करीब दो वर्षों तक चार्ल्स ने पार्लियामेंट नहीं बुलाई और मनमाने तरीके से शासन करने लगा। इसी बीच उसने बहुत से अनुचित काम किये। प्रजा से जबर्दस्ती रुपया वसूल करने लगा। पार्लियामेंट की स्वीकृति के बिना ही टनेज और पाउंडेज वसूल करता रहा। लोगों से जबर्दस्ती चन्दा और कर्ज लिया जाने लगा। विरोधियों को जेल में भेज दिया जाता था। इसी सिलसिले में एक मामला उठा जिसे डार्नले का मामला कहा जाता है। पाँच सरदारों ने जिसमें डार्नले भी था कर्ज देने से इनकार कर दिया। इस पर वे गिरफ्तार कर जेल भेज दिये गये। कारण पूछने पर मालूम हुआ कि वे राजा की विशेष आज्ञा से ही कैद किए गये हैं। सरकारी पक्ष के वकीलों का यह तर्क था कि राज्य की भलाई के लिये राजा सन्देह पर भी किसी को जेल में दे सकता है। लेकिन अभियुक्त पक्ष के वकीलों का यह तर्क था कि राजा का ऐसा कार्य मैग्नाकार्टा के सिद्धान्तों के विरुद्ध है। ऐसी हालत में जज भी निष्पक्ष अपना निर्णय देने में असमर्थ थे। पाँच सरदार जेल से मुक्त नहीं किये गये। जो जज निष्पक्ष होकर राजा के विरुद्ध निर्णय देते थे उन्हें अपने पद से ही हाथ धोना पड़ता था। ऐसा ही करने से एक समय प्रधान जज को अपने पद से हटा दिया गया।

विरोधियों को जेल में भेजने के अलावा सेना में भी भर्ती होने के लिये मजबूर किया जाता था। उनके मकानों में फौजी सिपाही तैनात कर दिये जाते थे जिनका खर्च उन्हीं को देना पड़ता था। सिपाहियों से झगड़ा होने पर सैनिक न्यायालय इन झगड़ों का निर्णय करता था। लोगों को डराने के लिये शान्ति के समय में भी फौजी कानून जारी किया जाता था।

लेकिन इन अनुचित तरीकों से भी चार्ल्स को पूरा धन नहीं प्राप्त हो सका। जनता उससे अप्रसन्न हो रही थी। युद्ध में भी उसकी प्रतिष्ठा धूल में मिल रही थी। जर्मनी में डेनमार्क के राजा की हार हुई क्योंकि चार्ल्स प्रतिज्ञानुसार उसकी सहायता नहीं कर सका। उसने तब तक फ्रांस से भी युद्ध छेड़ दिया था और रही द्वीप की चढ़ाई में उसे असफलता ही प्राप्त हुई।

तीसरी पार्लियामेंट (१६२८-२९ ई०)—अधिकार पत्र—इन्हीं विषम परिस्थितियों से मजबूर होकर चार्ल्स ने १६२८ ई० में तीसरी पार्लियामेंट बुलाई। स्वतंत्रता-रक्षा के लिये पार्लियामेंट के सामने सुअवसर आया था। राजा ने अपने प्रथम भाषण से पार्लियामेंट के मिजाज को और भी खराब कर दिया। उसने उद्दण्डता

पूर्वक कहा—"यदि पार्लियामेंट मेरी सभी जरूरतों को पूरा नहीं करेगी तो ईश्वर ने मुझे जितना भी बल दिया है मैं उस सब का व्यवहार करूँगा। यह मैं आप लोगों को धमकाने के विचार से नहीं कह रहा हूँ क्योंकि अपनी बराबरी वालों के सिवा किसी दूसरे को धमकाने से मैं घृणा करता हूँ।" पार्लियामेंट ने धैर्यपूर्वक शीघ्र ही एक अधिकारों का प्रार्थना पत्र (Petition of Right) तैयार किया। इसमें वेन्टवर्थ तथा इलियट नामक दो सदस्यों का प्रधान हाथ था। इस अधिकार पत्र में चार्ल्स के द्वारा किये गये कार्यों की निन्दा की गई और वे अवैध घोषित किये गये। इसमें निम्नलिखित चार बातें मुख्य थी :—(क) बिना पार्लियामेंट की राय के प्रजा पर कोई टैक्स न लगाया जाय और न किसी से बलपूर्वक कर्ज या उपहार लिया जाय। (ख) बिना कारण दिखलाये या न्यायालय में बिना अपराध साबित हुए किसी को भी कैद नहीं किया जाय। (ग) लोगों के घरों में उनकी राय के विरुद्ध सैनिकों को न रखा जाय। (घ) शान्ति के समय फौजी कानून का प्रयोग न किया जाय।

चार्ल्स दिल से इस अधिकार पत्र को स्वीकार करना नहीं चाहता था। लेकिन धन की जरूरत से लाचार होकर उसे इस पत्र को स्वीकार करना पड़ा। मैग्नाकार्टा के बाद अंगरेजों का यह दूसरा महत्त्वपूर्ण स्वतंत्रता पत्र समझा जाता है।

फिर मतभेद—लेकिन इसके स्वीकार होने से ही संघर्ष की समाप्ति नहीं हुई। पार्लियामेंट पादरियों पर आक्रमण करने लगी और बकिंघम को हटाने के लिये दबाव देने लगी। अतः चार्ल्स ने इसके अधिवेशन को कुछ समय के लिये स्थगित कर दिया।

बकिंघम की हत्या (१६२८ ई०)—इसी बीच फेल्टन नाम के एक व्यक्ति ने बकिंघम की हत्या कर डाली। बकिंघम इतना बदनाम था कि उसकी हत्या पर चार्ल्स के सिवा किसी ने अफसोस तक प्रकट नहीं किया। लेकिन इस हत्या से राजा और पार्लियामेंट के सम्बन्ध में कोई परिवर्तन नहीं हुआ क्योंकि राजा की नीति पुरानी ही रही। आर्मिनियनों का वह पक्षपात करता रहा और अधिकारपत्र के स्वीकार करने पर भी इसकी शर्तों का उल्लंघन करता रहा। वह अभी भी टनेज और पौंडेज बलपूर्वक वसूल करता था और एक बार तो रोल नाम के एक सदस्य के द्वारा विरोध करने पर उसके भी धन को जप्त करवा लिया।

इन सब कारणों से पार्लियामेंट का क्रोध फिर बढ़ता गया। १६२९ ई० में इसकी दूसरी बैठक आरम्भ हुई। इसने राजा से बदला लेना शुरू किया। आर्मीनियनों पर चोट होने लगी। इस पर राजा ने अधिवेशन बन्द करने की फिर आज्ञा दी। लेकिन सदस्यों का तो खून खौल रहा था। उन्होंने आज्ञा की अवहेलना की और अध्यक्ष

(स्पीकार) को बलपूर्वक कुर्सी पर बैठा कर तथा भवन के द्वार को बन्द कर तीन प्रस्ताव एक मत से पास किये ।

(क) जो धर्म में नया परिवर्त्तन लाना चाहेगा; या

(ख) जो पार्लियामेंट की बिना राय के टैक्स देने के लिये प्रस्ताव करेगा; या

(ग) जो इस तरह का टैक्स देगा ।

वह राज्य का दुश्मन और इसकी स्वतंत्रता का घातक सिद्ध होगा ।

इन प्रस्तावों के स्वीकृत होते ही चार्ल्स ने पार्लियामेंट को भंग कर दिया और कई सदस्यों को, जिनमें इलियट भी था जेल भेज दिया । कुछ लोग तो माफी माँगने पर मुक्त कर दिये गये, लेकिन इलियट स्वतंत्रता का वीर पुजारी था, वह टस से मस नहीं हुआ । साढ़े तीन वर्षों तक जेल में रह कर १६३२ ई० में वह वहीं मर गया । प्रजा के अधिकार के लिये उसे ही पहला शहीद होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ ।

इस प्रकार चार्ल्स से राज्य का एक हिस्सा १६२६ ई० में समाप्त हुआ ।

अध्याय ४

चार्ल्स का निरंकुश शासन

(१६२९–४० ई०)

तीसरी पार्लियामेंट बरखास्त करने के बाद चार्ल्स ने ११ वर्षों तक कोई पार्लियामेंट नहीं बुलाई और मनमाने तरीके से शासन किया। उसके राज्य का यह दूसरा हिस्सा है। इस जमाने में उसके दो मशहूर सलाहकार थे। राजकीय कामों में टामस वेन्टवर्थ और धार्मिक कामों में विलियम लौड।

टामस वेन्टवर्थ—वेन्टवर्थ यार्कशायर का रहने वाला था। उसका जन्म एक पुराने जमींदार कुल में हुआ था। १६२९ ई० तक तो वह चार्ल्स का कटु समालोचक और कट्टर विरोधी था और अधिकार पत्र (पेटीशन ऑफ राइट) के पास कराने में उसका प्रधान हाथ था। लेकिन १६२९ ई० के बाद वह चार्ल्स का कट्टर समर्थक बन गया। इस परिवर्त्तन के दो कारण थे। (क) वह राज्य की बहुत सी बुराइयों की जड़ बकिंघम को समझता था। लेकिन अब तो बकिंघम नहीं था; वह मारा जा चुका था। (ख) उसके विचार में अधिकार पत्र के द्वारा राजा पर काफी प्रतिबन्ध लगाया जा चुका था, अब उससे अधिक प्रतिबन्ध की आवश्यकता नहीं थी। वह मजबूत कार्यकारिणी का समर्थक था। लेकिन पार्लियामेंट उतने ही प्रबन्ध से सन्तुष्ट नहीं थी और राजा के अधिकार को हड़पना चाहती थी। वेन्टवर्थ इसे नापसन्द करता था। वह प्रजातन्त्र का पक्षपाती नहीं था, वह जनता 'के लिये' शासन में तो विश्वास करता था लेकिन जनता 'के द्वारा' शासन में नहीं। लेकिन यह ध्यान में रखने की बात है कि वह सुधारवादी (Enlightened) राजा का समर्थक था, न कि प्रतिक्रिया वादी राजा का।

वेन्टवर्थ बड़ा ही योग्य और बुद्धिमान व्यक्ति था। वह अपनी योग्यता में दृढ़ विश्वास रखता था लेकिन दूसरों की योग्यता में नहीं। वह कड़े मिजाज का व्यक्ति था और दूसरों के विरोध को सहन नहीं कर सकता था। लेकिन वह स्वार्थी और अवसरवादी था। स्वार्थ साधन के लिये ही उसने राजा का पक्ष लिया और अब

राजा के हित का कार्य करने लगा। १६२८ ई० में ही उसे बैरन की उपाधि दी गई और वह स्टैफोर्ड का अर्ल भी बनाया गया। उत्तर की कौंसिल का वह प्रेसिडेन्ट भी बना दिया गया। उस पद पर वह चार वर्षों तक काम करता रहा। १६३२ ई० में वह आयरलैंड का लॉर्ड डिप्टी बनाया गया। वहाँ उसने बड़ा ही मजबूत शासन कायम किया। उसकी शासन प्रणाली थॉरो (Thorough) के नाम से प्रसिद्ध है। वहीं पर राजनीति की शक्ति और कमजोरी दोनों का ही परिचय मिलता है।[1]

विलियम लॉड—विलियम लॉड रीडिंग के एक व्यापारी का लड़का था। १५७३ ई० में इसका जन्म हुआ था। लड़कपन में इसकी शिक्षा के लिये समुचित प्रबन्ध किया गया था। १६०१ ई० में वह चर्च में घुस गया। १६११ ई० में वह सेन्ट जॉन कालेज में प्रोफेसर के पद पर नियुक्त हुआ। १६२६ ई० में वह वेल्स का बिशप और दो वर्ष बाद लंदन का बिशप बना। १६३३ ई० में वह कैन्टरबरी का आर्कबिशप बनाया गया। अब धार्मिक क्षेत्र में उसका बोल बाला हो गया। राज्य की धार्मिक नीति का वही निर्णायक था। १६३५ ई० से खजांची के मरने के बाद वह राजा के धन के लिये भी उत्तरदायी हो गया।

लॉड और वेन्टवर्थ दोनों ही पक्के दोस्त थे और दोनों ने अपने अपने क्षेत्र में अच्छा-बुरा नाम हासिल किया। लॉड के धार्मिक विचार बड़े ही उच्च थे। वह दिल से अंगरेजी चर्च का समर्थक था। उस समय चर्च में बहुत सी बुराइयाँ आ गई थीं। चर्च अस्तबल और धर्मशाला का रूप ग्रहण कर रहा था। प्रार्थना के बदले हँसी मजाक और खेल कूद का केन्द्र बन रहा था। लॉड ने एक सच्चे सुधारक की हैसियत से चर्च में कई उपयोगी सुधार किये। कितने ही नये गिरजे बनाये गये, पुराने गिरजा घरों की मरम्मत हुई और उनके धन वापस दिलाये गये। प्रार्थना प्रणाली में भी समुचित सुधार किया गया।

लेकिन एक विद्वान्, धार्मिक और सुधारक होते हुए भी वह संकीर्ण, जिद्दी और घमंडी था। वह धार्मिक स्वतन्त्रता का कट्टर दुश्मन था। वह चाहता था कि उसके जो धार्मिक विचार हों, वे ही मानव मात्र के हों। किसी को भी मतभेद रखने का अधिकार नहीं है। वह अपने विचारों को बलपूर्वक दूसरों पर लादना चाहता था और उसके नतीजों पर नहीं सोचता था। वेन्टवर्थ के समान वह भी पूर्ण (Thorough) प्रणाली में विश्वास करता था। दोनों की दृष्टि में व्यवस्था (Orde) स्वर्ग का पहला कानून था। अतः धार्मिक क्षेत्र में पूर्ण एकता स्थापित करने के लिये

[1] देखिये अध्याय १२

उसने कोशिश की। वह अपने विरोधियों को हाई कमीशन और स्टार चैम्बर नाम की कचहरियों में कड़ी सजा देता था जैसे अंग भंग करवा देना, कोड़े लगवाना, दागना, भारी जुर्माना आदि। जो पढ़े लिखे लोग भी उसकी नीति की कटु आलोचना करते थे उन्हें भी साधारण अपराधी के रूप में ही सजा दी जाती थी। अपने विचारों के विरुद्ध लोकमत के प्रचार को रोकने के लिये उसने छापेखानों (प्रेस) पर भी कड़ा नियन्त्रण स्थापित कर दिया। उसके इस अमानुषिक अत्याचारी व्यवहार से वहुत से लोग अंगरेजी चर्च के दुश्मन होकर प्यूरिटन सम्प्रदाय में शामिल हो गये।

इस प्रकार लॉड ने अंगरेजी चर्च की सेवा और बुराई दोनों ही प्रचुर मात्रा में की।

आर्थिक नीति—अर्थ (धन), सरकार की रीढ़ के समान है; निरंकुश शासन की सफलता इसी अर्थ के परिमाण पर निर्भर करती थी। चार्ल्स इस बात को अच्छी तरह समझता था। अतः उसने पर्याप्त धन जमा करने के लिए जी जान से कोशिश की। इसके लिये उसने कई उपायों को ढूँढ़ निकाला।

(१) महादेश के युद्ध से तटस्थता—महादेश के युद्ध से उसने अपने देश को अलग कर लिया। १६२६ ई० में फ्रांस से और १६३० ई० में स्पेन से सन्धि की गई। जर्मनी के प्रोटेस्टेंटों को सहायता वन्द कर दी गई।

(२) मितव्ययिता—वह अपने खर्च को कम करने लगा। राजकीय खर्च में भी यह मितव्ययी बनने लगा। टैक्सों की वसूली भी बड़ी कड़ाई से की जाने लगी।

फिर भी आवश्यकतानुसार धन नहीं प्राप्त हो रहा था। आय व्यय के चिट्ठे में संतुलन (Balance) नहीं हो रहा था। तब वह दूसरे तरीकों से अपना काम निकालने लगा।

(३) पुराने कानूनों का प्रयोग—वह पुराने जमाने के कानूनों का प्रयोग कर धन वसूल करने लगा। इन कानूनों के प्रयोग से अक्षरशः कानून को तो नहीं, लेकिन कानून की भावना (Spirit) को ठेस अवश्य लगी।

(क) पार्लियामेंट की बिना स्वीकृति के वह टनेज और पाउंडेज तथा जबर्दस्ती कर्ज और दान वसूल करता रहा।

(ख) पहले एडवर्ड के समय में यह कानून बना था कि ४० पौंड तक सालाना आमदनी की जमीन वाले हर व्यक्ति को फीस देकर नाइट बनना पड़ेगा। लेकिन वर्षों से इस कानून का व्यवहार नहीं हो रहा था। चार्ल्स ने इस कानून को पुनर्जीवित किया। भारी फीस लेकर वह लोगों को नाइट बनाने लगा और इनकार करने वालों से कड़ा जुर्माना लेने लगा। इस कानून से मध्यम श्रेणी के लोग विशेष प्रभावित हुए।

(ग) नार्मन राजाओं के समय में शिकार करने के लिये बड़े बड़े जंगल सुरक्षित रखे जाते थे। जंगलों की सीमा के अन्दर किसी को जाने की सख्त मनाही थी। लेकिन धीरे धीरे इस कानून का भी प्रयोग कम होने लगा और धनी मानी लोग जंगलों को साफ करवा कर मकान बनवाने लगे। चार्ल्स ने उन पुराने सरकारी जंगलों की सीमा फिर से निर्धारित की और जिन लोगों के पूर्वजों ने जमीन को काम में लाया था उनसे पूरा रुपया वसूल किया।

(घ) व्यक्तियों को तो एकाधिकार (मोनोपोली) स्वीकार करना १६२४ ई० में ही ग़ैर कानूनी घोषित कर दिया गया था। अब चार्ल्स रुपया लेकर कम्पनियों को ही एकाधिकार स्वीकार करने लगा। वह भी विशेष प्रकार की चीज़ों के लिए ही नहीं नमक और साबुन जैसी दैनिक व्यवहार की साधारण चीजों के लिये भी वह मोनोपोली बेचने लगा।

यहाँ भी चार्ल्स ने पुरानी प्रथा का ही अनुसरण किया। ट्यूडर राजा ऐसा किया करते थे। लेकिन अन्तर यही था कि जहाँ ट्यूडर राजा व्यापार की व्यवस्था के लिए ऐसा करते थे वहाँ चार्ल्स धन जमा करने के लिए ऐसा करता था।

(ङ) पुराने सामन्तशाही अधिकारों का भी कड़ाई से प्रयोग होने लगा।

(च) चार्ल्स पर कोई नया टैक्स लगाने के लिए प्रतिबन्ध लगा दिया गया था, फिर भी उसने एक टैक्स लगा ही दिया। इसे जहाजी कर या शिपमनी (Ship-money) कहते हैं। पुराने जमाने में युद्ध के मौके पर यह कर समुद्र तट के नगरों और ग्रामों पर कई बार लगाया गया था। जब चार्ल्स ने १६३४ ई० में पहली बार इस कर को लगाया, तब उस समय यह कर उचित था क्योंकि उस समय समुद्री किनारों पर बरबरी के डाकुओं का उपद्रव हो रहा था और यह कर समुद्री किनारे के नगरों पर ही लगाया गया था। जो रुपये मिले वे भी जहाज़ बनाने में ही खर्च किये गये।

१६३४ ई० की सफलता से उत्साहित होकर चार्ल्स ने जहाजी कर को सन् १६३५ ई० में पुनः लगा दिया। इस बार समुद्र तट के नगरों के साथ ही देश के भीतरी भागों में भी इस कर का विस्तार किया गया। दूसरी बात यह थी कि इस समय देश को बाहरी आक्रमण का भी डर नहीं था। फिर भी लोगों ने विशेष आनाकानी नहीं की। इससे नाजायज फायदा उठाकर चार्ल्स ने फिर तीसरी बार जहाजी कर को भीतरी प्रदेशों पर लगाया।

धार्मिक नीति—राजा की धार्मिक नीति का विधाता था लॉर्ड। उसके धार्मिक विचारों के सम्बन्ध में हम लोग अभी पीछे दृष्टिपात कर चुके हैं। चार्ल्स आर्मीनियन

सम्प्रदाय का कट्टर समर्थक था और उसने एलिज़ावेथ तथा प्रथम जेम्स से भी बढ़ कर अपने को प्यूरिटनों का कट्टर विरोधी साबित किया। आर्थिक नीति से अधिक उसकी धार्मिक नीति के कारण ही उसका शासन लोक निन्दित और घृणास्पद बन गया।

लॉड ने बड़ी कड़ाई से अपनी एकता की नीति को व्यवहार में लाना शुरू किया। उसने महादेश के चर्चों से इंगलैंड के चर्च का सम्बन्ध अलग कर लिया क्योंकि वहाँ के चर्चों में विशप व्यवस्था प्रचलित थी। विदेशियों की धार्मिक स्वतन्त्रता छीन ली गई। उन्हें भी प्रार्थना पुस्तक स्वीकार करने के लिए मजबूर किया जाने लगा। प्यूरिटनों का जोरों से शिकार होने लगा। उन्हें चिढ़ाने के लिए धार्मिक रस्म-रिवाजों में कुछ परिवर्तन लाया गया। धार्मिक न्यायालयों द्वारा भीषण और भयावह दण्ड दिया जाने लगा। विशपों पर चोट करने के कारण प्राइन नामक एक वकील को कान कटवाने, बर्टन नामक एक पादरी को पाँच हजार पौंड जुर्माने, और वैस्टविक नामक एक डाक्टर को आजीवन कैद की सजा दी गई। कितने ही विरोधी लोगों को पदच्युत और धर्म बहिष्कृत कर दिया गया।

इन सभी कारवाईयों से प्यूरिटनों को यह सन्देह होने लगा कि चार्ल्स और लॉड कैथोलिकों के साथ मिलकर प्रोटेस्टेन्ट धर्म को देश से उखाड़ फेंकना चाहते हैं।

संकट का आरम्भ—जौन हैम्पडन का मामला (१६३७ ई०)—सन् १६३६ ई० तक तो राजा की नीति से देशव्यापी असन्तोष होते हुए भी उसका घोर विरोध नहीं हो रहा था। यदि विरोध था भी तो नाम मात्र का और लुक छिप कर। लेकिन दूसरे साल सन् १६३७ ई० में क्रान्तिकारी युग का बीजारोपण हुआ। अब संकट काल का आरम्भ हुआ। जब विशपों के आक्रमणकारियों को कठोर और अमानुषिक दण्ड दिया गया तब इंगलैंड का जनमत बौखला उठा। प्राइन के कटे हुए कान को देख कर अँगरेजी जनता क्रोध और तकलीफ से अधीर होने लगी। रास्ते में जाते समय लोग उन सबों पर फूल चढ़ाने लगे। यह सब घटना १६३७ ई० के मध्य में हो रही थी। इस साल के अन्त में भी एक प्रसिद्ध घटना हुई। जब चार्ल्स जहाजी कर को तीसरी बार लगा चुका तो लोगों को यह विश्वास होने लगा कि वह इस कर को स्थायी बनाना चाहता है। तब बकिंघमशायर के जौन हैम्पडन नाम के एक प्रसिद्ध जमींदार ने इस कर को देने से इन्कार कर दिया। वह इसे अनुचित और अन्यायपूर्ण मानता था। हैम्पडन पर मुक़द्दमा चला। १२ जजों में ५ ने तो हैम्पडन के पक्ष में ही अपना निर्णय दिया। लेकिन बहुमत राजा के पक्ष में ही रहा। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं हो सकता कि न्याय निष्पक्ष रूप से हुआ था। बहुत से जज राजा के भय

ने अपनी आन्तरिक भावना को दबाकर राजा के पक्ष में फैसला किया था। इस निर्णय से भी राजा का हाथ बहुत मजबूत हो गया, लेकिन उसकी निन्दा भी कम नहीं हुई।

आयरलैंड—यह तो इंगलैंड की दशा थी। निरंकुश शासन की छाया आयरलैंड में भी पहुँची थी। वहाँ वेन्टवर्थ चार्ल्स का प्रतिनिधित्व करता था। सन् १६३३ ई० में उसे वहाँ भेजा गया था और उसने वहाँ कड़ी हुकूमत कायम की।[1]

स्कॉटलैंड का असन्तोष या निरंकुश शासन के अंत होने और लाँग पार्लियामेंट के बुलाने के कारण—चार्ल्स के निरंकुश शासन से इंगलैंड और आयरलैंड तो प्रभावित हुये ही, स्कॉटलैंड विशेष रूप से प्रभावित हुआ। स्कॉटलैंड पर बहुत गहरी छाप पड़ी और यही चार्ल्स के व्यक्तिगत या निरंकुश शासन के अन्त होने का कारण साबित हुआ।

स्कॉटलैंड चर्च में प्रेसबिटेरियन धर्म प्रणाली प्रचलित थी। लेकिन चार्ल्स वहाँ भी अंगरेजी चर्च की धर्मप्रणाली कायम करना चाहता था। अतः इंगलैंड और स्कॉटलैंड के बीच दो युद्ध हुये जो बिशपों के युद्ध के नाम से प्रसिद्ध हैं। प्रथम बिशप युद्ध के बाद स्कॉटों से फिर लड़ने के लिये चार्ल्स को धन की आवश्यकता थी। वेन्टवर्थ की राय से सन् १६४० ई० के अप्रैल में धन प्राप्ति के लिये चार्ल्स ने चौथी पार्लियामेंट बुलाई। लेकिन चार्ल्स के प्रति पार्लियामेंट का रुख ठीक नहीं मालूम पड़ा और वह स्कॉटों के साथ शान्ति पूर्वक समझौता करने की बात करने लगी। चार्ल्स ने इसे शीघ्र ही भंग कर दिया। यह पार्लियामेंट तीन सप्ताह तक ही कायम रही अतः इतिहास में यह शॉर्ट या छोटी पार्लियामेंट के नाम से प्रसिद्ध है। इसी छोटी पार्लियामेंट के अधिवेशन से पिम नाम का एक व्यक्ति प्रसिद्ध होने लगा। यह समरसेट शायर का एक बड़ा रईस था। आगे चलकर यह पार्लियामेंट का एक बड़ा नेता हुआ। इसका विचार था कि पार्लियामेंट राष्ट्र के लिये उतनी ही आवश्यक है जितनी आत्मा शरीर के लिये।

इसी बीच चार्ल्स ने स्कॉटों के विरुद्ध दूसरा युद्ध घोषित कर दिया। स्कॉटों ने इंगलैंड पर चढ़ाई की। स्कॉट सेना को ८५० पौंड प्रतिदिन के हिसाब से देने के लिये चार्ल्स के द्वारा वादा करने पर युद्ध बन्द हुआ। इस रकम को पाने के लिये चार्ल्स ने यॉर्क में सरदारों की एक सभा बुलाई और उनकी राय से बाध्य होकर ३ नवम्बर सन्

[1] देखिये अध्याय १४।

१६४० ई० को पाँचवीं पार्लियामेंट बुलाई। यह पार्लियामेंट इतिहास में लौंग या बड़ी पार्लियामेंट के नाम से मशहूर है क्योंकि किसी न किसी रूप में यह बीस वर्षों तक कायम रही। इस प्रकार इंगलैंड में पार्लियामेंट की पुनर्स्थापना का कारण स्कॉटलैंड का विद्रोह ही हुआ।[1]

चार्ल्स का यह ११ वर्षों का निरंकुश शासन अत्याचारी शासन नहीं था। वह ऐसा जुल्मी शासक नहीं था जिसने अपनी प्रजा के जीवन, स्वतन्त्रता और धन-जायदाद को नष्ट कर दिया हो। कई दृष्टियों से उसका शासन उदार और उपयोगी था :—

(१) इस व्यक्तिगत शासनकाल में प्रजा सुखी थी और राष्ट्र की आर्थिक उन्नति हुई। खेतों की पैदावार भी अच्छी थी, परती जमीन आबाद की जा रही थी, लोगों के पास रुपये थे और खरीद-बिक्री विशेष हो रही थी।

(२) लोग सुखी होने के कारण टैक्स देने में असमर्थ नहीं थे। जो टैक्स थे भी वे मामूली थे, दूसरे देशों के अपेक्षा टैक्स का बोझ हल्का था। खास तौर पर टैक्स धनियों के ऊपर ही था।

(३) यूरोप के कई देशों में इसी समय में चार्ल्स के शासन से भी अधिक अत्याचारी शासन कायम था। ट्यूडर राजाओं का शासन भी चार्ल्स के शासन से कहीं अधिक स्वेच्छाचारी और अत्याचारी था। आठवें हेनरी और रानी एलिज़ाबेथ के समय बहुत लोगों को फाँसी दी गई, कानून बड़ी सख्ती के साथ काम में लाया गया। उत्तम व्यक्ति को भी राजा का विरोधी होने के कारण प्राणदण्ड दे दिया जाता था। लेकिन चार्ल्स के समय में केवल इलियट की ही फाँसी हुई थी वरना कानून की सख्ती में नर्मी आ गई थी।

४) ११ वर्षों तक पार्लियामेंट नहीं बुलाना कोई बड़े आश्चर्य की बात नहीं थी पहले जेम्स ने भी अपने राज्यकाल के समय में सात वर्षों तक पार्लियामेंट नहीं बुलाई थी। एलिज़ाबेथ ने भी अपने सम्पूर्ण शासनकाल में १८ वर्षों तक बिना पार्लियामेंट के शासन किया था। इसके अलावा चार्ल्स कम से कम अक्षरशः कानून के भीतर अपने को रख कर ही कोई कार्य करता था, यद्यपि उसके कुछ कार्य कानून की भावना के विरुद्ध हो जाते थे।

(५) न्याय का कार्य सुचारु रूप से होता था। सार्वजनिक मामलों में चार्ल्स कभी भी हस्तक्षेप नहीं करता था! न्यायालय के जिस मामले में वह स्वयं पार्टी था उसी में वह हस्तक्षेप करता था। पार्लियामेंट राजा और उसके मन्त्रियों के ऊपर

[1] विस्तृत वर्णन के लिये अध्याय १८ देखिये।

अधिकार कायम करना चाहती थी। स्टुअर्टों के पहले ट्यूडरों के राज्यकाल में यह नहीं थी। अतः राजा के लिये पार्लियामेंट की इस कोशिश को विफल बनाना बिल्कुल स्वाभाविक था।

(६) विलियम लॉड ने धर्म क्षेत्र में बड़े ही महत्त्वपूर्ण सुधार किये। यह धर्म में दिल से श्रद्धा और विश्वास रखता था। उसने पादरियों के नैतिक स्तर को उच्च किया और चर्च को वास्तविक धर्म-संस्था बनाया। धार्मिक दृष्टि से यह सब को एक समान देखता था।

निरंकुश शासन के उपर्युक्त गुणों के कारण यह मालूम होता है कि यदि स्कॉटलैंड के साथ अनबन और युद्ध नहीं होता तो इंगलैंड में विद्रोह नहीं होता। इन गुणों के रहते हुये भी चार्ल्स का शासन व्यक्तिगत शासन था और पार्लियामेंट, जो एक परम्परागत संस्था थी, दबा दी गई थी। यह बात कुछ लोगों की आँखों में खटक रही थी। अतः देश में चार्ल्स के विरुद्ध असन्तोष फैल रहा था और स्कॉटलैंड के युद्ध ने अग्नि में घी का काम किया।

अध्याय ५

लौंग पार्लियामेंट और गृहयुद्ध (१६४०–४६)

लौंग पार्लियामेंट के जीवन का संक्षिप्त विवरण—यह लौंग पार्लियामेंट सन् १६४० ई० के ३ नवम्बर को, बुलाई गई और यदि व्यवहार में नहीं तो कम से कम सिद्धान्त में यह सन् १६६० ई० तक कायम रही। सन् १६४१ के अगस्त तक पार्लियामेंट के सदस्यों ने एकमत से कार्य किया। अगस्त महीने में एक बिल को लेकर सदस्यों के बीच मतभेद शुरू हो गया जो क्रमशः बढ़ता ही गया। इस तरह से देश में ही दो दल कायम हो गये। एक दल ने राजा का और दूसरे दल ने पार्लियामेंट का पक्ष लिया। सन् १६४२ ई० में राजा और पार्लियामेंट के बीच गृह युद्ध छिड़ गया जो सन् १६४८ ई० तक जारी रहा, जबकि चार्ल्स हार कर गिरफ़्तार कर लिया गया। लौंग पार्लियामेंट के प्रेसबिटेरियन सदस्यों ने राजा से समझौता करना चाहा। इस पर कर्नल प्राइड ने उन्हें पार्लियामेंट से बल पूर्वक निकाल बाहर किया। बचे हुए सदस्य रम्प (Rump) के नाम से प्रसिद्ध हुए। सन् १६४८ ई० से १६५३ ई० तक इसी रम्प ने इंगलैंड पर शासन किया। सन् १६५३ ई० में क्रौमवेल ने रम्प को बर्खास्त कर दिया और सन् १६५६ ई० तक इस पार्लियामेंट का कोई पता न रहा। सन् १६५६ ई० में जनरल मौन्क ने लौंग पार्लियामेंट के सभी सदस्यों को बुलवाया और दूसरे साल इस पार्लियामेंट ने अपने को भंग कर दिया।

लौंग पार्लियामेंट की कुछ सुविधायें—इस बड़ी पार्लियामेंट को कुछ सुविधायें प्राप्त थी जिनके कारण पार्लियामेंट का स्थान बड़ा ही मजबूत था:—

(क) बिशपों के युद्ध के समय प्रजा ने राजा की कमजोरी को देखा था और राजा के मनमाने शासन से देश में असंतोष फैला हुआ था।

(ख) सेना अपने वेतन के लिये पार्लियामेंट पर निर्भर थी और स्कॉट सेना भी इंगलैंड के दरवाजे पर खड़ी होकर रुपये के लिये पार्लियामेंट का ही मुँह ताक़ती थी।

(ग) पहले की पार्लियामेंटों में अमीरों और कुलीनों की संख्या अधिक होती थी। लेकिन इस लौंग पार्लियामेंट में इंगलैंड के सभ्य और शिक्षित वर्ग के व्यक्ति ही

अधिक थे। इसमें प्यूरिटनों की संख्या अधिक थी। इसी पार्लियामेंट में पिम जैसा महान् नेता वर्तमान था। वह बहुत बड़ा वक्ता था और उसके दुश्मन उसे 'राजा पिम' कहा करते थे। इंगलैंड में वह जनतन्त्र का प्रथम संगठनकर्त्ता समझा जाता है। अपने विचारों का प्रचार करने के लिये वह प्रेस और प्लेटफार्म दोनों का प्रयोग करता था।

बड़ी (लोंग) पार्लियामेन्ट की बैठक का महत्त्व—इंगलैंड के इतिहास में इस लोंग पार्लियामेंट का स्थान बड़ा ही महत्वपूर्ण है। इसकी बैठक के साथ अंगरेजी राजतन्त्र की महत्ता और पवित्रता जाती रही। इंगलैंड में राजा के निरंकुश शासन की नींव बुरी तरह हिल गई। इस पार्लियामेंट के सदस्य राजा और पार्लियामेंट के अधिकारों की सीमा निर्धारित करने के लिये कमर कसे तैयार थे। वे देश के विधान की रूप रेखा निश्चित कर देना चाहते थे। उन्होंने नियमानुमोदित शासन के सिद्धान्तों को कायम किया। जिस तरह आठवें हेनरी के राज्यकाल में रिफौर्मेशन (Reformation) पार्लियामेंट ने पोप के विरुद्ध कार्य कर राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की रक्षा की उसी तरह पहले चार्ल्स के राज्य काल में बड़ी पार्लियामेंट ने राजा के विरुद्ध कार्य कर राजनैतिक स्वतन्त्रता की रक्षा की। लेकिन बड़ी पार्लियामेंट को अपने उद्देश्य में पूर्ण सफलता नहीं मिली। इसका कार्य अधूरा रहा; फिर भी भविष्य के लिये रास्ता साफ हो गया। इसके प्रारम्भ किये हुए कार्य को १६८८ ई० की महान् क्रान्ति ने पूरा कर दिया।

बड़ी पार्लियामेंट के कार्य—बड़ी पार्लियामेंट के सामने मुख्यतः तीन कार्य थे :

(१) चार्ल्स के निरंकुश शासन के समय के कैदियों को मुक्त करना और उनकी हानियों को पूरा करना।

(२) उस समय के राजा के सलाहकारों और मददगारों को सजा देना।

(३) भविष्य में निरंकुश शासन को असम्भव करने के लिये उपाय करना।

कैदियों की मुक्ति—निरंकुश शासान के समय बहुत से लोगों को जेल में रख दिया गया था और बहुतों के धन जायदाद को जप्त कर लिया गया था। पार्लियामेंट ने शीघ्र ही ऐसे सभी कैदियों को जेल से मुक्त कर दिया। बहुत से लोगों के धन जायदाद वापस कर दिये गये और कितने लोगों को हर्जाना भी दिया गया।

राजा के मददगारों को सजा—जब राजा के मददगारों को सजा देने की बात चली तो कुछ लोगों ने भागकर विदेशों में शरण ली। जिन जजों ने चार्ल्स की आर्थिक योजनाओं का समर्थन किया था उन्हें गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया।

स्ट्रैफोर्ड पर मुकदमा और उसका वध—लेकिन राजा के प्रमुख सलाहकार स्ट्रैफोर्ड और लॉड थे। दोनों को ही गिरफ्तार कर जेल में भेज दिया गया। पार्लियामेन्ट में स्ट्रैफोर्ड पर राजद्रोह का अभियोग लगाया गया। लेकिन इसे सिद्ध करना कठिन ही नहीं असम्भव था। राजद्रोह का अपराधी वही हो सकता था जिसने 'राजा के विरुद्ध युद्ध' किया हो। स्ट्रैफोर्ड तो राजा का परम भक्त और पूर्ण आज्ञाकारी था। राजा की आज्ञा से ही वह सब कुछ करता था। अतः वह राजद्रोही कदापि नही हो सकता था। लेकिन पार्लियामेंट तो स्ट्रैफोर्ड की जीवनलीला समाप्त करने पर तुली हुई थी। अतः जब राजद्रोह का अभियोग चलना सम्भव न हो सका तब पार्लियामेंट ने अटेन्डर नामक एक बिल (Bill of Attainder) पास किया। इसके द्वारा स्ट्रैफोर्ड के अपराध को साबित करने की कोई जरूरत नहीं थी। वह अपराधी (राजद्रोही) घोषित कर दिया गया और सन् १६४१ ई० के मई महीने में उसे फाँसी दे दी गई। इस तरह स्ट्रैफोर्ड की फाँसी में न्याय की भी फाँसी हुई।

लॉड का वध—चार वर्षों के बाद लॉड की भी वही गति हुई। सन् १६४५ ई० में उसे भी फाँसी दे दी गई।

भविष्य में निरंकुश शासन को रोकने के उपाय—देश में राजा के विरुद्ध विस्तृत पैमाने पर असन्तोष फैला हुआ था। अतः बड़ी पार्लियामेंट ने अपने अधिवेशन के प्रथम नौ महीनों में, भविष्य में स्वेच्छाचारी शासन की स्थापना को रोकने के लिये कई नियम एकमत से बनाये। इस प्रकार ४० वर्षों के बाद राजा और पार्लियामेंट के बीच कुछ प्रश्नों का उत्तर निश्चित हो सका।

(क) ट्रायनियल ऐक्ट या त्रैवार्षिक कानून—पहले पार्लियामेंट का अधिवेशन राजा की मर्जी पर निर्भर था। अतः कई वर्षों तक राजा पार्लियामेंट को न बुला कर मनमानी किया करता था। इसे रोकने के लिये एक ट्रायनियल ऐक्ट या त्रैवार्षिक कानून पास किया गया। इसके मुताबिक तीन वर्ष के भीतर पार्लियामेंट की कम से कम एक बैठक बुलाना अनिवार्य कर दिया गया। यह कानून सन् १६६४ ई० तक जारी रहा।

(ख) स्थगित या भंग होने के विरुद्ध कानून—इसके बाद एक कानून पास हुआ जिसमें यह निश्चित हो गया कि बिना अपनी मर्जी के इस पार्लियामेंट की बैठक को न तो कोई स्थगित कर सकता है और न कोई बरखास्त कर सकता है।

(ग) अनुचित करों के विरुद्ध कानून—सन् १६२८ ई० के अधिकारपत्र द्वारा

पार्लियामेंट की बिना स्वीकृति के लगाए गये प्रत्यक्ष कर (Direct Tax) को गैर कानूनी घोषित किया गया था। सन् १६४१ ई० में पार्लियामेंट के द्वारा अस्वीकृत सभी कर—प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष (Direct or indirect) गैरकानूनी घोषित कर दिए गये। इस तरह चार्ल्स के द्वारा लगाए गये टनेज, पाउंडेज, जहाजी टैक्स, बलात् कर्ज आदि उठा दिये गये और डारनेल तथा हैम्पडेन के मामलों में न्यायालय के द्वारा दिये गये अवैधानिक निर्णय उलट दिये गये।

(घ) विशेष न्यायालयों के विरुद्ध कानून—नृशंस न्यायालय, जो राजा के स्वेच्छाचारी शासन के स्तम्भ स्वरूप थे, गैरकानूनी घोषित कर दिये गये। इस तरह स्टारचैम्बर, हाई कमीशन कोर्ट आदि सभी विशेष न्यायालय तोड़ दिये गये।

पार्लियामेंट के उपर्युक्त कार्य रचनात्मक और स्थायी रूप में हुये। ये सुधार के कार्य सदा कायम रहे। सन् १६६० ई० में भी पुनर्स्थापन के समय इन नियमों में परिवर्तन नहीं किया गया। इन नियमों के द्वारा पार्लियामेंट ने देश के टैक्स के ऊपर अपना सर्वाधिकार कायम किया और देश का साधारण कानून ही प्रधान और सर्वोपरि माना गया। लेकिन शासन (कार्यकारिणी) का प्रधान अभी राजा ही रहा। फिर भी अब पार्लियामेंट की उपेक्षा करना सम्भव न रहा। राजा के लिये पार्लियामेंट का सहयोग जरूरी हो गया। अब वैधानिक या सीमाबद्ध राजतन्त्र (Monarchy) का सिद्धान्त कायम हो गया।

गृह युद्ध के कारण—सन् १६४१ ई० की जुलाई में यह मालूम पड़ता था कि राजा और पार्लियामेंट के झगड़े का अन्त हो गया और देश में शान्ति स्थापित हो जायगी। लेकिन यह तो स्वप्न था, ऊपरी स्थिति थी और वास्तविकता तो कुछ दूसरी ही थी। अब तक पार्लियामेन्ट में पूरी एकता थी और सभी कार्य सर्वसम्मति से हुए थे। लेकिन इसके बाद ही पार्लियामेंट में मतभेद होना शुरू हो गया। इसके सदस्य दो दलों में बँट गये—नर्मपन्थी और उग्रपन्थी। नर्मपन्थियों ने राजा और बिशपों का पक्ष लिया। एक ही वर्ष के बाद सन् १६४१ ई० के अगस्त में राजा और पार्लियामेंट के बीच भीषण गृहयुद्ध आरम्भ हो गया।

(१) धार्मिक कारण—पहले धर्म के प्रश्न पर मतभेद पैदा हुआ। पार्लियामेन्ट में बहुसंख्यक सदस्य बिशपों के विरोधी थे क्योंकि ये सभी राजा के पक्ष के थे।

(क) बिशपों का बहिष्कार बिल—उग्रपन्थियों ने कौमन्स सभा में एक बिल पेश किया। इसका उद्देश्य लार्ड सभा और प्रिवी कौंसिल से बिशपों का बहिष्कार करना था। यह बिल कौमन्स सभा में पास हो गया लेकिन लार्ड सभा में अस्वीकार कर दिया गया।

(ख) रूट ऐंड ब्रांच बिल—इसके बाद उग्रपन्थियों ने रूट एन्ड ब्रान्च (Root-and Branch) नाम के एक बिल को कौमन्स सभा में पेश किया। इस बिल का उद्देश्य यह था कि देश के स्थापित चर्च से बिशपों को निकाल दिया जाय और चर्च का प्रबन्ध जनता द्वारा नियुक्त कमीशन के हाथ में दे दिया जाय। यह क्रान्तिकारी प्रस्ताव था। इंगलैण्ड का राष्ट्रीय चर्च सुधार आन्दोलन (Reformation) के ही समय से स्थापित था। इस प्रकार इस प्रस्ताव से लॉड द्वारा प्रचलित परिवर्तनों पर नहीं बल्कि एलिज़ाबेथ द्वारा स्थापित व्यवस्था पर हमला किया जा रहा था। अतः इस बिल के ऊपर लम्बा और गरम विवाद हुआ और इसका जोरदार विरोध हुआ। पार्लियामेन्ट के सदस्य करीब दो बराबर भागों में बँट गये थे। अतः यह बिल पास न हो सका। इसके बाद पार्लियामेन्ट स्थगित हो गई।

(२) राजनैतिक कारण—जब तक पार्लियामेंट स्थगित थी तब तक दो तीन घटनाएँ हुईं :—

(क) स्कॉटलैंड में चार्ल्स का आगमन—सन् १६४१ ई० के अगस्त में चार्ल्स स्कौटलैंड गया। वह वहाँ की धार्मिक समस्या को निश्चित रूप से हल कर देना चाहता था। उसने स्कॉटों की बहुत सी बातें स्वीकार कर लीं। इससे खुश होकर उसके पक्ष में एक दल कायम हो गया। मौन्ट्रोज का अर्ल इस दल का नेता था। इसी के नेतृत्व में कुछ प्रेसबिटेरियन नेताओं को गिरफ्तार करने और मारने के लिए एक षड्यन्त्र रचा गया। यह बात छिप न सकी और इंगलैंड तक पहुँच गई। अतः चार्ल्स के प्रति पार्लियामेंट का सन्देह बढ़ने लगा।

(ख) रानी के प्रति पार्लियामेंट का सन्देह—पार्लियामेंट को रानी के प्रति भी सन्देह हो रहा था क्योंकि यह अफवाह फैल रही थी कि वह उसे कुचलने के लिये यूरोप से सेना पाने की कोशिश कर रही है।

(ग) आयरलैंड का विद्रोह—इसी बीच आयरलैंड में कैथोलिकों का विद्रोह हुआ। यह घटना अक्टूबर महीने में हुई। इस समय स्ट्रैफोर्ड आयरलैंड से अनुपस्थित था। इसके फलस्वरूप पाँच हजार प्रोटेस्टेंट मारे गये। लेकिन इस घटना का विवरण बहुत बढ़ा चढ़ा कर इंगलैंड में किया जा रहा था। प्रोटेस्टेंटों के खून खौलने लगे। राजा के प्रति सन्देह और क्रोध बढ़ने लगा क्योंकि कैथोलिकों का कहना था कि वे राजा के पक्ष में ही सब कार्य कर रहे हैं और एक बार स्ट्रैफोर्ड भी आयरलैंड से ही सेना भेज कर इंगलैंड में विरोधियों को दबाने की योजना बना रहा था।

(घ) सेना पर नियन्त्रण का प्रश्न—इस विद्रोह को दबाने के लिये सेना की आवश्यकता पड़ी। लेकिन यह सवाल उठा कि इस सेना पर नियन्त्रण किसका रहे—राजा का या पार्लियामेंट का। पार्लियामेंट को यह भय था कि चार्ल्स सेना लेकर आयरिशों से मेल कर इंगलैंड पर हमला कर बैठेगा। वास्तव में राजा में विश्वास या अविश्वास का प्रश्न उपस्थित हो गया।

(ङ) राजा में अविश्वास—नर्मपन्थियों ने राजा में विश्वास और उग्रपन्थियों ने अविश्वास दिखलाया। पहले दल के नेता हाइड और फॉकलैन्ड थे और दूसरे दल के नेता पिम और हैम्पडैन थे। पार्लियामेंट में उग्रपन्थियों का ही बहुमत था। उग्रपन्थियों के लिये राजा में अविश्वास का कारण बतलाना जरूरी था ताकि लोकमत उनके पक्ष में हो सके।

महान् विरोध पत्र—अतः जब पार्लियामेंट की बैठक नवम्बर में पुनः शुरू हुई तो उग्रपन्थियों की तरफ से एक महान् विरोध पत्र (ग्रैन्ड रीमोन्सट्रैन्स) पेश किया गया। यह रक्षा का साधन और कार्य क्रम दोनों ही था। इसमें मुख्यतः दो हिस्से थे। पहले में चार्ल्स के द्वारा अब तक के किए गये दुष्कर्मों और पार्लियामेंट के द्वारा किये गये सुधारों का विवरण था। दूसरे में भविष्य के लिये शासन और धर्म सम्बन्धी सुधार की योजनायें थीं। शासन के विषय में यह प्रस्ताव किया गया था कि कॉमन्स सभा के विश्वासपात्र व्यक्ति ही राजा के मन्त्री चुने जायँ। धार्मिक मामलों के लिये यह योजना बनाई गई थी कि पार्लियामेंट द्वारा मनोनीत पादरियों की एक सभा (Synod of Divines) कायम की जाय।

ये प्रस्ताव बड़े ही क्रान्तिकारी थे। इन परिवर्तनों से राज्य और चर्च दोनों में ही क्रान्ति हो जाती। राजा और बिशप दोनों के ही अधिकारों पर हस्तक्षेप किया गया था। पार्लियामेंट के सदस्य अब वैधानिक प्रतिबन्ध के बदले राज्य और चर्च में अपना प्रत्यक्ष नियन्त्रण कायम करना चाहते थे।

विरोध पत्र के ऊपर बड़े ही गरम और जोशीले वाद विवाद हुए। मारपीट तो नहीं हुई पर और सब कुछ हो गया। फिर भी ११ मतों की अधिकता से विरोध पत्र पास हो ही गया। पक्ष में १५९ और विपक्ष में १४८ मत मिले थे।

अब राजा और पार्लियामेंट के बीच युद्ध निश्चित सा हो गया। राजा अपने पक्ष में एक दल पाकर उत्साहित हो गया और वह पार्लियमेंट से भी तंग आ गया था। अब वह हिंसात्मक तरीकों से पार्लियामेंट को दबाने की कोशिश करने लगा।

(च) राजा के द्वारा पाँच सदस्यों को बलात पकड़ने की कोशिश—इतिहास

यह बतलाता है कि हिंसात्मक तरीकों की असफलता बड़ी ही हानिकारक होती है। लेकिन चार्ल्स को इस बात का ज्ञान नहीं था। उसने कॉमन्स सभा के पाँच सदस्यों पर स्कॉटों के साथ गुप्त पत्रव्यवहार करने के लिये राजद्रोह का अभियोग लगाया। इतना ही नहीं, रानी के प्रभाव में आकर वह उन सदस्यों को पकड़ने के लिये एक सेना के साथ सभा भवन में चला गया। लेकिन उसके पहुँचने के पहले ही वे सदस्य भाग कर लंदन शहर में चले गये। चार्ल्स का यह पार्लियामेंट के अधिकार पर हस्तक्षेप था। उसका उद्देश्य भी पूरा नहीं हुआ और पार्लियामेंट भी और अधिक उत्तेजित हो उठी। युद्ध अब और भी नजदीक आ गया। ये सभी घटनाएँ सन् १६४२ ई० के जनवरी में हो रही थीं।

इसी समय राजा ने एक रियायत की। उसने लार्ड सभा से बिशपों के बहिष्कार के लिए बिल स्वीकार कर लिया। लेकिन ऐसा करने में उसकी यह नीति थी कि युद्ध की तैयारी के लिये उसे कुछ समय मिल जाय।

(छ) सेना बिल की स्वीकृति—अब दोनों दल के लोग सेना पर अपना अपना अधिकार करने की कोशिश करने लगे। इसी उद्देश्य से पार्लियामेंट में एक बिल पेश किया गया जो पास भी हो गया। इसे सेना बिल (Militia Bill) कहा जाता है। लेकिन राजा ने इसे अस्वीकार कर दिया।

(ज) उन्नीस निवेदन की राजा द्वारा अस्वीकृति—इसी समय पार्लियामेंट ने राजा के समक्ष उन्नीस निवेदन (नाइनटीन प्रोपोज़ीशन) उपस्थित किये। इन निवेदनों को स्वीकार कर लेने से एक दम क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जाते। कार्यकारिणी, न्याय विभाग, सेना, चर्च—सबों पर पार्लियामेंट का अधिकार स्थापित हो जाता। राजा द्वारा इन निवेदनों की स्वीकृति की आशा नहीं की जा सकती थी। अपने ही पैरों में वह स्वयं कुल्हाड़ी नहीं मार सकता था। अतः उसने इन निवेदनों को साफ ना मंजूर कर दिया और इन पर बहस तक नहीं की।

दोनों ही दल युद्ध के लिये तैयार थे। अप्रैल महीने में होथम नामक हलके के गवर्नर ने अपने नगर में राजा के प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया। सन् १६४२ ई० की २२ अगस्त को राजा ने नौटिंघम में अपना झंडा फहरा दिया और गृह युद्ध आरम्भ हो गया।

गृह युद्ध की प्रकृति

(क) व्यापकता और भिन्न भिन्न उद्देश्य—यह गृह युद्ध करीब दस वर्षों तक जारी रहा और अँगरेजी द्वीप समूह के हर एक हिस्से में व्याप्त था। तीनों जगहों इंगलैंड, स्कॉटलैंड और आयरलैंड, में गृहयुद्ध के भिन्न भिन्न उद्देश्य थे। इंगलैंड

में यह दो राजनैतिक और दो धार्मिक विचार-धाराओं में संघर्ष था। स्कॉटलैंड में प्रेसबिटेरियन धर्म को प्रधान और राष्ट्रीय धर्म बनाने के लिये युद्ध चल रहा था। आयरलैंड में आयरिशों ने अंगरेजी और प्रोटेस्टेंट प्रधानता से मुक्त होने के लिये विद्रोह किया था। इन विभिन्न उद्देश्यों के कारण गृहयुद्ध बड़ा ही विकट हो गया था।

(ख) इंगलैंड में दलबन्दी—यह गृहयुद्ध श्रेणी युद्ध नहीं था जिसमें एक श्रेणी के लोग दूसरी श्रेणी के विरुद्ध लड़ते हों। हर एक वर्ग, हरएक काउन्टी, हर एक परिवार दो भागों में विभक्त थे। लार्ड सभा के तीन चौथाई और कॉमन्स सभा के एक तिहाई सदस्य राजा की तरफ और शेष सदस्य पार्लियामेंट की तरफ थे। पार्लियामेंटरी पार्टी के कई नेता भी लार्ड ही थे। अधिक स्पष्ट रूप से धर्म के आधार पर दलबन्दी मालूम होती थी। ऐंग्लिकन और कैथोलिक राजा की तरफ और प्यूरिटन पार्लियामेंट की तरफ थे। एक तरह से यह भी कहा जा सकता है कि अधिकांश अमीर और रईस और उनके आश्रित किसान राजा के पक्ष में तथा अधिकांश नागरिक और छोटे जमींदार पार्लियामेंट की ओर थे। भौगोलिक दृष्टि से हम्बर से साउथम्पटन तक एक रेखा खींचने से दोनों पक्षों के क्षेत्रों का विभाजन होता है। उस रेखा के उत्तर और पश्चिम में, जो कुछ पिछड़ा हुआ गरीब क्षेत्र था, राजा का पक्ष मजबूत था। दक्षिण और पूरब में, जो कुछ बढ़ा हुआ धनी क्षेत्र था, पार्लियामेंट का पक्ष मजबूत था। मोटे तौर पर यॉर्क और लंकास्टर तथा रिफॉर्मेशन के समर्थकों और विरोधियों के बीच यही विभाजन था।

(ग) दोनों पक्षों की सेनाएँ—दोनों ही तरफ शिक्षित और अनुभवी सैनिकों की कमी थी क्योंकि इंगलैंड अभी तक मुख्यतः सैनिक देश न था। अतः दोनों ही तरफ भाड़े वाले सैनिक भरे पड़े थे। लेकिन सन् १६४५ ई० तक पार्लियामेंट की सेना में ऐसे सैनिकों की संख्या अधिक थी। लेकिन उसी साल क्रॉमवेल ने पार्लियामेंटरी सेना का संगठन किया।

जल सेना के ऊपर पार्लियामेंट का ही अधिकार था। पार्लियामेंट को बहुत लाभ हुए। इसी के कारण वह बाहरी सहायता को रोकने, भीतरी सहायता पहुँचाने और तटस्थ नगरों की रक्षा करने में समर्थ हो सकी। पार्लियामेंट की सेना में पैदल सेना की भी अधिकता थी और यह अच्छी भी थी। फिर भी इसमें कुछ त्रुटियाँ थीं। कुछ लोग भाले बर्छे तथा कुछ बन्दूकों से लड़ने वाले थे। पहली श्रेणी के लोग ५ गज से दूर के युद्ध में दूसरी श्रेणी के लोग निकट यानी मुठभेड़ के युद्ध में उपयोगी न थे। बन्दूकें भारी और लम्बी होती थीं और उनके भरने तथा चलाने में समय भी विशेष लगता था।

पार्लियामेंटरी सेना के नायक लार्ड एसेक्स और लार्ड मैनचेस्टर थे। ये लोग पर्याप्त योग्य नहीं थे और राजा को विशेष तकलीफ देना दिल से नहीं चाहते थे। कुछ समय के बाद पार्लियामेंट को क्रॉमवेल जैसा योग्य सेनापति प्राप्त हो गया।

पहले दो वर्षों तक राजा का दल युद्ध नीति और सैन्य-संचालन-कौशल में विशेष आगे था। राजा की ओर अश्व सेना की अधिकता थी। घोड़े और सवार दोनों ही अच्छे थे। स्वयं राजा की उपस्थिति भी कम लाभ की बात न थी। वह उद्देश्य की एकता और सेना की नायकता का स्वरूप था और राष्ट्र का सिरमौर था। राज-पक्षी दल का नेता चार्ल्स का भतीजा प्रिन्स रूपर्ट था। वह कुशल घुड़सवार, साहसी और वीर पुरुष था। वह बाईस वर्ष का एक नवयुवक था, फिर भी किसी युद्ध की योजना तैयार करने में बड़ा ही दक्ष था। अपनी सेना में जोश पैदा करने की उसमें अद्भुत शक्ति थी। लेकिन उसमें एक बड़ा अवगुण यह था कि वह कटु और उतावले प्रकृति का आदमी था। अतः सबों के लिये उसके साथ मिलकर काम करना कठिन हो जाता था। उसके उतावलेपन से राजपक्षी दल में कमजोरी पैदा होती थी। इस ओर एक दूसरा नायक लिन्डसे का अर्ल भी था।

राजपक्षी दल वालों को कैवेलियर कहा जाने लगा क्योंकि इधर अश्वसेना की अधिकता थी। पार्लियामेंटरी दलवालों को राउन्डहेड कहा जाने लगा क्योंकि इधर प्यूरिटनों की अधिकता थी जिनके सिर के बाल कटे हुए थे।

(घ) कटुता और हत्या का अभाव—इंगलैंड में पहले भी गृहयुद्ध हुआ था। गुलाबों की लड़ाई इसका एक उपयुक्त उदाहरण है। इस युद्ध में मारकाट, लूटपाट बड़े पैमाने पर हुए और कुलीन श्रेणी के बहुत से लोगों की जानें गईं। तुलनात्मक दृष्टि से स्टुअर्ट जमाने के गृहयुद्ध में कटुता और हत्या का अभाव रहा। युद्ध के पिछले हिस्से में कटुता की मात्रा विशेष थी। लेकिन सम्पूर्ण युद्ध पर दृष्टिपात करने से कत्लेआम की मात्रा मामूली दीख पड़ती है। विजय के बाद भी राजा के सिवा और किसी को फाँसी नहीं हुई।

गृह युद्ध की प्रगति (अगस्त १६४२ ई० से जून १६४६ ई० तक) एजहिल की लड़ाई १६४२ ई०—सन् १६४२ ई० के अगस्त महीने में युद्ध आरम्भ हो गया। प्रारम्भ में राजपक्षी दल की सफलता होती दिखलाई पड़ी। पार्लियामेंट की छावनी लन्दन में थी और राजा अपनी सेना लेकर उसी तरफ बढ़ा। एजहिल में दोनों दलों में लड़ाई हो गई लेकिन स्पष्ट रूप से किसी दल की जीत नहीं हुई। तो भी राजा लन्दन के समीप बढ़ता हुआ पहुँच गया। लेकिन हजारों व्यक्ति उसके लन्दन जाने के रास्ते

को रोके हुए थे। अतः वह ऑक्सफोर्ड की ओर घूमकर गया और इसे अपने अधिकार में कर यहीं पर उसने अपनी छावनी डाल दी। लेकिन लन्दन की तरफ चढ़ने के लिये कोशिश न करना राजा की बड़ी भूल साबित हुई क्योंकि राजा का दल लन्दन के इतने समीप फिर कभी नहीं पहुँच सका।

न्यूबरी का युद्ध १६४३ ई०—सन् १६४३ ई० के आरम्भ में चार्ल्स ने लंदन पर तीन ओर से चढ़ाई करने के लिये योजना बनाई। पार्लियामेंटरी दल की दशा निराशाजनक थी और प्रायः हार होती रही। चालग्रोव की लड़ाई में हैम्पडन भी घायल हुआ और उसकी मृत्यु कुछ समय बाद हो गई। चार्ल्स के हाथ में कई शहर आ गये। लेकिन सितम्बर महीने में युद्ध का रुख बदल गया। इस समय तक एसेक्स ने अपनी सेना का संगठन कर लिया था। दोनों दलों के बीच न्यूबरी में युद्ध हुआ। किसी दल की हारजीत का निर्णय ठीक-ठीक न हो सका लेकिन राजपक्षी दल की विशेष हानि हुई। अक्टूबर में विन्सबी की लड़ाई पार्लियामेंट के पक्ष में रही और इस लड़ाई में क्रामवेल प्रधान था।

सोलेम्न लीग एण्ड कोवेनेन्ट—सेसेशन—सन् १६४३ ई० के अन्त तक दोनों पक्षों का जोर बराबर रहा और दोनों पक्षों ने स्कॉटों से सहायता माँगी। दिसम्बर में पार्लियामेंट के एक बहुत बड़े नेता पिम की मृत्यु हो गई। लेकिन वह पहले से ही स्कॉटों से सहायता लेना चाहता था और मरने के पहले ही स्कॉटों से सन्धि की बातचीत ठीक कर चुका था। स्कॉट प्रेस्बिटेरियनों को भी चार्ल्स से बहुत भय था। अतः स्कॉटों ने पार्लियामेंट को ही सहायता देने के लिये अपनी राय प्रकट की। दोनों के बीच एक सुलहनामा लिखा गया। जिसे 'सौलेम्न लीग एन्ड कोवेनेन्ट' कहते हैं। स्कॉटों ने २०,००० सेना से पार्लियामेंट की सहायता करने के लिये और पार्लियामेंट ने अंगरेजी चर्च को स्कॉटिश चर्च के आधार पर सुधारने की प्रतिज्ञा की। चार्ल्स ने भी आयरिश कैथोलिकों के साथ एक सन्धि की जिसे 'सेसेशन' (Cessation) कहते हैं। चार्ल्स ने अपने शासन को सहिष्णु और नर्म करने और आयरिशों ने उसे सहायता देने की प्रतिज्ञा की। लेकिन आयरिश राजा के लिये विशेष उपयोगी सिद्ध न हुए। लोग उनसे कैथोलिक होने के कारण घृणा करते थे और उनकी उपस्थिति से राजा के समर्थकों के बीच मतभेद पैदा हो गया।

मार्स्टनमूर का युद्ध जुलाई १६४४ ई०—सन् १६४४ ई० के मध्य में मार्स्टनमूर में एक महान् युद्ध हुआ। इस युद्ध में बहुत से लोग शामिल थे। राजा की ओर से सत्रह हजार और पार्लियामेंट की ओर से छब्बीस हजार लोग लड़ने के लिये इकट्ठे

हुए थे। क्रॉमवेल रूपर्ट का समकक्ष था। वह क्रॉमवेल और उसकी सेना को 'आयरन-साईड्स' (Ironsides) कहता था। इस युद्ध में राजपक्षी दल की बुरी तरह से हार हुई। न्यूकैसिल मैदान छोड़कर भाग गया और छः उत्तरी प्रान्त राजा के हाथ से निकल गये। इस युद्ध ने क्रॉमवेल को उच्चतम श्रेणी का एक सेनापति साबित कर दिया। विजय का श्रेय क्रौमवेल को ही प्राप्त था क्योंकि पार्लियामेंटरी दल के तीन प्रमुख सेनापति युद्ध-स्थल से भाग गये थे।
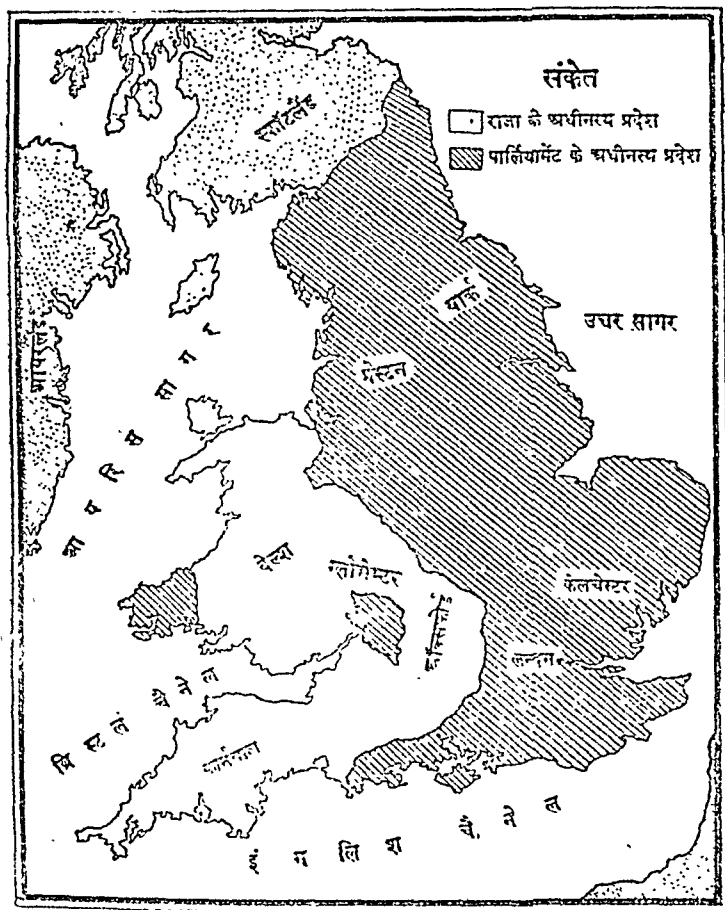
नवम्बर १६४४ ई० के गृहयुद्ध के समय इंगलैंड और वेल्स

न्यूबरी का दूसरा युद्ध १६४४ ई०—लेकिन इसी साल के अन्त में न्यूबरी में युद्ध हुआ जो निर्णायक नहीं था। उसमें किसी की हार-जीत नहीं हुई।

आत्म बलिदान-विधान—अब तक पार्लियामेंट की सेना के नायक पार्लियामेंट के सदस्य ही होते आ रहे थे। ये लोग युद्ध-कला में अनुभवहीन होते थे और युद्ध क्षेत्र में सुस्ती तथा ढिलाई दिखलाते थे। न्यूबरी का अनिर्णायक युद्ध इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण था। अतः दो परिवर्त्तन किये गये (क) पार्लियामेंट ने आत्म-बलिदान-विधान (सेल्फ डिनाइंग ऑर्डिनेंस) पास किया जिसके मुताबिक पार्लियामेंट के सदस्यों को अपने-अपने सैनिक पदों से स्तीफा देना पड़ा। लेकिन क्रॉमवेल के बिना तो काम चलना कठिन ही नहीं, असम्भव था। अतः इस विधान के अपवाद स्वरूप क्रॉमवेल को पुनः सेनानायक नियुक्त कर लिया गया। (ख) एक नियमित पेशेवर सेना का निर्माण किया गया जो नये ढंग की सेना (न्यू मौडेल आर्मी New Model Army) कहलाने लगी। यह पार्लियामेन्ट से बिल्कुल स्वतन्त्र थी। इससे सैनिकों को निश्चित समय पर वेतन दिया जाने लगा और इसकी अश्वसेना तथा तोपखाने को मजबूत किया गया। उच्चकुल के योग्य व्यक्ति ही सेनापति नियुक्त किये गये। इस सेना का प्रधान सेनापति फेयरफैक्स नियुक्त किया गया जो एक वीर साहसी सैनिक था। अश्वसेना का सेनापति क्रॉमवेल को नियुक्त किया गया। इस प्रकार पहले पहल सेना का संगठन किया गया जो किसी समय कहीं पर भी भेजी जा सकती थी।

इस नयी सेना के संगठन से तात्कालिक लाभ भी हुआ। सन् १६४५ ई० के ग्रीष्मऋतु में दोनों दलों के बीच नेज्बी में घमासान युद्ध हुआ। राजपक्षी दल की बुरी तरह से हार हुई। राजा के हाथ से सारे मध्यप्रदेश निकल गये; उसके बहुत से सैनिक और नायक मारे गये, बहुत कैद कर कर लिये गये और बहुत से सामान जब्त कर लिये गये। अतः एक समकालीन इतिहास लेखक ने कहा है कि नेज्बी के युद्ध में राजा और राज्य दोनों ही का अन्त हो चुका था। दक्षिण-पश्चिम में भी राजपक्षी दल की हार हुई।

स्कॉटलैंड में मौन्ट्रोज के अर्ल की हार—इसी बीच स्कॉटलैंड में राजा के पक्ष से मौन्ट्रोज के अर्ल ने विद्रोह किया। वह एक कुलीन घराने का व्यक्ति था और उसने अपने नेतृत्व में पहाड़ी बाशिन्दों को संगठित किया। सन् १६३० ई० में उसने तो राष्ट्रीय प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर किया था और कवेनेन्टरों का साथ दिया था। लेकिन वह दिल से राजा का प्रेमी था। वह राजा के विरुद्ध स्कॉट पार्लियामेन्ट की सन्धि को नापसन्द करता था और मार्स्टनमूर के युद्ध के एकाध महीने के बाद उसने तुरन्त विद्रोह कर दिया। प्रारम्भ में एक वर्ष के अन्दर उसे पूरी सफलता प्राप्त हुई लेकिन अन्त भला तो सब भला। अन्त में तो फिलिपहाफ के युद्ध में उसकी

हार ही हो गई। इसके कई कारण थे। मैकडोनल्ड अपने दुश्मन कैम्पबेलों से युद्ध करना चाहते थे, अतः वे मौन्ट्रोज के दल से हटने लगे। लोलैंड प्रदेश और स्कॉटलैंड की लोक-सभा ने मौन्ट्रोज के साथ सहानुभूति नहीं दिखलाई। आयरिश सैनिक निकम्मे थे। युद्ध में हारने के बाद मौन्ट्रोज यूरोप भागकर चला गया।

अब निराश हो चार्ल्स ने नेवार्क में सन् १६४६ ई० के मई महीने में स्कॉटों के हाथ आत्म-समर्पण कर दिया। जून में ऑक्सफोर्ड पर भी पार्लियामेन्टरी दल का प्रभुत्व स्थापित हो गया। इस प्रकार ऑक्सफ़ोर्ड के पतन के साथ ही प्रथम गृहयुद्ध भी समाप्त हो गया। इस युद्ध में पार्लियामेन्ट की जीत और राजा की हार के कई कारण थे :—

(१) पार्लियामेंट की ओर धनी और शिक्षित वर्ग था। देश की लगभग दो-तिहाई जनता और तीन-चौथाई सम्पत्ति पर पार्लियामेन्ट का अधिकार था। इसके विपरीत राजा की प्रधानता उन भू-भागों में विशेष थी जहाँ की आबादी कम थी और लोग गरीब तथा पिछड़े हुए थे।

(२) जहाजी सेना ने पार्लियामेन्ट का ही साथ दिया था। इससे पार्लियामेन्ट को कई लाभ थे। इसी के कारण वह बाहरी देशों की सहायता रोकने, देश के अन्दर समय पर जरूरी सेना या रसद आसानी से पहुँचाने और तटस्थ राज्यों की सहायता करने में समर्थ हो सकी। जहाजी सेना के अभाव में राजा को कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। बाहरी सहायता प्राप्त करना असम्भव हो गया।

(३) पार्लियामेन्ट की पैदल-सेना भी कुशल और अच्छी ही थी। उसे कम सैनिकों की आवश्यकता भी पड़ती थी, क्योंकि पार्लियामेन्ट के पास दूर-दूर पर बहुत से छोटे-छोटे दुर्ग और किलाबन्द ग्रामीण घर थे। लेकिन राजा को ऐसा कोई लाभ नहीं था।

(४) पार्लियामेन्टरी सेना के नायक कुशल और अनुभवी थे। एसेक्स का अर्ल क्रौमवेल और ब्लेक प्रसिद्ध सेनानायक थे। एसेक्स पैदल-सेना का, क्रौमवेल अश्वसेना का तथा ब्लेक जहाजी सेना का प्रधान था। क्रौमवेल ने अश्वसेना का महत्व समझा और उसे सुसंगठित किया। उसके सैनिक अनुशासन प्रेमी थे और धार्मिक तथा स्वतन्त्रता की भावनाओं से ओतप्रोत थे। ब्लेक ने सामुद्रिक शक्ति को सुदृढ़ किया। राजपक्षी दल का सेनापति प्रिन्स रूपर्ट वीर और साहसी व्यक्ति तो था, लेकिन उतावला, कटु और तीव्र प्रकृति का था। अतः सहयोगियों के लिये उसके साथ मिलकर काम करना कठिन हो जाता था। उसके ऐसे आचरण से राजपक्षी दल

में कमजोरी पैदा हो जाती थी। स्वयं राजा भी तो सेनापति का काम कर रहा था। लेकिन वह जैसा ही असफल शासक था वैसा ही असफल नायक भी था। उसमें दृढ़ता और निर्णायक शक्ति का अभाव था। एक बार रानी ने उसके पास लिखा था—"अच्छा निर्णय कर उसे अनुसरण कीजिये। आरम्भ करके उसे स्थगित करना आपकी बर्बादी का कारण होगा।"

(५) हमलोग पहले देख चुके हैं कि पार्लियामेंट के लिये स्कॉटों की सहायता बड़ी ही उपयोगी साबित हुई। इसके विपरीत राजा के लिये आयरिशों की सहायता बड़ी ही हानिकारक साबित हुई।

(६) पार्लियामेंट को पिम जैसा प्रतिभाशाली राजनीतिज्ञ प्राप्त था। उसी के कारण स्कॉटों की सहायता प्राप्त हो सकी। लेकिन राजा को ऐसा कोई मन्त्री नहीं प्राप्त था।

(७) राजा के ग्यारह वर्षों के अनियंत्रित शासन से प्रत्येक विभाग के लोग असन्तुष्ट हो गये थे। खासकर मध्यवर्ग वाले, जिसमें व्यापारी लोग अधिक थे; उसके अनुचित टैक्सों से असंतुष्ट थे। अतः राजा को आर्थिक सहायता मिलने में बड़ी कठिनाई थी।

युद्ध के बाद की स्थिति और दलबन्दियाँ, जून १६४६ ई० से जनवरी १६४९ ई० तक—गृहयुद्ध का तो अन्त हुआ लेकिन विवादास्पद प्रश्नों का उत्तर नहीं प्राप्त हो सका। भविष्य में इंगलैंड का शासन किस प्रकार होना चाहिये; इसाई धर्म का कौन-सा स्वरूप राज्यधर्म के रूप में स्वीकार किया जाय और दूसरे धर्मावलम्बियों के साथ कहाँ तक सहिष्णुता की नीति अपनाई जाय। इन प्रश्नों का समाधान सहज नहीं था, बल्कि बहुत ही कठिन था। इस समय इंगलैंड में कई दल थे और प्रत्येक दल के लोग अपने-अपने तरीकों से इन प्रश्नों का समाधान चाहते थे। इस कारण ये प्रश्न दिन पर दिन सहज होने के बदले विकट होते गये।

इस समय निम्नलिखित दल थे:—

(१) **राजा और राजपक्षी दल**—राजा की हार हो जाने के बावजूद भी राजतन्त्र प्रणाली के समर्थक अभी मौजूद थे। चार्ल्स को भी अपनी मानमर्यादा का ख्याल अधिक था। अतः वह चर्च तथा बिशप, मन्त्री तथा सेना के ऊपर से अपना अधिकार हटाना नहीं चाहता था। अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिये वह देश के अन्दर और बाहर षड्यन्त्र करने के लिये भी तैयार था।

(२) स्कॉट सेना—स्कॉट सेना इंगलैंड में प्रेस्त्रिटेरियन धर्म की स्थापना देखना चाहती थी लेकिन चार्ल्स को गद्दी से हटाने के पक्ष में नहीं थी।

(३) लम्बी पार्लियामेंट—तीसरा दल था राजपक्षी दल के १७५ सदस्यों को छोड़कर लम्बी पार्लियामेंट के शेष सदस्यों का। इस दल के लोग चाहते थे कि राज्य चार्ल्स का रहे, लेकिन शासन पार्लियामेंट द्वारा हो। फिर भी इसे न्यूमौडल सेना से डर था, क्योंकि यह राज्य में एक स्वतंत्र शक्ति बन गई थी। धार्मिक विषयों में अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार यह दल इंगलैंड में प्रेस्त्रिटेरियन धर्म स्थापित करना चहता था।

(४) उग्रपन्थी—चौथा दल था उग्रपन्थियों का जिनमें विभिन्न मतवाले सम्मिलित थे। लोकतन्त्रवादी चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति को मताधिकार प्राप्त हो और पार्लियामेंट का वार्षिक अधिवेशन हो। साम्यवादी सभी लोगों के बीच समानता स्थापित करना चाहते थे। आदर्शवादी पूर्ण रूप से उदार शासन चाहते थे।

(५) नई आदर्श सेना—पाँचवाँ दल था नई आदर्श सेना का। इसमें स्वतन्त्रवादियों की प्रधानता थी। ये ऐंग्लिकन विशप और प्रेस्त्रिटेरियन सरदार किसी की भी प्रभुता नहीं चाहते थे और सभी धर्मावलम्बियों के लिये सहिष्णुता के पक्ष में थे। इस सेना की संख्या ५० हजार तक थी और यह सेना अनुभवी, सुशिक्षित और अनुशासन प्रिय थी। इसके सेनानायक भी चतुर और व्यावहारिक थे। क्रॉमवेल तो अपने युग का एक महान् पुरुष ही था।

पारस्परिक समझौते (क) चार्ल्स और स्कॉट—हम लोग पहले देख चुके हैं कि चार्ल्स ने स्कौट सेना को आत्मसमर्पण कर दिया था। स्कौट चाहते थे कि चार्ल्स सौलेम्न लीग और कवेनेन्ट की शर्तों को मान ले। लेकिन चार्ल्स ने उन्हें स्वीकार नहीं किया। जब पार्लियामेंट ने स्कौटों का वेतन चुका दिया तब स्कौट चार्ल्स को पार्लियामेंट के हाथ में सौंप कर अपने देश लौट गये।

(ख) राजा और पार्लियामेंट—विजय की घड़ी में पार्लियामेंट ने बड़ी ही असहिष्णुता दिखलाई। पार्लियामेंट लॉर्ड के सुधारों का अन्त कर देना चाहती थी। उसने ऐंग्लिकन के पूजापाठ के ऊपर कई प्रतिबन्ध लगा दिये। २००० ऐंग्लिकन पादरी चर्च से निकाल दिये गये। कैवेलियर जमींदारों के ऊपर भी कड़े-कड़े जुर्माने लगाये गये और वे लोग अपनी जमीन जायदाद भी वेचकर जुर्माना देने के लिये बाध्य किये गये। इस प्रकार पार्लियामेंट के अत्याचार से ऐंग्लिकनों और कैवेलियरों के बीच घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित हो गया और इन लोगों ने भी दूसरे चार्ल्स के राज्यकाल में प्यूरिटनों के साथ ऐसा ही कड़ा व्यवहार किया।

राजा के ऊपर भी पार्लियामेंट का कुछ कम दबाव नहीं था। राजा के सामने नये-नये प्रस्ताव रखे जाने लगे। राजा तो एक क़ैदी के रूप में नौर्थम्पटन शायर के होल्मनी हाउस में रखा गया था। पार्लियामेंट चाहती थी कि राजा कम से कम बीस वर्षों के लिये जल और स्थल सेना पर से अपना अधिकार हटा ले, इंगलैंड में प्रेस्बिटेरियन मत का प्रचार करे और कैथोलिकों को सजा दे। भला राजा अपने ही पैरों में अपने ही हाथों कुल्हाड़ी कब और क्यों मार सकता था। उसने पार्लियामेंट के प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया।

(ग) पार्लियामेंट और सेना—प्यूरिटनों के बीच एकता का अभाव था। पार्लियामेंट में प्रेस्बिटेरियन बहुमत था। सेना में स्वतंत्रवादियों का बहुमत था। अब सेना और पार्लियामेंट के बीच झगड़ा शुरू हो गया। इसके कई कारण थे। पार्लियामेंट प्रेस्बिटेरियन धर्म के पक्ष में थी और सेना आत्मविश्वासियों के लिये पूरी स्वतंत्रता के पक्ष में थी। दूसरा कारण यह था कि युद्ध समाप्त हो जाने से पार्लियामेंट एक-तिहाई सेना को रखकर बाकी सेना को बरखास्त करना चाहती थी और इस एक-तिहाई सेना को भी आयरलैंड में लड़ने के लिये भेजना चाहती थी। तीसरा कारण यह था कि पैदल सेना का साढ़े चार महीने का और अश्व सेना का साढ़े दस महीने का वेतन बाकी था और पार्लियामेंट सिर्फ डेढ़ महीने का वेतन चुका रही थी। इस प्रकार पार्लियामेंट के स्वार्थपूर्ण व्यवहार और अत्याचार से सैनिक बिगड़ उठे और अपने बाकी वेतन पाने के लिये पार्लियामेंट पर दबाव देने लगे। अपनी उचित माँगों का प्रचार करने के लिये उन्होंने एक कौंसिल भी नियुक्त की। इस बीच यह भी पता लगा कि राजा दोनों दलों को लड़ाना चाहता था। अतः एक सेनादल ने नौर्थम्पटन शायर से राजा को पकड़ कर न्यूमार्केट में अपने प्रधान छावनी में रख दिया। एक दूसरा दल लंदन जाकर कॉमन्स सभा से अपने 'विरोधी ग्यारह सदस्यों' के बहिष्कार की माँग करने लगा। क्रॉमवेल मध्यस्थ बनकर पार्लियामेंट और सेना के बीच समझौता करा देना चाहता था लेकिन पार्लियामेंट के दुर्व्यवहार से वह भी सेना के पक्ष में ही हो गया। राजनीति में सेना का यह पहला हस्तक्षेप था।

(घ) सेना और राजा—अब सेना और राजा के बीच समझौते की बात होने लगी। सेना में क्रॉमवेल के दामाद आयरटन की प्रधानता थी। राजा के सामने एक मसविदा पेश किया गया जिसे 'हेड्स ऑफ प्रोपोजल्स' (Heads of Proposals) कहते हैं। इसमें निम्नलिखित बातें थीं :—

(१) प्रत्येक दो वर्ष पर एक नयी पार्लियामेंट का चुनाव होना चाहिये और मतदाताओं की संख्या में वृद्धि होनी चाहिये।

(२) एक स्टेट कौंसिल नियुक्त हो जिसके सदस्य पार्लियामेंट के द्वारा मनोनीत किये जायेंगे और १० वर्षों तक वैदेशिक नीति तथा सेना पर इसी कौंसिल का अधिकार रहेगा।

(३) बिशप व्यवस्था राजधर्म मानी जायगी लेकिन कैथोलिकों के सिवा अन्य धर्मावलम्बियों के लिये सहिष्णुता की नीति रहेगी।

चार्ल्स की दयनीय अवस्था के सामने उपर्युक्त शर्तें उचित और नम्र थीं, फिर भी चार्ल्स ने उन्हें ठुकरा कर मूर्खता ही प्रदर्शित की।

(ङ) **चार्ल्स का स्कॉटों से समझौता**—सेना के द्वारा प्रेस्बिटेरियन मत का विरोध होने के कारण स्कॉट उससे असन्तुष्ट हो गये थे। अतः स्कॉटों के द्वारा उत्साहित किये जाने पर चार्ल्स फौजी छावनी से निकल कर वाइट द्वीप में पहुँच गया। लेकिन उसकी आशा के विरुद्ध उस द्वीप के गवर्नर ने चार्ल्स को कैद कर लिया। फिर भी उसने स्कॉटों से सन्धि पूरी कर ली थी। चार्ल्स ने इंगलैण्ड में तीन वर्ष के लिये प्रेस्बिटेरियन धर्म को स्थापित करने और दूसरे धर्मों का दमन करने के लिये प्रतिज्ञा की और बदले में स्कौटों ने चार्ल्स को राज्य दिलाने को प्रतिज्ञा की। यह सन्धि दिसम्बर सन् १६४७ ई० में हुई और इसे एनगेजमेंट या एग्रीमेंट कहते हैं।

द्वितीय गृहयुद्ध (१६४८ ई०)—अब पार्लियामेंट ने यह प्रस्ताव पास किया कि राजा से समझौते की कोई बात नहीं की जायगी। राजा और स्कॉटों की मन्त्रणा ने द्वितीय गृहयुद्ध को प्रारम्भ कर ही दिया। हैमिल्टन के ड्यूक ने एक स्कॉट सेना के साथ इंगलैण्ड पर चढ़ाई कर दी। वेल्स और दक्षिण-पूर्वी इंगलैंड में राजपक्ष के लोगों ने विद्रोह भी कर दिया। लेकिन इस बार पहले जैसा जोश और दिलचस्पी का अभाव रहा। स्वयं स्कॉटों में फूट थी। बहुत से प्रेसबिटेरियन मंत्री इंगलैंड से युद्ध करने के विरुद्ध थे। स्कौट सेना के पास अस्त्र-शस्त्र का भी अभाव था और अंगरेजी सेना उसका सामना करने को तैयार थी। फेयरफैक्स ने दक्षिण-पूरब की ओर जाकर विद्रोहियों को दबाया। क्रौमवेल ने वेल्स के विद्रोह को शान्त किया और प्रेस्टन में स्कॉट तथा शाही सेना को बुरी तरह हरा दिया। अब क्रॉमवेल सीधे स्कौटलैंड में चला गया और वहाँ प्रेस्बिटेरियन दल के प्रधान आर्गिल का अधिकार स्थापित कर दिया।

चार्ल्स को फाँसी—(क) न्यूपोर्ट की सन्धि—(ख) प्राइड्स पर्ज और रम्प पार्लियामेंट—इसी बीच राजा और पार्लियामेंट में एक सन्धि हुई जो न्यूपोर्ट की सन्धि कहलाती है। इसमें राजा ने तीन वर्षों के लिये प्रेस्बिटेरियन धर्म को स्थापित करने की प्रतिज्ञा की लेकिन दिल से वह शायद ही कोई प्रतिज्ञा करता था। उसके आचरण से सेना ऊब गई थी और युद्ध समाप्त होने पर सेना बल प्रयोग करने लगी। इसने

१ दिसम्बर १६४८ ई० को हर्स्ट कैसल नाम के एक किले में चार्ल्स को कैद कर लिया। ६ दिसम्बर को कौमन्स सभा के विरुद्ध एक सेना भेजी गई। सैनिकों ने दरवाजे पर खड़े होकर १४३ सदस्यों को, जिनमें अधिक प्रेस्बिटेरियन थे, भीतर प्रवेश करने से रोक दिया। इन सैनिकों का प्रधान कर्नल प्राईड था। अतः इस घटना को प्राईड की सफाई (Pride's Purge) कहते हैं। 'अब पार्लियामेंट में केवल ६०.सदस्य बच गये थे, अतः अब इसे रम्प पार्लियामेंट कहा जाने लगा। इनमें अधिकतर स्वतंत्रवादी थे और इनके एकमात्र सहायक सैनिक ही थे। अतः रम्प पार्लियामेंट राष्ट्र की प्रतिनिधि सभा नहीं रह गई थी।

(ग) चार्ल्स पर अभियोग और न्यायालय की स्थापना (घ) न्यायालय का निर्णय और राजा का वध—रम्प के सदस्य राजा की जीवन-लीला समाप्त करने के लिये डट गये। उसकी दृष्टि में अब राजा को सुधारने का कोई रास्ता नहीं था। अतः उसकी मृत्यु ही आवश्यक समझी गई। उन पर अभियोग लगाया गया। एक बिल के द्वारा रम्प ने चार्ल्स को अपनी प्रजा के विरुद्ध युद्ध करने के कारण राजद्रोही घोषित किया। लेकिन लॉर्ड-सभा ने इस बिल को अस्वीकार कर दिया। तब रम्प ने एक प्रस्ताव पास कर राजसत्ता का स्रोत जनता को घोषित किया। इसी आशय की एक घोषणा भी की गई कि चार्ल्स ने राष्ट्र के प्राचीन और बुनियादी कानून और स्वतंत्रता को उलटकर अनियंत्रित शासन स्थापित करने की चेष्टा की और इसके लिये उसने अपनी प्रजा से युद्ध तक किया, अतः वह राजद्रोही है। इस अभियोग पर विचार करने के लिये रम्प ने एक न्यायालय स्थापित किया। इसमें १३५ जज नियुक्त किये गए और ब्रैडशॉ इनका प्रधान था। जब न्यायालय बैठक आरम्भ हुई तो सिर्फ ६७ जज उपस्थित थे। बाकी लोग किसी न किसी बहाने से अनुपस्थित रह गये। बैठक वेस्ट मिनिस्टर हॉल में हुई थी। जाँच की कार्यवाही शुरू होने के समय श्रोताओं और दर्शकों की अपार भीड़ थी। अभियोग की जाँच का परिणाम तो पहले ही से निश्चित था। राजा ने इस न्यायालय को अनुचित और अवैध घोषित कर अपनी सफाई देने से इनकार कर दिया। न्यायालय ने उसे राजद्रोही और हत्यारा घोषित कर फाँसी की सजा दी। ३० जनवरी १६४६ ई० को राजमहल के सामने के मैदान में राजा फाँसी के लिये लाया गया। मैदान में, आसपास, घरों की छतों पर दर्शकों की भीड़ लगी हुई थी। इस भीड़ में बूढ़े-जवान, स्त्री-पुरुष, बच्चे, सरकारी-गैर सरकारी सभी लोग शामिल थे। उस समय चार्ल्स में अद्भुत धैर्य, गंभीरता, शान्ति और पवित्रता की झलक दीख पड़ती थी। दोपहर के बाद सवा दो बजे के करीब राजा का सिर अलग कर दिया गया। दर्शकों के मुख से 'आह' शब्द की आवाज़ हुई। जल्लाद

ने घोषणा की—'यह देश के शत्रु का सिर है।' सिर को देखकर बहुतों की आँखों से आँसू बहने लगा था।

राजा की फाँसी की समालोचना—क्रॉमवेल ने राजा के मृत शरीर को देखकर करुण शब्दों में कहा था —हा क्रूर आवश्यकता !' (Cruel Necessity) क्रूरता में तो सन्देह ही नहीं किया किया जा सकता लेकिन 'आवश्यकता' में सन्देह और विवाद हो सकता है।

(१) रम्प पार्लियामेंट ने न्यायालय का निर्माण किया था। लेकिन 'रम्प' को पार्लियामेंट नहीं कहा जा सकता। ४६० सदस्यों में सिर्फ ६० सदस्य ही इसमें रह गये थे। अतः यह राष्ट्र की प्रतिनिधि संस्था नही रह गई थी।

(२) रम्प में प्रायः सभी स्वतन्त्रवादी थे जो अपनी शक्ति के लिये सेना पर, न कि जनता पर, निर्भर थे।

(३) न्यायालय भी साधारण श्रेणी का नहीं था। एक विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिये इस विशेष न्यायालय की स्थापना की गई थी। इसके अधिकतर जज सैनिक थे जो नियमित शासन से अपरिचित थे। वे बदला लेने की भावना से प्रेरित थे।

(४) अभी राजसत्ता का केन्द्र राजा ही था, अतः उसके कार्यों की जाँच करना इस न्यायालय के अधिकार के बाहर की बात थी। इसी कारण चार्ल्स ने अपनी सफाई देने से ही इन्कार कर दिया। इस तरह चार्ल्स के गले के साथ न्याय का भी गला घोंटा गया। उसकी फ़ाँसी के साथ न्याय की भी फाँसी हुई।

(५) जिस उद्देश्य से यह सब किया गया उस उद्देश्य की पूर्ति भी नहीं हो सकी। हिंसा और अन्याय के कारण उद्देश्य की पूर्ति में बाधा पहुँची। सेना के प्रति घृणा और क्रोध फैलने लगा। राजा की मृत्यु से लोगों के हृदय में करुणा की भावना जाग्रत हो उठी और लोग राजा के अपराधों को भूलने लगे। राजा कानून और स्वतन्त्रता का रक्षक, चर्च और विधान के लिये शहीद समझा जाने लगा। देश में राजतन्त्र के पक्ष में प्रतिक्रिया शुरु हो गई। प्रेस्बिटेरियन और राजपक्षी दलों में निकट संपर्क स्थापित हो गया। 'किंगली इमेज' (Kingly Image) नामक एक किताब लिखी गई जिसे लोग बड़ी दिलचस्पी के पढ़ने लगे और राजा की प्रशंसा करने लगे। क्रॉमवेल और सेना के प्रभाव के कारण राजतन्त्र की पुर्नस्थापना कुछ ही वर्षों के लिये स्थगित रह सकी। १६६० ई० में ही राज्यपुर्नस्थापना होकर ही रही।

अध्याय ६

वैदेशिक नीति (१६०३-१६४६ ई०)

सन् १६०३ ई० में इंगलैंड की परिस्थिति—सन् १६०३ ई० में इंगलैंड पहले की अपेक्षा विशेष सुरक्षित था। १६०३ ई० के पहले उसके तीन बड़े दुश्मन थेः—स्कॉटलैंड, स्पेन और फ्रांस। स्कॉटलैंड तो बराबर ही इंगलैंड के दुश्मन का साथ देने को तैयार रहता था और इंगलैंड पर आक्रमण भी किया करता था। इस प्रकार स्कॉटलैंड इंगलैंड का सनातन का दुश्मन था। लेकिन अब तो एक स्कॉट ही इंगलैंड का राजा हुआ और दोनों देश एक ही राजा की छत्रच्छाया में आने के कारण मित्र बन गये। एलिजबेथ के राज्यकाल में ही आरमडा की लड़ाई में स्पेन की शक्ति कम हो गई और समुद्र पर इंगलैंड का प्रभुत्व जम गया। उसी समय फ्रांस की भी शक्ति कमजोर बना दी गई। इस समय तक आयरलैंड पर भी इंगलैंड की प्रभुता स्थापित हो रही थी। इंगलैंड में भी गद्दी का कोई दूसरा अधिकारी नहीं रह गया था जिसको लेकर विदेशी राष्ट्र देश के घरेलू मामले में हस्तक्षेप करते।

सन् १६१८ ई० तक की वैदेशिक नीति—जेम्स प्रथम शान्तिप्रिय व्यक्ति था। वह किसी देश से लड़ाई-झगड़ा मोल लेना नहीं चाहता था। कहीं भी युद्ध छिड़ जाने पर वह अपने देश को उससे बचाए रखना चाहता था। वैदेशिक नीति सम्बन्धी उसके विचार उत्तम और बुद्धिमतापूर्ण थे। लेकिन उन्हें कार्यरूप में लाने के लिये जेम्स में योग्यता का अभाव था।

स्पेन से सन्धि (१६०४ ई०)—सन् १६१८ ई० तक शान्ति कायम रखी गई। इसमें जेम्स के मन्त्री लार्ड सेलिसबरी का विशेष हाथ था। सन् १६१२ ई० में उसकी मृत्यु हो गई। लेकिन उस समय तक उसका बहुत बड़ा प्रभाव था। एलिजाबेथ के ही समय से स्पेन और इंगलैंड में दुश्मनी चली आ रही थी। अतः सन् १६०४ ई० में स्पेन के साथ एक सन्धि कर भेदभाव दूर करने की कोशिश की गई। ऊपर से तो दोनों देशों के बीच मित्रता कायम हो गई लेकिन मनोमालिन्य पूर्ण रूप से साफ नहीं हो सका था।

वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने की योजनाएँ

(क) राइन के एलेक्टर, फ्रेडरिक के साथ वैवाहिक संबंध—जेम्स का विचार था कि शान्ति स्थापना के लिये विभिन्न राज्यों और विभिन्न सम्प्रदायों के बीच वैवाहिक संबंध स्थापित करना आवश्यक है। अतः सन् १६१३ ई० में उसने अपनी लड़की एलिज़ाबेथ का विवाह काल्विनिस्ट सम्प्रदाय के नेता, राइन के एलेक्टर पैलेटिन, ऑरेंज के विलियम के पौत्र, फेडरिक से कर दिया।

(ख) स्पेन के साथ वैवाहिक संबंध के लिये प्रस्ताव—जेम्स स्पेन के साथ वैवाहिक सम्बन्ध कायम करने के लिये विशेष उत्सुक था। इंगलैंड प्रोटेस्टेंट-प्रधान देश था और स्पेन कैथोलिक प्रधान। जेम्स का ख्याल था कि यदि इन दोनों देशों में वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हो जाय तो यूरोप में शान्ति कायम हो जाय, क्योंकि इस तरह कैथोलिकों और प्रोटेस्टेंटों के बीच मैत्री भाव का विकास होगा। स्पेन बहुत धनी देश भी था, अतः वह समझता था कि दहेज के रूप में उसे बहुत-सा धन-दौलत मिलेगा जिससे उसकी आर्थिक कठिनाई कम हो जायगी। अतः जेम्स ने अपने ज्येष्ठ पुत्र हेनरी का विवाह स्पेन की राजकुमारी से करने का प्रस्ताव किया। लेकिन दुर्भाग्यवश थोड़े ही समय के बाद हेनरी की मृत्यु हो गई। फिर भी जेम्स निराश न हुआ और उसने अपने दूसरे पुत्र चार्ल्स का विवाह स्पेन की राजकुमारी के साथ करने के लिये निश्चय किया। सन् १६१८ ई० में स्पेनवासियों को खुश करने के लिये सर वाल्टर रैले जैसे प्रसिद्ध योद्धा को भी उसने प्राणदण्ड दे दिया।

प्रजा का विरोध—इससे यह स्पष्ट है कि स्पेन के साथ वैवाहिक सम्बन्ध कायम करने के लिये जेम्स कितना उत्सुक था। लेकिन उसकी प्रजा इस प्रस्ताव से विक्षुब्ध थी। इसके तीन मुख्य कारण थे—(क) स्पेन इंगलैंड का पुराना शत्रु था। एलिजाबेथ के समय में जल और थल से इंगलैंड का प्रभुत्व मिटाने के लिये स्पेन इङ्गलैंड से युद्ध कर रहा था और यदि आर्मेडा के युद्ध में स्पेन विजयी हो जाता तो इंगलैंड और संसार का इतिहास ही कुछ दूसरा होता। संसार से इंगलैंड की हस्ती ही मिट जाती। (ख) अंगरेज लोग धन-दौलत से भरे स्पेन के जहाजों और शहरों पर आक्रमण कर लूटपाट के जरिये बहुत धन प्राप्त कर लेते थे। स्पेन के साथ मित्रता हो जाने पर यह सम्भव नहीं होता और अंगरेज लुटेरों के रोजगार पिट जाते। (ग) स्पेन कैथोलिकों का एक बड़ा नेता था। लेकिन इंगलैंड प्रोटेस्टेंट-प्रधान देश था और अंगरेजों की दृष्टि में कैथोलिक देश तथा राजद्रोही बन गए थे।

स्पेनवासियों की भी उदासीनता—स्पेन भी इस वैवाहिक संबंध के पक्ष में

नहीं था। ऊपर भी हम लोग देख चुके हैं कि स्पेन और इंगलैंड दोनों पुराने शत्रु थे। अंगरेज व्यापारी स्पेन के शहरों और जहाजों पर आक्रमण कर लूट-पाट किया करते थे। कैथोलिक-प्रधान देश होने के कारण स्पेन वाले अपनी राजकुमारी की शादी किसी कैथोलिक राजकुमार से ही करना चाहते थे। लेकिन स्पेन वालों ने जेम्स के प्रस्ताव को साफ अस्वीकार भी नहीं किया। वे लोग इसके जरिये अपना स्वार्थ-साधन करने लगे। इंगलैंड के कैथोलिकों को सुविधा दिलाने के लिये स्पेनवाले इसे सुअवसर समझने लगे। अतः वे जेम्स को दिलासा देते हुए टालमटोल की नीति पर चलने लगे।
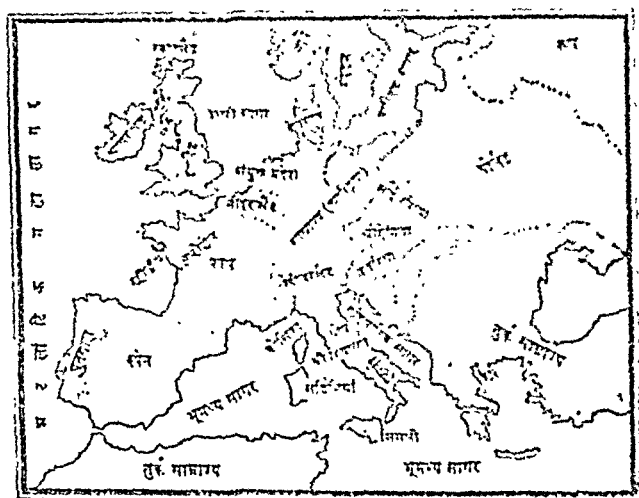
तीस वर्षीय युद्ध के समय का मध्य यूरोप

यूरोप में ३० वर्षीय युद्ध का आरम्भ (१६१९-१६४८ ई०)—उधर सन् १६१८ ई० में जर्मनी में एक युद्ध शुरू हो गया जो तीस वर्षों तक चलता रहा। इतिहास में यह तीस वर्षीय युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है। बढ़ते-बढ़ते यह युद्ध मध्य-यूरोप के सभी देशों में फैल गया।

उस समय जर्मनी में करीब ३०० छोटी-बड़ी रियासतें थीं। ये सभी एक संघ में शामिल थीं जो 'पवित्र रोमन साम्राज्य' के नाम से प्रसिद्ध था। इस संघ का सरदार एक निर्वाचित सम्राट् होता था जो जीवन भर इस पद पर रहता था पर व्यवहार में आस्ट्रिया के सम्राट को ही यह पद बराबर मिलता था। लेकिन यह संघ कमजोर था। इसके सदस्यों के बीच कई बातों को लेकर काफी मतभेद था। लेकिन सबसे प्रधान

बात तो थी धर्म की। दक्षिणी जर्मनी में कैथोलिकों की और उत्तरी जर्मनी में प्रोटेस्टेंटों की प्रधानता थी और इन दोनों के बीच गहरी खाई थी।

बोहिमियाँ के राजत्व का प्रश्न—आस्ट्रिया का सम्राट, संघ का अध्यक्ष होने के अलावा हंगरी और बोहिमियाँ का राजा भी होता था। सिद्धान्ततः तो बोहिमियाँ का राजा निर्वाचित होता था पर व्यवहार में आस्ट्रिया का सम्राट ही बराबर बोहिमियाँ का भी राजा हो जाता था। आस्ट्रिया का सम्राट हैप्सबर्ग वंश का व्यक्ति ही होता था और यह वंश कट्टर कैथोलिक था। लेकिन बोहिमियाँ के निवासी कट्टर प्रोटेस्टेंट थे। अतः बोहिमियाँ वाले प्रचलित प्रथा का अन्त कर देना चाहते थे। उन्हें मौका भी अच्छा मिल गया। सन् १६१६ ई० में आस्ट्रिया के सम्राट की मृत्यु हो गई और उसका उत्तराधिकारी फर्डिनेंड द्वितीय गद्दी पर बैठा। बोहिमियाँ वाले ने फर्डिनेन्ड को अपना राजा स्वीकार नहीं किया। फ्रेड्रिक नामक एक प्रोटेस्टेंट को बोहिमियाँ का राजमुकुट स्वीकार करने के लिये निमंत्रित किया गया। फ्रेड्रिक इंगलैंड के जेम्स प्रथम का दामाद था। अतः बोहिमियाँ वालों को आशा थी कि कैथोलिकों के द्वारा विरोध या युद्ध होने पर इंगलैंड से पूरी सहायता मिलेगी। फ्रेड्रिक ने जेम्स के पास सूचना भेज दी और उसकी राय पूछी। लेकिन जेम्स शीघ्र कोई राय देने में असमर्थ रहा और इधर फ्रेड्रिक ने बोहिमियाँ का राजमुकुट स्वीकार भी कर लिया।

युद्ध का आरम्भ (१६१९-१६२२ ई०)—आस्ट्रिया की सेना ने झट बोहिमियाँ पर आक्रमण कर दिया। जर्मनी के कैथोलिक राज्यों ने फर्डिनेन्ड को संगठित रूप से पूरी सहायता दी। लेकिन प्रोटेस्टेंट राज्यों से फ्रेड्रिक को नाममात्र की सहायता मिली। इसका तात्कालिक फल हुआ। व्हाइटहिल के युद्ध में, एक घंटे से भी कम समय में, फ्रेड्रिक की सेना हार गई और सन् १६२० ई० में उसे बोहिमियाँ छोड़कर भागना पड़ा। सन् १६२१ ई० में बवेरिया के ड्यूक ने फ्रेड्रिक के राज्य के अपर-पैलेटिनेट पर चढ़ाई कर उसे अपने कब्जे में कर लिया। यह डैन्यूब नदी के तट पर स्थित ड्यूक के राज्य की सीमा के निकट था। सन् १६२२ ई० में राइन नदी के तट पर स्थित लोअर पैलेटिनेट पर स्पेन के राजा ने अपना अधिकार स्थापित कर लिया। इस प्रकार फ्रेड्रिक के हाथ से बोहिमियाँ तो निकल ही गया, साथ ही साथ उसका अपना राज्य पैलेटिनेट भी उसके हाथ से निकल गया और अब वह बेघरबार का भटकने लगा।

इंगलैंड की नीति—जब फ्रेड्रिक ने जेम्स की राय के बिना ही बोहिमियाँ के राजमुकुट को स्वीकार कर लिया तब जेम्स को बड़ा रंज हुआ और युद्ध के समय उसने फ्रेड्रिक को कोई सहायता नहीं दी। यही देखकर जर्मनी के भी कई प्रोटेस्टेंट राज्यों ने

फ्रेड्रिक को सहायता नहीं दी। इसके फलस्वरूप फ्रेड्रिक को पैलेटिनेट और बोहिमियाँ दोनों ही खो देना पड़ा। यदि उसके हाथ से केवल बोहिमियाँ ही जाता तब तो जेम्स को खुशी ही होती, क्योंकि वह तो ऐसा चाहता ही था। लेकिन अब उसके पैतृक राज्य के चले जाने से जेम्स को भी दुःख हुआ और वह इसकी पुनर्प्राप्ति के लिये कोशिश करने लगा।

इंगलैंड का जनमत तो शुरू से ही फ्रेड्रिक के पक्ष में था। पैलेटिनेट पर आक्रमण करने के समय जेम्स ने कुछ अंगरेजी स्वयंसेवकों को फ्रेड्रिक की सहायता में भेजा था। लेकिन दुर्भाग्यवश यह सहायता समय पर नहीं पहुँची। देश का लोकमत स्पेन के विरुद्ध युद्ध की घोषणा चाहता था। इस सम्बन्ध में जेम्स ने एक पार्लियामेंट बुलाई, पार्लियामेंट ने स्पेन के खिलाफ़ युद्ध का समर्थन किया और इस आशय का एक प्रस्ताव भी पास किया। लेकिन जेम्स एक ही राग से दो परस्पर विरोधी बातें अलाप रहा था। एक तरफ़ वह युद्ध की बात करता, और दूसरी तरफ़ शान्ति स्थापना और स्पेन से समझौते की बात भी करता था। पार्लियामेंट जेम्स की इस दुरंगी नीति को नापसंद करती थी। फिर भी जेम्स शान्ति और समझौते का प्रयत्न करता रहा। वह तो विजेता की जगह पर यूरोप का शान्तिविधायक होना चाहता था। अतः वह सैनिकों के बदले विभिन्न देशों में दूत भेजने लगा। वह चाहता था कि फर्डिनेन्ड को बोहेमियाँ लौटा दिया जाय और फर्डिनेन्ड तथा फ्रेड्रिक के बीच दुश्मनी न रहे। जेम्स की दृष्टि में यह बात स्पेन के द्वारा ही हो सकती थी।

स्पेन से वैवाहिक सम्बन्ध की कोशिश और उसकी असफलता—अतः स्पेन के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना अत्यावश्यक था। पार्लियामेंट ने जेम्स से निवेदन किया कि चार्ल्स का विवाह किसी प्रोटेस्टेंट कुमारी से किया जाय। इस पर जेम्स ने अपनी पार्लियामेंट को ही बर्खास्त कर दिया और स्पेन से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने के प्रयत्न को जारी रखा। सन् १६२३ ई० में चार्ल्स और बकिंघम टौम और जॉन स्मिथ के रूप में स्पेन गये। दोनों ही वहाँ की राजधानी मैड्रिड में पहुँचे। इन्फैन्टा से प्रत्यक्ष रूप में भेंट करने या बात चीत करने के लिये चार्ल्स को अवसर नहीं दिया गया। तब चार्ल्स ने इन्फैन्टा से गुप्त भेंट करने की कोशिश की। एक दिन जब इन्फैन्टा फुलवारी में टहल रही थी, चार्ल्स वहाँ जा पहुँचा। लेकिन चार्ल्स को देखते ही इनफैन्टा भयभीत हो गई और रोती हुई भाग चली।

स्पेन तो अपनी राजकुमारी का विवाह चार्ल्स से करना नहीं चाहता था। वह इस प्रश्न को टाल रहा था। वहाँ के अधिकारियों ने चार्ल्स के सामने कई असम्भव माँगों को पेश किया। लेकिन उन्हें बड़ा ही आश्चर्य हुआ जबकि चार्ल्स ने उनकी

सारी माँगों को स्वीकार कर लिया। परन्तु चार्ल्स ने उन्हें पूरा करने की नियत से कभी भी स्वीकार नहीं किया था। फिर भी इनफैन्टा से ब्याह नहीं हो सका और चार्ल्स को निराश और क्रुद्ध होकर वापस लौटना पड़ा। लेकिन यदि चार्ल्स और उसके समर्थकों का दिल निराशा और क्रोध से भरा था, तो इंगलैंड की जनता का हृदय उल्लास और आनन्द से भरा था।

स्पेन के विरुद्ध युद्ध की तैयारी (१६२४-२५ ई०)—अब चार्ल्स और बकिंघम ने जेम्स पर दबाव दिया कि स्पेन के विरुद्ध युद्ध घोषित किया जाय। मजबूर होकर जेम्स को युद्ध के पक्ष में अपनी राय देनी पड़ी। पार्लियामेंट ने भी युद्ध के लिए कुछ धन मंजूर कर दिया। जेम्स फ्रांस से भी मित्रता करना चाहता था। अतः चार्ल्स का विवाह फ्रांसीसी राजकुमारी हेनरिटा मेरिया से निश्चित हुआ। जेम्स ने कैथोलिकों को सुविधा देने के लिये फ्रांस की माँग को भी स्वीकार कर लिया। यद्यपि धन पर्याप्त न था तो भी एक सेना तैयार की गई जिसमें १२,००० व्यक्ति थे। इस सेना को कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। पहले तो ये सैनिक स्वयं ही युद्ध-कुशल और अनुभवी नहीं थे। यह सेना नये रंगरूटों और भुक्खड़ों की एक झुण्डमात्र थी। दूसरी बात यह थी कि यह सेना कुछ समय के लिये एक दूसरे मोर्चे पर रख दी गई और इस प्रकार बहुत समय नष्ट हो गया। तीसरी बात यह थी कि यह सेना जब हॉलैंड से रवाना होकर राइन नदी पार करने की तैयारी कर रही थी तब नदी का पानी जमने लगा और उसमें नौका चलना कठिन हो गया। उस समय बहुत से व्यक्ति मर गये। इसी बीच मार्च सन् १६२५ ई० में जेम्स भी मर गया और उसका पुत्र चार्ल्स प्रथम गद्दी पर बैठा।

सन् १६२५ ई० की स्थिति—इस प्रकार जब चार्ल्स सन् १६२५ ई० में गद्दी पर बैठा, उस समय स्पेन के साथ युद्ध आरंभ हो चुका था। लेकिन उसका कोई फल नहीं निकला; पैलेटिनेट का पुनरोद्धार नहीं हो सका, धन-जन की हानि हुई और फ्रेड्रिक अभी भी बेघर-बार का इधर-उधर घूम रहा था। जर्मनी में प्रोटेस्टेंट लोग अपनी सत्ता के लिये युद्ध कर रहे थे।

चार्ल्स प्रथम की नीति—चार्ल्स की दो नीतियाँ थीं—पैलेटिनेट के पुनरोद्धार में मदद करना और स्पेन पर चढ़ाई करना। उसका यह ख्याल था कि इन दोनों नीतियों के अनुसरण करने से प्रोटेस्टेंट धर्म की रक्षा होगी और वह अपने देश में लोकप्रिय बन जायगा।

फ्रांस से मित्रता—जेम्स प्रथम के समय में ही यह बात निश्चित हो चुकी

थी कि चार्ल्स का विवाह हेनरिएटा मेरिया से होगा। चार्ल्स भी फ्रांस से मित्रता करना चाहता था, क्योंकि स्पेन फ्रांस का शत्रु था। दूसरी बात यह थी कि फ्रांस में स्पेन की अपेक्षा प्रोटेस्टेंटों पर कम अत्याचार होता था। अतः चार्ल्स ने शीघ्र ही अपना विवाह हेनरिटा से कर लिया।

डेनिश राजा को आर्थिक सहायता देने की प्रतिज्ञा—इस समय जर्मनी के प्रोटेस्टेंटों की सहायता करने के लिये डेनमार्क, हॉलैंड और वेनिस के बीच एक संघ स्थापित हुआ था। डेनमार्क का राजा चौथा क्रिश्चियन इस संघ का प्रधान था। स्थायी सेना पर्याप्त और प्रवीण न रहने के कारण चार्ल्स स्थल-युद्ध करने में असमर्थ था। अतः उसने डेनिश राजा की ही आर्थिक सहायता करने की प्रतिज्ञा की। उसने ३ लाख ६० हजार पौंड देने का वादा किया। यह रकम एक बार न देकर किश्त के रूप में देना था। चार्ल्स ने ४६ हजार पौंड की एक किश्त दी। लेकिन यह उसकी पहली और अन्तिम किश्त रह गई; वह फिर कोई किश्त न चुका सका। इसका कारण यह था कि अपनी ही भूल से चार्ल्स को पार्लियामेंट से पर्याप्त धन नहीं मिला। उसने पार्लियमेंट को युद्ध के उद्देश्य या परिस्थिति से पूर्ण परिचित ही नहीं कराया।

केडिज पर आक्रमण करने की योजना—अब चार्ल्स और बकिंघम ने स्पेन के प्रसिद्ध बन्दरगाह केडिज पर आक्रमण करने की योजना तैयार की। इसके पीछे कई बातें थीं जिनसे वे लोग प्रभावित हुए थे।

कारण—(क) इंगलैंड की जनता स्पेन से युद्ध करना चाहती थी।

(ख) मध्य-यूरोप में स्थल-युद्ध की अपेक्षा स्पेन के साथ जलयुद्ध अधिक आसान था।

(ग) घरेलू झंझटों में फँस जाने के कारण स्पेन बाहरी बातों में विशेष ध्यान नहीं देता और पैलेटिनेट पर से अपना अधिकार हटा लेता। इसके अलावा वह फ्रेड्रिक के राज्य को लौटाने के लिये सम्राट पर भी दबाव डालता।

(घ) केडिज के बन्दरगाह में, अमेरिका से। खजाने से भरे हुए जहाज लगते थे। इन जहाजों को लूटने से बहुत सा धन हाथ लगता और आर्थिक कठिनाई बहुत दूर हो जाती। इस प्रकार चार्ल्स डेनिश राजा के साथ अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने में भी समर्थ होता।

केडिज पर आक्रमण—अतः शीघ्र केडिज पर आक्रमण कर दिया गया। १०००० सैनिक और ९० जंगी बेड़े भेजे गये। सर एडवर्ड सेसिल सेनापति था।

उसके परिणाम—लेकिन चार्ल्स की आशा पर पानी फिर गया। आक्रमण से लाभ के बदले हानि ही हुई। केडिज पर अधिकार न हो सका और न खजाने से

भरे हुए जहाज ही लूटे जा सके। सैनिकों ने स्वयं विद्रोह कर दिया और सेसिल बहुत हतोत्साह हो गया। इस हार से चार्ल्स की बड़ी बदनामी और बेइज्जती हुई। डेनमार्क का राजा चार्ल्स से आर्थिक सहायता पाने की प्रतीक्षा करता रहा और इसी आशा में वह एक बड़ी सेना भी तैयार करता रहा। लेकिन केडिज की हार के बाद तो आर्थिक सहायता मिलने की कोई आशा न रही। इतनी बड़ी सेना का खर्च चलाना क्रिश्चियन के लिये कठिन हो रहा था। सैनिक अपने वेतन के लिये शोर कर रहे थे। विद्रोह हो जाने की सम्भावना थी। अतः ऊबकर क्रिश्चियन ने जर्मनी के कैथोलिकों से शीघ्र ही युद्ध प्रारंभ कर दिया। लेकिन नतीजा बुरा हुआ। क्रिश्चियन को हारकर सन् १६२५ ई० में अपने देश को लौट जाना पड़ा। इस प्रकार क्रिश्चियन भी चार्ल्स से बेतरह बिगड़ उठा।

फ्रांस के साथ कठिनाइयाँ और युद्ध (१६२५—२६ ई०)—जिस समय चार्ल्स का विवाह हेनरिएटा से होना निश्चित हुआ था उस समय जेम्स ने इंगलैंड में कैथोलिकों को सुविधाएँ देने की प्रतिज्ञा की। विवाह के समय चार्ल्स ने भी इस शर्त को स्वीकार किया था। जेम्स ने फ्रांस के राजा को कुछ जहाज भी देने का वादा किया था। पर वह तो बीच में ही मर गया। फ्रांस चाहता था कि चार्ल्स अपने पिता की इस प्रतिज्ञा को पूरी करे। लेकिन चार्ल्स को इस बात की जानकारी प्राप्त हो गई थी कि फ्रांसीसी सरकार इन जहाजों का प्रयोग फ्रांस के प्रोटेस्टेंटों (ह्यूजिनों Huguenots) के विरुद्ध करेगी। फ्रांसीसी कैथोलिक राजकुमारी से विवाह करने के कारण इंगलैंड की जनता चार्ल्स से बिगड़ी हुई थी। चार्ल्स को भय था कि यदि फ्रांस को जहाज दिये जायँगे तो अंगरेज जनता और भी अधिक बिगड़ उठेगी। दूसरी बात यह थी कि आशा के विरुद्ध फ्रांस ने स्पेन के साथ लड़ने में इंगलैंड की मदद न की थी। अतः चार्ल्स फ्रांस को जहाज देना नहीं चाहता था और वह फ्रांस की इस माँग को बहुत समय तक टालता रहा। लेकिन बाध्य होकर अन्त में फ्रांस को जहाज देना ही पड़ा। फल भी वही हुआ। फ्रांसीसी सरकार ने इन जहाजों का उपयोग प्रोटेस्टेंटों के विरुद्ध किया और ब्रिटिश पार्लियामेंट चार्ल्स से बहुत रुष्ट हो गई। स्पेन में इंगलैंड की और जर्मनी में डेनमार्क की हार से चार्ल्स अपने देश में अप्रिय बना ही हुआ था।

अब चार्ल्स को अपनी जनता को खुश करने की चिन्ता लगी। वह अपनी लोकप्रियता प्राप्त करने के लिये बहुत उत्सुक हो गया। उसने सोचा कि फ्रांस के साथ सफल युद्ध होने से यह उद्देश्य पूरा हो जायगा। अतः इंगलैंड के कैथोलिकों को सुविधाएँ देने के लिये जब फ्रांस का राजा लुई चार्ल्स पर दबाव देने लगा तब दोनों देशों में युद्ध छिड़ गया।

रही द्वीप पर आक्रमण १६२७ ई०—लूई फ्रांस के पश्चिमी किनारे पर ह्युजिनों के किले लारोशेल को घेरे हुए था। ह्युजिनों की सहायता में रही द्वीप के एक किले पर चढ़ाई करने के लिये बकिंघम एक सेना के साथ भेजा गया। उसने उस किले को भी घेरे में डाल दिया और किले के अन्दर बाहर से कोई चीज आना बन्द कर दिया। लेकिन भाग्य ने बकिंघम का साथ नहीं दिया। उसके सैनिक नये रंगरूट थे और प्रतिकूल हवा के कारण इंगलैंड से समय पर सहायता न पहुँच सकी। दूसरी तरफ फ्रांसीसियों ने किले के भीतर किसी तरीके से खाद्य सामग्री पहुँचा दी। अब लाचार हो बकिंघम घेरा उठा कर इंगलैंड वापस चला आया।

बकिंघम का वध—लेकिन कलंकित होकर बकिंघम चुपचाप बैठने वाला नहीं था वह शीघ्र ही दूसरे आक्रमण की योजना बनाने लगा। परन्तु सन् १६२८ ई० में ही पोर्ट्स माउथ बन्दरगाह में फेल्टन नाम के एक नट अफसर ने उसकी हत्या ही कर डाली।

चार्ल्स की कार्य-शिथिलता (१६२९-४० ई०)—बकिंघम के मरते ही इंगलैंड की परराष्ट्रनीति में महान् परिवर्तन हो गया। जो नीति अब तक क्रियाशील और उत्साहपूर्ण थी वह अचानक शिथिल और निराशापूर्ण हो गई। यूरोपीय मामलों में चार्ल्स की दिलचस्पी समाप्त सी हो गई। उसने फ्रांस और स्पेन से सन्धि कर ली। अब वह अपना दिन किसी तरह काटने लगा। अब उसकी नीति में समता न रही। वह एक ही साथ फ्रांस के विरुद्ध स्पेन से और स्पेन के विरुद्ध फ्रांस से बातें करता था। कभी वह स्वेडन के राजा गुस्तवस एडल्फस को और कभी डेनमार्क के राजा क्रिश्चियन को सहायता करने की प्रतिज्ञा करता था। इस तरह उसकी नीति परस्पर विरोधिनी थी। फल यह हुआ कि वैदेशिक मामलों में इंगलैंड का अब कोई स्थान न रहा। चार्ल्स की नीति में इस परिवर्त्तन के दो कारण थे। उसे विषम परिस्थितियों का सामना करना पड़ा था जिससे उसकी एकाग्रता भंग हो गई थी। वह अपने परमप्रिय और विश्वासपात्र बकिंघम की निर्मम हत्या से दुःखित और चंचल हो गया था। दूसरी बात यह थी कि चार्ल्स ने इस समय अपने देश में अनियंत्रित शासन स्थापित किया था और उसे ही चलाने के लिए विशेष समय और धन की आवश्यकता थी। अतः बाहरी बातों के लिये उसे समय और धन दोनों का ही अभाव था।

तीसवर्षीय युद्ध का उत्तरार्द्ध—कुछ समय तक स्वेडन का राजा गुस्तवस प्रोटेस्टेंटों की ओर से लड़ रहा था और उसे सफलता भी प्राप्त हुई। लेकिन थोड़े ही समय के बाद वह युद्धक्षेत्र में मारा गया। अब प्रोटेस्टेंटों के ऊपर खतरा आ पड़ा, लेकिन उन्हें फिर सहायक मिल ही गया। तात्कालीन फ्रांसीसी सरकार अपने

देश के प्रोटेस्टेंटों के ऊपर तो अत्याचार करती थी, लेकिन वह जर्मनी के प्रोटेस्टेंटों की सहायता करने को तैयार हो गई। इसके पीछे फ्रांसीसी सरकार की कूटनीति थी। वह प्रोटेस्टेंटों की सहायता कर हैप्सवर्ग राजवंश को कमजोर बनाना चाहती थी। इसमें उसे पूर्ण सफलता भी प्राप्त हुई। सन् १६४८ ई० में युद्ध समाप्त हो गया। जर्मन प्रदेशों के बटवारे में फ्रांस और स्वेडन को अधिक हिस्सा मिला। इस युद्ध ने जर्मन राज्यों की एकता को विशेष रूप से नष्ट कर दिया।

वैदेशिक नीति की समीक्षा—महान् और प्रशंसनीय नीति—सत्रहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में इंगलैंड की वैदेशिक नीति यही रही। सिद्धान्त में तो जेम्स और चार्ल्स दोनों की ही नीतियाँ अच्छी थीं। खास कर जेम्स की नीति तो विशेष प्रशंसनीय और बुद्धिमतापूर्ण थी। युद्ध, मारकाट, लूटपाट के युग में वह शान्ति और सुरक्षा का राज्य स्थापित करना चाहता था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उसने जी जान से कोशिश भी की। विरोध या बदनामी की उसने तनिक भी परवाह नहीं की। शान्ति के नाम पर वह सब कुछ करने को तैयार था। इसीलिये उसने रैले जैसे प्रसिद्ध योद्धा को फाँसी तक दे दी और अपने प्रिय दामाद फ्रेड्रिक को आपत्तिकाल में सहायता नहीं दी। इस प्रकार वह इंगलैंड को यूरोप के राज्यों के बीच नेता बनाना चाहता था।

चार्ल्स की नीति भी सदा खराब ही नहीं रही। पार्लियामेंट के विचार के अनुसार ही उसने स्पेन के विरुद्ध युद्ध आरम्भ किया था; फ्रेड्रिक और प्रोटेस्टेंटों की सहायता के लिये डेनिस राजा को धन देने की प्रतिज्ञा की थी और कैथोलिकों को सुविधा तथा फ्रांस को जहाज नहीं देना चाहता था।

निन्दनीय और प्रभावहीन नीति—कारण—फिर भी दोनों ही राजाओं की नीति निन्दनीय एवं प्रभावहीन साबित हुई। दोनों ही अपनी-अपनी नीति में बुरी तरह असफल रहे। इसके कई कारण थे :—

(१) स्थायी सेना का अभाव—इंगलैंड, अभी तक फौजी देश नहीं था और युद्ध ही उसका प्रधान पेशा नहीं था। अतः स्थायी और पेशेवर सेना का अभाव था। इस लिये बृटिश कूटनीति के पीछे प्रबल सैन्यशक्ति नहीं थी और ऐसी कूटनीति व्यर्थ सिद्ध होती है। आवश्यकता पड़ने पर कुछ सेना संगठित कर ली जाती थी लेकिन समयाभाव के कारण उसे समुचित शिक्षा नहीं मिल सकती थी और वह अनुभवहीन होती थी। अतः उस सेना के लिये यूरोप की अनुभवी और शिक्षित सेना का देर तक सामना करना दुस्तर कार्य था।

(२) जलसेना की उपेक्षा—इंगलैंड की प्रतिष्ठा और शक्ति जल-सेना पर निर्भर करती है, लेकिन जेम्स और चार्ल्स दोनो ने ही जल-सेना की उपेक्षा की।

धन की कमी के कारण समुद्र पार साम्राज्य के विकास की ओर ध्यान नहीं दिया गया। अंगरेजों की इस सामुद्रिक शक्ति की कमजोरी से डचों को विशेष लाभ पहुँचा।

(३) पार्लियामेंट का दोष—पार्लियामेंट कैथोलिक राज्यों से युद्ध चाहती थी, लेकिन जब युद्ध शुरू हुआ तब उसने राजाओं को पूरी आर्थिक सहायता नहीं दी। उलटे वह ऐसी माँगें पेश करने लगी जिन्हें पूरा करना राजाओं के लिये सम्भव न था।

(४) परिस्थितियाँ—सत्रहवीं सदी के पूर्वार्द्ध का समय जोशीली वैदेशिक नीति के उपयुक्त नहीं था। परिस्थितियाँ ऐसी थीं कि राजा और पार्लियामेंट के बीच संघर्ष निश्चित था संघर्ष होकर रहा भी। अतः वैदेशिक मामलों में पूरी शक्ति लगाने के लिये जेम्स और चार्ल्स दोनों ही घरेलू झंझटों के कारण स्वतंत्र नहीं थे।

(५) राजाओं का चरित्र—वैदेशिक नीति की असफलता में राजाओं का चरित्र विशेष रूप से उत्तरदायी है। जेम्स की नीति अनिश्चित तथा भीरु और चार्ल्स की नीति कुटिल और परस्पर विरोधी थी। उनमें समय की गति पहचानने की शक्ति नहीं थी। और वे सत्रहवीं सदी में सोलहवीं सदी के जैसा शासन करना चाहते थे। वे देश की लोक-सभा की राय के विरुद्ध कार्य करने की कोशिश करते थे। चार्ल्स के विषय में एक राजदूत ने कहा था कि "एक हाथ से आप उतनी ही शीघ्रता से नष्ट करते हैं जितनी शीघ्रता से दूसरे हाथ से निर्माण।" एक लेखक का कहना है कि "इंगलैंड के लिये यह बड़े दुर्भाग्य की बात थी कि चार्ल्स स्टुअर्ट जैसा शासक उसे उस समय प्राप्त हुआ जिस समय एक बुद्धिमान और दृढ़ शासक की आवश्यकता थी।"[1]

असफल नीति के परिणाम—वैदेशिक नीति की असफलता के कारण कई बुरे परिणाम हुए :—

(१) इंगलैंड की प्रतिष्ठा में धब्बा—ट्यूडर राजाओं के समय में इंगलैण्ड की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई थी और एलिजाबेथ के समय में वह अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गई। यूरोप की सभी शक्तियों में इंगलैंड सिरमौर समझा जाता था। लेकिन जेम्स प्रथम और चार्ल्स प्रथम के समय में वह प्रतिष्ठा लुप्त हो गई। वैदेशिक मामलों में इंगलैंड का स्थान नीचे हो गया।

(२) पार्लियामेंट से मनमुटाव—वैदेशिक नीति से यह स्पष्ट हो गया कि जेम्स और चार्ल्स दोनों ही कैथोलिकों से सहानुभूति रखते हैं। स्पेन जैसे कैथोलिक-प्रधान देश से जेम्स वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिये लालायित था और चार्ल्स ने तो फ्रांसीसी राजकुमारी, जो कैथोलिक थी, उससे अपना विवाह ही किया। राजाओं

[1] हिस्ट्री ऑफ ब्रिटेन—कार्टर ऐंड मीयर्स—पृष्ठ ४७२

का कैथोलिकों के प्रति यह झुकाव पार्लियामेंट के साथ मनमुटाव का एक प्रधान कारण बन गया।

(३) शासन पर प्रभाव—राजाओं की आर्थिक कठिनाई बहुत बढ़ गई। धन पार्लियामेंट से ही प्राप्त हो सकता था। अतः राजाओं को बार-बार पार्लियामेंट बुलानी पड़ती थी। लेकिन युद्ध में सफलता नहीं होने से पार्लियामेंट शासन-क्षेत्र में दखल देने लगी और रुपया मंजूर करने के पहले वह सुधारों की माँग करने लगी और मन्त्रियों की नियुक्ति में राय देने के लिये दावा करने लगी।

(४) फ्रांस की प्रतिष्ठा में वृद्धि—यूरोप में फ्रांस की धाक बहुत बढ़ गई। तीस-वर्षीय युद्ध में भाग लेने से इसकी सैन्यशक्ति का प्रचार हो गया और इसे कुछ प्रदेश भी प्राप्त हुए। फ्रांस की शक्ति बढ़ने से यूरोप के राज्यों के लिये भारी खतरा उपस्थित हो गया; शक्ति सन्तुलन (Balance of Power) में बड़ी गड़बड़ी पैदा हो गई।

अध्याय ७

गृहनीति (१६४९–८८ ई०)

प्रजातन्त्र और संरक्षित राज्य की गृहनीति (१६४९–६० ई०)

(१) क्रौमवेल की जीवनी सन् १६४१ ई० तक—ओलिवर क्रौमवेल का जन्म हन्टिंगडन नाम के एक प्रदेश में सन् १५९९ ई० में हुआ था। वह एक धनी भूमिपति का लड़का था और २९ वर्ष की उम्र में, सन् १६२८ ई० में पार्लियामेंट का सदस्य चुना गया था। सन् १६४२ ई० में ४३ वर्ष की उम्र में उसका सैनिक जीवन आरंभ हुआ जो सन् १६५१ ई० तक सक्रिय रूप में जारी रहा। गृहयुद्ध ने उसकी सैनिक प्रतिभा का जोरों से प्रचार कर दिया। अश्वसेनापति के रूप में उसने बड़ा ही यश प्राप्त किया, अश्वसेना की शिक्षा का भार उसी पर था। अश्वसेना के क्षेत्र में वह अपने विरोधी रूपर्ट से बहुत अधिक कुशल था। वह हमला होने के पहले गोली चलाने या शोरगुल करने की नीति का विरोधी था। वह युद्ध के कुटिल दाँव-पेंच से पूरा परिचित न था, लेकिन युद्धक्षेत्र में नाज़ुक परिस्थिति को समझने और उसका समाधान करने के लिये उसमें अद्भुत शक्ति थी। वह दृढ़प्रतिज्ञ, महान् आत्म-विश्वासी और संयत उत्साही व्यक्ति था।

जिस तरह वह एक कुशल सैनिक था उसी तरह का कुशल राजनीतिज्ञ नहीं था। राजनीतिज्ञ होने की क्षमता उसमें कम थी और राजनैतिक क्षेत्र में उसने कोई प्रसिद्ध और आकर्षक कार्य नहीं किया। वह कोई बड़ा वक्ता भी नहीं था।

वह अपनी धार्मिक भावनाओं में पक्का और दृढ़ था। जिस काम के पीछे वह जी जान से लग जाता उसे करके ही छोड़ता था। महान् विरोधपत्र के मौके पर उसने कहा था—"यदि इसे स्वीकार नहीं किया जाता तो मैं दूसरे ही दिन अपना सब कुछ बेचकर इंगलैंड को सदा के लिये नमस्कार कर विदेश चला जाता।" वह एक कट्टर आस्तिक था। उसका दृढ़ विश्वास था कि उसके प्रत्येक कार्य के पीछे ईश्वर की प्रेरणा है।

वह स्वतन्त्र और सहिष्णु प्रकृति का व्यक्ति था। कैथोलिकों को छोड़कर अन्य

सभी धार्मिक दलों की स्वतन्त्रता का पक्षपाती था। वह उच्चकोटि का एक प्यूरिटन था जो अंगरेजों के नैतिक स्तर को ऊँचा उठाना चाहता था। हानिकारक और दोष-पूर्ण विनोदों का वह दुश्मन था, लेकिन उपयोगी और निर्दोष विनोदों का समर्थक भी था। उसे संगीत, कविता, कला, घुड़सवारी, खेलकूद आदि से बड़ा शौक था।

(२) रम्प पार्लियामेंट का शासन जनवरी १६४९ ई०–अप्रैल १६५३ ई०–चार्ल्स प्रथम की फाँसी के बाद इंगलैंड में प्रजातन्त्र राज्य स्थापित हुआ। रंप पार्लियामेंट ही राज्य में सर्वेसर्वा थी। इसने राजतन्त्र प्रणाली और लार्ड-सभा दोनों का अन्त कर दिया। देश में एक रंप ही लोक-सभा रह गई जिसे कानून बनाने का सारा अधिकार था। शासन कार्य के लिये ४७ सदस्यों की एक राज्यपरिषद् (कौंसिल ऑफ स्टेट) बनी जिसका सभापति था ब्रेडशॉ। क्रौमवेल भी इसका एक प्रमुख सदस्य था। सदस्यों को प्रतिवर्ष मनोनीत किया जाता था और करीब तीन-चौथाई सदस्य रंप के ही होते थे। इस तरह व्यवहार में रंप ही कार्यकारिणी तथा व्यवस्थापिका, दोनों ही सभाओं का कार्य करती थी। इसकी शक्ति असीमित और इसके अधिकार अनन्त थे। एक लेखक के शब्दों में इसकी सत्ता के समान न तो पहले और न बाद ही किसी दूसरी पार्लियामेंट को सत्ता प्राप्त हुई थी। इसके नियम और कानून इसी के इच्छा पर निर्भर थे। लेकिन आश्चर्य की बात है कि रंप राष्ट्र की प्रतिनिधि संस्था नहीं थी। इसमें काउन्टी या नगर का कोई प्रतिनिधि नही था। लंदन से केवल एक और वेल्स से तीन प्रतिनिधि थे। यह अनुत्तरदायी और अनियंत्रित सभा थी और इसकी अपनी इच्छा के बिना इसे कोई भी भंग नहीं कर सकता था। लेकिन रंप अपनी शक्ति के लिये सेना पर ही निर्भर थी और असल में सैनिक ही देश के शासक थे।

रंप का शासन करीब साढ़े चार सौ वर्षों तक कायम रहा है और यह निपुण शासन था। रैम्जे मूर के शब्दों में "इंगलैंड को इससे अधिक योग्य शासन की जानकारी प्राप्त नहीं थी।"[1] यद्यपि यह कथन पूर्ण सत्य नहीं तो भी बहुत कुछ अंश तक सत्य भी है।

प्रीवी कौंसिल के बदले ४१ सदस्यों की एक कौंसिल का निर्माण हुआ था और यह कौंसिल विविध समितियों के द्वारा कार्य संपादित करती थी। समितियों में बाहरी विशेषज्ञ भी शामिल कर लिये जाते थे। कौंसिल के कई सदस्य असाधारण योग्यता के व्यक्ति थे, जैसे सर हैनरी वेन। प्रसिद्ध कवि जॉन मिल्टन भी कौंसिल के मन्त्रियों में एक था। चार्ल्स प्रथम के राज्य की अपेक्षा तिगुना अधिक आमदनी और खर्च हो रहे

१ ब्रिटिश हिस्ट्री, पृष्ठ २७८

थे। आमदनी के कई नये और अच्छे तरीके निकाले गये थे लेकिन राजा के समर्थकों पर जुर्माना एक प्रमुख तरीका था।

कानूनी प्रथा में बहुत सी बुराइयाँ आ गई थीं और उन्हें दूर करने के लिये विशेषज्ञों की एक समिति कायम हुई। इसने धार्मिक समस्या को भी हल करने की चेष्टा की। पेपिस्टों को छोड़कर अन्य सबों को पूजापाठ की स्वतन्त्रता दे दी गई।

रंप का सबसे महत्त्वपूर्ण काम जहाजों का निर्माण था। यह पहली अंगरेजी सरकार थी जिसने सामुद्रिक शक्ति के महत्त्व को ठीक से समझा था। बहुत से नये जहाज बनाये गये और आकार-प्रकार में भी पहले से विशेष उन्नति हुई। जहाजी प्रबन्ध एक समिति के हाथ में दे दिया गया जिसमें नाविक और विशेषज्ञ थे। सन् १६५१ ई० में समुद्री व्यापार संबंधी एक कानून (नेविगेशन ऐक्ट) पास हुआ जिसके कारण इंगलैंड के व्यापार में बड़ी वृद्धि हुई।

प्रजातंत्र की कठिनाइयाँ (१६४९—५१ ई०) तीसरा गृहयुद्ध—प्रजातन्त्र को अपनी प्रारंभिक अवस्था में कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। स्वदेशी तथा विदेशी दोनों ही क्षेत्रों में ये कठिनाइयाँ उपस्थित थीं। इंगलैंड में राजा की फाँसी के बाद उग्रवादी बहुत शक्तिशाली हो गये थे। समतावादी क्रौमवेल को धोखेबाज समझते थे और वर्तमान शासन प्रणाली में महान् परिवर्त्तन कर गणतन्त्र राज्य स्थापित करना चाहते थे। साम्यवादी सभी मनुष्यों की समानता चाहते थे। राजा के पक्ष में भी महती प्रतिक्रिया हो रही थी। सेना के बीच भी विद्रोह हो जाने की संभावना थी। जलसेना के बीच विद्रोह हो ही गया था और प्रिंस रूपर्ट ने सामुद्रिक युद्ध आरंभ कर दिया था। आयरलैंड और स्कॉटलैंड भी प्रजातन्त्र के कट्टर दुश्मन बन रहे थे।

यूरोप के अन्य देश भी प्रजातन्त्र से कोई सहानुभूति नहीं रखते थे। रूसी सरकार ने अंगरेज-राजदूत को निकाल दिया था, स्पेन ने तो अंगरेज-राजदूत को मौत के ही घाट उतार दिया और फ्रांस ने अपना राजदूत इंगलैंड से वापस बुला लिया। इनकी बात तो दूर रही, हॉलैंड ने जो इंगलैंड जैसा ही प्रोटेस्टेंट और प्रजातन्त्र राज्य था, अंगरेजी प्रजातन्त्र का भीषण विरोध किया और चार्ल्स प्रथम के पुत्र चार्ल्स द्वितीय को अपना राजा घोषित किया। यहाँ भी अंगरेज-राजदूत मारे गये। अटलांटिक पार वर्जिनियाँ तथा पश्चिमी इन्डीज के कई द्वीपों ने चार्ल्स द्वितीय को ही अपना राजा स्वीकार कर लिया।

कठिनाइयों का सामना—प्रजातन्त्र को क्रौमवेल के व्यक्तित्व में एक बड़ा ही

सुयोग्य सेनापति मिला था। उसने घरेलू तथा बाहरी—सभी कठिनाइयों का बड़ी बहादुरी से सामना किया। उसने उग्रवादियों की शक्ति को नष्ट कर दिया। और बड़ी ही निर्दयतापूर्वक उनका दमन किया। समतावादियों के विषय में क्रौमवेल का कहना था

गृहयुद्ध १६४२-५१

कि उन्हें जल्द कुचल दिया जाय नहीं तो वे हम लोगों को कुचल देंगे। अतः कठोरता पूर्वक उन्हें दबा दिया गया। सेना के विद्रोह को भी शान्त किया गया; विद्रोहियों के प्रमुख नेताओं को कैद कर लिया गया और कुछ को गोली से उड़ा दिया गया। प्रजातन्त्र को राबर्ट ब्लेक जैसा एक योग्य नौ सेनापति भी प्राप्त था। उसने प्रिंस रूपर्ट

का बड़ी ही खूबी से सामना किया और राजपक्षी दल के जंगी बेड़े को तहस-नहस कर डाला।

आयरलैंड—अब क्रौमवेल का ध्यान आयरलैंड की ओर गया और १२,००० सैनिकों के साथ वह वहाँ की राजधानी डब्लिन पहुँचा। वहाँ दो प्रमुख नगरों—ड्रोघेडा और वेक्सफोर्ड को घेर लिया और करीब ४००० व्यक्ति तलवार के घाट उतारे गये। अब आयरिश बहुत भयभीत हो गये और उनके बीच मतभेद भी पैदा हो गया। अतः सन् १६५० ई० के मध्य तक आयरलैंड का बहुत बड़ा हिस्सा क्रौमवेल के अधिकार में आ गया। उसके बाद उसके प्रतिनिधियों की कोशिश से दो वर्षों के अन्दर सम्पूर्ण आयरलैंड उसके दखल में आ गया।

स्कॉटलैंड—स्कौटों ने, आयरिशों के समान ही दूसरे चार्ल्स को अपना राजा घोषित कर दिया था। सन् १६५० ई० में चार्ल्स स्वयं ही स्कौटलैंड पहुँचा और उसने प्रतिज्ञा की कि वह प्रेसबिटेरियन मत को सारे राज्य का धर्म घोषित करेगा और स्कौटलैंड के मामलों में वहाँ की लोकसभा और पार्लियामेंट की बिना राय के कोई कार्य नहीं करेगा। जब स्कौट इंगलैंड पर चढ़ाई करने के लिये आगे बढ़ने लगे तब तक क्रौमवेल ने ही उन पर चढ़ाई कर दी। सन् १६५० ई० के ३ सितम्बर को डनबर की लड़ाई हुई जिसमें स्कौट बुरी तरह पराजित हुए। उनके ३ हजार सिपाही मारे गये और १० हजार कैद हुये, लेकिन क्रौमवेल के पक्ष के सिर्फ २० व्यक्ति ही मरे। अब क्रौमवेल एडिनबरा और पर्थ की ओर गया और इधर स्कौटों के लिये इंगलैंड का रास्ता खुल गया। वे इंगलैंड पर चढ़ाई करने के लिये बढ़ने लगे लेकिन क्रौमवेल ने उन्हें रोक दिया और डनबर की लड़ाई के ठीक एक वर्ष बाद, ३ सितम्बर सन् १६५१ ई० में वोर्सेस्टर की लड़ाई हुई जिसमें क्रौमवेल ही विजयी हुआ। चार्ल्स भाग कर फ्रांस चला गया। मौंक नाम का एक सेनापति स्कौटलैंड का शासक नियुक्त कर दिया गया।

सामुद्रिक और औपनिवेशिक संकट की समाप्ति—राबर्ट ब्लेक ने जलशक्ति का विकास किया और बड़ी बहादुरी से रूपर्ट का सामना किया। उसने रूपर्ट को इंगलिशचैनल से मार भगाया और जब रूपर्ट ने पुर्तगाल में शरण ली तब ब्लेक ने पुर्तगाल बेड़ों पर भी हमला कर दिया। रूपर्ट को वहाँ से भी भागना पड़ा और ब्लेक ने भूमध्यसागर तक उसका पीछा किया और उसे बुरी तरह परास्त किया। उसने फ्रांसीसी तथा शाही समुद्री लुटेरों का भी दमन किया। पश्चिमी-द्वीप-समूह और वर्जिनियाँ ने भी प्रजातन्त्र की सत्ता को स्वीकार कर लिया।

इस प्रकार सन् १६५१ ई० तक प्रजातन्त्र की सभी कठिनाइयाँ दूर हो गईं।

रम्प तथा सेना—अब क्रौमवेल और उसकी सेना की धाक जम गई और देश की राजनीति में भाग लेने के लिये पूरा अवकाश मिल गया। रम्प पार्लियामेंट अपने स्वेच्छाचारी शासन के कारण देश में अप्रिय बन रही थी। लोग बड़ी पार्लियामेंट के अत्याचार से पहले से ही असन्तुष्ट और दुखित थे और रंप के अत्याचार ने उस असन्तोष को और भी बढ़ा दिया। किसी अंश में भी देश की प्रतिनिधि सभा न होते हुए भी, इसकी सत्ता असीमित थी। स्वार्थपरता और घूसखोरी की जड़ जमने लगी। रंप के सदस्य अपने सगे संबन्धियों को ही बड़े-बड़े पदों पर नियुक्त करने लगे और धन देने वालों को विशेष सुविधायें प्रदान करने लगे। रंप के इस प्रकार के बुरे शासन से सेना अधीर हो रही थी और इसका अन्त कर देना चाहती थी। लेकिन कानूनन बिना स्वेच्छा के रंप भंग नहीं हो सकती थी। रंप एक नई पार्लियामेंट बुलाने की योजना बना रही थी, लेकिन रंप के सदस्य बिना निर्वाचन के ही उस पार्लियामेंट के भी सदस्य होते और वे अवांछनीय सदस्यों को उसमें बैठने की आज्ञा नहीं देते थे। जब क्रौमवेल को यह बात मालूम हुई तो वह क्रोधाग्नि में जलने लगा और सादा वेश में ही कुछ सैनिकों के साथ सभा-भवन में घुस गया। वहाँ उसने एक छोटा सा भाषण दिया जिसमें उसने यह कहा—"आप पार्लियामेंट नहीं हैं; मैं आप लोगों की बैठक बन्द कर दूँगा। आप अपने से अच्छे लोगों के लिये स्थान खाली कर दें।" अध्यक्ष को बलपूर्वक कुर्सी पर से हटा दिया गया, दंड को खिलौना कह कर उठा लिया गया और सदस्यों को निकाल बाहर कर सभा भवन में ताला बन्द कर दिया गया।

चार्ल्स प्रथम ने भी ११ वर्ष पूर्व ऐसा ही किया था, लेकिन जहाँ उसे असफलता मिली थी वहाँ क्रौमवेल को पूरी सफलता मिली। लोग रंप के शासन से इतने ऊब गये थे कि क्रौमवेल के इस बलात्कार्य का किसी ने विरोध नहीं किया और उसके ही शब्दों में 'एक कुत्ता तक नहीं बोला।' इस प्रकार सन् १६५३ ई० के अप्रैल में रंप का अन्त हो गया और लंबी पार्लियामेंट के अब तक के इतिहास से यही मालूम होता है कि अनुत्तरदायी पार्लियामेंट भी उतना ही खराब है जितना अनुत्तरदायी राजा।

(४) क्रौमवेल का शासन (अप्रैल १६५३ ई०—सितम्बर १६५८ ई०)—रम्प के भंग होने के बाद देश में सेना की सर्वप्रधानता स्थापित हो गई और शासन भार इसी पर आ पड़ा। कई वैधानिक योजनाओं के द्वारा शासन की समस्या हल करने की कोशिश की गई। क्रौमवेल एक कट्टर प्यूरिटन था और उसकी दृष्टि में ईश्वर में विश्वास करने वाले और धार्मिक विचार वाले ही राष्ट्र के अत्युत्तम शासक हो सकते थे। अतः सैनिकों की एक कौंसिल द्वारा निर्वाचित व्यक्तियों की एक पार्लिया-

मेंट बुलाई गई। इसके एक प्रमुख सदस्य के नाम पर इसका नाम बेअरबोन्स पार्लियामेंट पड़ा। इसके अधिकांश सदस्य प्यूरिटन थे और ईटन का अध्यक्ष (प्रोवोस्ट) इसका भी अध्यक्ष चुना गया। सदस्यों की कुल संख्या १४० थी जिनमें छः आयरलैंड के और पाँच स्कॉटलैंड के प्रतिनिधि थे। क्रौमवेल का विचार था कि यह पार्लियामेंट एक दूसरी पार्लियामेंट को चुनेगी जिसके हाथ में राज्य का सारा भार सौंप दिया जायगा। लेकिन इसके सदस्य स्वप्नद्रष्टा और अव्यवहारिक थे। वे असंभव, विप्लवी और हास्यास्पद प्रस्तावों को पेश करने लगे। उनका विचार था कि चांसरी कोर्ट उठा दिया जाय, सिविल सर्विस के खर्चों को कम किया जाय, सामाजिक विषमता को दूर कर दिया जाय, सभी कानूनों के निचोड़ को लेकर एक छोटी पुस्तक तैयार की जाय, दशांश के बदले ऐच्छिक चन्दा की प्रथा चलाई जाय आदि। फल यह हुआ कि प्रायः सभी वर्ग के लोग—सैनिक, वकील, धार्मिक सम्प्रदाय—असन्तुष्ट हो गये। क्रौमवेल ने इस पार्लियामेंट को बुलाने में अपनी भूल समझी और उसके प्रभाव से यह पार्लियामेंट अपने सभी अधिकारों को उसके हाथ में सौंपकर दिसम्बर सन् १६५३ ई० में भंग हो गई।

शासन-विधान (इन्सट्रूमेन्ट ऑफ गवर्नमेंट) १६५३ ई०—अब सैनिक अफसरों ने आयरटन के पथप्रदर्शन में एक दूसरा शासन विधान तैयार किया जिसे इन्सट्रूमेंट औफ गवर्नमेंट कहा जाता है। यह रोध और प्रतिरोध के आधार पर स्थित था और संयुक्तराष्ट्र अमेरिका के विधान से बहुत कुछ मिलता-जुलता है।

इसके अनुसार शासन के प्रधान को संरक्षक (प्रोटेक्टर) की पदवी दी गई और क्रौमवेल को ही प्रोटेक्टर बनाया गया। उसे शासन संबंधी सभी अधिकार दे दिये गये और खर्च के लिये एक रकम निश्चित कर दी गई तथा उससे अधिक खर्च की आवश्यकता होने पर पार्लियामेंट की स्वीकृति आवश्यक थी। उसे पार्लियामेंट को निमंत्रित करने, स्थगित करने और पाँच महीने की बैठक के बाद भंग करने का अधिकार था। किसी भी कानून को वह २० दिनों तक रोक सकता था।

संरक्षक की सहायता के लिये एक राज्य-परिषद (कौंसिल औफ स्टेट) का निर्माण हुआ जिसमें १५ से २२ सदस्य रह सकते थे। कोई सदस्य कौंसिल के द्वारा ही पदच्युत किया जा सकता था।

४६० सदस्यों की एक पार्लियामेंट स्थापित हुई, जिनमें ३० आयरलैंड और ३० स्कौटलैंड के प्रतिनिधि थे। दो सौ पौंड की जायदाद वाले व्यक्ति को मताधिकार प्राप्त था। इसकी अवधि तीन वर्ष निश्चित की गई और इसकी बैठक के पाँच महीने के भीतर इसे कोई भंग नहीं कर सकता था। टैक्स और कानून के मामलों में इसे

पूर्ण अधिकार प्राप्त था। बड़े-बड़े अफसरों की नियुक्ति में इसकी स्वीकृति आवश्यक थी। पार्लियामेंट की अनुपस्थिति में संरक्षक कोई नियम अपने अधिकार के बल पर लागू कर सकता था, लेकिन पार्लियामेंट की बैठक होने पर इसके द्वारा उस नियम की स्वीकृति जरूरी थी।

कैथोलिकों को छोड़कर अन्य सभी सम्प्रदायों के लिये सहिष्णुता की नीति अपनाई गई।

विधान में परिवर्तन के लिये कोई नियम न बनाया गया।

पहली संरक्षित पार्लियामेंट—सितम्बर सन् १६५४ ई०—नये विधान के कार्यान्वित होने के साथ संरक्षित शासन युग आरंभ होता है। सन् १६५४ ई० के सितम्बर में पहली संरक्षित पार्लियामेंट की बैठक हुई। इस पार्लियामेंट के सदस्य अपने अधिकारों का श्रोत जनता को ही समझते थे, अतः ये लोग सैनिकों के द्वारा निर्मित विधान की समालोचना करने लगे जिसके फलस्वरूप १०० सदस्य सभा-भवन से निकाल दिये गये। लेकिन क्रौमवेल से बचे हुये सदस्यों से भी नहीं पटी, क्योंकि वे सेना और सेना संबन्धी खर्च कम करना चाहते थे। इसके अलावा वे सहिष्णुता की नीति के भी विरोधी थे। अतः क्रौमवेल ने चन्द्रमा के हिसाब से ५ महीने जोड़ कर पार्लियामेंट को भंग कर दिया।

सैनिक शासन—इसके बाद क्रौमवेल ने स्थानीय शासन प्रणाली में एक परिवर्त्तन किया। संपूर्ण इंगलैंड को ११ फौजी जिलों में बाँट दिया गया और प्रत्येक जिले में एक एक मेजर जेनरल नामक अफसर, बहुत अधिकार और सेना के साथ, नियुक्त किया गया। वह अपने जिले की शान्ति के लिये ही उत्तरदायी नहीं था बल्कि वहाँ के लोगों के नैतिक जीवन के लिये भी उत्तरदायी था। यह सैनिक और प्यूरिटन शासन देश में बहुत ही अप्रिय बन गया और मेजर जेनरल के शासन का अन्त करना पड़ा।

दूसरी संरक्षित पार्लियामेंट १६५६ ई०—अब क्रौमवेल ने १६५६ ई० की गर्मी में अपनी दूसरी पार्लियामेंट बुलाई। उसने १०० उग्रवादी और विरोधी सदस्यों को बैठने से पहले ही रोक दिया। बाकी सदस्यों ने क्रौमवेल के प्रति अपनी भक्ति दिखलाई। 'विनीत प्रार्थना तथा परामर्श' नामक एक नया विधान (Humble Petetion and Advice) बनाया गया। इसके अनुसार राज्य परिषद (कौंसिल ऑफ स्टेट) उठा दी गई; क्रौमवेल के अधिकार बढ़ा दिये गये; उसे अपना उत्तराधिकार नियुक्त करने तथा राजा की पदवी ग्रहण करने का अधिकार दिया गया और

एक दूसरी सभा (The Other House) का निर्माण किया गया जिसमें प्रोटे-क्टर द्वारा मनोनीत ७० सदस्य बैठ सकते थे।

क्रौमवेल ने उपर्युक्त विधान की सभी बातों को स्वीकार कर लिया, लेकिन सेना के भय से उसने सिर्फ राजा की पदवी को स्वीकार किया। जब पार्लियामेंट की बैठक प्रारंभ हुई तो क्रौमवेल के अनेकों पक्षपाती सदस्य अपर सभा में चले गये और पहले के निकाले हुए सदस्य लोअर सभा में फिर चले आये। अतः पुरानी कठिनाइयाँ फिर उपस्थित हो गईं। लोअर सभा में अपर सभा के उपयोग तथा निर्माण और संरक्षक के अधिकार पर बहस होने लगी। अतः सन् १६५८ ई० के फरवरी में क्रौमवेल ने पार्लियामेंट को भी भंग कर दिया। इसके बाद तीन सितम्बर तक, जब कि उसकी मृत्यु हो गई, उसने बिना पार्लियामेंट के ही शासन किया।

क्रौमवेल के शासन पर विचार—पूर्वकालीन स्टुअर्ट राजा जेम्स तथा चार्ल्स प्रथम निरंकुश तथा स्वेच्छाचारी शासन स्थापित करना चाहते थे। अंगरेजी विद्रोह का उद्देश्य था—उसे रोककर नियमानुकूल शासन स्थापित करना। क्रौमवेल ने उद्देश्य की पूर्ति में अपने राष्ट्र की सहायता की था। लेकिन पीछे क्रौमवेल ने स्वयं भी वही किया—पुनः पूर्ण निरंकुश राज्य स्थापित किया। उसकी निरंकुशता प्राचीन निरंकुशता से भी अधिक कठोर और विस्तृत थी। उसके शासन-काल में देश स्वेच्छाचारिता के जूए के नीचे दबकर कराह रहा था और बहुत लोगों की दृष्टि में वह चार्ल्स प्रथम के रूप में ही दीख पड़ता था। वास्तव में वह चार्ल्स प्रथम से भी अधिक स्वेच्छाचारी शासक था। वह जुलियस सीजर और नेपोलियन जैसा प्रधानतया एक सैनिक था और लोकनियंत्रित व्यवस्था तथा एकतन्त्रवाद में समन्वय स्थापित करना चाहता था। लेकिन उसकी यह चेष्टा सैनिक की तलवार के नोक पर कानून की नकली टोपी पहनाने के समान बतलाई गई है। वह टोपी बहुत समय तक टिक नहीं सकी और तलवार पुनः नंगी ही दीख पड़ने लगी।

उसने बलपूर्वक हिंसात्मक तरीके से रम्प को भंग किया, पार्लियामेंट के दो अंगों में एक ही अंग काम कर रहा था, यानी उसकी पार्लियामेंट एक ही भवन में स्थित थी और वह भी सारे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व नहीं कर रही थी।

पार्लियामेंट के सदस्यों को भी पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं थी। जो सदस्य उसकी नीति से सहमत नहीं थे उनके लिये पार्लियामेंट में जगह नहीं थी। उन्हें बलपूर्वक रोक दिया जाता था और इस प्रकार विधिवत् निर्वाचित सदस्यों की उपेक्षा की जाती थी। सिर्फ जीहुजूरी वालों से ही उसकी बनती थी।

निर्वाचन में भी स्वतन्त्रता का अभाव था। वहाँ भी क्रौमवेल के समर्थकों को

ही भेजने के लिये सैनिक अफसरों द्वारा हस्तक्षेप किया जाता था। स्कॉटलैंड तथा आयरलैंड के प्रतिनिधि तो सरकार के द्वारा ही मनोनीत होते थे।

क्रौमवेल ने प्रजातन्त्र के विधान की भी उपेक्षा की। विधानानुसार कार्य करने के लिये उसने सिर्फ जाल रचा था। बार-बार उसने लोकसभा को भंग किया और ऐसा करने के लिए ५ महीने का हिसाब यंत्री (कैलेन्डर) से न लगाकर चन्द्रमा से ही लगा लिया करता था।

विधान की अवहेलना कर उसने मनमाना टैक्स लगाया जो चार्ल्स प्रथम के समय से तिगुना अधिक था। फिर भी बजट में आधे करोड़ की कमी ही होती थी।

क्रौमवेल के राज्यकाल में नागरिक स्वतन्त्रता पर चार्ल्स प्रथम के समय से भी अधिक चोट की गई। प्रेस का मुंह बँधा हुआ था, सरकारी नीति की समालोचना कोई नही कर सकता था। न्याय का गला घोंटा जाता था; उसके मनमाने टैक्स के विरोधियों को बिना समुचित न्याय का अनिश्चित समय के लिये जेल दे दिया जाता था। इतना ही नहीं, उनके समर्थक न्यायाधीश और वकील भी पदच्युत कर जेल भेज दिये जाते थे। चार्ल्स के ही जैसा उसने दो वर्षों तक देश में फौजी शासन स्थापित किया। मेजर जेनरल को विस्तृत पुलिस अधिकार दिया गया था और वे लोग स्थानीय स्वायत्त शासन तथा सामाजिक जीवन में बहुत हस्तक्षेप करते थे। अतः सर्व साधारण के मनोविनोद के कितने ही साधन बन्द हो गये जिस कारण लोग तकलीफ का अनुभव करने लगे।

क्रौमवेल ने अपना उत्तराधिकारी मनोनीति करने के अधिकार को स्वीकार कर ही लिया था और यदि सैनिकों का भय नहीं रहता तो वह राजा की पदवी भी स्वीकार कर लेता।

उपर्युक्त कारणों से क्रौमवेल सभी दलों की दृष्टि में गिर गया। राजपक्षीदल वाले उसे राजा का हत्यारा समझ कर उससे घृणा करने लगे। जनतन्त्र के समर्थकों की दृष्टि में भी वह घृणा का पात्र बन गया, क्योंकि एक प्रकार से उसने अपने को राजा का रूप ही दे दिया था। कैथोलिक और पादरी भी उससे असन्तुष्ट थे, क्योंकि इन्हें धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं थी। स्कॉटों और आयरिशों की दृष्टि में वह अत्याचारी शासक के अलावा एक विदेशी था।

इस प्रकार क्रौमवेल को शासित वर्ग की सहानुभूति और सहमति प्राप्त न हो सकी जो किसी भी राज्य के स्थायित्व के लिये आवश्यक है। अतः यह ठीक ही कहा गया है कि राजतन्त्र और जनतन्त्र दोनों के ही पतन का कारण क्रौमवेल है।

क्रौमवेल के कुछ अच्छे कार्य—लेकिन क्रौमवेल सिर्फ अत्याचार और दमन

का ही प्रतीक नहीं था, बल्कि उसने कुछ महत्त्वपूर्ण और उपयोगी कार्य भी किये। कई क्षेत्रों में उसके विचार प्रगतिशील थे और उसके कई सुधारों से समाज का हित हुआ।

समाज के भीतर मनोविनोद के बहुत बुरे और हानिकारक साधन वर्त्तमान थे। क्रौमवेल ने उन्हें दूर कर दिया जिससे लोगों के नैतिक स्तर उच्च होने में सहायता पहुँची। दण्डविधान में भी उसने परिवर्त्तन किया, कठोरता की जगह नरमी लाई और विधियों को सरल बनाकर न्याय की गति में तेजी लाई।

पार्लियामेंट सम्बन्धी कई प्रगतिशील सुधार हुए थे और उसमें तीनों द्वीपों के प्रतिनिधि पहले पहल एक साथ बैठते थे। शासन-विधान सम्बन्धी प्रयास कई अंशों में आधुनिकता सूचक थे। पहले की अपेक्षा विस्तृत पैमाने पर सहिष्णुता अपनाई गई। एडवर्ड प्रथम के बाद क्रौमवेल ने ही यहूदियों को इंगलैंड में बसने के लिये आज्ञा दी। चर्च के लिये ऐच्छिक चन्दे की जगह दशांश की प्रथा फिर से जारी की गई।

स्कौटलैंड और आयरलैंड को भी कुछ लाभ हुए थे। दोनों द्वीपों में सुव्यवस्था स्थापित हुई थी। न्याय की मन्द गति में तीव्रता आ गई थी और इंगलैंड के साथ व्यापारिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई थी।

लेकिन सभी जगहों में लोकमत के अभाव के कारण ये सुधार लोकप्रिय न बन सके और स्वेच्छाचारिता की अधिकता में इन सुधारों का महत्त्व छिप गया था।

वैदेशिक, व्यापारिक और औपनिवेशिक क्षेत्रों में भी क्रौमवेल ने पूरी सफलता प्राप्त की थी और पूर्वकालीन स्टुअर्टों के समय की खोई हुई प्रतिष्ठा फिर से स्थापित हो गई थी।

५—राज्य पुनर्स्थापन की ओर ले जाने वाली परिस्थितियाँ
(सितम्बर १६५८ ई०—मई १६६० ई०)

सेना और पार्लियामेंट—क्रौमवेल की मृत्यु के बाद करीब दो वर्षों का समय यानी सितम्बर १६५८ ई० से मई १६६० ई० तक का समय बड़ा ही उलझन पूर्ण है। क्रौमवेल ने अपने पुत्र रिचार्ड को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया था। अतः उसके मरने के बाद रिचार्ड संरक्षक हुआ। लेकिन वह कमजोर और अयोग्य व्यक्ति था। उसके गद्दी पर बैठते ही देश में अशान्ति फैलने लगी। सन् १६५६ ई० में एक नई पार्लियामेंट बुलाई गई जिसके सदस्यों का निर्वाचन पुराने नियमों के अनुसार हुआ था। सेना और इस पार्लियामेंट के बीच झगड़ा होने लगा, क्योंकि सेना

चाहती थी कि उसके सेनापति संरक्षक तथा पार्लियामेंट से बिलकुल स्वतन्त्र रहें। रिचर्ड ने पहले तो दोनों में मेल कराने की कोशिश की, लेकिन असफल होने पर उसने सेना का पक्ष लिया और पार्लियामेंट को भंग कर दिया। इसके करीब आधे महीने बाद शान्तिमय जीवन बिताने के लिये रिचर्ड ने स्वयं अपने पद से त्याग पत्र दे दिया।

रम्प का पुनरागमन, मई १६५९ ई० —अब पार्लियामेंट और संरक्षक दोनों की अनुपस्थिति में सेना ही सर्वोपरि थी। लेकिन यह राजनैतिक क्षेत्र में किंकर्त्तव्य-विमूढ़ थी। सैनिक अफसरों के बीच मतभेद था और नीति निर्णायक व्यक्ति का अभाव था। अतः क्रोमवेल के द्वारा वहिष्कृत रम्प फिर से बुलाई गई। लेकिन इस संकीर्ण रम्प ने अपने एकान्तवास के कटु अनुभव से कोई शिक्षा ग्रहण नहीं की थी। यह सेना के साथ चुनौती लेने लगी। इसने संरक्षण को उठा दिया और सेना पर नियन्त्रण स्थापित करना चाहा। यह चाहती थी कि भविष्य में सैनिकों की नियुक्ति पत्र पर इसी के अध्यक्ष (स्पीकर) का हस्ताक्षर हो। इसने अन्तःकरण की स्वतन्त्रता पर भी चोट की। अतः सेना क्रुद्ध हो गई और लैम्बर्ट नामक एक अफसर ने इसे बलात् भंग कर दिया।

रम्प का भंग होना अक्तूबर १६५९ ई०—लेकिन अब देश की जनता फौजी शासन से बिलकुल ऊब रही थी। देश में अव्यवस्था का साम्राज्य फैल रहा था और लंकाशायर, चेशायर आदि कई जगहों में भीषण विद्रोह उठ रहे थे। विद्रोह तो किसी तरह दबा दिये गये, लेकिन पूर्ण शान्ति स्थापित करना कठिन कार्य था। राज्यसंचालन की कठिनाइयाँ फिर से उपस्थित हुईं और इसके लिये एक सुरक्षा समिति (Committee of Safetv) का निर्माण किया गया था। लेकिन लोगों के धैर्य का भी अन्त हो रहा था और सभी क्षेत्रों में 'कृपाण शासन' के विरुद्ध आवाज़ उठ रही थी। इसका सबसे बड़ा विरोधी तो स्कौटलैंड का शासक मौंक था। वह नियमानुकूल शासन के लिये युद्ध भी करने को तैयार था।

रम्प का दूसरा अधिवेशन, दिसम्बर १६५९ ई०–बड़ी (लौंग) पार्लियामेंट, फरवरी १६६० ई०—अतः भयभीत सेना ने रम्प को फिर से आमंत्रित किया। लेकिन दोनों के बीच झगड़े का सिलसिला भी जारी रहा। रम्प ने अपनी रक्षा के लिये मौक से शीघ्र ही लंदन आने के लिये निवेदन किया और वह एक बड़ी सेना के साथ पहुँच गया। उसका सामना करने के लिये लौम्बर्ट भेजा गया था, लेकिन वह कुछ न कर सका। सन् १६६० ई० के फरवरी में उसने बड़ी (लौंग) पार्लियामेंट की बैठक बुलवायी जिसमें कर्नल प्राइड द्वारा निकाले हुये सदस्य भी बुलाये गये। लार्डसभा भी बुलाई गई। इस पार्लियामेंट ने प्राइड्स-पर्ज के बाद के सभी कार्यों को

अनुचित घोषित किया। इंगलैंड में पुनः प्रेस्बिटेरियन धर्म स्थापित किया और एक नयी लोक-सभा के निर्वाचन के लिये आदेश दिया। इसने मौंक को सेना का अध्यक्ष नियुक्त किया और इसके बाद मार्च में इसने अपने को भंग कर लिया।

कन्वेंशन पार्लियामेंट अप्रैल १९६० ई०—एक नई पार्लियामेंट का चुनाव हुआ जिसे कन्वेंशन पार्लियामेंट कहा जाता है क्योंकि नियमानुसार यह शाही फरमान (रोआयल शीट) के द्वारा नहीं बुलाई गई थी। इसमें प्रेसबिटेरियनों का बहुमत था, लेकिन बहुत से ऐंगिलिकन भी इसमें शामिल थे। स्टुअर्टों के पुनर्स्थापन के पक्ष में प्रभावशाली बहुमत था। पार्लियामेंट में यह प्रस्ताव पास हुआ कि 'अंग्रेजी सरकार राजाओं, लार्डों तथा सर्वसाधारण की है, और इन्हीं के द्वारा यह होना चाहिये।' इस बीच मौंक चार्ल्स द्वितीय से पत्रव्यवहार कर रहा था। चार्ल्स ने ब्रेडा (हॉलैंड) से यह घोषणा-पत्र भेजा, जिसमें उसने कई प्रतिज्ञायें की थीं। पार्लियामेंट ने उस पत्र का बड़ा स्वागत किया और १ मई को राजा, लॉर्ड सभा और कौमन्स सभा के पुनर्स्थापन की घोषणा की। २८ मई को उत्साह और आनन्द के बीच चार्ल्स द्वितीय लंदन पहुँचा। यह घटना इतिहास में पुनस्थापन (रेस्टोरेशन) के नाम से प्रसिद्ध है।

(६) प्रजातन्त्र (कौमन वेल्थ) के पतन के कारण—(अ) जनसम्मति का अभाव एवं सैन्य शक्ति की प्रधानता—हम लोग देख चुके हैं कि क्रौमवेल ने देश में एकतन्त्र राज्य स्थापित किया था, जो सैन्य-ल पर ही टिका हुआ था। जनता की सम्मति तथा सद्भावना इसे प्राप्त नहीं हो सकी थी। सिर्फ हिंसा और दमन के जरिये ही शान्ति स्थापित रहती थी। अंगरेज लोग अपने परम्परागत राजा की निरंकुशता को बर्दाश्त नहीं कर सके थे, फिर क्रौमवेल तो एक साधारण श्रेणी का सैनिक था जिसने नयी उन्नति की थी। स्वतन्त्रता प्रेमी अंगरेज एक साधारण सैनिक अफसर की निरंकुशता कब तक बर्दाश्त करते।

(ब) विशुद्ध प्यूरिटन शासन—प्यूरिटन सिद्धान्त को सामाजिक प्रथा के रूप में प्रचार करने की को शि की गई। जनता के आमोद-प्रमोद के कई निर्दोष साधन बन्द कर दिये गये। लोगों की पुरानी आदतों में बाधा उपस्थित हो गई जिससे वे घबराने लगे थे।

(स) असामयिक आदर्श—क्रौमवेल के कई विचार समयानुकूल नहीं थे, बल्कि समय से बहुत आगे थे। व्यापक धार्मिक सहिष्णुता, कड़ी नैतिकता, पार्लियामेंट के सुधार आदि क्रान्तिकारी परिवर्तन समझे जाते थे जिसे स्वीकार करने के लिये लोग

तैयार नहीं थे। जनता की दृष्टि में क्रौमवेल बड़ी तेजी से बहुत दूर तक चला गया था।

(द) ऐतिहासिक आधार का अभाव—प्रजातन्त्र के पीछे कोई ऐतिहासिक आधार नहीं था। लोग राजतन्त्रप्रणाली तथा पार्लियामेंट से पूर्ण परिचित थे, वे नियमानुमोदित शासन को समझते थे। लेकिन वे प्रजातन्त्र या संरक्षित राज्य से बिलकुल अनभिज्ञ थे। इस तरह का शासन उनकी परम्परा या भावना के विरुद्ध था। अतः ऐसे शासन के लिये अंगरेजों के दिल में श्रद्धा और सहानुभूति नहीं थी।

(ध) जोशीली वैदेशिक नीति—प्रजातन्त्र सरकार साम्राज्यवादी सरकार थी। अतः युद्ध की प्रधानता थी जिसके कारण लोगों पर टैक्स का बोझ विशेष था, व्यापार में बाधा पड़ती थी। अतः व्यापारी वर्ग के लोग इस सरकार के विरोधी हो गये थे।

(न) रिचर्ड क्रोमवेल की कमजोरी—क्रौमवेल द्वारा स्थापित राज्य को क्रौमवेल ही चला सकता था। लेकिन उसकी मृत्यु के बाद उसके जैसा योग्य तथा लौहपुरुष का नितान्त अभाव रहा। रिचर्ड क्रौमवेल उसका उत्तराधिकारी हुआ जो कमजोर, भीरु और अयोग्य था।

अध्याय ८

पुर्नस्थापन युग की गृहनीति (१६६०—८८ ई०)

पुर्नस्थापन की प्रकृति और महत्त्व—पुर्नस्थापन का मतलब होता है किसी पुरानी चीज का फिर से स्थापित होना। इंगलैंड के इतिहास में सन् १६६० ई० के पुर्नस्थापन का मतलब था १६४२ ई० की चर्च तथा राजतन्त्रव्यवस्था का फिर से स्थापित होना। सन् १६४१ ई० और १६६० ई० के बीच देश के चर्च तथा राज्य सम्बन्धी पुराने विधान में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये गये थे। राजतन्त्र तथा लार्डसभा उठा दी गई थी और कौमन्स सभा में भी महान् परिवर्तन हुआ था। लेकिन सन् १६६० ई० में राज्य और चर्च सम्बन्धी पुराने विधान को ही फिर प्रचलित किया गया। चर्च में बिशप व्यवस्था स्थापित हुई। राज्य में राजतन्त्र और दो भवनों में व्यवस्थित पार्लियामेंट स्थापित किये गये।

लेकिन एक मुख्य प्रश्न यह उठता है कि १८ वर्षों के अन्दर १६४२ ई० से १६६० ई० तक जो कुछ भी हुआ, क्या वह सब व्यर्थ गया? क्या गृहयुद्ध और प्रजातन्त्र काल के सभी कार्य निरर्थक हुए? क्या अट्ठारह वर्षों तक का समय बर्बाद हो गया? नहीं, स्पष्ट रूप से ऐसी बात नहीं है। सन् १६६० ई० में १६४१ ई० का हूबहू चित्र उपस्थित नहीं किया जा सकता था। समय और समाज परिवर्तनशील हैं। पुर्नस्थापन के पिछले १८ वर्षों में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए थे, जिन नये विचारों का प्रचार हुआ था उनका प्रभाव पड़ना निश्चित था। एक दार्शनिक के शब्दों में 'सेना के आक्रमण का सामना हो सकता है, लेकिन विचारों के आक्रमण का सामना कभी नहीं हो सकता।' अतः सन् १६६० ई० में पुर्नस्थापित संस्थाओं पर गृहयुद्ध एवं प्रजातन्त्र काल के विचारों का अवश्य ही बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। बाहर से तो पुरानी संस्थायें ज्यों की त्यों दीख पड़ती थीं लेकिन भीतर से उनकी कायापलट हो गई थी। शरीर तो पुराना ही था, लेकिन आत्मा नयी थी। इसीलिये यह सत्य ही कहा गया है कि 'पुर्नस्थापन क्रान्ति भी है।'

राजा—लोग गृहयुद्ध तथा सैनिक शासन से इतने ऊबे हुए थे कि वे अपने राजा पर कोई दबाव डालना नहीं चाहते थे। शान्ति तथा राजकता की स्थापना के लिये

बलशाली राजा की आवश्यकता थी। अतः शाही सत्ता पर किसी प्रकार का वैध प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया; राजा को कोई विशेष प्रकार की शर्त्त मानने या किसी लिखित विधान की सीमा में रहकर शासन करने के लिये वाध्य नहीं किया गया। राजा ही शासन का प्रधान रहा, मन्त्रियों का स्वामी वही रहा और देश की घरेलू तथा वैदेशिक नीति उसी के हाथ में रही। सामन्तशाही कर तो उठा दिया गया था लेकिन पार्लियामेंट ने राजा के लिये आबकारी तथा चुंगी से प्राप्त विशेष रकम जीवन भर के लिये स्वीकार कर दी थी। इतना ही नहीं, राजा की अधीनता में कुछ स्थायी सेना और एक रेजिमेंट भी रहते थे। संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि विधान तथा सिद्धान्त की दृष्टि से चार्ल्स द्वितीय को वे ही अधिकार और पद प्राप्त थे जो उसके पिता चार्ल्स प्रथम के थे।

लेकिन वास्तविकता कुछ और थी। व्यवहार तथा सिद्धान्त में एक गहरी खाई पैदा हो गई। जिस राजतन्त्र के प्रतिनिधि जेम्स तथा चार्ल्स प्रथम या ट्यूडर राजा थे, सन् १६६० ई० में वह राजतन्त्र, जिसका प्रतिनिधि चार्ल्स द्वितीय था, नहीं रहा। चार्ल्स द्वितीय अपने पूर्वजों की तरह स्वेच्छाचारी शासक नहीं बन सकता था। उसने स्वयं ही एक बार कहा था 'मैं पुनः सफर में जाना नहीं चाहता।' इसका अर्थ था कि वह पार्लियामेंट के इच्छानुसार शासन करने को तत्पर था ताकि दोनों के बीच झगड़े का मौका ही उपस्थित न हो सके। बड़ी पार्लियामेंट के अच्छे कानून कायम रखे गये लेकिन विशेष प्रकार के न्यायालय या प्रिवी कौंसिल के फौजदारी अधिकार फिर स्थापित नहीं किये गये। राजा के दैवी अधिकार के सिद्धान्त का अन्त हो गया, उसके पद का प्राचीन गौरव तथा महत्त्व अब न रह सका। राजा तथा प्रजा दोनों के दिल में यह बात साफ हो गई कि राजा का स्वेच्छाचारी शासन अब नहीं चल सकता है। वैसा करने पर राजा को पदच्युत किया जा सकता है और फाँसी भी दी जा सकती है। अब राष्ट्र राजकीय अत्याचारों को सहने को तैयार नहीं था और राजा को भी वैसा करने का साहस नहीं था। अब प्रजा की इच्छा को कुचलना अपने ऊपर खतरा मोल लेना था। जेम्स द्वितीय ने वैसा ही किया तो राष्ट्र ने उसे गद्दी से उतार कर ही दम लिया।

अतः सन् १६६० ई० में सीमित राजत्व की विजय हुई थी न कि स्वेच्छाचारी राजत्व की। इसीलिये एक व्यक्ति ने कहा था कि 'फ्रांस का राजा अपनी इच्छानुसार अपनी प्रजा को चला सकता था, लेकिन इंगलैंड का राजा अपनी प्रजा के इच्छानुसार चलने को बाध्य था।'

पार्लियामेंट—यह कहा जाता है कि 'पुर्नस्थापन सिर्फ राजा ही का नहीं हुआ

बल्कि पार्लियामेंट का भी हुआ।' यह कथन ठीक है। राजा के पहले तो पार्लियामेंट का ही पुर्नस्थापन हुआ। प्रजातन्त्र काल में लार्ड-सभा उठा दी गई थी, विनीत प्रार्थना तथा परामर्श के द्वारा यह स्थापित भी की गई थी, लेकिन बिल्कुल नये रूप में। इसके सदस्य मनोनीत किये जाते थे। कौमन्स सभा तो जारी थी लेकिन इसकी भी पुरानी प्रकृति बदल दी गई थी। सन् १६६० ई० में गृहयुद्ध के पहले की पार्लियामेंट बुलाई गई थी। लार्ड-सभा के पुराने सदस्य, बपौती सिद्धान्त के आधार पर बुलाये गये और नये मनोनीत सदस्य हटा दिये गये। सुधार की हुई कौमन्स सभा भी हटा दी गई। निर्वाचन तथा मताधिकार सम्बन्धी सुधार रद्द कर दिये गये, स्कौटिश तथा आयरिश सदस्य अपने-अपने घर भेज दिये गये और पुरानी कौमन्स सभा ही स्थापित की गई।

लेकिन गृहयुद्ध के पूर्वकाल की और पुर्नस्थापन काल की पार्लियामेंट में बड़ा अन्तर था। पार्लियामेंट अब पहले की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली और ताकतवर बन गई। गृहयुद्ध के पहले राजा प्रधान था और उसकी अधीनता में पार्लियामेंट एक संस्था समझी जाती थी। लेकिन अब बात पलट गई। पार्लियामेंट अब राज्य में एक प्रधान संस्था बन गई और राजा ने इसके इच्छानुसार शासन करने की प्रतिज्ञा की। इसके कई कारण थे। पार्लियामेंट ने ही चार्ल्स को गद्दी दी थी; राजा से भी पहले पार्लियामेंट का पुर्नस्थापन हुआ और इसी ने राजा को बुलाया। इसके पीछे जनता की शक्ति थी। दूसरी बात यह थी कि पिछले २० वर्षों में पार्लियामेंट को राज्य सम्बन्धी बहुत से विषयों का व्यावहारिक अनुभव हो चुका था। तीसरी बात यह थी कि पार्लियामेंट के हाथ में धन था। शासन के लिये राजा को पर्याप्त रकम नहीं मिली थी और स्वीकार रकम को नियमित रूप से वसूलना भी सहज नहीं था। अतः राजा धन के लिये पार्लियामेंट पर ही निर्भर था। किसी विशेष कार्य के लिये धन देना और उसके खर्च की जाँच करने का अधिकार पार्लियामेंट को प्राप्त था।

इस प्रकार पुर्नस्थापन से पार्लियामेन्ट को महत्त्वपूर्ण लाभ हुआ और इसकी बढ़ती हुई शक्ति को विचार में रखते हुए एक लेखक ने कहा है कि 'राजा की अपेक्षा पार्लियामेंट का ही विशेष रूप से पुर्नस्थापन हुआ'। एक दूसरे लेखक के शब्दों में भी 'अंगरेजी पुर्नस्थापन वास्तव में पार्लियामेंटरी क्रान्ति थी।'

इसी लिये कुछ इतिहासकारों ने पुर्नस्थापन काल को आधुनिक पार्लियामेंटरी शासन का प्रारम्भ काल समझ लिया है। लेकिन यह गलत है। अभी राजा के विशेषाधिकारों के ऊपर कोई कानूनी प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया था, वही शासन का वास्तविक प्रधान था और अपनी इच्छानुसार मन्त्रियों को नियुक्त या पदच्युत कर सकता था।

अभी उत्तरदायी शासन दूर था। असल में पुर्नस्थापन के समय नहीं, बल्कि महान् क्रान्ति के समय स्टुअर्ट युग की वैधानिक समस्या हल हो सकी।

चर्च—अंगरेजी चर्च में भी पुरानी प्रथा लाई गई; पादरी व्यवस्था फिर स्थापित हुई जो विलियम लॉड के समय से प्रचलित थी। ऐंग्लिकनों का भाग्य चमक उठा। लेकिन अब ये विशप राजा के अधीन नहीं, बल्कि पार्लियामेंट के अधीन थे। अब ये राजा के विरुद्ध भी पार्लियामेंट का साथ दे सकते थे। पुर्नस्थापन काल में राजपक्षीदल की धाक जमी हुई थी, प्यूरिटनों के विरुद्ध प्रतिक्रिया की लहर चल रही थी। अतः अब इनकी हस्ती मिट रही थी।

समाज—प्यूरिटनों के कमजोर हो जाने से समाज भी प्रभावित हुआ। उनके आदर्श के विरुद्ध बड़ी प्रतिक्रिया उपस्थित हुई। सादा रहन-सहन तथा उच्च विचार का सिद्धान्त उलट गया। बाहरी ठाट-बाट, नाच-गान, रास-रंग पर विशेष जोर दिया जाने लगा। नैतिकता का गला घोंटा जाने लगा। समाज में विषयी तथा फैशन-बाज व्यक्तियों का बोलबाला होने लगा। साधुसन्तों के लिये स्थान न रहा, वे हँसी-मजाक के विषय बन गये।

समाज का चित्र साहित्य रूपी दर्पण में भी प्रदर्शित होने लगा। साहित्य में अश्लीलता की अधिकता और शृंगार की प्रधानता होने लगी।

लेकिन उपर्युक्त बातें दरबारी तथा कुलीन श्रेणी के लोगों के साथ विशेष रूप से लागू थीं। सर्वसाधारण के जीवन पर इस प्रतिक्रिया का प्रभाव न पड़ा, उनके सामने प्यूरिटनों के बहुत से आदर्श कायम रहे।

इस प्रकार पुर्नस्थापन से इंगलैंड में महान् परिवर्त्तन हुए और इसी बात को ध्यान में रखते हुए एक लेखक ने कहा है कि 'पुर्नस्थापन के कारण चार्ल्स द्वितीय ह्वाइट हौल में लाया गया और उसी क्षण इंगलैंड की सारी आकृति ही बदल गई।'

पुर्नस्थापन युग की विशेषताएं—पुर्नस्थापन युग निम्नलिखित चार बातों के लिये प्रसिद्ध है:—

(१) पार्लियामेंट की शक्ति में वृद्धि हुई।

(२) समुद्र पार साम्राज्य का विकास हुआ।

(३) टोरी तथा ह्विग दो राजनैतिक दलों का क्रमशः विकास हुआ। वैधानिक लड़ाई सन् १६७८ ई० में विकट हो गई और १० वर्षों के बाद महान् क्रान्ति हुई।

(४) चौदहवें लुई की अधीनता में फ्रांस की बढ़ती हुई शक्ति के कारण विदेशी राजनीति में इंगलैंड और यूरोप की दिलचस्पी बढ़ने लगी थी।

कहा जाता है कि राज्य पुर्नस्थापन के साथ आधुनिक इंगलैंड का जीवन प्रारम्भ होता है जिसमें वीरता के युग की जगह विवेक के युग का प्रादुर्भाव हुआ है। उत्तर-कालीन स्टुअर्ट चार्ल्स द्वितीय तथा जेम्स द्वितीय इस उक्ति को पुष्ट करते हैं, क्योंकि वे इसी युग के प्रतिनिधि शासक थे।

चार्ल्स द्वितीय का चरित्र—चार्ल्स ने सन् १६६० ई० से १६८५ ई० तक राज्य किया। वह एक सज्जन व्यक्ति था, उसे शिकार तथा व्यायाम से विशेष प्रेम था और विज्ञान तथा कला से भी उसे प्रेम था। वह योग्य तथा दूरदर्शी व्यक्ति था, अतः वह २५ वर्षों तक शासन करने में समर्थ हो सका। वह दिल से कैथोलिक धर्म का विश्वासी था, लेकिन कट्टरता से मुक्त था। राजनीति में वह कुशल तथा व्यावहारिक था। वह अपने पूर्वजों तथा जेम्स द्वितीय के जैसा संकीर्ण और हठी नहीं था। पार्लियामेंट से युद्ध करने के लिये वह तैयार नहीं था और दृढ़ होने पर वह स्वयं झुक जाता था। अपने शासनकाल के अन्तिम भाग में उसने कुछ मनमानी की। लोकमत को वह महती शक्ति समझता था और इसके विरुद्ध वह गुप्त रूप से ही कुछ करने की कोशिश करता था।

लेकिन उसमें त्रुटियाँ भी थीं। वह सुस्त, मतलबी, खर्चीला, सिद्धांतहीन और अनैतिक व्यक्ति था। १५ वर्ष की अवस्था से ही वह देश निर्वासित था और ३० वर्ष की अवस्था में उसका इंगलैंड में आगमन हुआ था। अतः वह अपने रहन-सहन में एकदम विदेशी बन गया। राजकार्य में भी वह मुस्तैद नहीं था और अपने कार्यों में काहिलपन और विलासिता का परिचय देता था। एक बार जब डच लोग टेम्स नदी तक आ गये थे तब वह शिकार करने में व्यस्त था। बदचलन स्त्रियों से उसका दरबार भरा रहता था।

कन्वेंशन पार्लियामेंट के कार्य (अप्रैल १६६० ई०—दिसम्बर १६६० ई०)—चार्ल्स ने अपने ब्रेडा के घोषणापत्र में चार प्रतिज्ञायें की थी :—

(१) सैनिकों को बाकी वेतन चुका दिया जायगा।

(२) राजनैनिक अभियुक्तों को क्षमाप्रदान कर दिया जायगा।

(३) भूमि की समस्या को हल कर दिया जायगा।

(४) अंतःकरण की स्वतंत्रता दे दी जायगी।

कन्वेंशन पार्लियामेंट ने उपर्युक्त विषयों पर विचार करना प्रारम्भ किया।

(१) सैनिकों का वेतन चुका दिया गया, लेकिन न्यूमॉडेल सेना भंग कर दी गई। सिर्फ कोल्डस्ट्रीम गार्ड के ५,००० सैनिकों का एक रेजिमेंट रखा गया, जिससे आधुनिक अंगरेजी सेना पनपी है।

(२) एक 'क्षतपूर्ति तथा विस्मरण' कानून (Indemnity and Oblivian Act) पास हुआ। सभी विद्रोहियों को असाधारण तौर से क्षमा प्रदान कर दी गई, किन्तु जो लोग चार्ल्स प्रथम की फाँसी में आगे थे, उन्हें क्षमा नहीं हुई। ऐसे १३ अभियुक्तों को फाँसी की सजा हुई और २५ व्यक्तियों को आजीवन निर्वासन तथा कारावास की सजा हुई। क्रौमवेल आदि कुछ व्यक्तियों की लाशों को जमीन के नीचे से निकालकर निर्दयतापूर्वक फाँसी के तख्ते पर लटकाया गया।

(३) भूमि की समस्या हल करने में कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। अंत में यह तय हुआ कि राज और चर्च तथा प्रजातन्त्र सरकार के द्वारा जब्त की हुई जमीन बिना किसी शर्त के पुराने अधिकारियों को लौटा दी जाय। लेकिन जिन राजपक्षियों ने जुर्माना देने के लिये अपनी जमीन बेच दी थी उनकी जमीन न लौटाई गई, अतः वे भूमि-व्यवस्था से बड़े ही असन्तुष्ट हुए और राजा पर कृतघ्नता का दोष लगाए।

चौथे विषय के सम्बन्ध में पार्लियामेंट कुछ कर न सकी, क्योंकि धार्मिक प्रश्न पर सदस्यों के बीच मतभेद था। इस पार्लियामेंट ने आर्थिक व्यवस्था भी की। इसने राजा का सामंतशाही लगान बन्द कर दिया और उसको जीवन भर के लिये १२ लाख पौंड वार्षिक आय का टैक्स मंजूर कर दिया।

सन् १६४२ ई० और १६६० ई० के बीच के सभी कार्य अवैध घोषित किये गये। सिर्फ उपयोगी नियम जारी रखे गये। बड़ी पार्लियामेंट के लाभदायी कानून कायम रहे, सन् १६५१ ई० का जहाजी कानून (Navigation Act) पुनः जारी किया गया।

कैवेलियर पार्लियामेंट (मई १६६१ ई०–जनवरी १६७९ ई०)–सन् १६६० ई० के दिसम्बर में यह पार्लियामेंट भंग हुई और दूसरे साल मई महीने में नयी पार्लियामेंट का चुनाव हुआ जिसका बहुमत राजा के पक्ष में था। अतः यह पार्लियामेंट 'कैवेलियर पार्लियामेंट' के नाम से पुकारी जाने लगी और सन् १६७६ ई० के जनवरी तक जारी रही। यह पुर्नस्थापन युग की बड़ी (लौंग) पार्लियामेंट है। राजनैतिक दृष्टि से यह राजा से भी अधिक राजपक्ष की समर्थक थी और धार्मिक दृष्टि से यह साधारण हाई चर्च वालों के समर्थकों से भी अधिक ऐंग्लिकन थी। यह कैथोलिक और प्यूरिटन दोनों की ही कट्टर विरोधी थी। इस पार्लियामेंट ने धार्मिक समस्या हल करने की कोशिश की।

सर्व प्रथम पार्लियामेंट ने उस कानून को उठा दिया जिसके अनुसार साधु-सन्तों

को सांसारिक विषयों में भाग लेने से रोक दिया गया था। चर्च के न्यायालयों को न्याय संबंधी अधिकार दे दिया गया। बिशपों को लार्ड-सभा में बैठने की आज्ञा दे दी गई।

यह पार्लियामेंट स्थापित चर्च के दुश्मनों से बदला लेने के लिये बेचैन थी। लेकिन चार्ल्स ने बिशपों तथा प्रेस्बिटेरियनों के बीच मेल कराने की कोशिश की। इसी उद्देश्य से 'सेवाय' में एक सभा बुलायी गई, जिसमें १२ बिशप और १२ प्रेस्बिटेरियन शामिल थे। लंदन का बिशप सभापति के पद पर था। लेकिन कोई फल न निकला, क्योंकि प्रेस्बिटेरियन नेता मौलिक परिवर्त्तन चाहते थे और बिशप कोई रियायत देने को तैयार नहीं थे। केवल प्रार्थना-पुस्तक में साधारण परिवर्त्तन किये गये।

पार्लियामेंट ने धार्मिक विद्रोहियों (डिजेंटर्स) के विरुद्ध १६६१ और १६६५ ई० के बीच कई कड़े कानून पास किए जिनमें निम्नलिखित प्रसिद्ध हैं :—

(१) कार्पोरेशन ऐक्ट १६६१ ई०—शहरों में प्यूरिटनों की अधिकता थी। अतः नगर-सभाओं (म्युनिसिपैलिटी) में भी उनकी प्रधानता रहती थी। नगर-सभा के हाथ में शहर का शासन और पार्लियामेंट के सदस्य-निर्वाचन का प्रबन्ध भी रहता था। इस प्रकार प्यूरिटनों की बड़ी धाक जमी रहती थी। इसे रोकने के लिये सन् १६६१ ई० में कार्पोरेशन ऐक्ट पास हुआ। इसके अनुसार नगर-सभा के सदस्यों को अंगरेजी चर्च के नियम मानने, सॉलेम्न लीग और कोवेनेन्ट को अस्वीकार करने तथा राजभक्ति की शपथ लेने के लिये बाध्य किया गया। अब नगर-सभाओं में ऐंग्लिकन प्रधानता कायम हो गई।

(२) यूनिफॉर्मिटी ऐक्ट—उसी साल एक यूनिफॉर्मिटी (समानता) ऐक्ट पास हुआ जिसके अनुसार प्रत्येक पादरी और स्कूल शिक्षक के लिये राजभक्ति की शपथ तथा संशोधित प्रार्थना-पुस्तक का व्यवहार अनिवार्य कर दिया गया। इस शर्त को मानने के लिये अन्तिम दिन २४ अगस्त निश्चित था। २००० पादरियों ने इसे अस्वीकार कर दिया जिसके फलस्वरूप उन्हें पदच्युत कर दिया गया।

अब तक प्यूरिटन चर्च के ही दायरे में रहकर उसके स्वरूप को बदलना चाहते थे। लेकिन अब इस नीति का अनुसरण करना असम्भव हो गया। अतः उनके लिये अपनी धर्म सभा की स्थापना आवश्यक थी। लेकिन उनको ऐसा करने से रोकने के लिये भी अन्य कानून पास कर दिये गये।

(३) कन्वेंटिकल ऐक्ट १६६४ ई०—सन् १६६४ ई० में कन्वेंटिकल (धर्म-सभा) ऐक्ट पास हुआ। इसके अनुसार अंगरेजी चर्च के अनुयायियों को छोड़कर दूसरे

लोग किसी तरह की धार्मिक सभा नहीं कर सकते थे। इस नियम के उल्लंघन करने वालों के लिये जुर्माना, निर्वासन और कैद तक की सजा निश्चित की गई थी।

(४) पंचमील ऐक्ट १६६५ ई०—इसी बीच लंदन में भीषण रूप में प्लेग का प्रकोप हुआ, जिसमें सैकड़ों व्यक्ति मौत के शिकार होने लगे। रोगियों की सेवा के लिये प्रवंचित पादरी जहाँ-तहाँ घूमने लगे। संभव था कि उनकी पुरानी धाक फिर से स्थापित हो जाती। अतः इसे रोकने के लिये सन् १६६५ ई० में एक पंचमील ऐक्ट (Five Miles Act) पास हुआ। इसके अनुसार प्रवंचित पादरी अपने पुराने शहर या स्थान के पाँच मील के अन्दर आने से रोक दिये गये जब तक कि वे कार्पोरेशन ऐक्ट की शर्तों को स्वीकार न कर लेते।

क्लैरेंडन कोड—इन कानूनों को सामूहिक रूप से क्लैरेंडन कोड कहा जाता है, क्योंकि क्लैरेन्डन के मन्त्रित्व में ये पास हुए थे। लेकिन यह याद रखना चाहिये कि उनके पास होने में क्लैरेन्डन का कोई हाथ नहीं था, फिर भी उसने उनका कोई विरोध नहीं किया था। चार्ल्स प्रथम के समय लॉड ने डिजेंटरों को पार्लियामेंट के विरुद्ध तंग किया था। पुर्नस्थापन काल में वे पार्लियामेंट के द्वारा ही सताये गये।

परिणाम

(१) बिशपों की धाक—चार्ल्स प्रथम और विलियम लॉड के समय की चर्च प्रथा स्थापित हो गई। अब राज्य में बिशपों की धाक जमने लगी। लेकिन बहुत से विद्वान तथा प्रगतिशील पादरी तो चर्च से निकाल दिये गए थे। अतः चर्च के अधिकांश बिशप साधारण और मध्यम श्रेणी के थे जिसके फलस्वरूप देश तथा चर्च की उन्नति की गति अचानक मन्द पड़ गई।

(२) राजा की स्तुति—राजतन्त्र का गुणगान होने लगा, चर्चवाले राजा की स्तुति करने लगे और उसके यश को फैलाने लगे; वे राजा के दैवी अधिकार तथा निर्विरोध के सिद्धान्त का प्रचार करने लगे।

(३) प्यूरिटनों का संगठन और सहिष्णुता का बीजारोपण—क्लैरेन्डन कोड प्यूरिटनवाद के विरुद्ध महती प्रतिक्रिया के रूप में उपस्थित किया गया था। कोड का एक मात्र उद्देश्य प्यूरिटनवाद को बिलकुल नष्ट कर देना था। लेकिन इसमें सफलता नहीं मिली। उन्हें तकलीफ देना संभव हो सकता था लेकिन उन्हें कुचलना सम्भव न था। इसके दो कारण थे:—(क) यद्यपि डिजेंटरों की संख्या कम थी, फिर भी उनका उत्साह अद्भुत था। उन्हें बड़ी-बड़ी तकलीफें सहनी पड़ीं फिर भी

वे हतोत्साह नहीं हुए और दृढ़ता पूर्वक अपने कार्य के पीछे संलग्न रहे। अब वे अपना संगठन करने लगे और अंगरेजी सामाजिक जीवन के एक स्थायी अंग बन गये। अंगरेजी चर्च और उनके बीच की खाई गहरी हो गई। अतः भविष्य में उनके साथ सहिष्णुता की नीति पर चलना निश्चित-सा हो गया।

(घ) बहुत से डिजेंटरों ने दिखाने के लिये शपथ तो ली लेकिन अपना आन्तरिक विचार नहीं बदला।

क्लैरेंडन मंत्रिमंडल १६६०–१६६७ ई०–संक्षिप्त जीवनी—चार्ल्स के राज्य-काल के प्रथम सात वर्षों में लार्ड क्लैरेन्डन प्रधान मन्त्री था। उसका पहला नाम एडवर्ड हाईड था। वह लौंग पार्लियामेंट का एक सदस्य रह चुका था और सुधार के कामों में खूब तत्पर था, लेकिन जब धार्मिक मतभेद शुरू हुआ तो वह हाई चर्च वालों का नेता बन गया। इस तरह धार्मिक दृष्टि से वह हाई चर्च का एक असहिष्णु अनुयायी था। लेकिन राजनीति में वह एक नर्म व्यक्ति था जो राजा तथा पार्लिया-मेंट के बीच मेल कराना चाहता था। गृहयुद्ध के समय उसने राजा का साथ दिया और उसकी फाँसी के बाद उसके पुत्र चार्ल्स द्वितीय को अपना सहयोग प्रदान किया।

हाइड एक परिश्रमी और सच्चा व्यक्ति था। उसे लिखने-पढ़ने से भी शौक था और उसने विद्रोह का इतिहास भी बड़े ही सुन्दर ढंग से लिखा।

उसका प्रधान मंत्रित्व—चार्ल्स द्वितीय के राज्याभिषेक होने पर हाइड का सितारा चमक उठा। चार्ल्स ने इसे क्लैरेंडन का अर्ल बना दिया और चांसलर तथा प्रधान मंत्री के पद पर नियुक्त कर दिया। चार्ल्स पर उसका इतना प्रभाव हो या कि वह सिर्फ नाम का राजा रह गया था।

लेकिन किसी के सभी दिन समान नहीं होते। क्लैरेंडन के भाग्य ने भी पलटा खाया। कुछ ही समय में वह सभी लोगों के बीच अप्रिय बन गया। दरबार के व्यभिचार, डचयुद्ध के संकट, राजा की फ्रांस पर निर्भरता तथा देश के कुशासन के कारण कड़वा-शोरगुल हो रहा था। राजभक्त पार्लियामेंट भी चंचल होने लगी थी। कन्ट्रीपार्टी नाम के एक विरोधी दल का प्रादुर्भाव हुआ। इस पार्टी की दृष्टि में क्लैरेंडन राजा के विशेषाधिकार का समर्थक था। अतः यह उससे घृणा करने लगी। डिजेंटरों की दृष्टि में वह हाई चर्च का कट्टर समर्थक था। अतः ये लोग भी उससे असन्तुष्ट हो गये और उसे बदनाम करने के लिये अपने प्रति विरोधी कानूनों को क्लैरेंडन कोड के नाम से पुकारने लगे। राजपक्ष वाले भी प्यूरिटनों तथा विद्रोहियों के प्रति उसकी उदारता के कारण उससे घृणा करने लगे थे। दरबारी भी उसकी नैतिकता में अविश्वास करने लगे। सर्वसाधारण की दृष्टि में भी वह स्वार्थी और घूसखोर बन गया था, क्योंकि

उसने अपनी लड़की एन का विवाह राजा के भाई जेम्स, यार्क के ड्यूक के साथ कर दिया था और डंकर्क को फ्रांस के राजा लूई चतुर्दश के हाथ बेच दिया था। लोगों का ख्याल था कि उसे फ्रांस से घूस के रूप में बड़ी रकम प्राप्त हुई थी जिससे वह एक विशाल मकान बनवाने लगा था, अतः लोग उस मकान को 'डनकर्क हाउस' कहने लगे थे।

क्लैरेंडन की आपत्ति का अभी अन्त होने वाला नहीं था। उसके मन्त्रित्व काल में दो प्राकृतिक घटनायें घटीं। सन् १६६५ ई० में प्लेग की बीमारी का भीषण प्रकोप हुआ और ⅙ आबादी नष्ट हो गई। अगले साल भीषण अग्निकांड हुआ जिसमें लंदन के ⅔ घर और करीब १०० चर्च नष्ट हो गये। इससे एक लाभ यह हुआ कि पुराने अस्वास्थ्यकर मकान नष्ट हो गये और सब उनकी जगह नये ढंग के स्वास्थ्यकर मकान बनाये गये। इन दोनों दुर्घटनाओं के लिये भी क्लैरेंडन ही उत्तरदायी घोषित किया गया था, यद्यपि यह एक हास्यास्पद बात है। जो भी हो, क्लैरेंडन की अपकीर्ति का और भी विशेष रूप से प्रचार हो गया।

इसी बीच डचों ने बन्दरगाह में कई अंगरेजी जहाजों को नष्ट कर दिया था और लंदन को कई दिनों तक घेरे में डाल रखा था। इससे भी उसकी बदनामी और बढ़ गई।

क्लैरेंडन का पतन—क्लैरेंडन की तकलीफ का प्याला पूरा भर कर उछलने लगा जब राजा भी उसके प्रभाव तथा भाषण से तंग आकर उससे असंतुष्ट हो गया। पालियामेंट ने उस पर मुकद्दमा चलाया और राजा ने उसे पदच्युत कर दिया। चार्ल्स प्रथम ने अपने भक्त मंत्री बकिंघम को बचाने के लिये पार्लियामेंट को ही भंग कर दिया था, लेकिन चार्ल्स द्वितीय को ऐसा करने का साहस न हुआ। सन् १६६७ ई० में पार्लियामेंट ने वैध तरीके से उसे निर्वासित घोषित कर दिया और फ्रांस में ही क्लैरेंडन की मृत्यु हो गई।

क्लैरेंडन के निर्वासन के साथ चार्ल्स द्वितीय के राज्यकाल का एक हिस्सा समाप्त होता है।

केबाल मंत्रिमंडल (१६६७-१६७६ ई०)—क्लैरेंडन के पतन के बाद चार्ल्स द्वितीय ने व्यक्तिगत शासन स्थापित करने की चेष्टा की। उसने शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली और पाँच व्यक्तियों की एक मंडली स्थापित की जिसे 'केबाल' कहते हैं। यह फ्रेंच शब्द कैबेल (Cabale) से मिलता है जिसका अर्थ होता है 'एक विशेष प्रकार की मंडली'। संयोगवश पाँचों व्यक्तियों के नाम के प्रथम अक्षर को जोड़ने से भी 'केबाल' शब्द का निर्माण हो गया। उनका नाम इस प्रकार था—क्लिफोर्ड, आर्लिंगटन, बकिंघम, ऐशलेकूपर और लौडरडेल। प्रथम दो व्यक्ति रोमन

कैथोलिक थे; तीसरा चंचल और चरित्रहीन था; चौथा कुशल नीतिज्ञ तथा सहिष्णुता और उपनिवेश के विकास का पक्षपाती था और पाँचवा एक बड़ा ही दुष्ट और स्कौटलैंड का शासक था।

यह केबाल मंत्रिमंडल सन् १६६७ ई० से सन् १६७३ ई० तक जारी रहा। आधुनिक कैबिनेट से इसकी कोई तुलना नहीं है। केबाल में कोई प्रधान नेता नहीं था, सभी सदस्य एकमत नहीं थे और न उन सबों से एक साथ मत लेने के लिये कोई बन्धन ही था। इसी मंत्रिमंडल के समय त्रिराष्ट्र सन्धि, डोवर की गुप्त सन्धि और तृतीय डच लड़ाई हुई थी।

धार्मिक अनुग्रह की घोषणा १६७२ ई०—टेस्ट ऐक्ट १६७३ ई०—इस समय चार्ल्स सहिष्णुता की नीति प्रयोग में लाना चाहता था। उसका असल उद्देश्य था रोमन कैथोलिकों को धार्मिक स्वातन्त्रता प्रदान करना; क्योंकि उसने इसके लिये लूई चतुर्दश से प्रतिज्ञा की थी। लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से दूसरे डिजेंटरों को भी स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाती। अतः अपने विशेषाधिकार के आधार पर उसने सन् १६७२ ई० में एक धार्मिक अनुग्रह की घोषणा (डिक्लेरेशन औफ इंडल्जेन्स) प्रकाशित की जिसके द्वारा धर्म सम्बन्धी कई कानूनों को स्थगित कर सबों को धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान कर दी गई। अब यह शोरगुल होने लगा कि प्रोटेस्टेंट धर्म खतरे में है। एक अफवाह सी फैल गई कि फ्रांस चार्ल्स के जरिये कोई कैथोलिक षड़यंत्र रच रहा है। इसके अलावा इस घोषणा का सीधा मतलब था कि देश के कानून से राजा श्रेष्ठ है और यह एक बड़ा ही खतरनाक अधिकार था। डिसेंटरों ने इसे रोम की एक चाल समझी और वे चर्चवालों से विशेष निकट हो गये। इसका जवाब पार्लियामेंट ने दूसरे ही साल एक परीक्षा नियम (टेस्टऐक्ट) पास कर के दिया। इस नियम के द्वारा अंगरेजी चर्च के सिद्धान्तों के मानने वाले को ही राज्य के किसी पद पर नियुक्त किया जा सकता था। इस नियम के विरोधी किसी पद के अधिकारी नहीं हो सकते थे। चार्ल्स ने पार्लियामेंट के विरोध का महत्व समझा और समर्पण कर दिया। उसने अनुग्रह की घोषणा लौटा ली और टेस्ट ऐक्ट भी स्वीकार कर लिया। अतः यार्क के ड्यूक जेम्स को नौसेनापति के पद से हटना पड़ा। क्लिफोर्ड तथा आर्लिंगटन को भी मंत्री पद से इस्तीफा देना पड़ा। चार्ल्स ने ऐशले-कूपर शेफ्ट्सबरी को पदच्युत कर दिया और केबाल मंत्रिमंडल समाप्त हो गया। तब तक राजा के भाई और उत्तराधिकारी जेम्स ने पहली पत्नी से पुत्र न रहने के कारण अपना दूसरा विवाह कर लिया। इस बार भी एक कैथोलिक कुमारी से ही विवाह हुआ। अतः कैथोलिक षड्यन्त्र सम्बन्धी सन्देह और भी पुष्ट हो गया।

ऐंग्लिकन पार्लियामेंट राजा के प्रति उदासीनता दिखलाने लगी। अतः उसे खुश करने के लिये चार्ल्स ने उसके एक विश्वासपात्र चर्चमैन को ही अपना प्रधानमंत्री नियुक्त किया। वह डैन्बी का अर्ल थामस ओसबोर्न था।

डैन्बी मंत्रिमंडल १६७३-७८ ई०—डैन्बी का मंत्रिमंडल १६७३ ई० से १६७८ ई० तक कायम रहा। घरेलू नीति में वह लार्ड क्लैरेंडन के समान, राजा तथा अंगरेजी चर्च का पक्षपाती तथा सहिष्णुता की नीति का विरोधी था; लेकिन वैदेशिक नीति में वह राजा की इच्छा के विरुद्ध फ्रांस का शत्रु था। प्रोटेस्टेंट नीति का अनुसरण कर राजा में पार्लियामेंट का विश्वास बढ़ाना उसका प्रधान काम था। उसने सन् १६७४ ई० में डचों के साथ सन्धि की और १६७७ ई० में मेरी तथा ऑरेंज के विलियम के बीच विवाह कराने का प्रबन्ध किया। मेरी चार्ल्स की भतीजी थी और विलियम प्रोटेस्टेंट तथा फ्रांस का जानी दुश्मन था। लेकिन डैन्बी का मन्त्रिकाल गुप्तगुष्ठि का काल रहा—पार्लियामेंट में असन्तोप फैल रहा था; शेफ्ट्सबरी ने दोनों धारा-सभाओं में विरोधपक्ष का संगठन करना शुरू कर दिया था। इस समय फ्रांस का प्रभाव भी अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचा था। वहाँ का राजा लूई चार्ल्स को पार्लियामेंट के विरुद्ध और पार्लियामेंट को चार्ल्स के विरुद्ध आर्थिक सहायता करता था। इस तरह सम्पूर्ण देश में अशान्ति की लहर दौड़ रही थी।

पोप षड्यंत्र १६७८ ई०—ऐसे ही समय में टाइटस ओटस नामक एक पादरी के द्वारा पोप-षड्यन्त्र के विषय में झूठा प्रचार किया गया। इस षड्यन्त्र का उद्देश्य यह बतालाया गया कि फ्रांसीसी सेना की सहायता से राजा की हत्या कर उसके भाई जेम्स को गद्दी पर बैठाया जायगा। ओटस एक बदमाश व्यक्ति था जो स्कूल, चर्च तथा सेना से निकाला गया था; जिस पर न्यायालय में झूठी गवाही देने के कारण दो बार मुकद्दमा चलाया गया था। फिर भी लोगों ने उसकी बातों में विश्वास किया। उसने षड्यन्त्र के विषय में लंदन के एक अफसर को खबर दे दी थी और कुछ समय के बाद वह अफसर मार भी दिया गया। देश भर में सनसनी फैल गई; राष्ट्र और भी आतंकित हो गया। प्रोटेस्टेंट लोग सावधान हो गये; कैथोलिकों के साथ निर्दयतापूर्ण व्यवहार होने लगा, उन्हें थोड़े सन्देह पर भी कैद और प्राणदण्ड दिया जाने लगे। आतंक तथा दमन दोनों की मात्रा और भी बढ़ गई, जब कि पार्लियामेंट ने भी एकमत से कैथोलिक षड्यन्त्र के अस्तित्व के विषय में अपनी घोषणा कर दी। ओटस का यह विचार रहा होगा कि उस तरह के प्रचार से अंगरेजी चर्च के अधिकारी खुश होकर उसे फिर चर्च में शामिल कर लेंगे। लेकिन उसका उद्देश्य पूरा न हुआ। इस जनश्रुति से कन्ट्री पार्टी या विरोधपक्ष के नेता शेफ्ट्सबरी को शासन

के विरुद्ध प्रचार करने का अच्छा मौका मिल गया। वह चार्ल्स के बदले, उसके एक दोगले पुत्र, मन्मथ को गद्दी पर बैठाना चाहता था। लेकिन उसे भी सफलता न मिली। लेकिन इस जनश्रुति ने डैन्बी की अख्याति बढ़ा दी और वह बदनाम हो गया।

इसी बीच पार्लियामेंट ने डैन्बी पर अभियोग चला दिया। चार्ल्स फ्रांस से मित्रता रखने के लिये धन चाहता था और इसी उद्देश्य से उसने लूई के पास डैन्बी से एक पत्र लिखवाया था। डैन्बी को फँसाने के लिये लूई ने उस पत्र को पार्लियामेंट के पास भेज दिया था। अपनी रक्षा के लिये डैन्बी ने राजा का क्षमा पत्र दिखलाया लेकिन पार्लियामेंट ने घोषणा की कि राजा का क्षमादान अभियुक्ति को नहीं बचा सकता है। अतः अपने मंत्री की रक्षा के लिये चार्ल्स ने सन् १६७६ ई० में कैवेलियर पार्लियामेंट को भंग कर दिया।

तीन छोटी पार्लियामेंटें—अगले दो वर्षों के बीच तीन छोटी-छोटी पार्लियामेंटें बुलाई गईं। पहली पार्लियामेंट १६७६ ई० के मार्च में बैठी। इसके अधिकांश सदस्य शेफ्ट्सबरी के पक्ष में थे। यह तीन बातों के लिये प्रसिद्ध है :—

(क) इसने डैन्बी के अभियोग को पुनः जारी किया और उसे कैद में रखा। इस तरह मन्त्रियों के उत्तरदायित्व के आधुनिक सिद्धान्त का बीजारोपण हुआ।

(ख) इसने हेबियस कौरपस ऐक्ट (स्वतन्त्रता नियम) पास किया। इसके पहले राजा अपने स्वार्थ के अनुसार लोगों को अनिश्चित समय के लिये कैद में रख देता था और न्यायालय में अपराध के निर्णय करने का मौका नहीं देता था। नये नियम के अनुसार ऐसा करना असम्भव कर दिया गया। 'हेबियस कौरपस' एक लैटिन शब्द है जिसका अर्थ होता है शरीर को पेश करना। अतः हेबियस कौरपस ऐक्ट का आशय यह था कि दोष का निर्णय करने के लिये दोषी को न्यायालय में लाने के लिये जज जेलर के पास परवाना जारी करे और यदि दोष निर्णय में विलंब हो तो दोषी को जमानत पर छुड़वा दे। इस प्रकार इस नियम के पास होने से सर्वसाधारण के अधिकार की रक्षा होने लगी।

(ग) कैथोलिकों के बीच प्रतिक्रिया के कारण जेम्स द्वितीय को गद्दी के अधिकार से हटाने के लिये एक एक्सक्लूजन बिल (बहिष्कार प्रस्ताव) पेश किया गया। जेम्स कैथोलिक धर्म का कट्टर समर्थक था। अपने भाई की भलाई के लिये चार्ल्स ने जुलाई में पार्लियामेंट को ही भंग कर दिया।

इसी बहिष्कार प्रस्ताव के फलस्वरूप इंगलैंड में पहले पहल राजनैतिक दलों का संगठन शुरू हुआ। दूसरी पार्लियामेंट के लिये शीघ्र ही चुनाव हुआ। लेकिन इसका

भी रुख कड़ा समझकर चार्ल्स ने इसकी बैठक ही नहीं बुलाई अतः बहिष्कार बिल के समर्थकों ने इसकी बैठक बुलाने के लिये राजा को एक निवेदन पत्र दिया। इस लिये वे पेटिशनर्स (निवेदक) कहलाने लगे। दूसरा राजपक्षी दल था जो राजा के अधिकारों पर हस्तक्षेप अनुचित समझता था और निवेदकों से घृणा करता था। इसलिये इस दल के लोग 'एभोरर्स' (उपेक्षक) कहलाने लगे। आगे चलकर ये दोनों दल 'ह्विग' और 'टोरी' के नाम से प्रसिद्ध हो गये।

तब तक स्कौटिश प्रेस्बिटेरियनों (कवेनेन्टर) ने विद्रोह कर दिया। उन्हें बोयवेल-ब्रिज में हराकर दबा दिया गया।

नयी निर्वाचित पार्लियामेंट की बैठक अक्टूबर १६८० ई० में बुलाई गई। कॉमन्स सभा ने बहिष्कार बिल पास किया, लेकिन लार्ड-सभा ने इसे अस्वीकार कर दिया, अतः वह बिल कानून न बन सका। जनवरी १६८१ ई० में चार्ल्स ने इस पार्लिया-मेंट को भी भंग कर दिया।

तीसरी पार्लियामेंट की बैठक, मार्च १६८१ ई० में औक्सफोर्ड के क्राइस्टचर्च हॉल में बुलायी गई। औक्सफोर्ड राजपक्ष का केन्द्रीय स्थान था। ह्विग सदस्य उत्ते-जित थे और हथियारों के साथ उपस्थित हुए थे। यह पार्लियामेंट १२५८ ई० की पगली पार्लियामेंट के समान थी। सन् १६४२ ई० की जैसी परिस्थिति उपस्थित हो गई थी। गृहयुद्ध निश्चित-सा हो गया। लेकिन अंगरेज लोग सैनक शासन की बुराइयों को अभी भूले नहीं थे। अतः उनकी सहानुभूति ह्विगों को नहीं प्राप्त हो सकी और इससे उत्साहित होकर चार्ल्स ने एक ही सप्ताह के बाद इस पार्लियामेंट को ही भंग कर दिया। इस प्रकार ह्विगों के हिंसात्मक प्रदर्शन से बहिष्कार बिल पास न हुआ और उनकी अपनी ही करनी से उनका मनोरथ सफल न हुआ।

चार्ल्स की प्रधानता १६८१–८५ ई०—अब राजा के पक्ष में प्रतिक्रिया हुई। टोरियों की धाक जमी; ४ वर्षों तक चार्ल्स ने कोई पार्लियामेंट नहीं बुलाई। फ्रांस से उसे आर्थिक सहायता प्राप्त हो रही थी। अतः उसने स्वेच्छाचारी शासन स्था-पित कर दिया। लार्ड स्ट्रैफ़ोर्ड नाम का एक कैथोलिक पीयर पर, जो सत्तर वर्ष का निर्दोष बूढ़ा था, पोप षड्यन्त्र में भाग लेने का सन्देह किया और उसे प्राणदण्ड दे दिया गया। मन्मथ के ड्यूक को निर्वासित किया गया तथा शैफ़्ट्सबरी भागकर हॉलैंड चला गया। ह्विग अधोर होने लगे और एक षड्यन्त्र रचा जिसे स्थान के नाम पर 'राई हाउस प्लौट' कहते हैं। इसका उद्देश्य था कि न्यूमार्केट से आते समय चार्ल्स तथा जेम्स को राई हाउस के समीप मार दिया जाय। लेकिन षडयन्त्र

का भण्डा फूट गया और ह्विगों को राजद्रोही घोषित कर दिया गया। उनके साथ अत्याचार होने लगा; उनके नेताओं को पकड़कर फाँसी दी जाने लगी जिनमें सिडनी तथा रसेल दो प्रमुख ह्विग सदस्य भी थे। लंदन तथा दूसरे प्रमुख नगरों के, जहाँ ह्विगों का विशेष प्रभाव था, चार्टर बदल दिये गये और पार्लियामेंट के सदस्य निर्वाचन का अधिकार राजा के द्वारा मनोनीत व्यक्तियों को सौंप दिया गया।

लेकिन यह मनमाना राज्य चार ही वर्षों तक जारी रह सका, क्योंकि फरवरी १६८५ ई० में चार्ल्स की मृत्यु ही हो गई। मृत्यु के समय उसने अपने को कैथोलिक घोषित किया और उसकी अन्त्येष्टि क्रिया उसी मत के अनुसार हुई।

अध्याय ६

जेम्स द्वितीय (१६८५–१६८८ ई०)

जेम्स द्वितीय का चरित्र—चार्ल्स के मरने के बाद उसके भाई जेम्स द्वितीय का राज्याभिषेक हुआ। उसने १६८५ से १६८८ ई० तक राज्य किया। वह एक वीर सैनिक तथा कुशल नाविक था। चार्ल्स के राज्यकाल में ही उसने स्थल और जल दोनों ही युद्धों में अपनी कुशलता का परिचय दिया था और फ्रांसीसियों ने भी उसकी प्रशंसा की थी। वह सावधान, सच्चा और साहसी पुरुष था। लेकिन उसमें गुणों की अपेक्षा त्रुटियों की ही अधिकता थी। वह कुशल तथा व्यावहारिक राजनीतिज्ञ नहीं था। चार्ल्स प्रथम के जैसा वह भी हठी और अदूरदर्शी था। उसमें कृतज्ञता तथा क्षमा की भावना का अभाव था, क्योंकि वह अपने शुभचिन्तकों को याद नहीं करता था और दुश्मनों को कभी भूलता भी नहीं था। 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' के सिद्धान्त से वह पूर्ण अपरिचित था और प्रत्येक बात में चरमपन्थी था। धार्मिक दृष्टि से वह एक कट्टर कैथोलिक था और विरोधियों को विधर्मी मानता था। राजनैतिक दृष्टि से वह एक कड़ा स्वेच्छाचारी शासक था और विरोधियों को विद्रोही मानता था। वह फ्रांसीसी प्रथा का पक्षपाती था लेकिन यह नहीं समझता था कि उसकी प्रजा उस प्रथा से घृणा करती थी। उसने लूई के द्वारा नैन्टीज के नियम का खण्डन स्वीकार किया, लेकिन उसकी प्रजा ने प्रोटेस्टैंट शरणार्थियों का अपने देश में स्वागत किया। वह कैथोलिक धर्म तथा स्वेच्छाचारी शासन स्थापित करना चाहता था। देश के स्थापित नियम तथा धर्म की उपेक्षा कर और लोकमत को ठुकराकर भी वह अपने उद्देश्य को पूरा करना चाहता था। उसका भाई चार्ल्स उससे अधिक दूरदर्शी, नम्र तथा बुद्धिमान था और उसने जो गुप्तरीति से किया, जेम्स ने उसे खुले-आम किया। इस प्रकार अपने संकटों के लिये जेम्स स्वयं ही बहुत हद तक उत्तरदायी था। उसके राज्याभिषेक के समय परिस्थिति विषम नहीं थी, सफल शासन स्थापित करने के लिये सुअवसर था; लेकिन उसकी व्यक्तिगत त्रुटियों के कारण सुअवसर हाथ से निकल गया और परिस्थिति विषम हो गई। इसलिये जहाँ उसके पूर्वाधिकारी चार्ल्स

द्वितीय ने पच्चीस वर्ष तक शासन कर अपनी शक्ति पहले से भी अधिक संगठित कर ली, वहाँ जेम्स के शासन का चार वर्ष ही में अचानक अन्त हो गया।

राज्याभिषेक के समय की परिस्थिति—जेम्स के राज्याभिषेक के समय परिस्थिति शान्तिपूर्ण थी। स्थिति उसके लिये लाभदायक थी और वैसी स्थिति उसके किसी पूर्वज को नहीं प्राप्त थी। उसके राज्यकाल का प्रारम्भिक भाग चार्ल्स द्वितीय के राज्य काल के अन्तिम भाग का ही विस्तार था। चार्ल्स ने अपने शासन के अन्तिम चार वर्षों में मनमाना शासन स्थापित कर लिया था और राजा के पक्ष में प्रतिक्रिया चल रही थी। विशप और अंगरेजी चर्च के पादरी निर्विरोध आज्ञाकारिता के सिद्धान्त का प्रचार कर रहे थे। टोरी दलवाले भी उसके सहायक थे। टोरी और हाई चर्च पार्टी के सह-योग से ही उसे गद्दी प्राप्त हो सकी थी। पार्लियामेंट की सहानुभूति भी उसे प्राप्त थी। इसने जितनी आमदनी की सम्पत्ति चार्ल्स द्वितीय के लिये मंजूर की थी उतनी संपत्ति और उसके अलावा भी इसने जेम्स के लिये मंजूर की। जेम्स के अधिकार में एक सेना भी आ गई थी। कैथोलिकों के षड्यन्त्र के विधायकों को कड़ी सजा दी गई थी और स्कॉटलैंड से कोई विरोध नहीं था। जेम्स के कैथोलिक होने के कारण आयरिश राजभक्त ही थे। यूरोप का एक महान् सम्राट फ्रांस का लूई चतुर्दश भी जेम्स का सहायक ही था। उसे केवल दो विद्रोहियों का सामना करना पड़ा था। लेकिन वे साधारण दर्जे के विद्रोह थे और सुगमता तथा सफलतापूर्वक दबा दिये गये थे।

आर्जिल का विद्रोह—आर्जिल प्रेस्बिटेरियनों का एक नेता था जो हॉलैंड में रहता था। कैथोलिक जेम्स के गद्दी पर बैठने के बाद वह लौटा और स्कॉटलैंड में मन्मथ के पक्ष में विद्रोह कराने की कोशिश की। लेकिन उसकी सैनिक शक्ति कमजोर थी और उसे पूरी सहायता न मिल सकी। अन्त में वह पकड़ा गया और उसे राजद्रोही घोषित कर फाँसी दे दी गई।

मन्मथ का विद्रोह—मन्मथ ने स्वयं भी विद्रोह किया। उसने अपने को चार्ल्स द्वितीय का जायज पुत्र तथा गद्दी का उचित हकदार घोषित किया। उसे कुछ लोगों का सहयोग प्राप्त हुआ और उसने सेजमूर में राजा की सेना पर अचानक चढ़ाई कर दी, लेकिन सामने एक गड्ढा मिलने के कारण सफलता न मिली। मन्मथ को पकड़-कर कत्ल कर दिया गया। विद्रोहियों को सजा देने तथा सबक सिखलाने के लिये एक न्यायालय की स्थापना हुई जिसका जज जेफ्रे था। वह एक बड़ा ही निर्दयी तथा खुशामदी पुरुष था। वह अपनी कठोरता के लिये देश में प्रसिद्ध हो गया। स्त्रियों के साथ अमानुषिक व्यवहार किया गया। ३०० व्यक्तियों को प्राणदण्ड दिया गया; ८०० से अधिक व्यक्ति देशनिर्वासित कर दिये गये और उनमें से कितने गुलाम के रूप में

बेच दिये गये और बहुतों के शरीर पर कोड़े लगाये गये । इस भयंकर कठोरता के कारण ही यह न्यायालय 'खूनी न्यायालय' कहा जाने लगा ।

महान् क्रांति के कारण

(१) हिंसा जनित आतंक—जेम्स के हिंसात्मक तरीकों के कारण राष्ट्र में आतंक-सा फैलने लगा; जनता भयभीत और सशंकित होने लगी; अतः सन्तोष तथा भक्ति की जगह असन्तोष तथा घृणा पैदा होने लगी ।

(२) स्थायी सेना में वृद्धि—सुगम सफलता और आशाजनक परिस्थिति से उत्साहित होकर जेम्स अपने उद्देश्यों को पूरा करने की चेष्टा करने लगा । उसके दो प्रधान उद्देश्य थे—इंगलैंड में स्वेच्छाचारी शासन की स्थापना तथा कैथोलिक धर्म का प्रचार । इसका मतलब था—देश के मौलिक नियम, जनता की आजादी और स्थापित चर्च की स्थिति पर भीषण खतरा । सर्वप्रथम उसने अपनी सैनिक शक्ति दृढ़ की । स्थायी सेना में सैनिकों की संख्या बढ़ाकर ३० हजार तक कर दी गई । इसमें कैथोलिक भी नियुक्त होने लगे ।

(३) फ्रांस से घनिष्ठ मित्रता—धन और सेना प्राप्त करने के उद्देश्य से फ्रांस के साथ मित्रता दृढ़तर हो गई । यूरोप में लूई चतुर्दश की अधीनता में फ्रांस स्वेच्छाचारी शासन का एक नमूना था । वहाँ व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का नाम नहीं था, राजा ही स्टेट था । १६२६ ई० में हेनरी चतुर्थ ने फ्रांसीसी प्रोटेस्टैंटों को नैन्टीज के नियम के द्वारा कुछ स्वतन्त्रता दी थी लेकिन १६८५ ई० में लूई ने इसे रद्द कर दिया और प्रोटेस्टैंटों के साथ बड़ा ही अत्याचार किया । अतः अंगरेजी जनता फ्रांस से मित्रता के कारण और भी भयभीत हो गई ।

(४) असाधारण न्यायालय की स्थापना—लम्बी पार्लियामेंट ने असाधारण न्यायालय को सन् १६४१ ई० में अवैध घोषित कर दिया था; पुर्नस्थापन काल की पार्लियामेंट ने भी १६६१ ई० में इसे दृढ़ कर दिया । फिर भी जेम्स ने अपनी नीति को कार्यान्वित करने के लिये एक नया हाई कमीशन कोर्ट स्थापित किया । इसमें सात जज नियुक्त किये गये थे और जेफ्रे इसका प्रधान था ।

(५) परीक्षा नियम रद्द कराने की कोशिश—जेम्स कैथोलिकों के पक्ष में परीक्षा नियम हटाना चाहता था । इसके लिये उसने पार्लियामेंट को आज्ञा दी, लेकिन पार्लियामेंट ने अस्वीकार कर दिया । इस पर जेम्स ने उसकी बैठक ही स्थगित कर दी और उसके राज्यकाल में पार्लियामेंट की बैठक फिर नहीं हो पाई । अब उसने अपने विशेषाधिकारों का उपयोग शुरू किया । वह किसी कानून को स्थगित करने या उससे

किसी व्यक्ति को मुक्त करने के लिये अपना अधिकार समझता था। यह राजा का 'सस्पेन्डींग तथा डीसपेंसींग पावर' कहलाता है। इसके अनुसार उसने परीक्षा नियम आदि कठोर कानूनों से कैथोलिकों को मुक्त कर दिया। जजों से अपने पक्ष में उसने एक घोषणा भी करा ली और विरोधी जज पदच्युत कर दिये गये। अब वह राज्य तथा सेना में अधिक से अधिक कैथोलिकों को नियुक्त करने लगा। उसने अपने सहायक मंत्रियों तक को छोड़ दिया; हैलीफैक्स नाम का एक नरम शासक तथा रौचेस्टर नाम का एक हाई चर्चमैन—दोनों पदच्युत कर दिये गये और उनकी जगह पर संडरलैंड नामक एक कैथोलिक नियुक्त किया गया। हाल ही में इसने अपना धर्म परिवर्त्तन किया था।

(६) स्कौटलैंड तथा आयरलैंड में निरंकुशता—स्कौटलैंड तथा आयरलैंड भी जेम्स की निरंकुशता से बच न सके। वहाँ भी बड़े-बड़े पदों पर कैथोलिक नियुक्त किये गये। टिरकोनेल नाम का एक कट्टर कैथोलिक आयरलैंड का वायसराय बनाया गया और आयरिश सेना से प्रोटेस्टेंट बलात् हटा दिये गये।

(७) चर्च पर हमला—अब चर्च पर यथाक्रम आक्रमण शुरू हुआ। चर्च पर नियन्त्रण रखने के लिये हाई कमीशन कोर्ट का निर्माण हो चुका था। जेम्स ने कैथोलिक धर्म की समालोचना करना भी मना कर दिया था। लंदन के एक पादरी ने इस आज्ञा का पालन नहीं किया। अतः उसे हटा देने के लिये बिशप को आज्ञा दी गई और वैसा न करने के कारण बिशप स्वयं ही हटा दिया गया।

(८) विश्वविद्यालयों पर हमला—विश्वविद्यालयों में चर्च का बड़ा प्रभाव था, अतः जेम्स का ध्यान इधर भी आकर्षित हुआ। कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी के उपकुल पति ने एक पादरी को आवश्यक परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं होने के कारण एम० ए० की उपाधि नहीं दी, अतः वह पदच्युत कर दिया गया। क्राइस्ट चर्च का डीन मैसी नामक एक कैथोलिक मनोनीत किया गया। आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी में सबसे प्रसिद्ध मैग्डेलन कालेज के प्रोटेस्टेंट सदस्यों की जगह पर कैथोलिक सदस्य नियुक्त किये गये।

जेम्स के इन सभी कार्यों से देश में असन्तोष और क्षोभ फैल रहा था, लेकिन उसमें समय तथा जनता की नाड़ी परखने की शक्ति नहीं थी। वह आगे कदम बढ़ाता ही गया जब तक कि वह स्वयं गहरी खाई में न गिर पड़ा।

(९) धार्मिक अनुग्रह की घोषणा १६८७ ई० (डिक्लेरेशन औफ इन्डल्जेन्स)—जेम्स ने प्रोटेस्टेंट डिजेंटरों की सहानुभूति प्राप्त करने की चेष्टा की। इसलिये अपने विशेषाधिकार के आधार पर उसने १६८७ ई० में धार्मिक अनुग्रह की घोषणा प्रकाशित की। इसके द्वारा कैथोलिकों तथा डिजेंटरों के विरुद्ध चालू कठोर

नियमों को स्थगित कर दिया गया और उन्हें पूजापाठ के अलावा किसी भी पद पर आरूढ़ होने के लिये पूर्ण स्वतन्त्रता दे दी गयी। लेकिन जेम्स को निराश ही होना पड़ा। सर्वसाधारण ने तो इसका विरोध किया ही, डिजेंटरों ने भी इसका विरोध किया। अब तक जेम्स उन्हें सताता था अतः डिजेंटरों ने इस घोषणा के पीछे जेम्स की कपटपूर्ण चाल समझी; इसके अलावा वे लोग चर्च को प्रोटेस्टेंट धर्म का स्तम्भ समझते थे। अतः उन लोगों ने व्यक्तिगत स्वतन्त्रता तथा प्रोटेस्टेंट धर्म की रक्षा के लिये उस घोषणा को ठुकरा दिया और अपने पुराने दुश्मनों का ही साथ दिया।

१६८७ ई० के अन्त तक जेम्स ने अपनी मूर्खता और शीघ्रता के कारण बहुत से लोगों की सहानुभूति खो दी—यहाँ तक कि उसके सहायक और समर्थक भी विरोधी दल में शामिल हो गये। टोरियों और हाई चर्च वालों ने उसके भाई चार्ल्स तथा उसका पक्ष लिया था। उन्हीं के बदौलत जेम्स को गद्दी मिल सकी थी, लेकिन ह्विगों के जैसा ये लोग भी भयग्रस्त और क्षुब्ध थे।

(१०) धार्मिक अनुग्रह की दूसरी घोषणा तथा ७ पादरियों का विद्रोह—दूसरे साल १६८८ ई० में नाजुक परिस्थिति उत्पन्न हो गयी; क्रान्ति की आग भड़क उठी। मई महीने में जेम्स ने धार्मिक अनुग्रह की दूसरी घोषणा प्रकाशित की और गिरजों में इसे पढ़ने की आज्ञा दी।

कैन्टरबरी के बड़े पादरी, सैंक्रोफ्ट के नेतृत्व में ६ पादरियों ने एक प्रार्थनापत्र तैयार कर जेम्स के यहाँ पेश किया। उसमें यह निवेदन किया गया कि इस घोषणा को गिरजों में पढ़ने की आज्ञा नहीं दी जाय। जेम्स ने इसमें अपनी मानहानि समझी और उन लोगों पर विद्रोह के लिये अभियोग लगा दिया। मुकदमें की सुनवाई होने लगी लेकिन सातों पादरी निर्दोष साबित हुए और ३० जून को वे मुक्त कर दिये गये। उस दिन सारे राष्ट्र ने असीम आनन्द का अनुभव किया—सैनिकों तथा डिजेंटरों ने भी उस आनन्दोत्सव में भाग लिया।

(११) पुत्रजन्म—इसी बीच जेम्स को दूसरी पत्नी से पुत्र उत्पन्न हुआ। अब तक तो लोग धैर्य तथा सन्तोषपूर्वक जेम्स के अत्याचारों को सह रहे थे। उन्हें यह आशा लगी हुई थी कि जेम्स के दिन इने गिने हैं, उसे कोई लड़का नहीं है, उसके मरने के बाद गद्दी उसके पुत्री मेरी को मिलेगी। मेरी और उसका पति विलियम ऑफ ऑरेंज कट्टर प्रोटेस्टेंट थे। लेकिन पुत्र के जन्म से उनकी सारी आशाओं पर पानी फिर गया। अब वे यह सोचने लगे कि इस पुत्र को कैथोलिक शिक्षा दी जायगी और यह कैथोलिक शासन स्थापित करेगा। बहुत से लोगों को यह भी शंका थी कि वह

किसी दूसरे का पुत्र है। अब लोगों के दिल में निराशा और भय उत्पन्न हो गया और उनके सामने क्रान्ति के सिवा दूसरा कोई चारा नहीं रहा।

क्रांति की प्रगति—अतः ३० जून को ही, पादरियों के मुक्ति दिवस के अवसर पर, भिन्न-भिन्न मत के सात प्रमुख व्यक्तियों ने इंगलैंड में आने के लिये विलियम को निमन्त्रित किया। उनमें ह्विग और टोरी दल के प्रतिनिधि भी शामिल थे। निमन्त्रण का यही उद्देश्य था कि विलियम एक सेना के साथ इंगलैंड आवे, वहाँ का राजा बने और जनता के धर्म तथा आजादी की रक्षा करे। जल और स्थल सैनिक अफसरों ने भी विलियम को सहायता देने की प्रतिज्ञा की। विलियम को एक स्वर्ण सुअवसर प्राप्त हो गया, उसे मुँह माँगा दान मिल गया। लूई चतुर्दश के विरुद्ध एक गुट स्थापित करने में लगा था और उसमें अंगरेजों का सहयोग भी अत्यावश्यक समझता था। इसी समय जर्मनी पर हमला करने के लिये लूई ने नीदरलैंड की सीमा से अपनी सेना वापस बुला ली। अतः विलियम को अब फ्रांस से कोई भय न रहा। अतः उसने अंगरेजों के निमन्त्रण को सहर्ष स्वीकार कर लिया।

सन् १६८८ ई० के नवम्बर में विलियम एक बड़ी सेना के साथ, निर्विरोध इंगलैंड में पहुँचा। यह १५,००० सैनिकों की सबसे बड़ी पेशेवर सेना थी जिसका रोमनों के बाद इंगलैंड में प्रवेश हुआ था। इस सेना में अंगरेज, स्कौट, डच, स्वीड तथा जर्मन सम्मिलित थे। सर्वसाधारण, नेता तथा अफसर—सबों का सहयोग विलियम को प्राप्त हुआ। किसी ने भी अभागे जेम्स का साथ नहीं दिया उसकी छोटी पुत्री एन ने भी उसका परित्याग कर दिया और यार्कशायर में विद्रोह का झंडा खड़ा किया। जेम्स ने व्यर्थ ही अपनी प्रजा को शान्त करने की चेष्टा की, क्योंकि अब पर्याप्त देर हो चुकी थी। उसे पकड़कर रोचेस्टर में रख दिया गया लेकिन साधारण पहरा रहने के कारण वह भागकर फ्रांस चला गया। एक कन्वेन्शन पार्लियामेंट की बैठक हुई; उसने गद्दी को रिक्त घोषित कर मेरी तथा विलियम को संयुक्त शासक नियुक्त किया।

इसी घटना को इतिहास में १६८८-८६ ई० की महान् या गौरवपूर्ण क्रान्ति कहते हैं।

क्रान्ति के लक्षण तथा महत्त्व—यह क्रान्ति महान् और गौरवपूर्ण कही गई है। क्रान्ति को इस विशेषण के द्वारा पुकारना बिलकुल ठीक है। इसके पाँच कारण हैं :—

(१) यह क्रान्ति कम से कम हिंसात्मक तथा अधिक से अधिक उपयोगी साबित हुई। इसमें मारपीट, लूट-पाट और खून-खराबी नहीं हुई; फिर भी राजा का परिवर्त्तन

हो गया। सत्रहवीं सदी में राजा तथा पार्लियामेंट के बीच प्रधानता के लिये भीषण संघर्ष हो रहा था, इसका प्रारम्भ जेम्स प्रथम के राज्य-काल में हो ही गया और बड़ी (लौंग) पार्लियामेंट की बैठक के बाद से इसकी भीषणता बढ़ने लगी। क्रान्ति के द्वारा ही इस संघर्ष का अन्त हुआ और इंगलैण्ड से जेम्स द्वितीय के भागने के साथ-साथ राजाओं के दैवी अधिकार के सिद्धान्त की भी बिदाई हो गयी। अब पार्लियमेंट राज्य में एक प्रधान अंग बन गई।

(२) क्रान्ति के द्वारा जो निबटारा हुआ वह ह्विगों तथा टोरियों के सिद्धान्तों का समन्वय था।

(३) यह क्रान्ति रक्षात्मक तथा नरम प्रकृति की थी। अंगरेज लोग स्वभाव से स्थितिपालक तथा सनातनी होते हैं। अतः इस क्रान्ति के द्वारा कोई क्रान्तिकारी परिवर्त्तन नहीं किया गया, जो परम्परा के बिल्कुल विरुद्ध हो; बल्कि प्राचीन सिद्धान्तों को ही दुहराया और पुष्ट किया गया।

(४) यह क्रान्ति यूरोपियन दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। यूरोप में फ्रांस के लूई चतुर्दश का शासन स्वेच्छाचारिता का नमूना था जो यूरोप के लिये बड़ा ही खतरनाक था। विलियम लूई का जानी दुश्मन था और उसने उसकी शक्ति को कमजोर कर सारे यूरोप की भलाई की।

(५) विश्व दृष्टि से भी यह क्रान्ति प्रसिद्ध है। विचारों को सीमाबद्ध करना कठिन ही नहीं, बल्कि असम्भव भी है। क्रान्ति के द्वारा जिन विचारों का प्रादुर्भाव और प्रचार हुआ वे इंगलैंड में ही सीमित न रहे बल्कि विश्व भर में क्रमशः फैलने लगे। प्रथम विश्व-युद्ध के समय तक शासन के क्षेत्र में इंगलैंड एक नमूना का काम करता रहा और संसार के सभी प्रमुख देशों में उसके आधार पर पार्लियामेंटरी शासन स्थापित हो चुका था।

लेकिन पूर्ण रूप से इसके गौरव में कुछ कमी भी दीख पड़ती है :—

(१) इंगलैंड को अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये, एक विदेशी शासक की शरण में जाना पड़ा जो एक महान् राष्ट्र के लिये गर्व तथा प्रतिष्ठा की बात नहीं हो सकती।

(२) क्रान्ति के फलस्वरूप वैदेशिक नीति में परिवर्त्तन हुआ, विदेशी युद्धों की बाढ़ हो गयी जिसके कारण देश की आर्थिक शक्ति पर अधिक बोझ पड़ने लगा।

(३) इस क्रान्ति से आयरिशों के दुर्भाग्य का अन्त न हुआ बल्कि उनकी तकलीफें और भी बढ़ गईं और उन्हें कोई लाभ नहीं हुआ।

क्रांति के प्रभाव—घरेलू तथा वैदेशिक—दोनों ही क्षेत्रों की नीति पर क्रान्ति का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा।

(क) राजत्व पर—राजाओं के दैवी तथा खानदानी अधिकार के सिद्धान्त का अन्त हो गया। इगलैंड 'राजकीय जनतन्त्र' (Crowned Republic) के रूप में परिवर्त्तित हो गया। शाही शक्ति जनशक्ति के अधीन हो गयी। राजा राज्य के किसी दूसरे अफसर के जैसा ही जनता के इच्छानुसार नियुक्त या पदच्युत किया जा सकता था। अब लोकमत या लोक-सभा की उपेक्षा करना सम्भव न रहा। विशेषाधिकार पर राजनियम की विजय हुई। अब निश्चित रूप से राजसत्ता का केन्द्र राजा तथा पार्लियामेंट में स्थित हो गया—वैध तथा राजनैतिक सत्ता का समन्वय स्थापित हो गया।

(ख) धर्म पर—क्रान्ति के फलस्वरूप प्रोटेस्टेंट धर्म—ऐंग्लिकन चर्च की विजय हुई। राजा के उत्तराधिकार के साथ-साथ उसके धर्म पर भी पार्लियामेंट ने अपना अधिकार स्थापित कर लिया। प्रोटेस्टेंट धर्म सदा के लिये राजधर्म घोषित कर दिया गया। दूसरे धर्मावलम्बियों के लिये सहिष्णुता की नीति अपनाई गई और उसकी सीमा पहले से अधिक विस्तृत कर दी गई।

(ग) पार्लियामेंट पर—इंगलैंड में वैधानिक या नियमानुमोदित शासन स्थापित हुआ। पार्लियामेंट ने केवल उत्तराधिकार और धर्म पर ही अपना अधिकार स्थापित नहीं किया, बल्कि सेना और अर्थ पर भी प्रभुत्व कायम कर लिया। उसके विशेषाधिकार तथा वार्षिक अधिवेशन सुरक्षित हो गये। पार्लियामेंट में भी कौमन्स सभा की ही प्रधानता स्थापित हुई, क्योंकि देश के आय-व्यय पर इसी का अधिकार था। इसके अलावा मन्त्रियों के उत्तरदायित्व का सिद्धान्त भी स्थापित हो चुका था और इसी सभा के बहुमत दल से मन्त्री स्थापित होते थे।

इस प्रकार आधुनिक कैबिनेट प्रथा का विकास शुरू हुआ और लम्बी पार्लियामेंट के द्वारा आरम्भ किया हुआ काय भी पूरा हो गया।

(घ) कुलीनों पर—कौमन्स सभा की प्रधानता तो स्थापित हुई, लेकिन प्रजातन्त्र राज्य अभी दूर था। दोनों सभाओं पर लार्डों या कुलीनों का प्रभाव था। सर्वसाधारण उनके शासन का विरोध करने या स्वयं शासन में भाग लेने के लिये तैयार नहीं थे। इसके अलावा दोषपूर्ण निर्वाचन प्रणाली के कारण कुलीन लोग अपने उम्मीदवारों को ही पार्लियामेंट में भेजने में समर्थ होते थे। अतः १६८८ ई० से १८३२ ई० तक शासन में कुलीनों का ही प्रभाव रहा।

(ङ) सर्वसाधरण पर—छापेखाने पर से नियंत्रण हटा लिया गया; न्यायविभाग

कार्यकारिणी से स्वतन्त्र हो गया, क्योंकि जजों की नियुक्ति, उन्नति तथा पदच्युति उनकी योग्यता तथा आचरण पर अवलम्बित कर दी गई।

अधिकार-पत्र में जनता के लिये कई उपयोगी बातें थीं। इस तरह व्यक्तिगत तथा नागरिक स्वतन्त्रता की रक्षा हुई।

(च) वैदशिक नीति पर—(i) फ्रांस से शत्रुता—चार्ल्स द्वितीय तथा लूई चतुर्दश के हाथ के खिलौने थे और उसी के इशारे पर नाचते थे। विलियम लूई का कट्टर दुश्मन था और फ्रांस-विरोधी गुट का नेता भी था। उसके आगमन से वैदेशिक नीति में खोई हुई स्वतन्त्रता तथा प्रतिष्ठा पुनः प्राप्त हो गई और यूरोप के राजनैतिक क्षेत्र में इंगलैंड की गिनती प्रथम श्रेणी में होने लगी।

(ii) हॉलैंड से मित्रता—पिछले चालीस वर्षों के अन्दर इंगलैंड तथा हॉलैंड के बीच तीन युद्ध हो चुके थे। लेकिन विलियम तो हॉलैंड का ही एक निवासी और प्रोटेस्टेंट शासक था। अतः स्वाभाविक ही दोनों देशों में मित्रता स्थापित हो गई।

अध्याय १०

वैदेशिक नीति (१६४६—८८ ई०)

प्रजातन्त्र काल की वैदेशिक नीति (१६४६—६० ई०)

प्रजातन्त्र या क्रौमवेल की नीति—प्रारम्भ से ही प्रजातन्त्र सरकार को भीषण कठिनाइयों का मुकाबला करना पड़ा था। अतः १६५१ ई० के अन्त तक वह अपने घरेलू क्षेत्र में ही व्यस्त रही और कैथौलिक आयरलैंड, प्रेस्बिटेरियन स्कौटलैंड तथा दूसरे-दूसरे शाही समर्थक दबाये गये। अब तक प्रजातन्त्र सरकार के अधीन एक विशाल, शक्तिशाली तथा सुशिक्षित जल और स्थल सेना भी स्थापित हो चुकी थी। सैनिकों की संख्या ४० हजार तथा जहाजों की संख्या २०० से ऊपर थी। सरकार नयी शक्ति, स्फूर्ति और चेतना का अनुभव करती थी। अतः १६५२ ई० के प्रारम्भ से ही अवकाश पाकर प्रजातन्त्र सरकार विदेशी नीति में हस्तक्षेप करने लगी।

प्रजातन्त्र सरकार इंगलैंड की प्रथम साम्राज्यवादी सरकार कही जा सकती है। इसकी नीति जंगजू तथा साम्राज्यवादी थी—समुद्र पर तथा समुद्र पार के देशों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहती थी। अतः शतवर्षीय युद्ध के बाद सरकारी नीति का विशेष झुकाव युद्ध की ओर रहा। एक वैधानिक शासक की दृष्टि से क्रौमवेल बुरी तरह असफल रहा लेकिन एक साम्राज्यवादी शासक की दृष्टि से उसे अद्भुत सफलता मिली। उसकी परराष्ट्र-नीति ने इंगलैंड को वह स्थान प्राप्त कराया जो उसे एलिज़ाबेथ के बाद से नसीब नहीं हुआ था। पूर्वकालीन स्टुअर्टों के समय की खोई हुई प्रतिष्ठा फिर से प्राप्त हो गई। इसीलिये यह ठीक ही कहा गया है कि "घरेलू क्षेत्र में क्रौमवेल को जो महानता प्राप्त हुई वह बाहर की महानता की छायामात्र थी।"[1]

क्रौमवेल की वैदेशिक नीति के तीन प्रधान उद्देश्य थे :—

(१) राजनैतिक दृष्टि से, विदेशी सहायता के द्वारा स्टुअर्टों का राजगद्दी पर पुनर्स्थापन रोकना।

---

[1] क्लैरेंडन।

(२) धार्मिक दृष्टि से, एलिज़ाबेथन परम्परा के सिलसिले में प्रोटेस्टेंट स्वार्थ की रक्षा करना।

(३) आर्थिक दृष्टि से, अंगरेजी व्यापार का विस्तार करना।

प्रथम डच-युद्ध के कारण (१) डचों का व्यापारिक एकाधिकार—इंगलैंड का पहला शिकार हॉलैंड हुआ। यह एक बड़े आश्चर्य की बात हुई, क्योंकि धर्म तथा शासन की दृष्टि से दोनों ही एक समान थे—दोनों ही प्रोटेस्टेंट तथा गणतन्त्रात्मक थे। फिर भी इंगलैंड की साम्राज्यवादी दृष्टि हॉलैंड पर ही सर्वप्रथम पड़ी। इसका कारण बहुत गहरा था। व्यापारिक दृष्टि से दोनों कठोर प्रतिस्पर्द्धी थे। अंगरेजों के जीवन का आधार व्यापार ही था। लम्बी पार्लियामेंट के एक सदस्य ने एक बार कहा था—"हम लोग विश्व की सुन्दरतम प्रेयसी—व्यापार के एकाधिकार के लिये लड़ रहे हैं।" अब तक यह एकाधिकार डचों को प्राप्त था। उन्होंने पूरबी इंडीज में बहुत से अंगरेजों को कत्ल किया था और उनके व्यापार को रोक दिया था। समुद्री व्यापार में भी डचों का आधिपत्य स्थापित था। उनके ही जहाज सभी समुद्रों के मालवाहक हो गये थे। इस प्रकार संसार भर का व्यापार डचों के अधिकार में आ गया था।

(२) समुद्री व्यापार नियम—यह स्थिति अंगरेजों के लिये भयावह तथा आपत्तिजनक थी। अतः १६५१ ई० में रम्प का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ और उसने एक समुद्री-व्यापार-नियम (नेविगेशन ऐक्ट) पास किया। इसके अनुसार इंगलैंड में बाहर से आने वाला माल या तो अंगरेजी जहाजों में, या जिस देश से माल आता हो उसी देश के जहाजों में आ सकता था। इस नियम से अंगरेजों का उद्देश्य पूरा होने लगा—अंगरेजी जहाजी शक्ति दृढ़ होने लगी। एक लेखक के अनुसार इस एक नियम ने अंगरेजी राष्ट्र को महान् बना दिया। एक ओर अंगरेजी व्यापार का विकास होने लगा, दूसरी ओर डच-व्यापार का ह्रास। उपनिवेशों तथा संसार का व्यापार अंगरेजों के हाथ में आने लगा और इससे डचों का बड़ा नुकसान हुआ। इस तरह के नियम तो इंगलैंड में पहले भी बनाये गये थे लेकिन उनकी व्यावहारिकता पर पूरा जोर तथा ध्यान नहीं दिया जाता था। इस बार नियम बड़ी ही सावधानी तथा कड़ाई से लागू किया गया था।

(३) डचों का डेनमार्क से सन्धि—बदला तथा स्वार्थ-रक्षा भावना से प्रेरित हो डचों ने डेनमार्क से एक सन्धि कर ली। बाल्टिक समुद्र के निकट के देशों से ही जहाज के अधिक सामान इंगलैंड को प्राप्त होते थे। अब अंगरेजों के लिये इस व्यापार में कुछ बाधा उपस्थित हो गयी।

फिर भी अभी युद्ध नहीं होता, या होता भी तो देर से। लेकिन दोनों देशों के बीच कुछ और भी बखेड़ा उपस्थित हुआ।

(४) इंगलैंड द्वारा डच जहाज की तलाशी—इंगलैंड और फ्रांस के बीच एक प्रकार से बड़ी दुश्मनी चल रही थी, क्योंकि फ्रांस ने प्रजातन्त्र को स्वीकार नहीं किया था और चार्ल्स द्वितीय को शरण दिया था। इंगलैंड फ्रांसीसी माल के लिये, और जहाजों की तरह, डच जहाज की भी तलाशी करता था। हॉलैंड ने इसका घोर विरोध किया।

(५) अंगरेज राजदूत की हत्या—हॉलैंड स्थित अंगरेज राजदूत अपने होटल में एक दिन मार दिया गया। इससे अंगरेजों की भावना को बड़ी चोट पहुँची।

किसी भी व्यक्ति या राष्ट्र के लिये आत्मसम्मान एक बहुत बड़ी चीज है। दोनों देशों के बीच यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ। अंगरेजों का कहना था कि इंगलिश चैनल में अंगरेजी जहाजों के सामने डच जहाज अपना झण्डा नीचा कर लिया करें। डच भला यह कब स्वीकार करने वाले थे। उन्होंने ट्रोम्प के नेतृत्व में इसका विरोध किया। इस पर डोवर के निकट दोनों के जहाजी बेड़े लड़ पड़े और मई १६५२ ई० में विधिवत् युद्ध घोषित हो गया।

युद्ध की सम्भावनाएँ—अंगरेज और डच दोनों ही शक्ति में करीब एक समान थे। दोनों के पास जंगी बेड़े थे और दोनों के ही नायक—ब्लेक तथा ट्रोम्प कुशल और योग्य थे। लेकिन डचों के पक्ष में तीन बड़ी कमजोरियाँ थीं:—

(क) अंगरेजी जहाज की अपेक्षा डच जहाज छोटे और कमजोर थे तथा आवश्यक सामानों से कम सुसज्जित थे।

(ख) डचों को इंगलिश चैनल से होकर या ब्रिटिश-द्वीप-समूह का चक्कर लगा कर उत्तरी समुद्र से होकर आना-जाना पड़ता था।

(ग) डचों की आबादी बढ़ रही थी और उनकी जीविका का प्रधान साधन व्यापार ही था।

अतः डचों के लिये युद्ध निराशाजनक तथा आपत्तिसूचक था।

घटनाएँ—फिर भी दो वर्षों तक युद्ध चलता रहा (१६५२–१६५४ ई०)। छोटे-बड़े कई सामुद्रिक युद्ध हुए जिनमें केन्टिशनौक, डन्जेनिस, पोर्टलैंड तथा गैबार्ड्स के युद्ध प्रसिद्ध हैं। ये सभी युद्ध बड़े ही महत्त्वपूर्ण साबित हुए, क्योंकि आधुनिक तरीके के ये प्रथम नियमित जहाजी युद्ध थे। इनसे समुद्री-युद्ध-विद्या में विकास हुआ और इसमें नेल्सन के समय तक बहुत साधारण परिवर्त्तन हुआ। इन युद्धों के फलस्वरूप डचों की बड़ी क्षति हुई—उनके माल-असबाब जब्त कर लिये गये, १४००

जहाज पकड़े गये जिनमें दो सौ से अधिक जंगी बेड़े थे। अब वे लड़ाई से हतोत्साह हो गये और सुलह के लिये उत्सुक होने लगे।

अंगरेजों का भी युद्ध में बहुत खर्च हो रहा था। इस बीच क्रौमवेल संरक्षक के पद पर आरूढ़ हो चुका था और प्रोटेस्टेंट धर्म का पक्षपाती होने के कारण वह हॉलैंड से लड़ना नहीं चाहता था। अतः अप्रैल १६५४ ई० में दोनों देशों के बीच सन्धि हो गई।

सन्धि—डचों ने अपने देश से राजपक्षियों को निकाल देने, इंगलिश चैनल में अंगरेजी झंडे का सम्मान करने और ३० वर्ष पूर्व के अम्बोयना के कत्लेआम की क्षतिपूर्त्ति करने की प्रतिज्ञा की। उन्होंने अप्रत्यक्ष रूप से समुद्री-व्यापार-नियम की शर्त्तों को भी स्वीकार कर लिया, क्योंकि सन्धि में इसके विरुद्ध कोई चर्चा न की गई।

इस प्रकार डचों की बड़ी हानि हुई लेकिन उनकी सामुद्रिक शक्ति का बिल्कुल अन्त नहीं हुआ। अतः क्रौमवेल ने डेनमार्क, स्वेडन तथा पुर्तगाल से भी सन्धियाँ की। इस कार्य से प्रोटेस्टेंट धर्म दृढ़ हुआ और इंगलैंड को कई व्यापारिक सुविधायें प्राप्त हुईं। क्रौमवेल उत्तर के प्रोटेस्टंट राष्ट्रों को मिलाकर एक गुट स्थापित करना चाहता था, लेकिन इसमें उसे सफलता नहीं मिली।

पश्चिमी इंडीज पर आक्रमण—सन् १६४८ ई० में ३० वर्षीय युद्ध तो समाप्त हो चुका था लेकिन स्पेन तथा फ्रांस के बीच युद्ध अभी जारी था। दोनों ही क्रौमवेल की सहायता के लिये उत्सुक थे। क्रौमवेल ने स्पेन से दो माँगें की—(क) स्पेन के राज्य में अंगरेजों के लिये धार्मिक स्वतन्त्रता, तथा (ख) पश्चिमी इंडीज में व्यापारिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो। स्पेन के लिये ये माँगें बहुत थीं और उसके एक दूत के शब्दों में ये माँगें उसके मालिक की दोनों आँखें माँगने के समान थीं। स्पेन ने इन माँगों को अस्वीकार कर दिया। अब क्रौमवेल ने आक्रमण करने का निश्चय किया। पश्चिमी इंडीज में हेस्पीनियोला नाम का एक पुराना उपनिवेश था जो स्पेनिश शक्ति का केन्द्र था। उस पर चढ़ाई करने के लिये १६५५ ई० में क्रौमवेल ने एक नौसेना भेजी। लेकिन इसमें क्रौमवेल बुरी तरह असफल रहा फिर भी जमैका उसके अधिकार में आ गया और यह पहला उपनिवेश था जिसे इंगलैंड ने दूसरी युरोपीय शक्ति से छीन लिया।

भूमध्य-सागर में कारवाई—भूमध्य-सागर में भी इंगलैंड की कारवाई शुरू हुई। १६५५ ई० में ही ब्लेक जंगी बेड़े के साथ भूमध्य-सागर की ओर भेजा गया। ट्यूनिस के शासक ने कुछ अंगरेजों को कैद कर लिया था। ब्लेक ने ट्यूनिस पर

आक्रमण किया और अद्भुत सफलता मिली। अंगरेज क़ैदी मुक्त कर दिये गये और अंगरेजों को व्यापारिक सुविधाएँ भी प्राप्त हुईं। अब भूमध्य-सागर में इंगलैंड की नाविक शक्ति के विकास के लिये प्रोत्साहन मिल गया।

वौदुआ की घाटी की समस्या—दूसरे वर्ष क्रौमवेल इटली में उपस्थित हुआ। वौदुआ की घाटी सेवाय के ड्यूक के राज्य में पड़ती थी। उस घाटी के निवासी प्रोटस्टेंट थे और ड्यूक कैथोलिक था। अतः ड्यूक उनके साथ अत्याचार किया करता था। यह क्रौमवेल के लिये बड़ी लज्जा की बात थी और उसने अपनी प्रजा को हर्जाना देने के लिए ड्यूक से माँग की। फ्रांस का राजा क्रौमवेल से मित्रता करना चाहता था, अतः उसने क्रौमवेल की माँगों को स्वीकार करने के लिये ड्यूक को प्रभावित किया। इससे यूरोप में इंगलैंड का प्रभाव स्थापित हो गया और संसार की दृष्टि में क्रौमवेल प्रोटेस्टंट का संरक्षक बन गया।

फ्रांस के साथ संधि और स्पेन के साथ युद्ध—शान्ताक्रूज पर हमला (१६-५७ ई०)—हम लोग देख चुके कि फ्रांस ने ड्यूक पर दबाव डालकर क्रॉमवेल की सहानुभूति प्राप्त कर ली। इसके अलावा क्रॉमवेल की दृष्टि में फ्रांस स्पेन से कम धार्मिक कट्टर था। अतः १६५६ ई० में उसने स्पेन के विरुद्ध फ्रांस के साथ एक आक्रमणात्मक सन्धि की। इंगलैंड और स्पेन के बीच युद्ध शुरु हो गया। १६५७ ई० में एक भीषण समुद्री युद्ध हुआ जिसमें इंगलैंड को अद्भुत सफलता मिली। शान्ता-क्रूज नाम के बन्दरगाह में खजाने से भरे हुए स्पेनी जहाज लगे हुए थे। उन जहाजों को तोप सहित किलों से घेर दिया गया था। फिर भी ब्लेक अपनी चतुराई से उन किलों को पारकर बन्दरगाह में चला ही गया और उन जहाजों को जला या डुबा-कर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। लेकिन प्लीमथ के समीप जहाज पर ही उसकी मृत्यु भी हो गयी, तो भी उसने इंगलैंड के नाविक गौरव को शिखर पर पहुँचा दिया।

ड्यून्स का युद्ध १६५८ ई०—दूसरे साल १६५८ ई० में एक भीषण स्थल-युद्ध हुआ जो ड्यून्स का युद्ध कहा जाता है। इसमें फ्रांसीसी तथा अंगरेज सैनिक एक साथ होकर लड़ रहे थे और वे डन्कर्क पर अपना आधिपत्य स्थापित करना चाहते थे। इससे अंगरेजों के हाथ में डचों की लगाम तथा महाद्वीप में प्रवेश करने का द्वार प्राप्त हो जाता। यह होकर ही रहा, डन्कर्क का पतन हो गया और क्रॉमवेल का निश्चय भी पूरा हुआ।

अब स्पेनियों की शक्ति कमजोर हो गई और उनकी सहायता से इंगलैंड पर आक्रमण करने के लिये चार्ल्स द्वितीय की आशा पर पानी फिर गया। लेकिन इंगलैंड के साथ-साथ फ्रांस की भी प्रधानता यूरोप में स्थापित हो गयी।

इसी बीच क्रॉमवेल मर गया और आगे बढ़ना अचानक रुक गया।

क्रॉमवेल की नीति की समालोचना—इस प्रकार क्रौमवेल की वैदेशिक नीति गौरवमयी तथा लाभदायक साबित हुई। उसके तीनों उद्देश्य पूरे हो गये। फिर भी उसकी नीति में कुछ त्रुटियाँ थीं। जैसे—

(१) एलिज़ाबेथन परंपरा के सिलसिले में वह स्पेन को ही अंगरेजी साम्राज्य तथा प्रोटेस्टेंट धर्म का शत्रु समझता था। लेकिन वह यह न समझ सका कि स्पेन अवनति की अवस्था में है और फ्रांस एक उन्नतिशील राष्ट्र है। अतः उसने फ्रांस के साथ मैत्री-पूर्ण सन्धि कर उसकी शक्ति बढ़ाने में सहायता दी। उसका यह कार्य शक्ति-सन्तुलन के सिद्धान्त के विरुद्ध था और इससे आगे चलकर यूरोप की शान्ति तथा स्वतन्त्रता के लिये भीषण संकट उपस्थित हुआ।

(२) क्रॉमवेल की उपर्युक्त नीति का आधार धर्म था, लेकिन वह यह न समझ सका कि अब धार्मिक युग बीत गया है। यूरोपीय राजनीति में विभाजन का आधार अब धर्म न था, क्योंकि स्वेडन तथा डेनमार्क जैसे दो प्रोटेस्टेंट राज्य एक दूसरे के उतने ही कट्टर दुश्मन थे जितने दो कैथोलिक राज्य स्पेन तथा फ्रांस। अतः क्रौमवेल की नीति पुरानी थी।

(३) डन्कर्क पर प्रभुत्व स्थापित होने से हानि भी हुई। महादेश के राजनीतिक झमेलों में इंगलैंड का फँसना निश्चित-सा हो गया।

(४) अंगरेजी स्वार्थ पर प्रत्यक्ष रूप के कोई वास्तविक खतरा नहीं था; उसकी नीति साम्राज्यवादी थी और वह सैन्य गौरव के लिये उत्सुक था। युद्धों की अधिकता के कारण जनता की आर्थिक शक्ति पर विशेष दबाव पड़ा, अतः देश में असन्तोष की मात्रा में वृद्धि हुई।

अध्याय ११

राज्य पुर्नस्थापन युग की वैदेशिक नीति

(१६६०–८८ ई०)

अभी यह देखा गया कि प्रजातन्त्र काल में क्रॉमवेल ने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में इंगलैंड का सिर ऊँचा कर दिया था। इंगलैंड ने यूरोप में एक बड़ा ही प्रभावशाली स्थान प्राप्त कर लिया था; लेकिन १६६० ई० में स्टुअर्टों के पुनरागमन के साथ इंगलैंड का सिर फिर नीचा होने लगा; उसका प्रभावशाली स्थान समाप्त होने लगा। साधारणतः वैदेशिक नीति की प्रकृति वही रही जो प्रजातन्त्र काल में थी। लेकिन उसी नीति को अनुकरण करने के लिये भिन्न तरीका अपनाया गया और उसका फल भी भिन्न ही निकला।

फ्रांस के प्रति चार्ल्स का झुकाव—गद्दी प्राप्ति के लिये चार्ल्स द्वितीय किसी विदेशी राष्ट्र का ऋणी नहीं था, फिर भी प्रारंभ से ही वह फ्रांस के प्रति विशेष आकृष्ट था। इसके कई कारण थे :—

(क) उसकी माता फ्रांसीसी थी, अतः उसकी धमनियों में फ्रांसीसी रक्त प्रवाहित था।

(ख) उसके निर्वासन के समय उसे फ्रांस में ही शरण मिली थी।

(ग) लूई चतुर्दश फ्रांस तथा यूरोप में एक सुप्रसिद्ध तथा शक्तिशाली राजा था जो चार्ल्स का ममेरा भाई था। चार्ल्स भी उसको आदर्श शासक समझता था और स्वयं वैसा ही बनना चाहता था।

(घ) व्यापारिक क्षेत्र में वह फ्रांस से अधिक हॉलैंड को इंगलैंड का प्रतिस्पर्द्धी मानता था।

इस प्रकार चार्ल्स ने फ्रांस के साथ निकटतम संबन्ध स्थापित किया।

(१) उसने अपनी प्यारी बहन हेनरिटा का विवाह लूई के भाई ऑरलियन्स के ड्यूक के साथ कर दिया।

(२) अपना विवाह पुर्तगाल की राजकुमारी बरगन्जा की कैथेराइन से कर लिया। पुर्तगाल के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने का यही कारण था कि वह फ्रांस का मित्र था। इस सम्बन्ध से इंगलैंड को कई महत्त्वपूर्ण लाभ हुए :—

(क) दहेजस्वरूप चार्ल्स को दो मुख्य स्थान मिले—बम्बई और टैन्जियर। बंबई हिन्दुस्तान के पश्चिमी किनारे पर एक प्रमुख व्यापारिक केन्द्र था। यहाँ ईस्ट इन्डिया कंपनी को दूसरे-दूसरे स्थान भी प्राप्त थे, लेकिन वे मुगल सम्राट से मिले थे। चार्ल्स ने बंबई को १० पौंड सलाना के मामूली किराये पर कंपनी को सौंप दिया। अतः बंबई पर कंपनी का अधिकार मुगल सम्राट से स्वतन्त्र रहा। इसके अधिकार के साथ-साथ कंपनी के व्यापार में बड़ी वृद्धि होने लगी। टैन्जियर भी भूमध्यसागर में एक प्रसिद्ध बन्दरगाह था जो सामरिक तथा व्यापारिक दृष्टि से प्रसिद्ध था। सन् १६८३ ई० में वह अंगरेजों के हाथ से निकल गया, लेकिन पीछे जिब्राल्टर के द्वारा यह क्षति पूर्त्ति हो गई। इन स्थानों के अलावा कैथेराइन ने अपने साथ भी कई लाख पौंड के रूप में बहुत धन पाया।

(ख) पुर्तगाल के विश्वस्थित सभी बन्दरगाह अंगरेज व्यापारियों के लिये खोल दिये गये।

(ग) अगले कई वर्षों तक पुर्त्तगाल इंगलैंड का घना मित्र बना रहा। नेपोलियनिक युद्ध के समय अंगरेज सैनिक नेपोलियन के विरुद्ध पुर्त्तगाल में लड़े थे।

लेकिन इस संबन्ध से कुछ बुराई भी हुई। १५८० ई० में स्पेन ने पुर्तगाल को अपने राज्य में मिला लिया था और १६४० में पुर्तगाल ने अपने को स्वतन्त्र कर लिया। फ्रांस स्पेन के विरुद्ध पुर्तगाल का सहायक था। वैवाहिक संबन्ध के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से इंगलैंड ने इस प्रचलित स्थिति को स्वीकार कर लिया।

(३) फ्रांस की ओर झुकाव का तीसरा फल यह हुआ कि चार्ल्स ने फ्रांस से २० लाख पौंड लेकर उसे डन्कर्क दे दिया। अपने जानते तो उसने बुद्धिमानी की। यह कुछ अंशों में ठीक भी था। डन्कर्क पर कब्ज़ा रहने से यूरोपीय राजनीति में फँसने की संभावना थी। इसके अलावा डन्कर्क तथा टैन्जियर दोनों की रक्षा के लिये सेना की आवश्यकता थी, लेकिन इतनी पर्याप्त सेनी की कमी थीं।

फिर भी डन्कर्क के बेचने से इंगलैंड में असन्तोष फैल गया, क्योंकि यह अंगरेज़ी गौरव का एक स्मारकस्वरूप था। लोगों का यह ख्याल होने लगा कि इंगलैंड की प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचाकर भी चार्ल्स फ्रांस को खुश रखना चाहता है।

दूसरा डच-युद्ध (१६६५--६७ ई०) कारण—एक ओर फ्रांस से मित्रता और दूसरी ओर हॉलैंड से शत्रुता बढ़ी। इसके भी निम्नलिखित कारण थे :—

(१) इंगलैंड और हॉलैंड के बीच व्यापारिक प्रतियोगिता बहुत पहले से चली आ रही थी और प्रथम डच-युद्ध के बाद भी इसका पूर्णतः अन्त नहीं हुआ। सन् १६६० ई० में इंगलैंड ने समुद्री-व्यापार-नियम को फिर से लागू किया। इस बार

अंगरेजी उपनिवेशों को इंगलैंड के अलावा किसी दूसरे देश से व्यापार करने की मनाही कर दी गई।

(२) इसी समय कई बातों को लेकर अमेरिका तथा अफ्रीका में अंगरेज तथा डच व्यापारी आपस में लड़ने लगे थे, जिसके कारण ईस्ट इंडिया कम्पनी को बड़ी हानि हुई। इस सम्बन्ध में चार्ल्स के पास डचों के विरुद्ध कई शिकायत-पत्र भेजे गये।

(३) चार्ल्स के निर्वासन के समय डचों ने क्रौमवेल् को खुश करने के लिये राजपक्षियों को निकाल दिया था। इन सब कारणों से १६६५ ई० युद्ध घोषित हो गया।

घटनाएँ—इस समय इंगलैंड को कई कठिनाइयों तथा आपत्तियों का सामना करना पड़ता था। इसी समय अग्नि तथा प्लेग का भीषण प्रकोप हुआ था; पर्याप्त युद्ध सामान भी नहीं थे; अच्छे जंगी जहाजों का अभाव था और ब्लेक जैसा सुयोग्य नौसेनापति भी कोई नहीं था। सबसे बढ़कर धन की बड़ी कमी थी, क्योंकि चार्ल्स आवश्यकता से अधिक खर्च करता था; युद्ध में भी अनुमान से अधिक खर्च हो रहा था और टैक्स भी बहुत कम वसूल हो सका था। इन सब कारणों से युद्ध में अंगरेजों को आशातीत सफलता नहीं हुई। १६६५ ई० ड्यूक ऑफ यार्क ने लोवेस्टोफ्ट में डचों के ऊपर विजय प्राप्त की। अंगरेजों का एक जहाज नष्ट हुआ लेकिन डचों के १२ जहाज नष्ट हुए। किन्तु दूसरे ही साल स्थिति बदलने लगी; डचों ने मौंक को डोवर की खाड़ी में हरा दिया। १६६७ ई० में डच टेम्स नदी में मेडवे के ऊपर चैथम तक आसानी से बढ़ आये। उन्होंने १६ अंगरेजी जहाजों को तहस-नहस कर दिया और कई दिनों तक लंदन को घेरे में डाले रहे। इस बीच अंगरेजों ने अमेरिका में डच उपनिवेशों पर चढ़ाई कर अपना कब्जा स्थापित कर लिया। लेकिन अब दोनों दल सन्धि के लिये उत्सुक थे और १६६७ ई० में ब्रेडा की सन्धि के द्वारा युद्ध समाप्त किया गया।

ब्रेडा की संधि—इसके अनुसार यह तय हुआ कि लड़ाई में जिसने जो प्रदेश ले लिया है वह उसी के अधिकार में रहे। इस तरह डचों के अमेरिका स्थित उपनिवेश, न्यूजर्सी तथा न्यू एमस्टर्डम अंगरेजों को प्राप्त हो गये। ड्यूक औफ यार्क के सम्मान में पिछले उपनिवेश का नाम न्यूयार्क रखा गया और इसकी प्राप्ति से उत्तरी अमेरिका के पूर्वी किनारे पर स्थित उत्तरी और दक्षिणी उपनिवेशों के बीच की खाई भर गई।

त्रिराष्ट्र संधि (१६६८ ई०)—डोवर की संधि (१६७० ई०)—लेकिन जनता यह संधि नहीं चाहती थी और यह भी क्लैरेंडन के पतन में एक कारण बन गई। उसके पतन

के बाद केबाल मंत्रिमंडल स्थापित हुआ। केबाल शान्ति स्थापना चाहती थी लेकिन यह फ्रांस के विरुद्ध थी। अतः १६६८ ई० में फ्रांसीसी साम्राज्य के विस्तार को रोकने के लिये ब्रेडा की संधि त्रिराष्ट्र सन्धि में परिवर्तित कर दी गयी, जब स्वेडन भी इसमें शामिल हो गया। लेकिन चार्ल्स की आन्तरिक इच्छा कुछ दूसरी ही थी। वह तो कई बातों में फ्रांस पर निर्भर था, अतः फ्रांस के विरुद्ध जा ही नहीं सकता था। असल में वह फ्रांस को हॉलैंड के विरुद्ध भड़काना चाहता था। फ्रांस भी हॉलैंड को ही इस संधि के लिये मुख्यतः उत्तरदायी समझता था। अतः सन् १६७० ई० में लूई तथा चार्ल्स के बीच डोवर की गुप्त सन्धि हुई। चार्ल्स ने हॉलैंड पर चढ़ाई करने के लिये लूई को सैनिक सहायता देने की प्रतिज्ञा की; लूई ने चार्ल्स को धन तथा हॉलैंड में कुछ हिस्सा देने का वादा किया। यह सन्धि-पत्र का पहला भाग था। दूसरे भाग में चार्ल्स ने मौका पाकर अपने को कैथोलिक घोषित करने तथा कैथोलिकों को सुविधायें देने के लिये प्रतिज्ञा की; लूई ने चार्ल्स को अतिरिक्त धन देने तथा उसके विरुद्ध हुए विद्रोह को दबाने के लिये सैनिक सहायता तक भी देने की प्रतिज्ञा की। यह दूसरा भाग केबाल के दो कैथोलिक सदस्य, क्लिफोर्ड तथा आर्लिंगटन, को ही मालूम था। बाकी मन्त्रियों तथा जनता की आँखों में धूल झोंकने के लिये एक नकली सन्धि-पत्र प्रकाशित हुआ जिसमें केवल प्रथम भाग ही वर्णित था।

इस प्रकार चार्ल्स द्वितीय ने स्वतन्त्र वैदेशिक नीति अनुसरण करने की कोशिश की लेकिन "डोवर की संधि के साथ उसकी वैदेशिक नीति का श्रेयस्कर भाग समाप्त भी हो जाता है।"[१]

तीसरा डच-युद्ध (१६७२–७४ ई०)—इस प्रकार लूई और चार्ल्स ने हॉलैंड के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। लेकिन इस बार की हालत आशाजनक नहीं थी। सामद्रिक युद्ध अनिर्णायक सिद्ध हुए, धन का बहुत ही अभाव था और इसकी पूर्ति के लिये बुरे तरीके से कोशिश की गई। बैंकरों ने अस्थायी तौर पर खजाने में रुपया जमा किया था, चार्ल्स ने उन्हें लौटाने से इनकार कर दिया। उसकी इस योजना को 'स्टौप ऑफ दी एक्सचेकर' कहते हैं। अतः पिछले दो डच युद्धों के समान यह युद्ध लोकप्रिय न बन सका। युद्ध में सफलता नहीं दीख पड़ती थी और जनता की दृष्टि में चार्ल्स लूई के इशारे पर नाच रहा था।

वेस्ट मिनिस्टर की संधि (१६७४ ई०)—इसी बीच इंगलैंड में केबाल मंत्रिमंडल का अन्त हो गया और डैन्बी का मंत्रित्व शुरू हुआ। डैन्बी ने युद्ध को शीघ्र ही समाप्त कर दिया। इंगलैंड तथा हॉलैंड के बीच वेस्टमिनिस्टर की सन्धि हुई। युद्ध समाप्त

[१] वार्नर-मार्टिन; दी ग्राउन्ड वर्क ऑफ ब्रिटिश हिस्ट्री, भाग २, पृष्ट ४०२

हो गया लेकिन इस युद्ध में डचों की शक्ति बहुत कमजोर हो गयी और अब वे अंगरेजों के व्यापारिक प्रतियोगी न रहे। डचों के अधिकांश व्यापार पर अंगरेजों का अधिकार स्थापित हो गया।

कुटिल तथा प्रभाव शून्य वैदेशिक नीति (१६७४--८८ ई०)—सन् १६७४ से १६८८ ई० तक अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में इंगलैंड का प्रभावशाली स्थान न रहा। चार्ल्स अपने को पार्लियामेंट के दबाव से स्वतन्त्र करना चाहता था और धन के अभाव में यह सम्भव नहीं था। अतः धन के लिये वह लूई चतुर्दश पर विशेष रूप से निर्भर रहने लगा और एक तरह से वह लूई का पेंशनभोगी बन गया। लूई को भी यह भय था कि इंगलैंड कैथोलिक विरोधी भावना के कारण फ्रांस के विरुद्ध कहीं युद्ध न घोषित कर दे, अतः वह भी चार्ल्स को धन देता रहा ताकि चार्ल्स पार्लियामेंट के अधिवेशन को स्थगित करता रहे। लेकिन जब लूई को यह सन्देह होने लगा कि चार्ल्स की शक्ति विशेष बढ़ रही है तब वह उसके विरोधी पक्ष को भी घूस देने लगा।

दूसरी ओर फ्रांस की असीम शक्ति तथा अद्भुत सफलता को देखकर चार्ल्स का प्रधान मन्त्री डैन्बी विचलित हो रहा था। वह लूई का दुश्मन था और फ्रांस के विरुद्ध सक्रिय नीति का अनुसरण करना चाहता था। लूई के बल तथा प्रभाव को देखकर चार्ल्स भी कभी-कभी भय और शंका में पड़ जाता था और ऐसी स्थिति में वह डैन्बी को अपनी नीति के अनुसार कार्य करने के लिये स्वतन्त्र छोड़ देता था। इसी स्वतन्त्रता से फायदा उठाकर डैन्बी ने चार्ल्स की भतीजी मेरी का विवाह विलियम ऑफ ऑरेंज से इंगलैंड में ही सम्पन्न कर दिया। मेरी इंगलैंड की भावी प्रोटेस्टेंट उत्तराधिकारिणी थी और विलियम भी पक्का प्रोटेस्टेंट तथा लूई का कट्टर दुश्मन था। इस पर लूई बड़ा असंतुष्ट हुआ और फ्लैंडर्स में शीघ्र युद्ध समाप्त करना चाहता था। अतः वह विशेष तत्परता से कार्य करने लगा। अब डैन्बी भी फ्रांस से लड़ने तक के लिये तैयार हो गया और एक बड़ी सेना इकट्ठी कर ली। लेकिन तब तक चार्ल्स ने लूई से सन्धि के लिये बात शुरू कर दी थी और दोनों के बीच एक गुप्त सन्धि हुई। डैन्बी ने ही इस सन्धि की शर्त्तों को लिखा था। लूई डैन्बी से असंतुष्ट तो था ही, अतः उसे बदनाम करने के लिये लूई ने उस गुप्त सन्धि का प्रचार कर दिया। पार्लियामेंट ने डैन्बी पर अभियोग चला दिया और १६७९ ई० में उसका पतन हो गया। अब इंगलैंड में लूई का कोई जानी दुश्मन न रहा और १६७९ ई० से १६८८ ई० तक उसने इंगलैंड पर अपना दबाव तथा प्रभाव कायम रखा। १६८४ ई० में चार्ल्स ने टैन्जियर भी लूई को दे दिया। जेम्स द्वितीय भी लूई पर ही निर्भर रहा और फ्रांसीसी राजदूत उसका प्रधान सहायक था।

अध्याय १२

इंगलैंड में पार्टी की उत्पत्ति तथा प्रगति

(१६०३-८८ ई०)

कैवेलियर और राउन्डहेड—इंगलैंड में पार्टी के आरम्भ के विषय में लेखकों के बीच मतभेद है। लेकिन बहुमत इसी पक्ष में हैं कि इंगलैंड में राजनीतिक पार्टी की उत्पत्ति चार्ल्स द्वितीय के समय में हुई। उसके पहले भी पार्टियाँ थीं लेकिन उन्हें 'फैक्सन' (Faction) कहना अधिक उपयुक्त होगा। १५वीं सदी में लंकास्ट्रियत तथा यौकिस्ट—दो दल थे। सत्रहवीं सदी में चार्ल्स प्रथम के राज्य-काल में कैवेलियर तथा राउन्डहेड नाम की दो पार्टियाँ थीं। कैवेलियर राजा के समर्थक और राउन्डहेड पार्लियामेंट के समर्थक थे। घुड़सवारों की अधिकता के कारण प्रथम पार्टी का नाम कैवेलियर पड़ा था। प्यूरिटनों की अधिकता के कारण दूसरी पार्टी का नाम राउन्डहेड पड़ा था, क्योंकि प्यूरिटनों के सिर के बाल छोटे थे जिस कारण उनके सिर गोलाकार दीख पड़ते थे। लेकिन वास्तव में ये सब पार्टियाँ राजनैतिक पार्टियाँ नहीं थीं। राजनैतिक पार्टी एक सुसंगठित व्यवस्था होती है जिसका कोई न कोई नेतृत्व करता है, जो कुछ सिद्धान्तों को लेकर स्थापित होती है, जिसका अपना कार्यक्रम रहता है और जो वैधानिक तरीकों से अपने सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने की कोशिश करती है। राजनीतिक पार्टियों के बीच समझौता का द्वार सदा खुला रहता है। वे निर्वाचन-क्षेत्र तथा लोक-सभा में वोट के जरिये, न कि युद्धक्षेत्र में तलवार के जरिये, काम करते हैं और अपने सिद्धान्तों को पूरा करते हैं। इन कसौटियों पर कसकर देखने से मालूम होता है कि पुनर्स्थापन युग के पूर्व इंगलैंड में वास्तविक अर्थ में राजनीतिक पार्टियाँ नहीं थीं।

कोर्ट पार्टी और कन्ट्री पार्टी—चार्ल्स द्वितीय के समय में देश में दो पार्टियाँ स्थित थीं। एक का नाम था कोर्ट पार्टी और दूसरी का कन्ट्री पार्टी। कोर्ट पार्टी राजा के पक्ष में थी और डैन्बी उसका नेतृत्व कर रहा था। कन्ट्री पार्टी पार्लियामेंट के पक्ष में थी और शेफ्टसबरी उसका नेतृत्व कर रहा था। कोर्ट पार्टी चर्च की भी समर्थक थी और कैथोलिक तथा डिजेंटरों का विरोध करती थी। लेकिन वैदेशिक

नीति में डैन्बी राजा की इच्छा के विरुद्ध भी हॉलैंड से मित्रता तथा फ्रांस से युद्ध करना चाहता था। कन्ट्री पार्टी राजा तथा चर्च के अधिकारों को सीमित करना चाहती थी और यह कैथोलिकों की विरोधी तथा डिसेंटरों के प्रति सहिष्णु थी। वैदेशिक नीति में यह कोर्ट पार्टी के साथ थी। इन दोनों दलों में समय-समय पर संघर्ष होता रहा। जब लूई ने डैन्बी द्वारा लिखित गुप्त सन्धि का प्रचार कर दिया तब कन्ट्री पार्टी के ही प्रभाव से पार्लियामेंट ने डैन्बी पर अभियोग चलाने की चेष्टा की। लेकिन अपने मंत्री को बचाने के लिये चार्ल्स ने पार्लियामेंट को ही बर्खास्त कर दिया। फिर भी दूसरी पार्लियामेंट ने डैन्बी को पदच्युत कर ही दिया।

एभोरर्स आर पेटीशनर्स—तब तक इंगलैंड में एक पोप षड्यन्त्र की स्थिति के विषय में जोरों से अफवाह फैल रही थी और राष्ट्र आतंकित हो रहा था। लोग कैथोलिकों को शंका तथा घृणा की दृष्टि से देखने लगे। यौर्क का ड्यूक और गद्दी का भावी उत्तराधिकारी जेम्स द्वितीय कैथोलिक था। अतः उसे उत्तराधिकार से वंचित करने के लिये शेफ्टसबरी ने पार्लियामेंट में एक बिल उपस्थित किया जिसे 'बहिष्कार बिल' (Exclusion Bill) कहा जाता है। इस बिल के कारण राजनैतिक पार्टियों के संगठन के लिये अच्छा मौका प्राप्त हो गया। चार्ल्स ने अपने भाई जेम्स के स्वार्थ की रक्षा के लिये उस पार्लियामेंट को ही भंग कर दिया। कुछ समय बाद नयी पार्लियामेंट के लिये चुनाव हुआ। लेकिन चार्ल्स को यह भय तथा सन्देह हो रहा था कि नयी पार्लियामेंट भी एक्सक्लूजन बिल पर विचार तथा विवाद करने से बाज नहीं आवेगी। अतः चार्ल्स उसका अधिवेशन ही नहीं बुला रहा था। तब कन्ट्री पार्टी वालों ने पार्लियामेंट को बुलाने के लिये चार्ल्स के यहाँ निवेदन-पत्र भेजा। अतः उन्हें 'पेटिशनर्स' (निवेदक) के नाम से पुकारा जाने लगा। लेकिन कन्ट्रीपार्टी वालों ने निवेदन-पत्र को नापसन्द किया और वे निवेदकों से घृणा करने लगे, क्योंकि इनके कार्य से राजा के विशेषाधिकारों पर हस्तक्षेप हो रहा था। अतः उन्हें 'एभोरर्स' (उपेक्षक) के नाम से पुकारा जाने लगा।

हाई चर्च पार्टी और लो चर्च पार्टी—चर्च में भी दो पार्टियाँ थीं। विलियम लॉर्ड या स्थापित चर्च के समर्थकों ने 'हाई चर्च पार्टी' का निर्माण किया था। उग्रवादी प्यूरिटनों ने धर्म विद्रोहियों के लिये सहिष्णुता की नीति अपनायी थी और उन्होंने 'लो चर्च पार्टी' की स्थापना की थी। लेकिन 'एभोरर्स' तथा 'हाई चर्च पार्टी' के लोगों में और 'पेटीशनर्स' तथा 'लो चर्च पार्टी' के लोगों में बहुत समानता थी।

टोरी और ह्विग—कुछ समय के बाद टोरी तथा ह्विग दो शब्द प्रचलित हो गये। प्रारम्भ में तो ये दोनों गाली-गलौज तथा कलंक के शब्द थे। टोरी का अर्थ था

विद्रोही आयरिश कैथोलिक और ह्विग का अर्थ था विद्रोही स्कौटिश प्रेस्बिटेरियन। अतः पेटीशनर्स एभोरर्स को टोरी के नाम से पुकारते थे और एभोरर्स पेटीशनर्स को ह्विग के नाम से पुकारने लगे। लेकिन बाद में धीरे-धीरे टोरी तथा ह्विग दो विख्यात राजनीतिक पार्टियाँ स्थापित हो गयीं और उनका सार्थक प्रयोग होने लगा।

चार्ल्स ने सन् १६८१ ई० के बाद अपनी प्रधानता स्थापित कर ली थी और उसके साथ टोरियों का भी सितारा चमक गया था। राजा के निरंकुश शासन में टोरियों का ही बोलबाला था। ह्विगों के विरुद्ध प्रतिक्रिया चल रही थी और देश की राजनीति से उन्हें दूर निकाल फेंकने की कोशिश की जा रही थी। अतः ह्विगों ने असन्तुष्ट होकर चार्ल्स तथा जेम्स को कत्ल कर देने के उद्देश्य से राई हाऊस प्लॉट की रचना की थी। लेकिन इसका भंडा फूट जाने से ह्विगों के दिन और भी बुरे हो गये। अब वे राजद्रोही घोषित कर दिये गये और उन्हें कैद तथा प्राणदण्ड दिये जाने लगे। जिन नगरों तथा शहरों में ह्विगों की धाक जमी हुई थी उनसे चार्टर वापस ले लिया गया।

टोरियों के सहयोग तथा समर्थन के कारण ही एक्सक्लूजन बिल पास नहीं हो सका था और जेम्स द्वितीय को गद्दी प्राप्त हो सकी थी। अतः जेम्स के राज्यारोहण के समय टोरी शक्तिशाली थे। लेकिन जेम्स की स्वेच्छाचारिता और कट्टर कैथोलिक नीति के कारण टोरी उससे दूर होने लगे थे और क्रान्ति के समय विलियम को निमन्त्रित करने में टोरियों ने भी ह्विगों का साथ दिया।

अध्याय १३

वृहत्तर ब्रिटेन या साम्राज्य का प्रारम्भ

(१६०३–१६८८ ई०)

परिचय—एक बार सर वाल्टर रैले ने कहा था, "तुम लोग अंगरेजी राष्ट्र को एक दिन समुद्र पार देखोगे।" उसकी यह भविष्यवाणी १७ वीं सदी में सच्ची साबित हुई। १६०३ ई० में यानी जेम्स प्रथम के राज्यारोहण के पूर्व ब्रिटिश साम्राज्य की कोई स्थिति नहीं थी, इसका कहीं नाम भी नहीं था। औपनिवेशिक क्षेत्र में स्पेन का बोलबाला था, लेकिन १५८८ ई० के आर्मेडा के युद्ध के बाद स्पेन की शक्ति कमजोर पड़ गई और इंगलैंड तथा फ्रांस, पुर्तगाल, हॉलैंड आदि अन्य देश इस ओर दौड़ पड़े। किन्तु इंगलैंड की गति बहुत मन्द रही। एलिज़ाबेथ के राज्यकाल के पिछले भाग में वर्जीनियाँ में उपनिवेश स्थापित करने की चेष्टा की गई पर सफलता न मिली। १६०० ई० में पूरब के देशों से तिजारत करने के लिये ईस्ट इंडिया कम्पनी भी स्थापित की गई थी, लेकिन एलिज़ाबेथ की मृत्यु तक पहिली ही बार का गया हुआ जहाज लौटकर न आ सका था। साम्राज्य-स्थापना का गौरव वास्तव में स्टुअर्ट वंश के राजाओं को ही प्राप्त हुआ। अतः १७ वीं सदी में केवल गृह-शासन की ही उन्नति नहीं हुई बल्कि अंगरेजी साम्राज्य यानी वृहत्तर ब्रिटेन का भी विकास हुआ। अतः घरेलू तथा साम्राज्यवादी दोनों ही दृष्टियों से १७ वीं सदी महत्त्वपूर्ण है।

साम्राज्य-विकास के कारण—१७ वीं सदी में इस साम्राज्य-विकास के कई कारण थे :—

(१) घर पर काम का अभाव था और जनसंख्या की वृद्धि हो रही थी।

(२) नाविक तथा सैनिक लोग अपनी साहसिक तथा साहसिक भावनाओं के विकास के लिये उत्सुक तथा अधीर थे।

(३) कुछ देशभक्त पृथ्वी के नये भू-भागों को जीतकर अपने देश की सीमा तथा गौरव बढ़ाना चाहते थे।

(४) लोगों को जीवन के लिये कई आवश्यक योग्य पदार्थ जैसे गरम मसाला,

चीनी, तम्बाकू, लकड़ी आदि अपने देश में प्राप्त नहीं थे या थे भी तो बिलकुल ही कम मात्रा में। लेकिन ट्रॉपिक के देशों में ये सभी पदार्थ प्रचुर मात्रा में मिलते थे। अतः वहाँ से इन पदार्थों को पाने के लिये लोग लालायित हो रहे थे।

उपर्युक्त चारों बातें अन्य महान् राष्ट्रों के साथ भी लागू थीं, लेकिन इंगलैंड के साथ एक पाँचवाँ कारण भी था। वह यह था कि १७ वीं सदी, खासकर इसका पूर्वार्द्ध, धार्मिक असहिष्णुता का युग था, अतः बहुत से लोग स्वदेश छोड़कर नये प्रदेशों में जाकर बसने लगे।

ब्रिटिश साम्राज्य-स्थापना की विशेषतायें—अन्य राष्ट्रों को साम्राज्य-स्थापना में उनकी सरकारों के द्वारा सहायता दी जाती थी। लेकिन ब्रिटिश साम्राज्य के विकास का श्रेय इंगलैंड के साधारण जनों को ही प्राप्त है। उन्हें अपनी सरकार से नहीं या नाम मात्र की सहायता प्राप्त थी।

इंगलैंड में पूर्वकालीन स्टुअर्ट राजे, खासकर चार्ल्स प्रथम, एक प्रकार की धार्मिक व्यवस्था तथा स्वेच्छाचारी शासन स्थापित करना चाहते थे, लेकिन उन लोगों ने उपनिवेशों में ऐसी कोशिश नहीं की। १७ वीं सदी में अन्य राष्ट्रों की तुलना में उपनिवेशों के साथ अंगरेजों का व्यवहार दो दृष्टियों से अधिक उदार था। वे अपने लाभ के लिये उपनिवेशों पर कर न लगाते थे और उनके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करते थे।

इन बातों को छोड़कर उपनिवेशों के प्रति सभी राष्ट्रों की नीति एक समान थी। १७ वीं सदी में खासकर इसके उत्तरार्द्ध में एक व्यापारिक प्रणाली स्थापित हो गयी थी। सभी उपनिवेश मातृभूमि के पूरे नियन्त्रण में जकड़े हुए थे। ये मातृभूमि की सम्पत्ति थे, इनकी स्थिति मातृभूमि के ही लाभ के लिये थी। अतः इन पर कई व्यापारिक प्रतिबन्ध लगाये गये थे। इंगलैंड में १६५१ ई० का नेविगेशन कानून फिर से विस्तारपूर्वक १६६० ई० में दुहराया गया। अब साम्राज्य के अन्दर का व्यापार इंगलैंड या उपनिवेशों के ही जहाज पर हो सकता था, अन्य देशों के जहाजों पर नहीं। उपनिवेश अपने कितने ही कच्चे मालों को इंगलैंड में ही भेजने के लिए बाध्य थे। उनकी आयात की चीजें भी पहले इंगलैंड में ही और तब उपनिवेशों में भेजी जा सकती थीं। इस तरह सम्पूर्ण साम्राज्य के लिये इंगलैंड आर्थिक केन्द्र बन गया था।

लेकिन उपनिवेशों की रक्षा का भार मातृभूमि पर था। आन्तरिक मामलों में उन्हें कुछ आजादी प्राप्त थी। इस प्रकार साम्राज्य के भिन्न-भिन्न भागों को व्यापारिक बन्धनों के जरिये एक सूत्र में बाँधने की कोशिश की गई। इंगलैंड केन्द्रीय बाजार था। यह व्यापारिक प्रणाली करीब-करीब सदियों तक जारी रही। लेकिन यह सफल

न हुई और अमरीकी उपनिवेशों के विद्रोह के साथ इस प्रणाली का अन्त होने लगा।

व्यापारिक दृष्टि से पूरब का महत्त्व—जेम्स के ही शासनकाल में समुद्र पार व्यापार तथा उपनिवेश का विकास शुरू हो गया। लेकिन विकास की गति मन्द थी क्योंकि वह स्पेन से दुश्मनी मोल लेना नहीं चाहता था। सबसे पहले पूरब की ओर अंगरेजों का ध्यान आकर्षित हुआ। १५०० ई० में पुर्तगीजों ने वास्कोडिगामा के नेतृत्व में केप ऑफ गुड होप होकर पूर्वी देशों में जाने के लिये एक नया मार्ग खोज निकाला। इससे पूर्वी देशों का महत्त्व व्यापारिक दृष्टि से बहुत बढ़ गया। पूर्वी क्षेत्र के दो भाग थे—(क) पूर्वी-द्वीप-समूह, (ईस्ट इंडीज) जिसमें मलाका प्रसिद्ध था। यह भाग गरम मसालों के लिये नामी था। यहाँ के लोग सभ्य और शक्तिशाली नहीं थे। अतः इस भाग में प्रभुत्व स्थापित करना और व्यापार में अधिक लाभ उठाना सहज था। (ख) दूसरा भाग था भारतवर्ष। पहले और दूसरे भाग में आकाश-पाताल का अन्तर था। भारतवर्ष एक महादेश के तुल्य है; यहाँ के लोग सभ्य तथा शक्तिशाली थे और यहाँ दृढ़ मुगल साम्राज्य स्थापित था।

ईस्ट इंडीज में डचों तथा अंगरेजों का झगड़ा—१६ वीं सदी में पूर्वी देशों के व्यापार पर पुर्तगीजों को एकाधिकार प्राप्त था। १७ वीं सदी में इस व्यापार में भाग लेने के लिये अंगरेजों और डचों का आगमन हुआ। १६०० ई० में अंगरेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी और १६०२ ई० में डच ईस्ट इंडिया कम्पनी कायम हो गई थी। डच बड़े ही कुशल, निर्भीक तथा धनी थे। वे पुर्तगीजों को हराकर ईस्ट इंडीज में अपना प्रभाव जमा लिये। अंगरेज लोग भी वहाँ अपना स्थान बनाना चाहते थे। इसका फल यह हुआ कि डचों तथा अंगरेजों के बीच झगड़ा होने लगा। १६१६ ई० में जेम्स ने व्यर्थ ही समझौता कराने की चेष्टा की थी; झगड़ा बढ़ता ही गया और सन् १६२३ ई० में एम्बोयना का हत्याकांड हुआ। डच गवर्नर के विरुद्ध जापानियों से मिलकर षड्यन्त्र करने के अपराध में १८ अंगरेज एम्बोयना में पकड़े गये और उनमें से १४ को मार डाला गया। जेम्स ने क्षतिपूर्ति की कोई मांग नहीं की और सुदूर पूरब में अंगरेजों का प्रभाव अब जाता रहा।

भारतवर्ष में अंगरेजों की प्रगति—भारत में भी पुर्तगीजों की धाक जमी हुई थी, फिर भी यहाँ अंगरेजों को विशेष सफलता नहीं मिली। एलिज़ाबेथ के समय में ही कुछ अंगरेज भारत में आये थे। सर्व प्रथम सन् १५०० ई० में स्टीफेन्स नाम का एक जेसुइट पादरी पहुँचा था। जहाँगीर के राज्यकाल में हॉकिन्स तथा सर टामस रो दो राजदूत आये और भारत में व्यापार करने की अनुमति अंगरेजों को मिली। लेकिन भारत में भी पुर्तगीजों का आधिपत्य स्थापित था। अतः अंगरेजों को उनसे मुठभेड़

करनी पड़ी। व्यापारिक दृष्टि से पश्चिमी किनारा सूरत का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान था। वहाँ पुर्तगीजों को हराकर १६१६ ई० में अंगरेजों ने अपनी पहली कोठी स्थापित की।

उत्तरी अमेरिका में स्टुअर्ट युग के अंगरेजी उपनिवेश।

सन् १६३६ ई० में मद्रास में कोठी स्थापित हुई। १६६१ ई० में सिक्का बनाने, सेना कायम करने तथा अपनी प्रजा का न्याय करने के लिये कम्पनी को ब्रिटिश सरकार से आज्ञा मिल गयी। इसी वर्ष कम्पनी ने बम्बई में भी कोठी खोल दी। पुर्तगीज राजकुमारी से विवाह करने के उपलक्ष में चार्ल्स द्वितीय को बम्बई दहेज-

स्वरूप मिला था और उसने कुछ सालाना कर लेकर इसे कम्पनी को सौंप दिया। १६३३ ई० में ही हुगली नदी के किनारे एक छोटी सी कोठी खुली थी, लेकिन १६६० ई० में कलकत्ते में भी कारखाने खुल गये।

उपनिवेशों का विकास अफ्रीका में—अफ्रीका में भी अंगरेजों को डच प्रतियोगिता का सामना करना पड़ा। डचों ने केप ऑफ गुड होप में अपनी बस्ती कायम की थी। अंगरेजों ने १६५२ ई० में सेन्ट हेलेना में उपनिवेश बसाया।

पश्चिमी-द्वीप-समूह में—पश्चिमी-द्वीप-समूह में अंगरेजों ने दो उपनिवेश बसाये—१६२३ ई० में क्रिस्टोफर द्वीप में और १६२५ ई० में बारबेडोस द्वीप में। यहाँ के निवासी ऊख की खेती करते थे और अफ्रीकन मजदूर विशेष संख्या में काम करते थे। १६५५ ई० में क्रोमवेल ने जमैका अपने अधिकार में कर लिया था।

उत्तरी अमेरिका में-उत्तरी अमेरिका में सन् १६०७ ई० में वर्जीनियाँ में सफलता पूर्वक उपनिवेश बसाया गया। अंगरेज लोग चेसापीक खाड़ी के दक्षिणी किनारे पर ठहरे और उन्होंने अपने राजा के नाम पर जेम्स टाउन अपने उपनिवेश का नाम रखा। प्रारम्भिक अवस्था में यहाँ के निवासियों को कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, लेकिन वे सभी क्रमशः दूर होती गईं। ये लोग तम्बाकू की खेती करते थे।

न्यू इंगलैंड उपनिवेशों की स्थापना—१६२० ई० और १६२६ ई० के बीच वर्जीनियाँ के उत्तर में प्यूरिटनों ने कुछ उपनिवेश बसाये जिन्हें सामूहिक रूप से 'न्यू इंगलैंड' कहते हैं। जिन लोगों ने इन उपनिवेशों को बसाया उन्हें 'पिलग्रिम फादर्स' या धर्मयात्री कहते हैं। ये लोग प्यूरिटन थे जिनमें से बहुत लोग देशनिर्वासित कर दिये गए थे। मेफ्लावर नामक जहाज में बैठकर ये लोग प्लीमथ से चले और केप-कौड के निकट बसे। उन्होंने अन्तिम अंगरेजी स्थान के नाम की यादगारी में, जिससे होकर वे गुजरे थे, अपने पहले उपनिवेश का नाम 'न्यू प्लीमथ' रखा। उसके बाद क्रमशः चार मुख्य उपनिवेश बसाये गये—मेसा चुसेट्स, कनेक्टिकट, न्यू हैम शायर और रोडद्वीप।

लार्ड बाल्टीमूर नाम के एक कैथोलिक ने न्यू फाउंडलैंड बसाने की कोशिश की, लेकिन पूरी सफलता न मिली। लेकिन १६३२ ई० में उसने मेरी लैण्ड बसाया। यहाँ भी तम्बाकू की खेती होती थी। इस उपनिवेश के लोग थे तो कैथोलिक, फिर भी यहाँ सहिष्णुता की नीति थी।

इस प्रकार सत्रहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में उत्तरी अमेरिका के पूरबी किनारे पर

उपनिवेशों के दो समूह कायम हुए—उत्तर में न्यू इंगलैंएड और दक्षिण में वर्जीनियाँ तथा मेरीलैंएड। इन दोनों समूहों के बीच में डचों के न्यू नीदर लैंड्स थे।

चार्ल्स द्वितीय के शासन-काल में उपनिवेशों तथा व्यापार के क्षेत्र में विशेष उन्नति हुई। धन और आबादी की दृष्टि से पूर्वकालीन उपनिवेशों का पूरा विकास हो चुका था। बारबेड्स से बहुत लाभ हो रहा था। यहाँ से साल में ३००,००० पौंड के माल का निर्यात होता था। अमेरिका के सभी उपनिवेशों से माल के निर्यात की कीमत इससे ४००,००० पौंड कम थी।

इस समय नये उपनिवेशों की भी स्थापना हुई। १६६३ ई० में बार बेड्स और वर्जीनियां से कुछ लोगों ने जाकर कैरोलाइना नामक उपनिवेश बसाये। यह दो भागों में विभक्त था—उत्तरी कैरोलाइना और दक्षिणी कैरोलाइना।

इसी समय न्यू इंगलैंएड और वर्जीनियाँ के बीच की खाई भी भर गयी। १६६५ ई० में अंगरेजों और डचों के बीच युद्ध हुआ जिसमें डचों की हार हो गई। अतः डचों ने अपने न्यू नीदर लैंड्स को अंगरेजों के हाथ सौंप दिया और इसी में से तीन उपनिवेशों की उत्पत्ति हुई—न्युयार्क, न्यूजर्सी और डेलावेयर।

चार्ल्स के राज्यकाल में १६८१ ई० में पेन्सिलवानियाँ नाम का अन्तिम उपनिवेश बसाया गया। इसकी राजधानी फिलाडेलफिया थी।

इसी प्रकार अमेरिका के १३ उपनिवेशों में १२ उपनिवेशों की स्थापना अब तक हो गयी। १३ वाँ उपनिवेश जार्जिया १७३३ ई० में बसाया गया। इन अमेरिकन उपनिवेशों में बहुत कुछ भिन्नता थी। न्यू इंगलैंड के निवासी प्यूरिटन धर्म के मानने वाले थे और ये लोग भिन्न पेशे वाले थे। यहाँ गुलामों का अभाव था। राजनैतिक दृष्टि से ये लोग प्रजातन्त्र के समर्थक थे लेकिन धार्मिक दृष्टि से कट्टर थे।

दक्षिणी उपनिवेशों के निवासी अंगरेजी चर्च के अनुयायी थे। राजनीति में धनी मानी लोगों का बोलबाला था। गुलामों के द्वारा चावल और तम्बाकू की खेती होती थी, क्योंकि इधर का जलवायु गर्म था।

मध्य उपनिवेशों में भिन्न-भिन्न धर्म और जाति के लोग थे। अतः उनमें एकता का अभाव था। १७७५ ई० में मातृदेश का सामना करने के लिये सबों में एकता की भावना जाग्रत हो गई।

अध्याय १४

इंगलैंड और आयरलैंड

१६०३ ई० के पूर्व की स्थिति—आयरलैंड अटलांटिक महासागर में एक छोटा सा द्वीप है, लेकिन विश्व के इतिहास में इसका भी स्थान महत्त्वपूर्ण है। छठी सदी में आयरलैंड पश्चिमी यूरोप में विद्या का केन्द्र था और १० वीं सदी तक गैलिक संस्कृति अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी थी। पहले आयरलैंड में ही इसाई धर्म का प्रचार हुआ और बहुत से मठ स्थापित किये गये जहाँ से पादरी लोगों ने जाकर यूरोप के अन्य भागों में इसाई धर्म का प्रचार किया। इस युग को सुनहला युग कहा जाता है। लेकिन मध्य युग के अन्त होते-होते आयरलैंड की भी अवनति होने लगी थी। पारस्परिक झगड़े जोरों से चल रहे थे। हेनरी द्वितीय के समय में अंगरेजों ने (ऐंग्लो नार्मन) आयरलैंड के कुछ भाग को अपने अधिकार में कर लिया। अब आयरिशों के साथ संघर्ष शुरू हुआ। अंगरेज लोग आयरिशों को असभ्य समझते थे। दोनों में जातीय और धार्मिक भिन्नता थी। अंगरेज लोग ऐंग्लो-सैक्सन जाति के और प्रोटेस्टेंट थे तथा आयरिश लोग केल्ट जाति के और कैथोलिक थे। अतः उनके बीच की लड़ाई बड़ी ही कटुतापूर्ण थी।

ट्यूडर काल में आयरलैंड पर विजय पाने की पूरी कोशिश की गई। सप्तम हेनरी के समय में अंगरेजी पार्लियामेंट की प्रधानता कायम हुई और अष्टम हेनरी ने अपने को आयरलैंड का राजा घोषित किया। लेकिन आयरिश लोग विदेशी शासकों को नहीं चाहते थे, अतः विद्रोह करने लगे और इंगलैण्ड के दुश्मनों का साथ देने लगे। एलिज़ाबेथ के समय में दो भयंकर विद्रोह हुए। विद्रोहों को तो निर्दयतापूर्वक दबा दिया गया और भविष्य में इन्हें रोकने के लिये भी उपाय किया गया। जमीन की जब्ती होने लगी और उसे अंगरेज जमींदार लेने लगे। इस प्रकार विदेशी जमींदारों की अधीनता में आयरलैंड किसानों का देश हो गया।

जेम्स प्रथम की नीति---अलस्टर की योजना (१६०७ई०)—जेम्स प्रथम इंग-

लैंड, स्कॉटलैण्ड और आयरलैण्ड—तीनों द्वीपों का पहला बादशाह हुआ। आयरिशों को कमजोर करने की दृष्टि से जेम्स ने एलिज़ाबेथ के समय से और आगे कदम बढ़ाया। उसने आयरलैंड में विदेशी लोगों को नियमित रूप से बसाने का निश्चय किया।
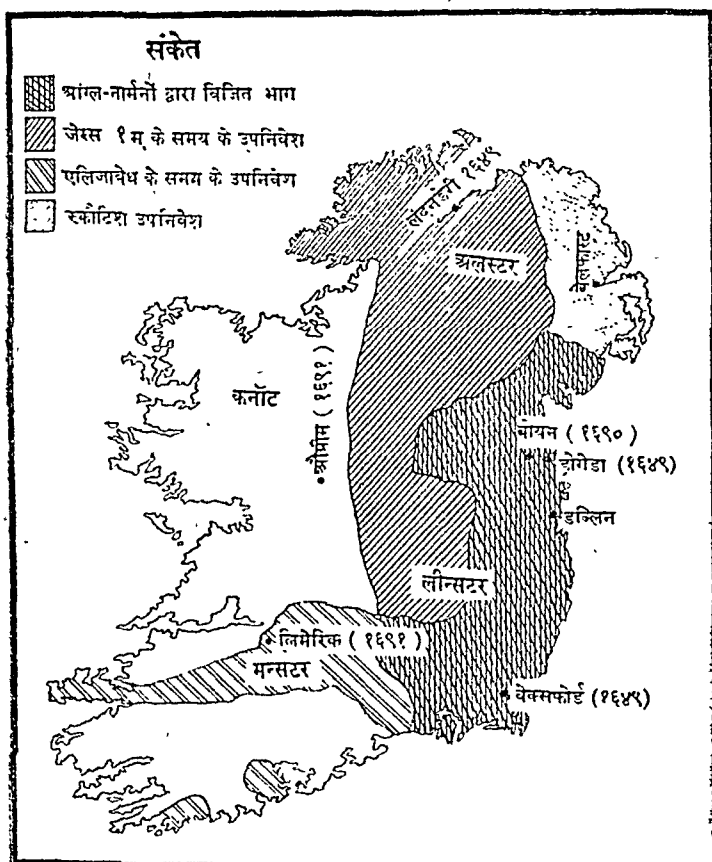
सत्रहवी सदी में आयरलैंड।

टाइरोन और टाइरकनल के अर्ल अलस्टर की दो बड़ी जातियों के नेता थे। उन्होंने अंगरेजों के विरुद्ध विद्रोह किया था। अतः राजद्रोह के अभियोग के डर से वे भाग गये। इस प्रकार उत्तरी आयरलैण्ड में अल्सटर के छः जिलों की जमीन जब्त कर ली गई। खराब भूमि तो आयरिशों को दी गई, लेकिन अच्छी भूमि स्कौटिशों और अंगरेजों

के बसने के लिये दी गई। अलस्टर की बस्तियों के लिये लंदन वालों ने एक संस्था ही स्थापित कर ली थी। अतः एक शहर का नाम लन्दनडेरी पड़ा था।

परिणाम—यह योजना बहुत ही सफल और स्थायी साबित हुई। आयरलैंड में अलस्टर इंगलैण्ड का एक हिस्सा बन गया और इससे अंगरेजों का स्थान मजबूत हो गया। लेकिन साथ ही समस्या भी विकट हो गई। आयरलैंड एक दूसरे के विरुद्ध दो भागों में बँट गया—उत्तरी भाग में प्रोटेस्टेंट तथा सैक्सन लोग थे और दक्षिणी भाग में कैथोलिक तथा केल्टिक लोग थे। इस प्रकार दोनों आयरलैंड के बीच एक गहरी खाई पैदा हो गई।

इसके अलावा अंगरेजों और स्कौटों के बीच भी अच्छा संबंध न था।

स्ट्रैफोर्ड (वेन्टवर्थ) का शासन १६३३-४० ई०—सन् १६३३ ई० में वेन्टवर्थ आयरलैण्ड का लॉर्ड डिप्टी नियुक्त हुआ और वहाँ के इतिहास में एक नया अध्याय शुरू हुआ। कई दृष्टियों से उसका शासन प्रशंसनीय था। वह अपनी नीति को 'थौरो' (Thorough) कहता था। उसने कई चेत्रों में सुधार किया। उसने सरकारी अफसरों में कर्त्तव्य की भावना जाग्रत की; सुशिक्षित तथा अनुशासित सेना का निर्माण किया; आयरिश समुद्र को लुटेरों से मुक्त किया; खेती, व्यापार तथा उद्योग में उन्नति हुई और इंगलैण्ड से योग्य पादरी बुलाये गये; न्याय में सुधार हुआ तथा देश में शान्ति और व्यवस्था स्थापित हुई।

लेकिन इन उपकारों के बाद भी आयरिश उसके प्रति कृतज्ञ नहीं थे। वह स्वेच्छाचारी तथा कठोर प्रकृति का व्यक्ति था। उसके तरीके बड़े ही भद्दे थे। उसने आयरिशों की मनोभावनाओं का सम्मान नहीं किया। किसी को भी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता देना वह नहीं चाहता था। कनौट के लोगों के साथ उसका बड़ा ही क्रूर व्यवहार हो रहा था। वह अलस्टर के जैसा वहाँ भी मनमाने ढङ्ग से उपनिवेश बसाना चाहता था। उसने राजा के हित को ही दृष्टि में रखकर अपनी थौरो की नीति बड़ी दक्षता से कार्यान्वित की। वह "अपने राजा के लिये सोने और इस्पात की तलवार तैयार कर रहा था।"[1] फिर भी आयरिश प्रजा उसे घृणा की दृष्टि से देखती थी, उसे जुल्मी काला टौम कहती थी और विद्रोह करने का मौका देख रही थी। यह मौका भी आ गया जब इंगलैंड की नाजुक परिस्थिति के कारण १६४० ई० में वेंटवर्थ आयरलैंड से बुला लिया गया।

आयरिश मामला १६४१-५० ई०—इंगलैंड की परिस्थिति से फायदा उठाकर

[1] टिनेन—हिस्ट्री ऑफ ब्रिटेन, पृष्ठ २६१

आयरिशों ने १६४१ ई० के अक्टूबर में भयंकर विद्रोह कर दिया। भूतकाल की स्मृति ताजी तो थी ही, भविष्य के लिये भी वे आतंकित थे। पार्लियामेंट में स्कॉट कवेनेन्टर और प्यूरिटनों की प्रधानता थी। यह भी अफवाह उड़ी हुई थी कि लौंग पार्लियामेंट आयरलैंड से कैथोलिक धर्म उखाड़ फेंकना चाहती है। अतः विद्रोह की आग भड़क उठी और करीब दस वर्षों तक आयरलैंड लगातार युद्ध का केन्द्र बना रहा। हजारों की संख्या में प्रोटेस्टेंटों की जान गई। इंगलैंड में मृतकों की संख्या और कष्टों के विषय में बढ़ा-चढ़ा कर कहा जाता था। लौंग पार्लियामेंट ने कैथोलिकों के विरुद्ध दो कानून पास किये—एक के अनुसार आयरिश कैथोलिकों के प्रति सहिष्णुता की नीति बन्द हो गई और दूसरे के अनुसार विद्रोहियों की जमीन जब्त कर ली गई। इससे प्रजा और भी बिगड़ उठी और विद्रोह में शामिल होने लगी। लेकिन विद्रोह को क्रूरतापूर्वक दबा दिया गया।

गृह-युद्ध के समय कैथोलिक आयरलैंड ने राजा का और अलस्टर ने पार्लियामेंट का साथ दिया। १६४६ ई० में चार्ल्स की फाँसी होने के बाद आयरलैंड में सभी दलों ने उसके पुत्र के पक्ष में आवाज उठाई थी।

अतः आयरिशों को दबाने के लिये प्रजातन्त्र सरकार ने क्रौमवेल को भेजा। उसने कैथोलिकों और राजपक्ष वालों से बड़ी क्रूरतापूर्वक बदला लिया। उसने वेक्स-फोर्ड और ड्रोगेडा पर हमला किया और बहुत से आयरिशों की हत्या की। उसके अधूरे काम को उसके दामाद आयरटन ने पूरा किया और १६५२ ई० तक समूचे आयरलैंड पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया।

प्रजातन्त्र काल में आयरलैंड १६५०-६० ई०—इस प्रकार १० वर्षों तक निरन्तर युद्ध क्षेत्र रहने के कारण आयरलैंड की बहुत क्षति हुई। आबादी बहुत कम हो गई, बहुत से लोग तो मारे गए और बहुत से लोग विदेश चले गये और बहुत अधिक भूमि परती पड़ गई। प्रजातन्त्र सरकार ने इन बुराइयों को दूर करने की कोशिश की। नये उपनिवेश कायम किये गये और सैनिकों तथा प्रोटेस्टेंटों को भूमि दी गई। परती भूमि को जोतकर आबाद किया गया और इस तरह खेती की रक्षा हुई। इंगलैंड के साथ स्वतन्त्र व्यापार होने लगा जिससे आयरिशों को विशेष लाभ हुआ। लेकिन आयरिशों के साथ कड़ा व्यवहार कायम रहा।

पुनर्स्थापन युग में आयरलैंड १६६०-८८ ई०—पुनर्स्थापन से आयरलैंड भी प्रभावित हुआ। इस युग में शान्ति बनी रही। इसके अधिकांश भाग में औरमोंड यहाँ का शासक था जो सहिष्णुता की नीति से काम करता था। इस समय भूमि

सम्बन्धी समस्या उपस्थित हुई, जिस तरह इंगलैंड में भी हुई थी। प्रश्न यह था कि क्रौमवेल के द्वारा बसाए हुए लोगों के साथ क्या किया जाय? इस प्रश्न को हल करने के लिये एक नियम निकाला गया। जिन लोगों ने १६४१ ई० के विद्रोह में हिस्सा नहीं लेने का सबूत दिया उनकी भूमि वापस कर दी गई और उस भूमि पर रहने वालों को दूसरी जगह हर्जाना दिया गया। लेकिन यह नियम सन्तोषजनक साबित नहीं हुआ। बहुत से कैथोलिकों को जमीन नहीं मिली। क्रौमवेल के बसाए हुए सभी लोगों को हटाया भी नहीं गया। फलस्वरूप भूमि समस्या हल न हो सकी। १६४० ई० के पूर्व $\frac{३}{३}$ जमींदार देशी या कैथोलिक थे; अब $\frac{१}{३}$ वे रह गये और $\frac{२}{३}$ आयरिश भूमि पर अंगरेजों का अधिकार रहा।

इसके अलावा आर्थिक मामलों में आयरलैंड विदेश समझा जाने लगा। दोनों देशों के बीच स्वतन्त्र व्यापार का अन्त हो गया। आयरलैंड का अमेरिकन उपनिवेशों के साथ व्यापार करना रोक दिया गया और उसका पशु-सम्बन्धी व्यापार बर्बाद हो गया।

जब जेम्स द्वितीय गद्दी पर बैठा तो आयरिश कैथोलिकों को स्वभावत: बड़ी खुशी हुई। जेम्स कानूनों की उपेक्षा कर कैथोलिकों को सुविधायें देने लगा। लेकिन प्रोटेस्टेंटों की स्थिति खराब हो गई।

यह पहले देखा जा चुका है कि विलियम तृतीय ने आयरिशों को हराकर उनके साथ एक सन्धि की। उस सन्धि की एक शर्त के अनुसार आयरिश कैथोलिकों को पूर्ण नागरिक तथा धार्मिक स्वतन्त्रता देने के लिये विलियम ने प्रतिज्ञा की। लेकिन बहुत ही घृणित रूप से इसी शर्त की अधिक उपेक्षा की गई। विलियम तो अपनी प्रतिज्ञा पूरी करना चाहता था, लेकिन ब्रिटिश पार्लियामेंट बड़ी ही असहिष्णु थी और उसके मार्ग में बाधा पैदा करती थी।

१६६१ ई० में इसने एक कानून बनाकर यह निश्चिय किया कि आयरिश पार्लियामेंट में केवल प्रोटेस्टेंट ही बैठ सकते हैं। लेकिन आयरिशों की $\frac{५}{६}$ आबादी तो कैथोलिकों की ही आबादी थी और प्रोटेस्टेंट अल्पसंख्यक श्रेणी में थे। फिर भी कैथोलिकों को ही नागरिक तथा धार्मिक स्वतंत्रता से वंचित रखा गया। १६६२ और १७२७ ई० के बीच उनके विरुद्ध कई दंड नियम पास किये गये। कैथोलिक बिशप तथा डीकनों को देश निर्वासित कर दिया गया और पुरोहितों के लिये अपना नाम रजिस्टर कराना आवश्यक कर दिया गया।

कैथोलिकों को घन्टी बजाने या तीर्थ करने की मनाही कर दी गई। वे प्रोटेस्टेंटों के

साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सकते थे। उनके शिक्षा-दीक्षा का कोई इन्तजाम नहीं था। उन्हें मताधिकार से वंचित रखा गया था। वे किसी सेना या शिक्षा संस्थाओं में नियुक्त नहीं किये जा सकते थे। इस तरह स्टैफोर्ड या क्रौमवेल से भी अधिक कठोर ढंग से इस समय आयरलैंड में प्रोटेस्टेंटों की प्रमुखता स्थापित करने की कोशिश की गई।

इतना ही नहीं और भी बहुत सी बुराइयाँ थीं। १४९५ ई० के अनुसार आयरिश पार्लियामेंट के पास हुए कानूनों के लिये ब्रिटिश प्रीवीकौंसिल की स्वीकृति आवश्यक थी। जार्ज प्रथम के समय में एक डिक्लैरेटरी ऐक्ट पास किया गया जिसके अनुसार यह घोषणा की गई कि ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा निर्मित कानूनों के सामने आयरिश पार्लियामेंट द्वारा निर्मित कानून की उपेक्षा की जा सकती है। स्कौटलैन्ड के साथ ब्रिटेन ने ऐसा दावा कभी भी उपस्थित नहीं किया। इसके सिवा आयरलैन्ड के सभी उच्चपदाधिकारी अंगरेज ही थे, जिन पर आयरिश पार्लियामेंट का कोई दबाव नहीं था। ये बृटिश सरकार के प्रति उत्तरदायी थे। कितने बिशप और वायसराय प्रोटेस्टेंट अंगरेज होते थे। वायसराय तो अधिकांश समय ब्रिटेन में ही रहता था और बहुत से बिशप तो कभी भी आयरलैन्ड नहीं आते थे। १८ वीं सदी में लार्ड चांसलर के पद पर केवल एक ही आयरिश को नियुक्त होने का सौभाग्य प्राप्त हो सका। स्वतंत्रता नियम का अभाव था और जजों के पद असुरक्षित थे।

बड़ी सभा के आधे सदस्य प्रोटेस्टेंट बिशप थे। छोटी सभा के दो-तिहाई से अधिक सदस्य कुछ विशेष व्यक्तियों के ही मनोनीत प्रतिनिधि थे। कैथोलिक न तो मतदाता थे और न सदस्य ही होने के अधिकारी थे। पार्लियामेंट की कोई अवधि निश्चित नहीं थी। जार्ज द्वितीय के राज्यकाल में एक पार्लियामेंट की अवधि ३३ वर्ष तक जारी रहती थी। आयरलैण्ड की आर्थिक हालत तो और भी बुरी थी। व्यापारिक प्रतिबन्ध आयरिशों के ऊपर बड़ी कड़ाई से लगाए गये थे। आयरलैण्ड खास तौर से चरागाह वाला देश था और इसके माल, मवेशी तथा भेड़ें यूरोप में सर्वोत्कृष्ट होते थे। वाणिज्य व्यवसाय में भी इसका भविष्य उज्जवल ही था, लेकिन अंगरेजों ने प्रगति के सभी मार्गों को अवरुद्ध कर दिया था। चार्ल्स द्वितीय के समय आयरिशों के माल-मवेशी सम्बन्धी व्यापार नष्ट कर दिये गये। बृटिश पार्लियामेंट ने आयरलैण्ड से ब्रिटेन में माल मवेशियों के आने पर रोक लगा दी। विलियम तृतीय के राज्य-काल में उनका ऊनी व्यवसाय बर्बाद हो गया। तैयार ऊनी माल का निर्यात बन्द कर दिया गया। कच्चे ऊन को ब्रिटेन में ही भेजने के लिये आयरिश बाध्य किये गये थे। वहाँ उनसे अधिक आयात कर भी लिया जाता था।

पिछले कई मौकों पर उनकी जमीनें जब्त कर ली गई थीं और युद्ध खर्च के पूर्ति स्वरूप उनका अधिकांश भाग बेच दिया गया था। कैथोलिक पाँच पौंड से अधिक मूल्य का घोड़ा नहीं रख सकते थे। कोई भी प्रोटेस्टेंट किसी कैथोलिक के हाथ अपनी जमीन न तो बेच सकता था और न उसे वसीयत कर सकता था। कैथोलिक के मरने पर उसकी जमीन उसके पुत्रों में बराबर अनुपात से बाँट दी जाती थी। लेकिन यदि उसका बड़ा पुत्र प्रोटेस्टेंट होता तो सभी जमीन उसे ही दे दी जाती। बहुत सी जमीनों के मालिक अंगरेज होते थे। वे स्वयं तो ब्रिटेन में रहते थे, लेकिन अपनी जमीनों को दूसरे के हाथ बन्दोबस्त कर देते थे जिन्हें मध्यस्थ कहते हैं। ये लोग छोटे-छोटे किसानों के साथ जमीनों का बन्दोबस्त करते थे। मध्यस्थ लोग मनमाने तरीके से इन किसानों से कर वसूल किया करते थे और कुछ निश्चित रकम अपने अंगरेज मालिकों को देकर शेष अपनी जेब में रख लेते थे। उदाहरण के लिये मान लीजिये कि अंगरेज भूमिपति ने अपने मध्यस्थ से किसी जमीन के टुकड़े के लिये २५ पौं० कर निश्चित कर दिया। वही जमीन मध्यस्थ ने किसी किसान के साथ ३० पौंड पर बन्दोबस्त कर दी। अब वह २५ पौंड अपने मालिक को देकर ५ पौं० अपने पास रख लेता था। इस प्रकार आयरिश किसानों से मध्यस्थ बहुत अधिक लगान वसूलता था। लेकिन इतने ही से किसानों की जान नहीं बच जाती थी। इस लगान के सिवा उन्हें प्रोटेस्टेंट आयरिशों को दशांश और रोमन कैथोलिकों को बकाया देना पड़ता था। इस तरह विभिन्न प्रकार के टैक्सों के बोझ से आयरिश किसान इतने दबे हुए थे कि वे अपना जीवन-निर्वाह भी नहीं कर सकते थे। कितने किसानों के पास तो खाने के लिये आलू के छिलके तक भी नहीं बच पाते थे। आयरिश लोग असहाय, दुःखी और चिन्तित हो गये थे।

उनकी यह दयनीय दशा थोड़े ही दिनों में समाप्त नहीं हुई। इसके फलस्वरूप दो सदियों से भी अधिक ब्रिटेन तथा आयरलैण्ड के बीच निरन्तर संघर्ष चलता रहा। ब्रिटिश उपनिवेशों में आयरलैण्ड सबसे अधिक दुःखी रहा। नवयुवक तथा उत्साही आयरिश अपनी जननी और जन्मभूमि दोनों ही को छोड़कर विदेश जाने लगे और ब्रिटेन के शत्रुओं के साथ मिलकर बदला लेने की भावना से प्रेरित थे। इन्हीं आयरिश निर्वासितों को भरती कर फ्रांस के राजा ने अपनी सेना में आयरिश ब्रिगेड नाम का एक सेना-विभाग खोल दिया था। इसमें आयरिशों की कुल संख्या लगभग ढाई लाख थी। इसी ब्रिगेड ने आलमङ्गा तथा फोन्टनाय के युद्धों में अंगरेजों को पराजित किया था। डेटिङ्गन के युद्ध में भी इन आयरिशों ने अपनी बड़ी बहादुरी दिखायी थी जिस पर जौर्ज द्वितीय ने आश्चर्य प्रकट किया था। स्पेन ने भी पाँच आयरिश रेजिमेंट रखे थे। आस्ट्रिया तथा रूस के कुल सेनापति आयरिश ही थे।

हिन्दुस्तान में आयरकूट के विरोधी सेनापति की नसों में भी आयरिश खून का अंश था।

अंगरेज जाति के इतिहास में आंग्ल आयरी दीर्घकालीन संघर्ष एक बड़ी ही कलंकपूर्ण घटना है। एक अंगरेज लेखक के ही शब्दों में "इतिहास के इन मर्यादाहीन पृष्ठों को पढ़ते समय कोई भी अंगरेज शर्म से सिर झुकाये बिना नहीं रह सकता। लिमेरिक की सन्धि का उल्लंघन तथा कठोर और कुत्सित नियम तो खराब थे ही, किन्तु विजित जाति के प्रति किसी भी तरह के उत्तरदायित्व की भावना का पूर्ण अभाव उससे भी कहीं अधिक खराब था। यदि अंगरेजों की आयरिश नीति का प्रयोग दूसरी जगह हुआ होता तो आज अंगरेजी साम्राज्य का कहीं नाम निशान भी नहीं रहता।"[1]

[1]कार्टर ऐंड मीयर्स—हिस्ट्री ऑफ़ ब्रिटेन, पृष्ठ ५५८

अध्याय १५

गृह-नीति (१६८९–१७१४ ई०)

विलियम और मेरी (१६८९–१७०२ ई०)

विलियम का चरित्र—इंगलैंड में विलियम के विरुद्ध कोई गाढ़ आन्दोलन नहीं उठा था। केवल आर्क बिशप, ४ बिशप और ४०० पादरियों ने राजभक्ति की शपथ लेना अस्वीकार किया था। ये 'नान जूरर्स' कहे जाते हैं। इसका कारण था कि विलियम काल्विन मत का समर्थक था। लेकिन विरोधियों को सहयोग नहीं मिला और राजा ने उन लोगों को चर्च से बर्खास्त कर दिया।

फिर भी विलियम में कुछ ऐसी त्रुटियाँ थीं जिनके कारण वह अंगरेजों का प्रियपात्र न बन सका। वह वैदेशिक राजनीति में ही अधिक दिलचस्पी रखता था और उसी की सफलता की दृष्टि से वह इंगलैंड की गद्दी पर बैठा था। एक समकालीन के शब्दों में 'इंगलैंड उसे फ्रांस के मार्ग में मिल गया था।' अतः लूई चतुर्दश को कमजोर करना ही उसके जीवन का प्रधान उद्देश्य था।

वह अंगरेज राजनीतिज्ञों में पूर्ण विश्वास नहीं रखता था और डचों के साथ पक्षपात करता था। अपने शासन के अधिकांश भाग में वह पार्टियों की उपेक्षा करता रहा, वह दोनों दलों से अपने मन्त्रियों को नियुक्त करता रहा जिससे वह किसी दल को भी खुश न कर सका। जब वह टोरियों की युद्ध विरोधी नीति के कारण ह्विगों पर विशेष निर्भर रहने लगा तब टोरी उससे और भी अधिक नाखुश हो गये।

उसका व्यक्तित्व भी आकर्षक नहीं था। उसका शरीर दुबला-पतला था, स्वास्थ्य खराब था और वह स्वभाव का क्रोधी और चिड़चिड़ा था। वह मिलनसार नहीं था। उसकी पत्नी में इन दुर्गुणों का अभाव था, वह दयालु तथा नम्र थी। अतः उसने अपने जीवन-काल में अधिक लोगों को मिलाये रखा, लेकिन १६९४ ई० में उसके मर जाने के बाद विलियम के प्रति विरोध बढ़ने लगा।

सन् १६९७ ई० में फ्रांस के साथ युद्ध समाप्त हो जाने पर टोरियों ने विलियम

का जोरदार विरोध करना शुरू किया। आयरलैंड में डचों को जमीन देने की नीति का विरोध हुआ, स्थायी-सेना की संख्या कम कर दी गई। उत्तराधिकार निर्णय नियम में यह भी जोर दिया गया कि पार्लियामेंट की आज्ञा के बिना राजा देश से बाहर नहीं जा सकता और राजा की विदेशी रियासत के लिये इंगलैंड युद्ध में शामिल नहीं होगा। विलियम इन सभी बातों से घबड़ाकर पदत्याग करने के लिये भी सोचने लगा था। लेकिन मरने के समय उसे सन्तोष था कि स्पेन के उत्तराधिकार युद्ध में अंगरेज लोग सहयोग दे रहे थे।

लेकिन विलियम में कुछ बड़े गुण भी थे। वह परिश्रमी, धीर तथा कर्त्तव्यशील था। खतरे के समय भी वह शान्त रहता था। वह सुयोग्य राजनीतिज्ञ था और इंगलैंड तथा यूरोप दोनों ही के लिये उसने महत्त्वपूर्ण कार्य किया। फिर भी अंगरेजों ने इन बातों की प्रशंसा नहीं की। इसका कारण था कि अंगरेज लोग स्वयं विदेशी राजनीति में कुशल नहीं थे।

विलियम के राज्य का महत्त्व—इंगलैंड के वैदेशिक तथा घरेलू इतिहास में विलियम का राज्य बहुत महत्त्वपूर्ण है। यहाँ हम लोग घरेलू मामलों का ही उल्लेख करेंगे। राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक सभी प्रकार के परिवर्त्तन हुए।

जेम्स के गद्दी छोड़कर भाग जाने के बाद एक पार्लियामेंट बुलाई गई थी जिसे कन्वेंशन पार्लियामेंट कहते हैं। पार्लियामेंट ने गद्दी को रिक्त घोषित किया और उसे विलियम तथा मेरी को देने का निश्चय किया। पार्लियामेंट ने अधिकारों का एक घोषणा-पत्र भी तैयार किया था और इसे स्वीकार करने पर विलियम तथा मेरी को संयुक्त शासक घोषित कर दिया गया।

अधिकार-विधान १६८९ ई०—उसके बाद कन्वेन्शन पार्लियामेंट नियमित पार्लियामेंट के रूप में परिवर्तित हो गई। इसने अधिकारों के घोषणा-पत्र को एक राजनियम के रूप में घोषित किया जो अधिकार-विधान (बिल ऑफ राइट्स) के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें चार प्रकार की बातें थीं जिनके द्वारा कानून तथा न्याय संबंधी बुराइयाँ दूर हुईं और पार्लियमेंट के अधिकार तथा जनता की स्वतन्त्रता की रक्षा हुई। इनमें मुख्य बातें निम्नलिखित थीं :—

(१) किसी कानून को स्थगित करने, किसी व्यक्ति को किसी कानून से बरी करने तथा हाई कमीशन कोर्ट के जैसा विशेष प्रकार के कोर्ट की स्थापना करने के लिये राजा का अधिकार गैरकानूनी घोषित किया गया।

(२) राजा स्थायी-सेना नहीं रख सकता।

(३) पार्लियामेंट के स्वतन्त्र निर्वाचन, नियमित अधिवेशन, सदस्यों की स्वतन्त्रता आदि बातें निश्चित हो गयीं। पालियामेंट की बिना राय के प्रजा पर कोई कर भी नहीं लगाया जा सकता।

(४) उत्तराधिकार भी निश्चित किया गया। विलियम तथा मेरी को संयुक्त शासक घोषित किया गया। राज्य का उत्तराधिकार उनकी सन्तान को, सन्तान के अभाव में जेम्स की दूसरी पुत्री एन और इसकी सन्तान को, एन के भी सन्तान न रहने पर विलियम की दूसरी पत्नी की सन्तान को दिया गया। इसके अलावा कोई रोमन कैथोलिक या कैथोलिक लड़की से विवाह करने वाला व्यक्ति उत्तराधिकार से सदा के लिये वंचित कर दिया गया।

महत्त्व—यह अधिकार-विधान अंगरेजों की स्वतन्त्रता का महत्त्वपूर्ण फरमान समझा जाता है। मैग्नाकार्टा के द्वारा प्रारम्भ किये हुए राजनैतिक कार्य को इसने पूरा किया और राजा की शक्ति पहले की अपेक्षा सीमित हो गई। पार्लियमेंट की शर्तों पर राजा को गद्दी मिली। अब इंगलैंड में मनमाना शासन असम्भव-सा हो गया। राजा के धर्म पर भी पार्लियामेंट का नियन्त्रण हो गया।

लेकिन इसमें भी कोई नई बात नहीं कही गई, कोई नया सिद्धान्त नहीं स्थापित किया गया। पुरानी बातें ही दुहराई गयीं।

धन और सेना सम्बन्धी कानून १६८९ ई०—पार्लियामेंट ने राष्ट्रीय धन और सेना पर अपना नियन्त्रण स्थापित किया। वह सरकारी खर्च के लिए राजा को एक साल के लिये खर्च का धन मंजूर करने लगी।

म्युटिनी ऐक्ट के द्वारा सेना पार्लियामेंट के अधिकार में आ गई। राजा को सेना रखने के लिये एक वर्ष की स्वीकृति दी जाने लगी।

उपर्युक्त दोनों नियमों के कारण पार्लियामेंट का वार्षिक अधिवेशन अनिवार्य हो गया और देश के शासन में पार्लियामेंट विशेष भाग लेने लगी।

सहिष्णुता नियम १६८९ ई०—एक सहिष्णुता नियम (Toleration Act) पास हुआ जिसके अनुसार पहले की अपेक्षा लोगों को अधिक धार्मिक स्वतन्त्रता दे दी गई। लेकिन कैथोलिक और यूनिटेरियन इस नियम के दायरे से बाहर रखे गये। यद्यपि अभी भी धार्मिक नियन्त्रण जारी रहा, फिर भी अब यह सिद्धान्त स्थापित हो गया कि सभी लोग एक ही प्रकार से नहीं सोच सकते, लेकिन सभी को रहने का अधिकार है। इस नियम ने आगे के लिये रास्ता सहज कर दिया। १९ वीं सदी के अन्त तक पूर्ण रूप से धार्मिक स्वतन्त्रता स्थापित हो गई।

त्रैवार्षिक कानून १६९४ ई०—यह सम्भव था कि एक बार की निर्वाचित

पालियामेंट वर्षों तक जारी रहे, जिसके कारण जनमत का ठीक-ठीक पता न लग सकेगा। अतः १६६४ ई० में त्रैवार्षिक कानून पास हुआ जिसके द्वारा पार्लियामेंट की अवधि ३ वर्ष निश्चित कर दी गई। यह कानून १७१९ ई० तक लागू रहा।

प्रेस की स्वतन्त्रता १६९५ ई०—अब तक प्रकाशन पर बहुत कड़ा नियन्त्रण था। नई-नई किताबों को छापने के लिये जाँच करायी जाती थी और तब उसके लिये लाइसेन्स दिया जाता था। १६६५ ई० में यह प्रथा बन्द कर दी गई और प्रेस को स्वतन्त्रता दे दी गई। अब अखबार और पुस्तक अधिक संख्या में निकलने लगे और अधिक लोग सार्वजनिक कार्यों में दिलचस्पी लेने लगे।

राजविद्रोह का नियम १६९६ ई०—पहले न्याय का समुचित प्रबन्ध नहीं था। अमानुषिक तरीके से काम लिया जाता था। अपराधियों को अपराध का विवरण नहीं बताया जाता था, उन्हें वकील रखने का अधिकार नहीं था। अतः इन बुराइयों को दूर करने के लिये राजद्रोह का नियम पास हुआ। अब अपराधियों को उनके अपराध का विवरण तथा जूरियों की सूची पहले ही दे देने के लिए तय हुआ। वकील तथा गवाह भी अपने पक्ष में पेश करने के लिये उन्हें अधिकार दे दिया गया।

उत्तराधिकार निर्णायक कानून १७०१ ई०—सन् १७०१ ई० में उत्तराधिकार की समस्या उपस्थित हो गयी। १६९४ ई० में मेरी मर चुकी थी, एन की सन्तान भी मर गई। अब गद्दी के लिये स्टुअर्ट वंश का एक ही प्रोटेस्टेंट अधिकारी कायम रहा—हनोवर के एलेक्टर की पत्नी सोफिया—जो जेम्स प्रथम की पौत्री होती थी। अतः १७०१ ई० में उत्तराधिकार निर्णायक कानून (Act of Settlement) पास कर एन के मरने के बाद गद्दी सोफिया या उसके सन्तान को दी गई।

इस कानून के अन्दर कुछ और भी बातें थी :—(१) राजा किसी जज को पद-च्युत नहीं कर सकता जब तक वह सच्चरित्र और कर्त्तव्यशील रहेगा। न्यायालय में दोषी घोषित होने पर तथा पार्लियामेंट की दोनों सभाओं द्वारा इस आशय का प्रस्ताव पास होने पर ही जज पदच्युत किया जा सकता है। (२) कौमन्स सभा द्वारा चलाये गये अभियोग में राजा के द्वारा दी हुई क्षमा का कोई मूल्य नहीं समझा जायगा। इससे यह सिद्ध कर दिया गया कि राज्य के प्रत्येक कार्य के लिये मंत्री ही उत्तरदायी समझे जायेंगे। (३) भविष्य में सभी राजा को इंगलैंड के चर्च का ही समर्थक होना पड़ेगा और कोई विदेशी पार्लियामेंट में नहीं बैठ सकता।

उपर्युक्त चार बातों के अलावा तीन बातें और थीं जो कुछ समय के बाद रद्द कर दी गईं। जैसे—

(१) पार्लियामेंट की आज्ञा के बिना राजा विदेश नहीं जा सकता और उसकी विदेशी रियासत के लिये इंगलैंड युद्ध में शामिल नहीं हो सकता।

(२) कोई मन्त्री, प्रेस होल्डर तथा पेंशनयाफ्ता व्यक्ति कौमन्स सभा में नहीं बैठ सकता।

(३) राज्य के सभी कामों का विचार प्रिवी कौंसिल की बैठक में होना चाहिये और सभी सदस्यों को हस्ताक्षर करना चाहिये।

यदि अन्तिम दो बातें रद्द न होतीं तो इंगलैंड में कैबिनेट शासन का विकास नहीं होता।

इस कानून का महत्व—अधिकार-पत्र तथा उत्तराधिकार निर्णायक कानून दोनों के द्वारा राजा के अधिकार बहुत सीमित हो गये। राजा के दैवी अधिकार के सिद्धान्त का अन्त हो गया और उसके धर्म पर भी पार्लियामेंट का नियन्त्रण हो गया।

अब जज राजा के नौकर नहीं रहे न्यायविभाग कार्यकारिणी से स्वतन्त्र हो गया और इस प्रकार जनता की आजादी सुरक्षित हो गयी। मंत्रियों में उत्तरदायित्व का सिद्धान्त स्थापित हो गया। संक्षेप में नियमानुकूल शासन के लिये रास्ता साफ हो गया।

वैधानिक प्रगति—आधुनिक कैबिनेट की कई विशेषताओं में एक विशेषता यह है कि उसके सभी सदस्य छोटी सभा के बहुमत दल के सदस्य होते हैं। यही सिद्धान्त विलियम तृतीय के राज्यकाल में एक प्रकार से स्थापित हो गया।

कैबिनेट शासन की प्रगति—इस समय तक टोरी तथा ह्विग दो दल स्थापित हो गये थे और दोनों की गृह तथा वैदेशिक नीति भिन्न-भिन्न थी। विलियम दोनों दलों के द्वारा बुलाया गया था। अतः वह दोनों के प्रति कृतज्ञ था। इसके अलावा वह अपनी वैदेशिक नीति की सफलता के लिये समूचे राष्ट्र का समर्थन चाहता था। अतः पार्लियामेंट में किसी एक दल का बहुमत रहने पर भी वह दोनों दलों से अपने मंत्रियों को बहाल करने लगा। लेकिन इसका फल बुरा होने लगा; मन्त्री आपस में लड़ने-झगड़ने लगे। तब सुन्दरलैंड की राय से एक ही पार्टी से मंत्रिमंडल स्थापित करने के लिये निश्चय हुआ। अतः १६९५ ई० में केवल ह्विग पार्टी से ही मन्त्री नियुक्त किये गये। यह मन्त्रिमंडल 'ह्विग जन्टो' के नाम से प्रसिद्ध है। संयोगवश उस समय कौमन्स सभा में ह्विग पार्टी का बहुमत था। अतः अब यह सिद्धान्त-सा कायम हो गया कि कौमन्स सभा में जिस पार्टी का बहुमत हो उसी पार्टी से मन्त्री नियुक्त किये जायँ। फिर भी पूर्ण रूप से यह सिद्धान्त अभी कार्य रूप में लागू नहीं किया गया, क्योंकि कभी-कभी एक पार्टी का बहुमत रहने पर भी संयुक्त मंत्रिमंडल की स्थापना हुई थी।

आर्थिक प्रगति—विलियम का राज्यकाल राजनैतिक तथा वैधानिक प्रगतियों के अलावा आर्थिक प्रगति के लिये भी प्रसिद्ध है।

राष्ट्रीय कर्ज का प्रारम्भ १६९३ ई०—विलियम का राज्यकाल युद्धों का जमाना था जिनके कारण बहुत खर्च होता था। अधिक टैक्स लगाने से प्रजा तबाह होती और आवश्यकतानुसार रुपये भी नहीं मिलते। अतः विलियम पेटरसन नाम के एक स्कौच की राय से तात्कालिक चांसलर मौंटेग एक नया तरीका कार्य रूप में लाया। सरकार के उत्तरदायित्व पर अधिक संख्या में कर्ज लिया जाने लगा और उसका सिर्फ सूद ही देने का वादा किया जाता था। यह कर्ज राजा को व्यक्तिगत रूप से नहीं, बल्कि राष्ट्र को दिया जाता था। इस प्रकार १६६३ ई० में इंगलैंड में राष्ट्रीय कर्ज का आरम्भ हुआ। १६६७ ई० में यह कर्ज २ करोड़ पौंड था; १७१३ ई० में ७ करोड़ ८० लाख पौंड और १८१५ ई० में ८४ करोड़ पौंड तक बढ़ गया।

इंगलैंड के बैंक की स्थापना १६९४ ई०—अब तक इंगलैंड में कोई बड़ा बैंक नहीं था। लोग सुनारों के यहाँ अपना रुपया जमा करते थे, और वहीं से सूद पर ले भी जाते थे। प्रारम्भ में कुछ बड़े-बड़े व्यापारियों ने ही विशेष रूप से सरकार को कर्ज दिया था। अतः इन लोगों को एक बैंक स्थापित करने की आज्ञा दे दी गई। इस प्रकार १६६४ ई० में इंगलैंड के बैंक की स्थापना हुई। इस बैंक ने बहुत उन्नति की। यह रुपया जमा करता और नोट भी निकालता था। सरकारी देख-रेख में रहने के कारण लोगों का इस पर विश्वास जम गया था। अतः लोग निधड़क अपने धन-सम्पत्ति को यहाँ जमा करने लगे।

सिक्का सुधार १६९५ ई०—१६६५ ई० में सिक्का सम्बन्धी सुधार हुआ। पुराने घिसे हुए सिक्के खजाने में लौटा लिये गये और उनकी जगह पर नये मजबूत सिक्के निकाले गये।

परिणाम—इन आर्थिक सुधारों के कारण इंगलैंड के व्यापार तथा साम्राज्य की वृद्धि में बहुत बड़ी सहायता मिलने लगी।

क्रान्तिकारी व्यवस्था भी दृढ़ हो गई जिसके कारण विलियम का स्थान भी दृढ़ हो गया। साथ ही हनोवर राजवंश के पक्ष में भी प्रतिक्रिया हुई। बड़े-बड़े धनी-मानी लोगों ने ही कर्ज दिया था और उन्हें भय था कि स्टुअर्ट पुर्नस्थापन से उनका कर्ज बर्बाद हो जायगा। अतः उन लोगों ने जी जान से क्रान्तिकारी व्यवस्था का समर्थन किया।

अध्याय १६

रानी एन का राज्य (१७०२–१७१४ ई०)

रानी एन का चरित्र—सन् १७०२ ई० में विलियम के मरने के बाद जेम्स द्वितीय की दूसरी लड़की एन गद्दी पर बैठी। इसका विवाह डेनमार्क के राजा जौर्ज से हुआ था। इसका पति मिलनसार और सरल प्रकृति का व्यक्ति नहीं था। एन अच्छे स्वभाव की औरत थी। वह अपने मित्रों के प्रति सच्चा व्यवहार रखती थी। वह टोरी पार्टी और स्थापित चर्च की समर्थक थी। अतः बहुत से लोगों की दृष्टि में वह प्रिय थी। फिर भी उसमें कुछ बड़ी त्रुटियाँ भी थीं। वह हठी तथा संकीर्ण विचार की औरत थी। उसमें दृढ़ता का अभाव था, अतः बहुत शीघ्र वह दूसरों के प्रभाव-जाल में आ जाती। इस प्रकार अपने राज्यकाल के अधिकांश भाग में वह मार्लबरा की पत्नी के प्रभाव में थी। वह अपने को पूर्ण अंगरेज कहती थी। उसे साहित्य और संगीत से प्रेम नहीं था, लेकिन शिकार का शौक था।

एन के राज्यकाल की विशेषतायें—एन के राज्यकाल की दो विशेषतायें हैं। पहली विशेषता यह है कि दोनों राजनैतिक दलों—ह्विग तथा टोरी—के बीच भीषण विरोध पैदा हो गया। एन के शासन के पिछले भाग में यह भीषणता और भी बढ़ गई। अब तक दोनों दलों के अपने-अपने सिद्धान्त निश्चित रूप से कायम हो गये।

(१) ह्विग लोग जनता के अधिकार के समर्थक थे अतः वे नियमानुमोदित शासन के पक्ष में थे। टोरी राजा के विशेषाधिकार के समर्थक थे, अतः वे राजा के दैवी अधिकार के सिद्धान्त के पक्ष में थे।

(२) ह्विग चर्च पर राज्य का अधिकार चाहते थे और डिसेंटरों के साथ सहिष्णुता की नीति लागू करना चाहते थे। टोरी अंगरेजी चर्च के कट्टर पक्षपाती थे और उपर्युक्त नीति के विरोधी थे।

(३) ह्विग हैनोवर वंश के राज्याभिषेक के समर्थक थे, लेकिन टोरी जेम्स द्वितीय के पुत्र के पक्ष में थे।

(४) ह्विग इंगलैंड में व्यापारिक तथा औद्योगिक विकास चाहते थे, अतः वे स्वतन्त्र व्यापार की नीति के पक्ष में थे। लेकिन टोरियों को इससे विशेष दिलचस्पी नहीं थी और वे संरक्षण की नीति के पक्ष में थे।

(५) वैदेशिक नीति में भी दोनों दलों के बीच भिन्नता थी। ह्विग युद्ध नीति के पक्ष में थे तो टोरी इसके विरोधी थे।

दूसरी विशेषता यह है कि राजनीति और साहित्य में घना सम्बन्ध स्थापित हो गया। दोनों दलों के भीषण विरोध से तत्कालीन समाज और साहित्य प्रभावित हुए बिना न रहे। लोग सर्वजनिक कामों में विशेष दिलचस्पी लेने लगे और पार्लियामेंट की भी प्रसिद्धि बढ़ रही थी। अतः विरोधी दलों के लिये यह आवश्यक था कि देश की जनता को अधिक से अधिक प्रभावित करें। इसके लिये प्रेस और प्लैटफार्म उत्तम साधन थे। अतः साहित्यिक लोगों से पार्टी का सम्पर्क आवश्यक हो गया। एडीसन और स्टील ह्विगों की ओर से और स्विफ्ट टोरियों की ओर से काम कर रहे थे।

गुडोल्फिन मंत्रिमंडल १७०२–१७१० ई०—एन के १२ वर्ष के राज्यकाल में दो मंत्रिमंडल स्थापित हुए। पहले मंत्रिमंडल का प्रधान गोडोल्फिन था। वह अनुभवी, योग्य और कुशल राजनीतिज्ञ था। वह अच्छा अर्थशास्त्री भी था और मार्लबरा का पक्का मित्र था। यह मंत्रिमंडल टोरी मंत्रिमंडल के रूप में प्रारम्भ हुआ और ह्विग मंत्रिमंडल के रूप में समाप्त हुआ, क्योंकि टोरी लोग युद्ध-नीति के विरोध के कारण मंत्रिमंडल से क्रमशः हटाये जाने लगे। यह मंत्रिमंडल १७०२ ई० से १७१० ई० तक कायम रहा।

इसकी प्रसिद्धि के कारण—इंगलैंड के इतिहास में महत्वपूर्ण मंत्रिमंडलों में गुडोल्फिन मंत्रिमंडल का भी एक स्थान है। इसी के समय में स्पेन के उत्तराधिकार की लड़ाई में मार्लबरा अद्भुद सफलता प्राप्त कर रहा था। जिब्राल्टर और माइनोर्का पर इंगलैंड का अधिकार हो गया, जिससे भूमध्यसागर में अंगरेजों की सामुद्रिक प्रधानता कायम होने लगी। उसके शासनकाल की दूसरी बड़ी घटना थी इंगलैंड और स्कौटलैंड का पार्लियामेंटरी संयोग।

इसके पतन के कारण—लेकिन १७१० में ही गुडोल्फिन मंत्रिमंडल अचानक टूट गया। इसके पतन के कई कारण थे:—

(१) युद्ध से अप्रियता—ह्विगों के सिवा और कोई भी फ्रांस के साथ युद्ध नहीं चाहता था। इसमें ह्विगों का अपना स्वार्थ था। अतः १७०६ ई० और १७०९ ई० में उन्होंने सुलह करना अस्वीकार कर लिया था। यद्यपि सुलह कर लेना ही

इंगलैंड के लिये फायदे की बात होती। अतः स्वार्थमय युद्ध-नीति के कारण ह्विग जनता की दृष्टि में गिरने लगे।

(२) मार्लबरा के हौसले—मार्लबरा अँगरेजी सेना का आजीवन कैप्टन जेनरल बनना चाहता था। अतः सर्वसाधारण को यह सन्देह तथा भय होने लगा कि वह दूसरा क्रौमवेल बनेगा। इसमें मंत्रिमंडल की और भी बदनामी हो गयी, यद्यपि सरकार की ओर से इस प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया गया था।

(३) रानी एन का रुख—रानी एन स्वभाव से टोरी थी। अतः वह शुद्ध ह्विग मंत्रिमंडल को नापसन्द करती थी। इसके अलावा वह ह्विगों से क्रुद्ध थी क्योंकि उन्होंने उसके पति पर अभियोग लगाया था और उसके मरने पर एन को दूसरा विवाह करने की सलाह दी थी।

रानी एन स्त्रियों के प्रभाव में विशेष रहती थी। बहुत समय तक वह मार्लबरा की पत्नी के प्रभाव में थी, लेकिन १७०८ ई० में उससे रानी एन से झगड़ा हो गया और उसके बाद रानी श्रीमती मैशम के प्रभाव में आ गई। मैशम टोरी पार्टी की समर्थक थी और वह ह्विगों के विरुद्ध रानी के कान भरने लगी।

(४) डा० सैकवेरेल पर अभियोग—रानी एन इंगलैंड के चर्च की कट्टर समर्थक थी। उस समय यह अफवाह जोरों से उड़ रही थी कि चर्च खतरे में है। डा० सैकवेरेल नाम का टोरी पादरी ह्विगों के विरुद्ध प्रचार कर रहा था और जनता के बीच प्रिय हो रहा था। उसने ह्विग मंत्रिमंडल की कड़ी आलोचना की। अतः ह्विग सरकार ने उस पर अभियोग चला दिया। इससे सरकार की बड़ी भूल साबित हुई। सैकवेरेल के पक्ष में जनता की आवाज उठने लगी। लोग यह नारा लगाने लगे कि रानी चर्च और सैकवेरेल का समर्थन करे। फल यह हुआ कि उसे बहुत साधारण सजा देकर मुक्त करना पड़ा। उसे अपने प्रचार कार्य से सिर्फ तीन वर्ष के लिये रोक दिया गया। मुक्त होने पर जनता ने उसका बड़ा सत्कार किया।

अब ह्विगों का पतन निश्चित हो गया। रानी ने ह्विग मंत्रिमंडल तोड़ दिया और टोरियों के हाथ में शासन-सूत्र सौंप दिया। पार्लियामेंट भंग कर दी गयी, नया चुनाव हुआ और टोरियों को बहुमत प्राप्त हुआ। अब शेष राज्यकाल में (१७१०—१७१४ ई०) टोरियों की प्रधानता रही।

टोरी मंत्रिमंडल १७१०—१७१४ ई०—टोरियों के दो बड़े नेता हार्ली और सेन्ट जौन थे। वे क्रमशः अर्ल औफ़ औक्सफोर्ड और वाइ काउन्ट बोलिंगब्रूक से नाम से भी प्रसिद्ध हैं। हार्ली प्रधान मंत्री था। वह राजनीति में मध्यम श्रेणी का व्यक्ति था।

वह कुशल वक्ता तो नहीं था, लेकिन सफल पार्टी मैनेजर था। उसे साहित्य से प्रेम था और उसने पुस्तकें भी लिखी थीं।

सेन्ट जौन का व्यक्तित्व उससे कहीं अधिक आकर्षक और प्रभावशाली था। वह कुशल वक्ता और योग्य लेखक भी था।

कार्य—(१) मार्लबरा पर अभियोग चलाया गया और उसे सेनापति पद से हटा दिया गया। देश छोड़कर वह कहीं बाहर चला गया। उसका उत्तराधिकारी एक अयोग्य व्यक्ति था जिसे युद्ध में कोई दिलचस्पी नहीं थी। १७१३ ई० में यूट्रेक्ट की सन्धि के द्वारा युद्ध समाप्त हो गया।

घरेलू क्षेत्र में ह्विगों की शक्ति कमजोर करने की कोशिश की गई।

(२) धार्मिक विद्रोही (नान कनफर्मिस्ट) लोग कभी-कभी टेस्ट और कौरपरेशन ऐक्ट्स के प्रतिबन्धों से बचने के लिये अंगरेजी चर्च के सिद्धान्तों को ऊपर से मान लेते थे। १७११ ई० में ओकेजनल कनफर्मिटी ऐक्ट पास कर इसे रोक दिया गया।

(३) १७१४ ई० में शिज्म ऐक्ट पास हुआ जिसके अनुसार शिक्षक का कार्य करने के लिये बिशप से प्रमाणपत्र लेना अनिवार्य कर दिया गया।

(४) लॉर्ड-सभा में टोरियों को बहुमत प्राप्त कराने के लिये रानी ने १२ नये टोरी लॉर्डों का निर्माण किया।

(५) ह्विगों के लिये कौमन्स सभा की सदस्यता पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया। एक ऐक्ट के द्वारा यह निश्चित हुआ कि कौंटी में ६०० पौंड और बौरो में ३०० पौंड वार्षिक मूल्य की सम्पत्ति वाले ही कौमन्स सभा के सदस्य हो सकते हैं।

उत्तराधिकार की समस्या—औक्सफोर्ड और बोलिंगब्रुक ने यह आशा की थी कि टोरी सरकार अधिक दिनों तक कायम रहेगी, क्योंकि राज्य में शान्ति स्थापित हो चुकी थी और देश की उन्नति हो रही थी। लेकिन परिस्थितियों के कारण उनकी आशा पर पानी फिर गया। एन का स्वास्थ्य खराब हो रहा था और इसी समय सोफिया भी मर गई। अब सोफिया का पुत्र जार्ज प्रथम गद्दी का वैध अधिकारी था। लेकिन जार्ज का राज्याभिषेक टोरियों के लिये आफत का घर था, क्योंकि वह ह्विगों का ऋणी तथा मित्र था। अतः जेम्स द्वितीय के पुत्र ओल्ड प्रिटेंडर को गद्दी देने की कोशिश होने लगी। उसके साथ टोरियों ने गुप्त पत्र-व्यवहार करना शुरू किया। टोरियों और ह्विगों के बीच संघर्ष निश्चित-सा मालूम पड़ने लगा। लेकिन स्टुअर्ट पुर्नस्थापन के मार्ग में दो बड़ी बाधायें थीं। पहली बाधा यह थी कि जेम्स तृतीय कैथॉलिक था और गद्दी के लिये भी अपना धर्म छोड़ने को तैयार नहीं था। अतः औक्सफोर्ड को स्टुअर्ट पुनर्स्थापन की सफलता में सन्देह होने लगा और वह

बोलिंगब्रूक को सहयोग देने में आनाकानी करने लगा। अतः बोलिंगब्रूक उससे क्रुद्ध हो बदला लेने की बात सोचने लगा।

दूसरी बाधा यह उपस्थित हुई कि रानी एन थोड़े ही समय के बाद मर गयी। जब वह बीमार पड़ी तब उसने बोलिंगब्रूक के प्रभाव में आकर औक्सफोर्ड को पदच्युत कर दिया। यह घटना १७१४ ई० की २७ जुलाई को हुई। उसके दो दिनों के बाद एन की हालत नाज़ुक होने लगी और परिस्थिति पर विचार करने के लिये कौंसिल की बैठक की गई। दो और ह्विग सदस्य, आर्जिल और समरसेट, कौंसिल में अचानक घुस गये और बहस में भाग लेने लगे। एक तीसरा ह्विग ड्यूक श्रूजबरी भी शामिल हो गया। इसी श्रूजबरी को कोषाध्यक्ष नियुक्त किया गया। १ अगस्त १७१४ ई० को रानी एन की मृत्यु हो गई। बैठक में सभी प्रीवीकौंसिलर बुला लिये गये, जिसमें ह्विगों का बहुमत था। अब हैनोवर के एलेक्टर जार्ज प्रथम का राज्याभिषेक घोषित किया गया। बोलिंगब्रूक की योजना असफल हो गई और वह भागकर फ्रांस चला गया।

अध्याय १७

वैदेशिक नीति (१६८६–१७१४ ई०)

भूमिका--इंगलैंड और फ्रांस की शत्रुता—सन् १६८३ ई० से १७१४ ई० तक के युग को विदेशी युद्धों का युग कहा जा सकता है। राज्य-क्रान्ति के बाद इंगलैण्ड को कई युद्धों में शामिल होना पड़ा। १६८६ ई० से १८१५ ई० तक यानी १२६ वर्षों में ५६ वर्ष युद्ध में व्यतीत हुए। इस बीच सात युद्ध हुए जिसमें इंगलैण्ड का दुश्मन खासतौर से फ्रांस था। अब इन दोनों देशों की दुश्मनी के कारणों पर विचार करना चाहिये।

इसके साधारण कारण (१) यूरोप में फ्राँस के हौसले—फ्रांस की प्राकृतिक सीमा नहीं थी और वहाँ का राजा लूई चतुर्दश राइन नदी को फ्रांस की सीमा कायम करना चाहता था। लेकिन इसके लिये दक्षिण-पूरब में जर्मन रियासतों पर और उत्तर-पूरब नीदरलैंड पर अधिकार स्थापित करना आवश्यक था। उस समय नीदरलैंड के दो हिस्से थे—हालैण्ड जो १६०६ ई० में स्पेन से स्वतन्त्र हो गया था और बेल्जियम जो अभी भी स्पेन के अधिकार में था। फ्रांस और बेल्जियम के बीच किलों की पंक्ति थी जो 'बेरियर फोर्ट्रेसेज' कहलाती थी। बेल्जियम की ओर के किलों पर अधिकार स्थापित करने के लिये फ्रांस कोशिश कर रहा था। यदि इसमें उसे सफलता मिल जाती तो हॉलैण्ड भी उसके अधिकार में आ जाता। लेकिन हॉलैण्ड की स्वतन्त्रता में इंगलैण्ड का स्वार्थ था। इस स्वतन्त्रता के अपहरण होने से इंगलैण्ड की सामुद्रिक स्थिति और उसकी राष्ट्रीय सुरक्षा दोनों ही खतरे में पड़ जातीं। अतः इंगलैण्ड फ्रांस के अधिकार को हॉलैण्ड पर कभी भी बर्दाश्त नहीं कर सकता था। भयभीत होकर सम्राट और जर्मन राजाओं ने १६८६ ई० में एक संघ कायम किया जो लीग ऑफ ऑग्सबर्ग के नाम से प्रसिद्ध था।

(२) स्पेन में फ्रांस का हौसला—फ्रांस सन्धि या वैवाहिक सम्बन्धों के द्वारा स्पेन पर भी अपना अधिकार स्थापित करना चाहता था। इससे फ्रांस की शक्ति बहुत बढ़ जाती और शक्ति-सन्तुलन की नीति में बाधा उपस्थित हो जाती।

(३) इंगलैंड और फ्रांस के विश्वव्यापी हौसले—इंगलैण्ड और फ्रांस के संघर्ष केवल यूरोप तक ही सीमित नहीं थे बल्कि विश्व के अन्य भागों में भी फैले हुए थे। दोनों देशों की साम्राज्यवादी महत्त्वाकांक्षा इस संघर्ष का महत्त्वपूर्ण कारण थी। भारतवर्ष, पश्चिमी-द्वीप-समूह, उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका आदि विश्व के कई भाग इस संघर्ष के क्षेत्र बने हुए थे।

(४) लूई चतुर्दश की बहुमुखी प्रतिभा—लूई चतुर्दश (१६४३-१७१५ ई०) फ्रांस का प्रसिद्ध स्वेच्छाचारी शासक था। १६८८-८९ ई० में सारे यूरोप में उसकी कीर्ति फैली हुई थी। उसकी स्थल-सेना अजेय समझी जाती थी और जल-सेना की शक्ति इंगलैण्ड और हॉलैण्ड की सम्मिलित शक्ति के बराबर थी। उसके सभी अफसर बड़े ही कुशल और योग्य थे। वह पूरब की ओर तेजी से बढ़ रहा था। इंगलैण्ड के राजे चार्ल्स द्वितीय तथा जेम्स द्वितीय उसके हाथों के खिलौने बने हुए थे। इस प्रकार लूई की धाक जमी हुई थी। लेकिन राज्यक्रान्ति ने उसकी आशाओं पर पानी फेर दिया। क्रान्ति के फलस्वरूप विलियम तृतीय का इंगलैण्ड की गद्दी पर राज्यारोहण हुआ और वह लूई का कट्टर दुश्मन था। राजा होने के पहले ही वह ऑग्सबर्ग के संघ में शामिल हो गया था।

१६८८ और १७१४ ई० के बीच दो प्रमुख युद्ध हुए—अंगरेजी राज्य के उत्तराधिकार की लड़ाई और स्पेन के उत्तराधिकार की लड़ाई।

१. अंगरेजी राज्य के उत्तराधिकार की लड़ाई १६८९–९७ ई०

यूरोप के इतिहास में इस लड़ाई को ऑग्सबर्ग के संघ का युद्ध कहा जाता है। प्रश्न यह उठा था कि इंगलैण्ड का राजा वास्तव में जेम्स द्वितीय है या विलियम तृतीय? इंगलैण्ड की गद्दी जेम्स द्वितीय को दिलाने के लिये फ्रांस का लूई चतुर्दश उसकी सहायता कर रहा था। इस कारण युद्ध छिड़ गया जो आठ वर्षों तक विभिन्न जगहों में होता रहा।

स्कौटलैण्ड में—स्कौटलैण्ड में वाइकाउन्ट डंडी ने पहाड़ी बाशिन्दों को मिलाकर जेम्स द्वितीय के पक्ष में विद्रोह किया। उसने अंगरेजों और डचों की सम्मिलित सेना को किल्लीक्रांकी घाटी की लड़ाई में पराजित भी किया। लेकिन दुर्भाग्यवश वह स्वयं लड़ाई में बुरी तरह घायल हो गया और थोड़े समय के बाद मर गया। उसकी मृत्यु के साथ ही विद्रोह भी दब गया।

आयरलैण्ड में—आयरलैण्ड में भी भीषण विद्रोह शुरू हुआ। फ्रांसीसी धन-जन की सहायता पाकर जेम्स द्वितीय स्वयं आयरलैण्ड पहुँच गया था। आयरिश

लोग जेम्स के पक्ष में खूब दिलचस्पी रखते थे, क्योंकि दोनों ही कैथोलिक धर्म के अनुयायी थे। कैथोलिकों और प्रोटेस्टेंटों के बीच युद्ध छिड़ गया। उत्तर के प्रोटेस्टेंटों पर हमला हुआ और उनके दो किले लंदनडेरी और एन्सक्लीन घेर लिये गये। लेकिन कैथोलिकों को दबा दिया गया। इसके बाद १ जुलाई १६६० ई० को विलियम स्वयं आयरलैंड पहुँचा और उसने बोयन के युद्ध में जेम्स को हरा दिया। यह अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध था जिसमें कई राष्ट्र सम्मिलित थे। जेम्स की सेना में अंगरेज और फ्रांसीसी थे और विलियम की सेना में अंगरेज, फ्रांसीसी (ह्यूजिन्स) आयरिश, डच, प्रशियन, डेन और फिन्स थे। जेम्स हारकर फ्रांस भाग गया। डच जेनरल ग्रिनकेल आउग्रिम के युद्ध में विजयी हुआ। १६६१ ई० में कैथोलिक दुर्ग लिमेरिक का पतन हुआ और इसके साथ आयरलैंड में युद्ध समाप्त हो गया तथा विलियम की जड़ जम गयी।

समुद्र में—१६६०-६१ ई० में समुद्र पर फ्रांसीसियों की प्रधानता थी। फ्रांसीसी ऐडमिरल डरविल ने बीचीहेड की लड़ाई में संयुक्त अंगरेजी और डच बेड़े को बुरी तरह हरा दिया। अब लूई उत्साहित होकर इंगलैंड पर आक्रमण करने की बात सोचने लगा, लेकिन भाग्य ने उसका साथ नहीं दिया। लड़ाई के शेष काल में १६६२ ई० से १६६७ ई० तक समुद्र पर अंगरेजों का आधिपत्य स्थापित हो गया। १६६२ ई० में अंगरेज नौसेनापति रसेल ने ला होग के युद्ध में फ्रांसीसी बेड़े पर निर्णायात्मक विजय प्राप्त की। अंगरेजों ने बड़े धूम-धाम से इस विजयोत्सव को मनाया। अब इंगलिश चैनल पर अंगरेजों का अधिकार हो गया जिसके फलस्वरूप फ्रांसीसी व्यापार को बड़ी हानि पहुँची।

इसके बाद भूमध्यसागर में भी एक अंगरेजी बेड़ा भेजा गया जिसने बार्सिलोना के फ्रांसीसी हमले से, और स्पेन की उनके प्रभुत्व से, रक्षा की।

जमीन पर—स्थल पर युद्ध का प्रधान क्षेत्र स्पेनी नीदरलैंड था। वहाँ कई बार विलियम की हार हुई फिर भी वह धैर्यपूर्वक लड़ता रहा और अन्त में विजयश्री उसी के हाथ लगी। १६६५ ई० में उसने नामूर के दृढ़ किले पर हमला किया और विजयी हुआ।

रिजविक की सन्धि (१६९७ ई०)—अब दोनों दल इस खर्चीले और लम्बे युद्ध से ऊबने लगे थे और इसका अन्त कर देना चाहते थे। अतः १६६७ ई० में रिजविक की सन्धि हुई। इसके अनुसार लूई ने १६७८ ई० के बाद के सभी जीते हुए प्रदेशों को, स्ट्रासवर्ग के सिवा, लौटा दिया। उसने विलियम को इंगलैंड का राजा और एन को गद्दी की भावी उत्तराधिकारिणी स्वीकार किया। उसने भविष्य में जेम्स को

सहायता नहीं देने का वचन दिया और सीमास्थित किलों में सेना रखने के डचों के अधिकार को स्वीकार किया।

इंगलैण्ड ने भी फ्रांस को कुछ जीते हुए प्रदेशों को लौटा दिया।

उसका महत्त्व—इस प्रकार इंगलैण्ड ने फ्रांस के साथ सम्मानपूर्ण सन्धि की। अब लूई की कमजोरी प्रत्यक्ष हो गई। यह पहला युद्ध था जिसमें उसकी निश्चित हार हुई थी। सर्वप्रथम उसके हौसले में रुकावट पैदा हुई थी। 'टाउट' के शब्दों में 'उसकी शक्ति अभी भी महती थी लेकिन अब इसका विकास रुक गया।' विजित प्रदेशों को लौटाकर उसने अपनी राजनैतिक हार स्वीकार कर ली।

अब अंगरेजों की प्रतिष्ठा बढ़ गई और समुद्र पर उनका आधिपत्य स्थापित हो गया। विलियम के नेतृत्व में उन्होंने कई नई बातें सीखीं जिनसे आगे चलकर विशेष फायदा हुआ।

२. स्पेन के उत्तराधिकार की लड़ाई (१७०२–१७१३ ई०)

कारण-राज्य के उत्तराधिकार का प्रश्न—रिजविक की सन्धि से स्थायी शान्ति स्थापित न हो सकी और शीघ्र ही एक दूसरा महायुद्ध शुरू हो गया जो इतिहास में 'स्पेन के उत्तराधिकार की लड़ाई' के नाम से विख्यात है। इस समय स्पेन का राजा चार्ल्स द्वितीय (१६६५–१७०० ई०) था। वह बूढ़ा होगया था और मरने के निकट था। उसके कोई सन्तान नहीं थी, लेकिन उसकी दो बहिनें और दो फूफियाँ (पिता की बहन) थीं। बड़ी फूफी एन का विवाह फ्रांस के राजा लूई तेरहवें के साथ और छोटी फूफी मेरिया का आस्ट्रिया के सम्राट फर्डिनेन्ड तृतीय के साथ हुआ था। ये दोनों फूफियाँ तो मर चुकी थीं लेकिन इनकी सन्तानें वर्त्तमान थीं। बड़ी फूफी का पुत्र लूई चतुर्दश था जिसने चार्ल्स द्वितीय की बड़ी बहन मेरिया थेरेसा के साथ विवाह किया और छोटी फूफी का पुत्र लियोपोल्ड था जिसने छोटी बहन मार्गेट थेरेसा के साथ विवाह कर लिया। लूई चतुर्दश के एक पुत्र हुआ जिसका नाम लूई डौफिन था, लेकिन वह थोड़े समय के बाद मर गया। डौफिन के दो पुत्र थे—लूई, बर्गेडी का ड्यूक और फिलिप, अंजू का ड्यूक। प्रथम पुत्र लूई भी एक पुत्र छोड़कर मर गया। लियोपोल्ड की मेरिया अन्टोनियाँ नाम की एक पुत्री थी जिसका विवाह बवेरिया के एलेक्टर इमानुयेज़ से हुआ और उससे एक पुत्र पैदा हुआ। जिसका नाम जोसेफ फर्डिनेन्ड था। मार्गेट के मरने पर लियोपोल्ड ने अपनी दूसरी शादी की जिससे दो पुत्र पैदा हुए, जोसेफ और आर्कड्यूक चार्ल्स। निम्नलिखित चार्ट के अध्ययन से उपर्युक्त वंशावली स्पष्ट रूप से समझ में आ जायगी।

स्पेन के राजा की वंशावली

इस प्रकार चार्ल्स द्वितीय के सन्तानहीन मरणासन्न होने के कारण बड़ी ही विकट परिस्थिति उपस्थित हुई। उसका साम्राज्य बहुत ही विस्तृत था। स्पेन के अलावा नीदरलैंड, मिलान और नेपल्स, सिसली और सार्डीनियाँ, पश्चिमी-द्वीप-समूह और दक्खिनी अमेरिका का बहुत कुछ हिस्सा उसके राज्य में सम्मिलित था। गद्दी के अधिकारी लूई डौफिन और जोसेफ फर्डिनेन्ड हो सकते थे लेकिन दोनों बहनों ने विवाह के समय स्पेन की गद्दी पर अपना अधिकार छोड़ दिया था। अतः अब दोनों फूफियों की सन्तानें—लूई १४वाँ और लियोपोल्ड ही गद्दी के उचित अधिकारी थे और ये दोनों ही स्पेन के राज्य के लिये उत्सुक थे। लेकिन इनमें से किसी एक का राज्यारोहण शक्ति सन्तुलन की नीति के विरुद्ध होता और यूरोप के दूसरे राज्यों के लिये खतरनाक साबित होता, क्योंकि इस हालत में फ्रांस या आस्ट्रिया की शक्ति कई गुनी अधिक बढ़ जाती। इसके अलावा ये दोनों राज्य भी परस्पर प्रतिद्वन्दी थे और स्पेन के सम्पूर्ण राज्य पर किसी एक का निर्विरोध अधिकार चुपचाप देख नहीं सकते थे। अतः युद्ध अवश्यंभावी मालूम पड़ता था जिसका रूप भीषण होता। अतः विलियम तृतीय के नेतृत्व में यूरोप के राजनीतिज्ञों ने इसे टालने की सतत चेष्टा की।

बँटवारे की योजना—इसी के फलस्वरूप १६९८ ई० में इंगलैंड फ्रांस और हॉलैंड ने स्पेनी राज्य के बँटवारे की पहली सन्धि की। इसके अनुसार बवेरिया का राजकुमार स्पेन की गद्दी तथा उसके अधिकांश प्रदेश का अधिकारी हुआ। फ्रांस को नेपल्स तथा सम्राट को मिलान दिया गया। यह अच्छी योजना थी जिससे यूरोप की शक्ति सन्तुलन की नीति की रक्षा हो जाती थी। लेकिन दुर्भाग्यवश दूसरे ही साल चेचक की बीमारी से राजकुमार की मृत्यु हो गई। अतः १७०० ई० में दूसरी विभाजक सन्धि हुई। इसके अनुसार आस्ट्रिया का राजकुमार आर्क ड्यूक चार्ल्स स्पेन के अधिकांश राज्य का अधिकारी हुआ, लेकिन उसे आस्ट्रिया की गद्दी का त्याग करना पड़ा। फ्रांस को इटली स्थित स्पेनी सूबे दिये गये।

चार्ल्स की वसीयत और लूई द्वारा इसकी स्वीकृति—इस नीति में एक बड़ी कमजोरी यह थी कि स्पेन के राज्य का बँटवारा हो रहा था लेकिन इसमें वहाँ के राजा या मंत्री या जनता किसी की भी राय नहीं ली गई थी। अतः स्पेनवासियों के लिये यह बड़ा ही अपमानजनक था और वे स्वाभाविक ही बड़े असन्तुष्ट हुए। चार्ल्स द्वितीय जब बीमार पड़ा तब उसने एक वसीयत लिखवाई। इसमें उसने अपने सम्पूर्ण राज्य का अधिकारी लूई चतुर्दश के द्वितीय पोते फिलिप को निश्चित कर लिया। लेकिन वह फ्रांस की गद्दी पर नहीं बैठ सकता था। लालच में पड़कर लूई ने विभाजक सन्धि की शर्तों की उपेक्षा कर वसीयत को स्वीकार कर लिया। कुछ ही दिनों के बाद चार्ल्स के मरने पर फिलिप स्पेन का राजा हुआ। इस तरह हैप्सबर्ग घराने का उत्तराधिकार बोर्बन घराने के एक राजकुमार के हाथ में चला आया।

लेकिन लूई के इस कार्य से ही युद्ध शुरू नहीं हो जाता, क्योंकि सन्तोष की बात यह थी कि उसने प्रथम पोते के बदले दूसरे पोते को राज्य का अधिकारी बनाया था। फिर भी लूई ने कुछ दूसरे ऐसे कार्य किये जिससे युद्ध होकर ही रहा।

(१) उसने फ्रांस की गद्दी पर फिलिप का अधिकार सुरक्षित रखा और इस आशय की घोषणा भी कर दी। उसने कहा था कि स्पेन और फ्रांस को अब पिरेनीज पहाड़ अलग नहीं कर सकता।

(२) उसने सीमा स्थित दुर्गों में से डच सैनिक निकालकर फ्रांसीसी सैनिक रख दिया। इससे हॉलैंड की स्वतन्त्रता खतरे में थी जिसका अर्थ था इंगलैंड पर भी संकट।

(३) वह इंगलैंड तथा हॉलैंड को क्षति पहुँचा कर अमेरिका के स्पेनिश उपनिवेशों के व्यापार पर स्वयं अधिकार करना चाहता था।

(४) उसने रिजविक की सन्धि की शर्तों के विरुद्ध भी कार्य करना शुरु किया।

१७०१ ई० में जेम्स द्वितीय की मृत्यु हो गयी। अतः लूई ने उसके पुत्र जेम्स तृतीय (ओल्ड प्रिटेंडर) को इंगलैंड का राजा स्वीकार कर लिया। इस प्रकार वह क्रान्ति जनित व्यवस्था को ही पलटने की कोशिश करने लगा।

लूई के इन मनमाने और स्वार्थपूर्ण कार्यों को स्वाभिमानी अंगरेज कब तक सह सकते थे। उनकी राष्ट्रीय भावना जाग्रत हो उठी और वे फ्रांस से युद्ध करने के लिये तैयार हो गये। वे स्पेन तथा फ्रांस के संयोग को रोककर दूसरी विभाजक सन्धि की शर्तों को कार्यान्वित करना चाहते थे। वे विप्लवी व्यवस्था को भी सुरक्षित रखना चाहते थे।

१७०२ ई० में युद्ध प्रारंभ हो गया। विलियम ने हॉलैंड तथा जर्मनी को मिला-कर फ्रांस के विरुद्ध एक संघ स्थापित किया था। लेकिन युद्ध में किसी तरह से भाग लेने से पहले ही वह मर गया। अतः रानी एन के गद्दी पर बैठते ही युद्ध चालू हो गया और करीब उसके शासनकाल तक (१७०२-१७१३) यह चलता रहा।

दलबन्दियाँ और युद्ध की संभावनाएं—फ्रांस, स्पेन और बवेरिया एक ओर थे। स्थल-सेना और धन की दृष्टि से फ्रांस का स्थान सुदृढ़ मालूम होता था। वह यूरोप में एक बड़ा ही शक्तिशाली राष्ट्र था। स्पेन तथा बवेरिया भी उसकी सहायता करने के लिये पूर्ण रूप से तैयार थे। स्पेनिश नीदरलैंड तो फ्रांस के अधीन था ही; हंगरी तथा इटली की सहानुभूति भी फ्रांस के साथ ही थी।

दूसरी ओर इंगलैंड, हॉलैंड, आस्ट्रिया और जर्मनी (कुछ रियासतों को छोड़कर) थे। १७०३ ई० में सेवाय तथा पुर्तगाल भी शामिल हो गये। इंगलैंड तथा पुर्तगाल के बीच एक अलग सन्धि हुई थी। यह सन्धि जौन मेथ्यून के प्रयास से हुई थी। अतः यह मेथ्यून सन्धि कही जाने लगी। जल-शक्ति की दृष्टि से मित्रराष्ट्रों का भविष्य उज्ज्वल था क्योंकि इसी पर युद्ध की सफलता निर्भर थी। मित्रराष्ट्रों की ओर एक बड़ा ही विलक्षण सेना नायक भी था जिसका कुछ विस्तारपूर्वक उल्लेख कर देना यहाँ आवश्यक प्रतीत होता है।

मार्लबरा—उसका नाम था जौन चर्चिल, जो ड्यूक ऑफ मार्लबरा के नाम से विशेष प्रसिद्ध है। उसका जन्म १६५० ई० में हुआ था। बचपन से ही युद्ध की ओर उसकी प्रवृत्ति थी। लेकिन खूबी यह है कि वह सैनिक तथा राजनीतिज्ञ दोनों ही था। फिर भी एक सफल सेनानी की हैसियत से ही वह इतिहास में अमर है। उससे कोई भी लोहा लेने का साहस नहीं करता था। कुछ लोगों के मत में वह इंगलैंड का ही नहीं बल्कि उस समय का सर्वश्रेष्ठ सेनापति था। वह बड़ी ही विलक्षणता से और सफलतापूर्वक युद्ध का संचालन करता था। तोपखाने के व्यवहार में

वह सिद्धहस्त था और शत्रुओं की कमजोरी परखने में उसकी दृष्टि तेज थी। वह संकट के समय धीर तथा शान्त रहता था। व्यूह-रचना में भी वह अपना सानी नहीं रखता था। एक लेखक के शब्दों में उसने कोई ऐसा युद्ध नहीं किया जिसमें वह विजयी नहीं हुआ और किसी ऐसे स्थान का घेरा नहीं डाला जिसे उसने ले न लिया हो। इसी योग्यता के फलस्वरूप वह सबों का प्रियपात्र बन गया था, यद्यपि व्यक्तिगत रूप से वह विलियम का शत्रु था, तो भी विलियम उसका प्रशंसक था और मरने के समय युद्ध के संचालन का कार्यभार उसी के हाथ में सौंपा गया।

लेकिन वह था तो मनुष्य ही, अतः उसमें कुछ दोष भी थे। वह स्वार्थी, लोभी और संकीर्ण प्रकृति का व्यक्ति था। उसमें निर्णयात्मक और निश्चित शक्ति का अभाव था; उसका कोई एक सिद्धान्त नहीं था। वह अवसरवादी था। बहिष्कार बिल के अवसर पर उसने जेम्स द्वितीय का पक्ष लिया था, लेकिन राजा होने के कुछ समय बाद वह जेम्स का विरोधी हो गया। अब वह विलियम का समर्थक बन गया। इस प्रकार उसने दो बार जेम्स से मित्रता की और उससे अलग हुआ। बाद में वह विलियम का भी विरोधी हो गया और उसके विरुद्ध लूई से कानाफूसी करने लगा। किन्तु वह लूई का भी पक्का मित्र न साबित हुआ। विलियम के ही समय में उसने एक ही साल में लूई के विरुद्ध दो षड़यन्त्रों में भाग लिया था। वह टोरी या ह्विग किसी का भी विश्वासपात्र नहीं था। उसने टोरी के रूप में अपना जीवन प्रारंभ किया और ह्विग के रूप में समाप्त किया।

इस प्रकार उसमें गुणों और अवगुणों का अद्भुत सम्मिश्रण था। इसलिये एक लेखक ने उसे 'मानव जाति का सर्वोत्तम तथा निम्नतम व्यक्ति' कहा है।

उसके उद्देश्य—उसके दो उद्देश्य थे। पूर्वकालीन युद्धों में वह स्पेनिश नीदरलैंड से फ्रांसीसियों को निकालना चाहता था। उत्तरकालीन युद्धों में उसका उद्देश्य था कि सीमान्त किलों को अपने अधिकार में कर फ्रांस के भीतरी प्रदेशों पर आक्रमण किया जाय। लेकिन बीच ही में वापस बुला लिये जाने के कारण वह अपने इन उद्देश्यों को पूरा करने में सफल न हो सका।

युद्ध के क्षेत्र—इंगलैंड के इतिहास में यह युद्ध बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। उस समय तक जितने बड़े युद्ध हुए थे उनमें इसका भी एक स्थान था। युद्ध के ४ मुख्य क्षेत्र थे—यूरोप, अमेरिका, अतलांतिक और भूमध्यसागर। यूरोप में भी चार केन्द्र थे—स्पेनिश नीदरलैंड, जर्मनी, इटली और स्पेन।

लड़ाई की प्रगति—ब्लेनहीम का युद्ध—प्रथम दो वर्षों में (१७०२-३ ई०) कोई बड़ी घटना न घटी। १७०४ ई० में मित्रराष्ट्रों की स्थिति संकटापन्न थी।

आस्ट्रिया की राजधानी वियना के लिये खतरा उपस्थित था। इस पर पश्चिम से बवेरिया के द्वारा तथा पूरब से हंगरी के द्वारा हमले का डर था। अतः यह संभव था कि सम्राट घबड़ाकर अपमानजनक संधि कर लेता। केवल मार्लबरा की सेना उसकी रक्षा करने में समर्थ हो सकती थी, किन्तु वह सेना तो डच सीमा की रक्षा करने के लिये नियुक्त की गई थी। अतः डच लोग उस सेना को छोड़ने के लिये कब तैयार हो सकते थे? इसके अलावा उस समय की सेना भी विशाल तथा मन्द गति वाली थी। लेकिन धन्य थी मार्लबरा की प्रतिभा! उसने इस नाजुक परिस्थिति को अपने काबू में कर लिया। वह डचों को प्रभावित कर अपनी सेना को राइन के निचले भाग से डैन्यूब के ऊपरी भाग में लाया। पश्चिम की ओर से मार्लबरा ने बवेरिया पर चढ़ाई कर दी। सेवाय के ड्यूक यूजेन ने भी अपनी सेना लेकर मार्लबरा का साथ दिया। अब मार्शल टैलर्ड के नेतृत्व में फ्रांस तथा बवेरिया की सेना भी युद्ध के लिये तत्पर हो गई। अगस्त १७०४ ई० में ब्लेनहीम में घोर युद्ध हुआ। मार्लबरा ने बड़ी ही खूबी के साथ तोपखाने का प्रयोग किया और युद्ध-कौशल दिखलाया। अतः मित्रराष्ट्रों की गौरवपूर्ण विजय हुई।

उसका महत्त्व—(१) अभी कहा जा चुका है कि अंगरेजों की यह गौरवपूर्ण विजय थी। उनके पक्ष की १००० से भी कम लोगों की जानें गईं। फ्रांसीसियों को बहुत हानि सहनी पड़ी। उनके दो सेनापति और १० हजार से अधिक सैनिक कैदी बनाये गये और कई युद्ध के सामान जब्त किये गये। खुले मैदान के युद्ध में पहले पहल लूई की यह हार हुई थी। उस ओर फ्रांसीसियों के हमले के भय का अन्त हो गया। उनकी प्रतिष्ठा में धब्बा लग गया और स्थल-युद्ध में उनकी अजेयता की स्थापित धाक मिट्टी में मिल गई।

(२) मार्लबरा को बहुत यश प्राप्त हुआ। उसका नाम प्रसिद्ध हो गया और इंगलैंड की खोई हुई प्रतिष्ठा फिर से जम गई।

(३) फ्रांसीसी लोग डैन्यूब पार खदेड़ दिये गये। इस प्रकार उनके आधिपत्य से आस्ट्रिया तथा जर्मनी की रक्षा हुई।

स्पेन में—अब मित्रराष्ट्रों का सितारा चमक उठा। विजय पर विजय होने लगी। मार्लबरा ने भूमध्यसागर के महत्त्व को समझा और रूक की अधीनता में १७०४ ई० में एक नौसेना भेजी गयी। अंगरेजों ने स्पेन से जिब्राल्टर को लेकर अपने अधिकार में कर लिया। इससे उन्हें बहुत फायदे हुए। भूमध्यसागर का प्रवेश-द्वार उनके हाथ में आ गया और भविष्य में मिश्र तथा लाल सागर पर अधिकार स्थापित करने के लिये रास्ता साफ हो गया।

नीदरलैंड में—दूसरे साल बार्सीलोना भी ले लिया गया। इसका श्रेय पिटरबरो के अर्ल को था। १७०६ ई० में नीदरलैंड में रैमेलिज का युद्ध हुआ। फिर दूसरी बार मार्लबरा ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया; मित्रराष्ट्र विजयी हुए और फ्रांसीसी नीदरलैंड से भगा दिये गये।

इटली में—इसी साल इटली में तूरीन की लड़ाई हुई जिसमें राजकुमार यूजेन ने फ्रांससियों के विरुद्ध विजय प्राप्त की। वह आस्ट्रिया की सेना का सेनापति था। अब फ्रांसीसी इटली से भगा दिये गये और वहाँ आर्क ड्यूक चार्ल्स का प्रभुत्व स्थापित हो गया।

अलमंजा का युद्ध—बार-बार की हार से फ्रांस ऊब-सा गया और लूई ने सन्धि करनी चाही, किन्तु मित्रराष्ट्रों ने न सुना। अब शत्रु भी लड़ने के लिये पुनः कटिबद्ध हो गये। १७०७ ई० में अलमंजा के युद्ध में मित्रराष्ट्रों की हार हुई और स्पेन की गद्दी पर फिलिप फिर से बैठाया गया। नीदरलैण्ड में भी फ्रांसीसियों ने बहुत से किलों को फिर से अपने कब्जे में कर लिया। इन घटनाओं से यह बात साबित हो गई कि फ्रांसीसी अभी पूरे कमजोर नहीं हुए थे।

ओडेनार्डे (१७०८ ई०) तथा मालप्लाके का युद्ध (१७०९ ई०)—लेकिन दूसरे ही साल नीदरलैण्ड में मार्लबरा और यूजेन ने ओडेनार्डे के युद्ध में विजय प्राप्त की और खोये हुए किलों को पुनः अपने अधिकार में कर लिया। अन्त में प्रमुख फ्रांसीसी किला—फ्रांसीसी फ्लैंडर्स की कुंजी–लील–भी मित्रराष्ट्रों के कब्जे में आ गया। लूई ने फिर दूसरी बार सुलह की बातचीत की। फिलिप के लिये केवल नेपुल्स तथा मिलान को ही लेकर वह सब कुछ त्याग देने को तैयार था। लेकिन मित्रराष्ट्रों ने एक कठिन शर्त लगा दी। वे चाहते थे कि यदि स्पेनवासी आर्क ड्यूक को अपना राजा मानने में आनाकानी करे तो स्पेन से फिलिप को निकालने में लूई भी सेना के द्वारा सहायता करे। लूई ने इस शर्त को कबूल नहीं किया। अतः युद्ध चलता रहा। १७०९ ई० में मालप्लाके (नीदरलैण्ड) में भीषण संघर्ष हुआ। अंत में विजय तो मार्लबरा की हुई, लेकिन बड़ी हानि उठाने के बाद। इस युद्ध में उसके धन-जन की अपार क्षति हुई। यह उसकी अन्तिम विजय रही।

अंगरेजी तथा यूरोपीय परिस्थिति में परिवर्तन (१७१०–११ ई०)—१७१० ई० से परिस्थिति में भारी परिवर्तन होने लगा। मित्रराष्ट्रों के एक सेनापति स्टैनहोप ने मैड्रिड को अपने अधिकार में किया था, लेकिन कुछ समय के बाद उसकी हार हो गई। उसे शत्रु के सामने झुकना पड़ा। अब स्पेन में फिलिप की धाक जम गई और वही यहाँ का राजा रहा। सिर्फ एक स्थान कैटोलोनियाँ के निवासी अभी

उसके विरोधी थे। इसी समय इंगलैण्ड में ह्विग मंत्रिमंडल का पतन हो गया और टोरी मंत्रीमंडल का आगमन हुआ। यह नया मंत्रिमंडल युद्धविरोधी था। टोरी तो युद्ध के विरुद्ध पहले से थे ही, मालप्लाके की क्षति से वे और भी बेचैन हो गये। अब उन्होंने लड़ाई समाप्त करने के लिये दृढ़ निश्चय कर लिया। मार्लबरा को पदच्युत कर दिया गया, उसके स्थान पर औरमौन्ड के ड्यूक को नियुक्त किया गया तथा उसे युद्ध में सक्रिय भाग न लेने का आदेश दिया गया। अब मित्रराष्ट्रों में सुस्ती आ गई तथा उसके सैनिक हतोत्साह हो गये।
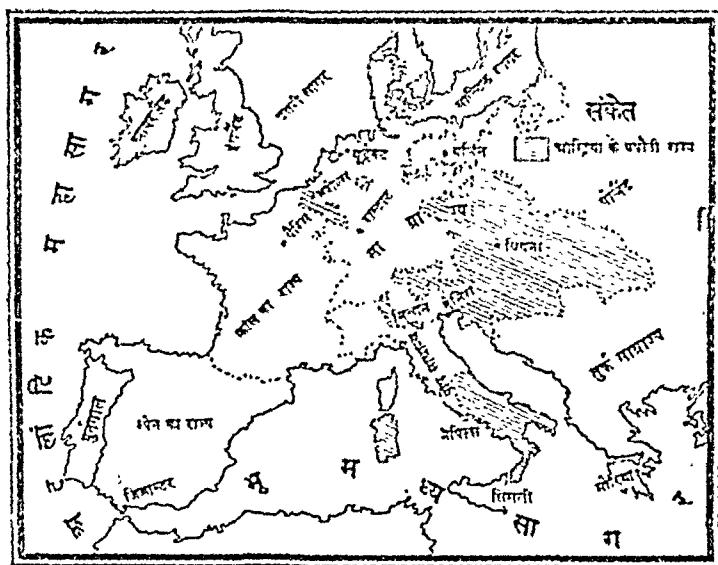
(पश्चिमी यूरोप और यूट्रेक्ट की सन्धि १७१३ ई०)

यूट्रेक्ट की सन्धि (१७१३ ई०)—इसी समय आस्ट्रिया का राजकुमार आर्क ड्यूक चार्ल्स, जिसे मित्रराष्ट्र स्पेन की गद्दी पर बिठाना चाहते थे, सम्राट के पद पर आसीन हो गया। अब उसका पक्ष लेना शक्ति संतुलन की नीति के विरुद्ध होता। अतः १७१३ ई० में इंगलैण्ड तथा हौलैण्ड ने फ्रांस तथा स्पेन से यूट्रेक्ट की सुलह कर ली। लेकिन दूसरे ही साल फ्रांस तथा आस्ट्रिया के बीच भी रास्टाट की सन्धि हुई।

उसकी शर्तें—सन्धि के अनुसार निम्नाङ्कित बातें तय हुईं :-

(१) फिलिप स्पेन तथा स्पेनिश अमेरिका का राजा स्वीकार किया गया, किन्तु फ्रांस की गद्दी के अधिकार से उसे वंचित कर दिया गया।

(२) आर्क ड्यूक चार्ल्स को इटली के स्पेनिश प्रदेश (नेपुल्स, मिलान और सार्डिनियाँ) तथा नीदरलैंएड मिले। लेकिन एक बेरियर सन्धि के द्वारा सीमान्त किलों में अपनी सेना रखने के लिये डचों को अधिकार दे दिया गया। इसके अलावा उनकी व्यापारिक प्रगति के लिये शेल्ट नदी दूसरे राष्ट्र के लिये बन्द कर दी गई।

(३) सेवाय के ड्यूक को राजा की पदवी के साथ सिसली दे दिया गया।

(४) ब्रिटेन को फ्रांस से अमेरिका में नोवास्कोशिया तथा न्यूफाउडलैंएड और स्पेन से यूरोप में जिब्राल्टर तथा माइनोर्का मिले।

स्पेन ने ब्रिटेन को स्पेनिश अमेरिका में गुलामों के व्यापार का एकाधिकार दे दिया और दक्षिणी अमेरिका में पोर्टोबेलो नामक बन्दर में प्रति वर्ष एक जहाज भेजने की आज्ञा दे दी।

फ्रांस सहित यूरोप के राज्यों ने इंगलैंएड में रानी एन के बाद हैनोवर वंश के उत्तराधिकार को स्वीकार कर लिया।

यूट्रेक्ट की सन्धि का महत्त्व—यूट्रेक्ट की सन्धि बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है। इसने यूरोप तथा इंगलैएड के इतिहास में युगान्तर उपस्थित कर दिया।

यूरोप के लिये—यह सन्धि फ्रांस के लिये विघातक सिद्ध हुई। इसने लुई की महत्वाकांक्षाओं को मिट्टी में मिला दिया। इसके दूसरे ही साल उसकी मृत्यु हो गई। वह फ्रांस को यूरोप का सर्वश्रेष्ठ राष्ट्र बनाना चाहता था और स्पेन के राज्य को हड़प लेने के लिये उसकी प्रबल इच्छा थी। उसका पोता फिलिप स्पेन का राजा तो स्वीकार कर लिया गया किन्तु अब वह फ्रांस का राजा नहीं हो सकता था। इस प्रकार स्पेन तथा फ्रांस के राज्य अलग रखे गये।

किन्तु फ्रान्स के साथ व्यापार करने में मित्रराष्ट्रों ने सज्जनता दिखलाई। पराजित होने पर भी उसके साथ कठोर तथा असमानजनक व्यवहार नहीं किया गया, जिससे भविष्य में बदला लेने की भावना पैदा होती। लेकिन स्पेन में कैटोलोनियाँ के निवासियों के साथ मित्रराष्ट्रों का व्यवहार न्यायपूर्ण नहीं रहा। ये लोग अन्त तक बड़ी ही निर्भयतापूर्वक मित्रराष्ट्रों का पक्ष लेते रहे थे, फिर भी इन्हें फिलिप की इच्छा पर छोड़ दिया गया और इनकी रक्षा के लिये कोई विशेष शर्त नहीं लगाई गई।

युद्ध में आस्ट्रिया के प्रवेश का प्रधान उद्देश्य यह था कि स्पेन के राज्य का उत्तराधिकार बोर्बन वंश को न मिले। उसका यह उद्देश्य तो पूरा न हुआ, किन्तु

स्पेनिश प्रदेशों को पाकर यह इटली में प्रबल राष्ट्र हो गया। किन्तु इटली में सेवाय की भी प्रधानता स्थापित हो गई और यहाँ एक नये राजवंश का प्रादुर्भाव हुआ जिसके नेतृत्व में आगे चलकर इटली में एकता स्थापित हुई।

डचों को अपनी सीमा की रक्षा करने के लिये अधिकार मिल गया, लेकिन बेल्जियम के लिये कुछ न हुआ। इसे भी हॉलैंड की रक्षा के लिये एक साधनमात्र ही समझा गया। शेल्ट नदी की यातायात पर प्रतिबन्ध लगाने से इसके प्रसिद्ध बन्दर ऐन्टवर्थ की प्रगति रुक गई।

इस सन्धि से स्पेन को नवजीवन प्राप्त हो गया। स्पेनी राज्य का टुकड़ा-टुकड़ा न हुआ और अब उसका पुनरोत्थान होने लगा। फिर भी स्पेन का सम्पूर्ण राज्य सुरक्षित न रह सका, जो स्पेनवासी चाहते थे।

सब से बड़ी बात यह हुई कि प्रादेशिक प्रबन्ध के द्वारा यूरोप में शक्ति संतुलन के सिद्धान्त की रक्षा की गई।
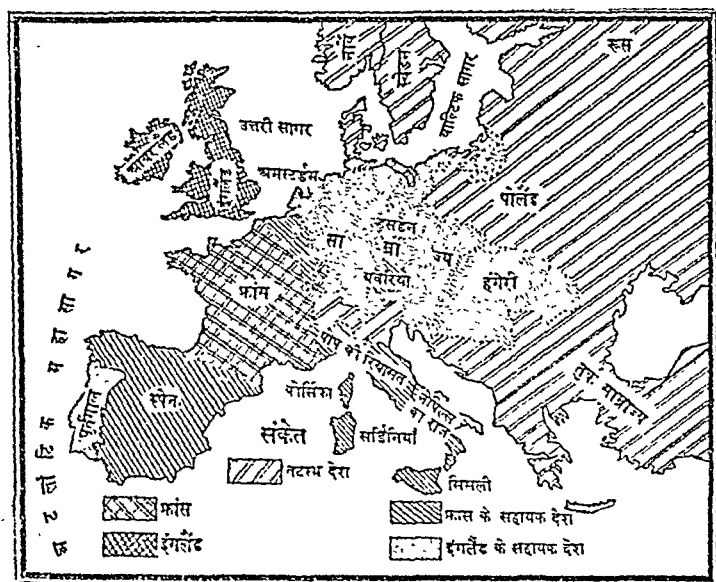
१७०२ ई० में पश्चिमी यूरोप

इंगलैंड के लिये—ह्विगों ने यह शिकायत की थी कि यह सन्धि करके टोरियों ने अंगरेजी राष्ट्र के स्वार्थ में बहुत बड़ा धक्का पहुँचाया। किन्तु उनके इस कथन में पूरी सत्यता नहीं है। अंगरेजों को इस सन्धि से अनेकों महत्वपूर्ण लाभ हुए।

युद्ध में प्रवेश करने में इंगलैंड के तीन प्रधान उद्देश्य थे। (१) यूरोप में शक्ति संतुलन के सिद्धान्त को कायम रखना, (२) विप्लवी व्यवस्था की रक्षा करना और (३) इंगलैंड की औपनिवेशिक, व्यापारिक तथा सामुद्रिक प्रधानता को सुदृढ़ करना। यूट्रेक्ट की सन्धि के द्वारा ये तीनों उद्देश्य पूरे हो गये।

इसके अन्तिम उद्देश्य की पूर्ति में अद्भुद सफलता प्राप्त हुई। यह विश्व में प्रधान समुद्री तथा व्यापारिक राष्ट्र बन गया। न्यूफाउंडलैंड तथा नोवास्कोशिया पर अधिकार होने से सेंट लारेंस नदी के दोनों मुहाने से सम्बन्ध स्थापित हो गया। जिब्राल्टर और माइनोर्का कब्जे में आने से भूमध्यसागर पर अधिकार हो गया। जिब्राल्टर तो 'भूमध्यसागर का द्वार' ही था। अब पूरबी देशों में आवागमन के लिये आसान रास्ता प्राप्त हो गया। गुलामों के व्यापार का एकाधिकार तथा प्रत्येक वर्ष एक व्यापारी जहाज भेजने का अधिकार आर्थिक दृष्टि से बड़ा ही लाभप्रद हुआ। इंगलैंड के इन लाभों को ध्यान में रखते हुए एक इतिहासकार ने कहा है 'यदि आर्मेडा के समय इंगलैंड ने औपनिवेशिक विस्तार के लिये दौड़ प्रारम्भ की तो यूट्रेक्ट की सन्धि के समय उसकी जीत हो गई।' इसका आशय यह है कि स्पेनिश आर्मेडा की हार के समय इंगलैंड की औपनिवेशिक प्रगति शुरू हुई और यह यूट्रेक्ट की सन्धि के द्वारा पूरी हो गई, यानी इंगलैंड को विस्तृत साम्राज्य प्राप्त हो गया। लेकिन यह कथन शत प्रतिशत सत्य नहीं है। औपनिवेशिक इतिहास में इस सन्धि ने निश्चय ही युग-परिवर्तन कर दिया, फिर भी इससे इंगलैंड की निस्सन्देह औपनिवेशिक प्रधानता नहीं स्थापित हो गई। अभी उसके मार्ग में रोड़े थे। अतः यह कहना ठीक है कि यूट्रेक्ट की सन्धि के द्वारा उपनिवेश विस्तार के लिये आर्मेडा के समय जो दौड़ प्रारम्भ हुई, उसमें इंगलैंड ने विशेष प्रगति प्राप्त की; किन्तु १७६३ ई० में पेरिस की सन्धि के समय उसकी पूरी जीत हो सकी।

अध्याय १८

स्कॉटलैंड ६०१३-१७१४ ई०

दोनों देशों के बीच पुरानी शत्रुता—इंगलैंड और स्कॉटलैंड के संयोग करने का विचार १७ वीं सदी में ही नहीं पैदा हुआ था बल्कि यह पुराना विचार था। स्कॉटलैंड इंगलैंड के उत्तर में स्थित है और दोनों देशों में बहुत पहले से शत्रुता चली आ रही थी। स्कटॉलैंड इंगलैंड के दुश्मन का बराबर साथ देता था और दोनों देशों की सीमा पर निरन्तर लड़ाई-झगड़े हुआ करते थे। अतः तेरहवीं सदी में ही सर्वप्रथम एडवर्ड प्रथम ने दोनों देशों के संयोग के विषय में सोचा। ट्यूडर राजवंश के पहले राजा हेनरी सप्तम ने अपनी पुत्री मार्ग्रेट का विवाह स्कॉटलैंड के जेम्स चतुर्थ के साथ कर दिया। हेनरी का उद्देश्य यह था कि स्कॉटलैंड इंगलैंड के विरुद्ध फ्रांस की सहायता न करे, लेकिन उसका उद्देश्य पूरा न हुआ। पारस्परिक विरोध और युद्ध चलता रहा। फिर भी दोनों देशों के बीच वैवाहिक सम्बन्ध तो स्थापित हो ही गया था। हेनरी अष्टम के समय दोनों देशों में धार्मिक निकटता भी स्थापित हो गयी। अतः १६०३ ई० में एलिज़ावेथ के मरने पर स्कॉटलैंड का जेम्स छठा जेम्स प्रथम के नाम से इंगलैंड की गद्दी पर आसीन हुआ। वह अपने देश में स्टुअर्ट घराने का आदमी था। अतः इंगलैंड में स्टुअर्ट राजवंश का राज्य स्थापित हुआ।

इस प्रकार १६०३ ई० में दोनों देशों का राजमुकुट एक हो गया और जेम्स अब ग्रेटब्रिटेन का राजा कहा जाने लगा।

कमजोरी और उसके दूर करने की कोशिश—लेकिन इस बात को नहीं भूलनी चाहिये कि जो संयोग स्थापित हुआ वह व्यक्तिगत संयोग था। दोनों के रस्म-रिवाज तथा व्यवस्थायें, कानून तथा नियम अलग-अलग रहे। ऐसा संयोग कमजोर था जो किसी भी समय टूट सकता था, अतः जेम्स इसे और दृढ़ करना चाहता था। लेकिन इसके लिये स्कौटिश या अंगरेजी जनता कोई भी तैयार नहीं थी। जेम्स कितने ही अंगरेजी रस्म-रिवाजों का समर्थक था और उन्हें स्कॉटलैंड में प्रचलित करना चाहता था। लेकिन एक

स्कौटिश राजा के द्वारा इस तरह का आचरण स्वाभिमानी स्कौटों के लिये सत्य नहीं था। अंगरेज भी विशेष संयोग के पक्षपाती नहीं थे, क्योंकि वे तो स्वभाव से ही अचानक और अधिक परिवर्तन के विरोधी होते हैं; इसके सिवा वे स्कौटिश होने से जेम्स के प्रति सशंकित थे। जेम्स इस स्थिति से परिचित था। अतः उसने अंगरेजी पार्लियामेंट के सामने बहुत ही
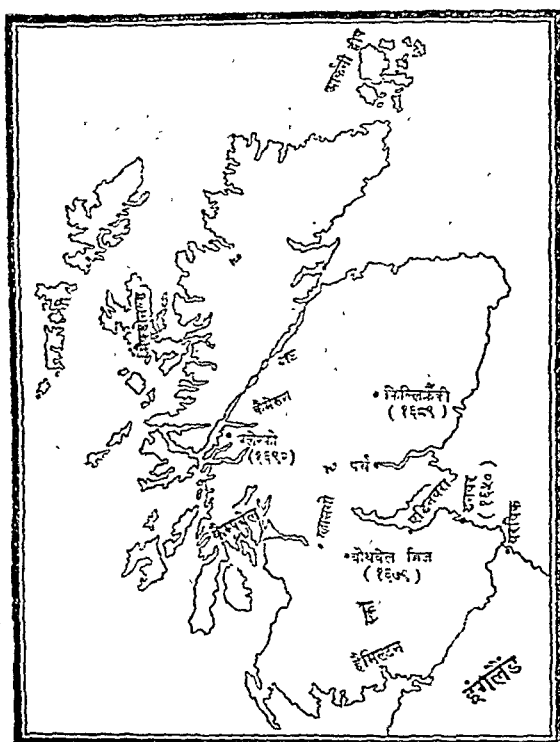
सत्रहवीं सदी में स्कौटलैंड।

साधारण प्रस्तावों को रखा। उसने व्यापारिक स्वतन्त्रता तथा अंगरेज और स्कौट के बीच अधिकारों की समानता के लिये माँग पेश की। पार्लियामेंट ने दोनों को अस्वीकार कर दिया। लेकिन जजों के निर्णय के द्वारा उसकी एक माँग पूरी हुई। उसके राज्याभिषेक के बाद से पैदा होने वाले स्कौटों को अंगरेज नागरिक के अधिकार दे दिये गये। यानी अब वे दोनों देशों के नागरिक बन गये। इस तरह जेम्स यद्यपि अपने उद्देश्य में असफल रहा, फिर भी अब दोनों देशों में बहुत कुछ एकता स्थापित हो

गयी। अब एक का दूसरे के विरुद्ध सहयोग देना सहज बात न रही। एक ही राजा की अधीनता में आ जाने से दोनों देशों के लोगों में सहयोग की भावना का विकास होना स्वाभाविक बात हो गयी।

स्कॉटलैंड में सत्ता जमाने की चेष्टा—जेम्स पहले अपने देश में निरंकुश शासक नहीं था। वहाँ वह कुलीनों या सरदारों के हाथ का खिलौना था। वहाँ उसकी मनमानी नहीं चलती थी, किन्तु अब परिस्थिति बदल गयी। जेम्स अब स्कॉटलैण्ड का भी निरंकुश शासक बन गया। स्कौटिश चर्च में प्रेस्बिटेरियन व्यवस्था स्थापित थी। यह प्रजातन्त्र के आधार पर स्थित थी। इसकी एक सभा थी जिसे लोक-परिषद् कहा जाता था। चर्च की सीमा से बाहर भी इसकी धाक जमी हुई थी। अतः जेम्स पार्लियामेंट के जरिये इसे कुचल डालने की ताक में था।

पार्लियामेंट तथा प्रिवी कौंसिल पर नियंत्रण—स्कौटिश पार्लियामेंट एक सामन्तवादी संस्था थी, जिसमें सरदारों का प्रभाव था। इसे अपने अधिकार में लाने के लिये जेम्स ने पूरी कोशिश की। इसके चुनाव पर उसने अपना प्रभाव कायम किया। २४ व्यक्तियों की एक समिति थी जो 'लौर्ड्स ऑफ दी आर्टिकिल्स' के नाम से प्रसिद्ध थी। इन सदस्यों को चुनने का अधिकर जेम्स को प्राप्त हो गया। पार्लियामेंट इस समिति के नियन्त्रण में रहती थी। अतः पार्लियामेंट पर जेम्स का पूरा दबदबा कायम हो गया। स्कॉटलैंड के शासन में प्रिवी कौंसिल भी एक प्रमुख संस्था थी। इसके सदस्यों की भी नियुक्ति क्रमशः जेम्स के हाथ में चली आई।

धार्मिक क्षेत्र में नियंत्रण की चेष्टा—इस तरह जेम्स ने राजनीति क्षेत्र में नियंत्रण स्थापित किया। अब वह धार्मिक क्षेत्र में भी ऐसा ही करना चाहता था। लेकिन इधर विशेष कठिनाई थी। लोक-परिषद् स्कौटों की गणतन्त्रात्मक और प्रिय संस्था थी। वे अपनी व्यवस्था के लिये पूरे कट्टर थे और राज्य के द्वारा किसी प्रकार की बाधा नहीं सह सकते थे। फिर भी जेम्स ने साहस नहीं छोड़ा और बड़ी दृढ़तापूर्वक अपना कार्य करता रहा।

१६१० ई० तक तो उसने लोक-परिषद् के अधिवेशन पर रोक लगा रखा था और माँग करने वालों को कड़ी सजा देता था। उसी साल ग्लासगो में परिषद् का एक अधिवेशन हुआ जिसमें जेम्स के ही कृपापात्र भरे थे। इसके दो वर्ष के अन्दर स्कॉटलैंड में बिशप व्यवस्था स्थापित हो गयी। १६१८ ई० में पर्थ की परिषद् में 'पर्थ के ५ विधान' के नाम से कुछ नियम बने। इन्हें पास करने के लिये सदस्यों को भय और घूस के द्वारा विवश किया गया था। इन विधानों के द्वारा वहाँ के पूजा-पाठ की रीतियों में इङ्गलैंड के आधार पर परिवर्तन किया गया।

इस प्रकार जेम्स ने स्कॉटलैंड में अपना आधिपत्य स्थापित किया। उसे काफी सफलता प्राप्त हुई। उसने स्वयं एक बार गर्वपूर्वक कहा था, "कौंसिल के एक क्लर्क द्वारा मैं स्कॉटलैण्ड पर शासन करता हूँ जो दूसरे लोग तलवार के द्वारा भी नहीं कर सके।" उसकी इस सफलता का यह रहस्य था कि उसने स्कौटों की परंपरागत संस्थाओं को घृणा तथा उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखा, बल्कि अपने सभी कार्यों पर उन्हीं की मुहर लगा दी।

चार्ल्स प्रथम की नीति—जेम्स का पुत्र चार्ल्स प्रथम (१६२५–१६४६ ई०) ने अपने पिता के ही पद-चिह्नों का अनुसरण करना चाहा। स्कौटिश संस्थाओं को अंगरेजी संस्थाओं के साँचे में ढालने की उसकी प्रबल इच्छा थी। धार्मिक क्षेत्र की ओर वह विशेष आकर्षित था।

धार्मिक अत्याचार—१६३६ ई० तक वह अपने कई कार्यों के कारण अपनी लोकप्रियता खो चुका था। कैथोलिक कुमारी के साथ विवाह करने से स्कौट नाखुश थे। धर्म-सुधार के समय से बहुत से सरदारों को चर्च की भूमि मिली हुई थी। चार्ल्स ने उस भूमि को लौटाने की चेष्टा की जिससे सभी सरदार उससे असन्तुष्ट हो गये। वह इस भूमि को लेकर बिशपों को देना चाहता था। बिशपों के अधिकार में भी बहुत वृद्धि कर दी गयी थी। १६३३ ई० में विलियम लॉड के साथ चार्ल्स स्कॉटलैंड में गया था। वहाँ भी इसका विधिवत् राज्याभिषेक हुआ; इस समय कुछ ऐसे रस्म-रिवाजों का प्रयोग हुआ जिन्हें स्कौट नापसन्द करते थे। पर्थ के ५ विधान कार्यान्वित किये गये थे। दूसरे वर्ष लोक-परिषद् या पार्लियामेंट की बिना सम्मति के ही उसने एक हाई कमीशन कोर्ट स्थापित कर दिया। इसे पूरा अधिकार भी दे दिया गया। वैसे ही १६३५ ई० में उसने एक धर्म-ग्रन्थ प्रकाशित किया जिसके आधार पर चर्च का शासन होता और उसके नियम बनते। इसी समय बिशपों के विरुद्ध एक पुस्तक लिखने के कारण एक स्कौट वैद्य को बड़ा ही कड़ा दण्ड दिया गया।

चार्ल्स को अब तक की कार्रवाइयों से सन्तोष नहीं हुआ था। अतः १६३७ ई० में उसने और आगे कदम बढ़ाया, किन्तु उसने स्कौटों की नाड़ी नहीं पहचानी। उसने एक प्रार्थना-पुस्तक को प्रचलित किया जो कुछ परिवर्तनों के साथ अंगरेजी पुस्तक के आधार पर तैयार की गयी थी। लेकिन इसकी तैयारी में लॉड का हाथ था जिसे स्कौट पोप का अनुयायी समझते थे। चार्ल्स के इस काम से कितने स्कौटों का खून गर्म होने लगा और वे कड़े शब्दों में पुस्तक की आलोचना करने लगे। एक समकालीन के शब्दों में यह पोपिश-इङ्गलिश-स्कौटिश-जन-उपासना पुस्तक थी।

स्कौटों का विद्रोह तथा राष्ट्रीय प्रतिज्ञा-पत्र—एडिन्बरा के सेन्ट गाइल्स चर्च

में जब इस पुस्तक से प्रार्थना पढ़ी जाने लगी तब मार-दंगा शुरू हो गया। यही हालत सर्वत्र रही। पादरियों ने पुस्तक का उपयोग करने से इन्कार कर दिया और कुलीन सरदारों ने भी इनका साथ दिया। चार वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाली चार कमिटियाँ स्थापित हुईं जो राजा के विरुद्ध स्कॉटलैण्ड में शासन करने लगीं। अब बिशप-व्यवस्था ही के विरुद्ध आवाज उठने लगी। कमेटियों की ओर से यह माँग हुई कि चार्ल्स अपने सभी परिवर्तनों को वापस ले ले। लेकिन उसने इन्कार किया। तब बहुत से स्कौटों ने अपने धर्म की रक्षा करने के लिये एक कागज पर हस्ताक्षर किये जो राष्ट्रीय प्रतिज्ञा-पत्र (कोविनेन्ट) के नाम से प्रसिद्ध है।

ग्लासगो की बैठक—अब चार्ल्स को एक संयुक्त राष्ट्र की शक्ति का सामना करना पड़ा जिसके लिये वह तैयार नहीं था। उसके सामने विकट परिस्थिति उपस्थित थी। अब वह कमेटियों की माँगों को स्वीकार करने के लिये राजी हो गया तथा एक स्वतन्त्र परिषद् और पार्लियामेंट की बैठक के लिये आज्ञा दे दी। लेकिन अब बहुत देर हो चुकी थी। नवम्बर १६३८ ई० में लोक-परिषद् की बैठक तो हुई सही, किन्तु फल हुआ उसकी आशा के प्रतिकूल। इस बैठक में केवल कोविनेन्टर ही उपस्थित थे जो राजा के विरोधी थे। इसका विद्रोही रुख देखकर राजा ने इसे बरखास्त करने की आज्ञा दी। लेकिन राजा की आज्ञा की किसको परवाह थी? परिषद् ने उल्टे यह घोषणा कर दी कि चर्च के मामले में हस्तक्षेप करने का राजा को कोई अधिकार ही नहीं है। बैठक होती रही और इसने राजा के द्वारा किये गये सभी परिवर्तनों को समाप्त कर दिया। पर्थ के पाँच-विधान तथा धर्म-ग्रन्थ और प्रार्थना-पुस्तकें हटा दी गईं, बिशप-व्यवस्था उठा दी गयी और प्रेस्बिटेरियन धर्म को फिर प्रचलित किया गया।

पादरियों का प्रथम युद्ध—राजा ने परिषद् के इन कार्यों को स्वीकार नहीं किया और १६३९ ई० में युद्ध छिड़ गया जो पादरियों के प्रथम युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें राजा की पार्टी कमजोर थी; उसकी सेना शिक्षित तथा सुसज्जित नहीं थी। किन्तु स्कौट सेना अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित थी और उसका सेनापति लेस्ली योग्य था। स्कौटों में राष्ट्रीय उत्साह भी भरा हुआ था। अतः वार्विक के सन्धि के अनुसार चार्ल्स को युद्ध शीघ्र ही समाप्त करना पड़ा। उसने सभी स्कौटिश मामलों का निर्णय फिर परिषद् को ही सौंप दिया।

एडिनबरा की बैठक (अगस्त १६३९ ई०)—तदनुसार परिषद् की बैठक ऐडिनबरा में हुई। इसने ग्लासगो-सभा के सभी कार्यों का समर्थन किया। इतना ही नहीं, इसने प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करना सम्पूर्ण राष्ट्र के लिये अनिवार्य कर दिया।

पादरियों का द्वितीय युद्ध (१६४० ई०)—शौर्ट पार्लियामेंट (अप्रैल १६४०

ई०)—लौंग पार्लियामेंट नवम्बर (१६४० ई०)—अब चार्ल्स को असीम क्रोध हुआ और दूसरा युद्ध करने के लिये उसने ठान ली। अतः १६४० ई० में पादरियों का दूसरा युद्ध शुरू हो गया। लेकिन युद्ध के लिये धन की आवश्यकता थी। इसी समय चार्ल्स ने वेन्टवर्थ को आयरलैंएट से बुला लिया था। उसी की राय से चार्ल्स ने अप्रेल में एक पार्लियामेंठ बुलायी। परन्तु पार्लियामेंट ने अपनी शिकायतों को दूर करने की मांग पेश की और युद्ध में शिथिलता दिखलायी। अतः तीन ही सप्ताह के बाद चार्ल्स ने इसे भंग कर दिया। किन्तु युद्ध से मुंह नहीं मोड़ा। न्यूबर्न में अंगरेजों की हार हुई और स्कौट यौर्क तक बढ़ आये। अब युद्ध बन्द करना पड़ा; रिपन की संधि हुई। स्कौटों को ८५० पौंड प्रतिदिन के हिसाब से खर्च देना चार्ल्स को स्वीकार करना पड़ा। इस आर्थिक समस्या को हल करने के लिये उसने यौर्क में सरदारों की एक सभा बुलायी जिसकी राय से नवम्बर में लौंग पार्लियामेंट बुलायी गयी। पार्लियामेंट ने निश्चित रकम देकर स्कौटों को विदा कर दिया।

स्कॉटलैंड में चार्ल्स का आगमन (अगस्त १६४१ ई०)—किन्तु चार्ल्स और स्कौटों के बीच की सभी बातों का अन्त न हुआ था। अतः दूसरे वर्ष के अगस्त महीने में चार्ल्स स्कौटलैंएड गया। वहाँ उसने स्कौटों के साथ सन्धि कर उनकी प्रायः सभी बातों को मान लिया। अब मौन्ट्रोज के पथ-प्रदर्शन में राजा के पक्ष में एक दल कायम हो गया।

इस तरह स्कौटिश विद्रोह इतिहास में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण घटना है। इसी की बदौलत चार्ल्स के अनियन्त्रित शासन का खात्मा हो गया और इंगलैंएड को अपनी परम्परागत पार्लियामेन्टरी संस्था प्राप्त हो सकी।

गृह-युद्ध और पार्लियामेंट को स्कौटों की सहायता (१६४२–४६ ई०)—दूसरे साल १६४२ ई० में राजा और पार्लियामेंट के बीच गृह-युद्ध प्रारम्भ हो गया। पार्लियामेंट तथा स्कौटों के बीच "सौलेम लीग ऐंड कोविनेन्ट" नाम की एक सुलह हुई। इसके अनुसार स्कौटों ने पार्लियामेंट की सहायता करने के लिये और पार्लियामेंट ने इंगलैंएड में प्रेस्बिटेरियन धर्म को कायम करने के लिये प्रतिज्ञा की। स्कौटों ने २०,००० सेना के साथ इंगलैंएड पर चढ़ाई कर दी और उन्हीं की बदौलत १६४४ ई० में मार्सटनमूर के युद्ध में पार्लियामेंट की महान विजय हुई।

स्कौटलैंएड में राज-पक्ष का उत्थान एवं पतन—तब तक स्कौटलैंएड में राजा की ओर से मौन्ट्रोज के अर्ल ने विद्रोह मचा दिया। आर्गिल सरकार को वह तंग करने लगा। हाईलैंएड में उसे अद्भुत सफलता मिली और वह लोलैंएड पर भी हमला करने की बात सोचने लगा। चार्ल्स की आशा उसी पर केन्द्रित थी, क्योंकि इंगलैंएड

में उसकी हार पर हार हो रही थी। १६४५ ई० नेजवी की लड़ाई के वाद जिसमें चार्ल्स की हार हुई थी, मौन्ट्रोज ने लोलैंएड को भी अपने अधिकार में कर ही लिया। अब वहइंगलैंएड पर भी आक्रमण करने का स्वप्न देखने लगा। लेकिन भाग्य ने अचानक पलटा खाया, स्थिति बदल गयी। हाईलैंएड की सेना आगे बढ़ना नहीं चाहती थी। उसकी शक्ति कमजोर पड़ गयी और फिलिपहाफ के युद्ध में उसकी करारी हार हो गयी। अतः अब वह देश ही छोड़ कर कहीं भाग गया।

स्कौटों को चार्ल्स का आत्मसमर्पण और उनसे गुप्त संधि—इधर राजा के साथ लड़ाई चलती रही, परन्तु मई १६४६ ई०में नेवार्क में उसे भी स्कौटिश सेना के सामने झुकना पड़ा। सेना राजा को लेकर न्यूकैसल में पहुँची। राजा सेना की सहायता पाने की कोशिश करने लगा, लेकिन सेना चाहतो थी कि वह इंगलैंएड में प्रेस्बिटेरियन धर्म कायम करने की प्रतिज्ञा करें। चार्ल्स ने ऐसा नहीं किया तब स्कौट सेना ने एक बड़ी रकम लेकर उसे पार्लियामेंट के श्री हाथ छोड़ दिया और फरवरी १६४७ ई० में अपने देश में चली आयी। लेकिन अभी मामला समाप्त नहीं हुआ। इंगलैंएड में इन्डिपेन्डेन्टों का प्रभाव देखकर स्कौटलैंएड में चार्ल्स के कुछ समर्थक हो गये थे और इससे उत्साहित होकर वह एक वार (नवम्बर में) कैद से भाग गया; यद्यपि वह पकड़ लिया गया। उसने स्कौदों के साथ एक गुप्त सन्धि कर लीं थी। इसके द्वारा चार्ल्स ने ३ वर्ष के लिये प्रेस्बिटेरियन धर्म प्रचलित करने की और स्कौटों ने उसे गद्दी दिलाने की प्रतिज्ञा की।

इंगलैंड पर स्कौटों की दूसरी चढ़ाई और उनकी हार १६४८ ई०—(ख) प्रजातंत्र और राज्य पुनर्स्थापन काल में स्कौटलैएड १६४९–८८ ई०—इस तरह १६४८ ई० में स्कौटों ने दूसरी बार इंगलैंएड पर चढ़ाई कर दी। इसे दूसरा गृह-युद्ध कहते हैं। हैमिल्टन के नेतृत्व में एक सेना भेजी गयी। किन्तु इस वार सैनिकों में पुराने राष्ट्रीय जोश तथा सामानों का आभाव था। ऐसी सेना को क्रौमवेल का सामना करना पड़ा। फलस्वरूप इसकी बुरी तरह हार हुई। इसके वाद क्रौमवेल ने स्कौटलैंएड पर जाकर प्रेस्बिटेरियनों के नेता अर्जिल का आधिपत्य कायम कर दिया। अब चार्ल्स की समूची आशाओं पर पानी फिर गया और इसके कुछ दिनों वाद, जनवरी १६४६ ई० में उसको फांसी ही हो गयी।

प्रजातंत्रकाल में (१६४९–६० ई०) तथा डनवर (३ सितम्बर १६५० ई०)—वोरसेस्टर की लड़ाई—(३ सितम्बर १६५१ ई०)—इस प्रकार १६४६ ई० में इंगलैंड में प्रजातन्त्र राज्य स्थापित हुआ। स्कौटों को इससे कोई खुशी नहीं हुई। अब तक प्रेस्बिटेरियन धर्म स्थापित न होने से तथा युद्ध में हार जाने से स्कौट असंतुष्ट

और क्रुद्ध थे। चार्ल्स की निर्भय हत्या से उनके असन्तोष तथा क्रोध और भी बढ़ गये क्योंकि चार्ल्स भी तो स्कौट राजवंश का ही एक व्यक्ति था। चार्ल्स प्रथम के एक पुत्र था जो देश-निर्वासित था। स्कौट ने उसी के पक्ष में एक आन्दोलन शुरू किया। कुछ समय तक मौन्ट्रोज ने उसका पक्ष लिया था, लेकिन वह हार गया और उसे कत्ल कर दिया गया। तब स्कौटों की शर्त मान लेने पर चार्ल्स के पुत्र को चार्ल्स द्वितीय के नाम से राजा स्वीकार कर लिया गया। अब चार्ल्स उत्साहित हो इंगलैंड पर धावा बोलना चाहता था। तब तक क्रौमवेल एक बड़ी सेना के साथ स्कौटलैंड की तरफ चल चुका था। एडिनबरा के निकट डनबर में एक बड़ी लड़ाई हुई जिसमें स्कौट बुरी तरह हार गये। दक्खिनी स्कौटलैंड पर क्रौमवेल ने अपना कब्जा कायम कर लिया। लेकिन युद्ध चलता रहा। कुछ समय के बाद चार्ल्स भी युद्ध में प्रवेश कर गया और स्कौटों ने इंगलैंड पर चढ़ाई कर दी। वोरसेस्टर में लड़ाई हुई जिसमें स्कौट फिर हार गये। चार्ल्स किसी तरह जान बचाकर फ्रांस पहुँचा। अब सम्पूर्ण स्कौटलैंड पर क्रौमवेल का आधिपत्य हो गया और जेनरल मौंक वहाँ का गवर्नर नियुक्त कर दिया गया।

स्कौटलैण्ड का शासन—प्रजातन्त्र काल में स्कौटलैंड का शासन अच्छा रहा। सभी जगह सुव्यवस्था स्थापित हो गई थी, पहाड़ी निवासी भी शांत रहे और न्याय का काम समुचित रूप से हो रहा था। स्कौटलैंड के प्रतिनिधियों को ब्रिटिश पार्लियामेंट में बैठने के लिये अधिकार दिया गया।

धार्मिक क्षेत्र में भी प्रगति हुई। प्रेस्बिटेरियन चर्च का अत्याचार समाप्त हो गया और परिषद् का प्रभाव कम हो गया। सब प्रकार के प्यूरिटनों के लिये सहिष्णुता की नीति अपनायी गयी।

दोनों देशों के बीच व्यापारिक स्वतंत्रता स्थापित हो गई जिससे स्कौटलैंड की आर्थिक उन्नति होने लगी। किन्तु इन सभी लाभों के बावजूद भी स्कौट खुश न थे। उनकी स्वतंत्रता का अपहरण हो गया, उनकी अब अपनी पार्लियामेंट न रही। उन पर टैक्स अधिक लगाया गया था। क्रौमवेल ने तलवार के जोर से अंगरेजी सत्ता स्थापित की थी। शासन में स्कोटों का कुछ भी हाथ न था।

राज्य पुनर्स्थापन काल में (१६६०–१६८८ ई०)—पुनर्स्थापन के वास्तिविक लाभ का अभाव—राज्य पुनर्स्थापन की घटना से स्कौटलैंड भी पूरा प्रभावित हुआ। प्रारम्भ में स्कौटों ने इसका पूरा स्वागत किया और बड़ी खुशियाँ मनायीं। इस घटना के फलस्वरूप उनकी स्वतन्त्रता लौट गयी; इंगलैंड के साथ संयोग का अन्त हो गया। किन्तु असल में स्कौटलैंड को कोई लाभ न हुआ। हर एक तरह से लाभ के

बजाय घटी ही हुई। इंगलैंड के स्वतंत्र व्यापार का खात्मा हो गया जिससे आर्थिक क्षति होने लगी। राजनैतिक दृष्टि से राजा की सर्वोच्च सत्ता स्थापित हो गयी।

राजा की दमन-नीति—संघातक युग—जेम्स द्वितीय की नीति—अब धार्मिक क्षेत्र में भी राजा अपनी प्रभुता कायम करना चाहता था। राजा बिशप-व्यवस्था के लिये उतना ही कट्टर था जितना स्कौट प्रेस्बिटेरियन-व्यवस्था के लिये। इस क्षेत्र में उसे दो मंत्री मिले। जेम्स शार्प जो सेन्ट एन्ड्रूज का आर्क बिशप था और जौन मेटरलैंड जो लौडरडेल का अर्ल था। ये दोनों ही हाल ही में बिशप-व्यवस्था के समर्थक हुए थे। उन्हीं की राय से चार्ल्स द्वितीय ने स्कौटलैंड को इंगलैंड की अधीनता में रखने की नीति जारी की। पूर्वकालीन स्टुअर्टों की भी यही नीति थी। अब स्कौटों पर धार्मिक अत्याचार शुरू हुआ। बिशप-व्यवस्था पुनः स्थापित की गयी। १६३७ ई० के बाद (जब कि प्रेस्बिटेरियन लोग प्रमुख थे) के पास हुए नियम हटा दिये गये। बिशपों के अधिकार में वृद्धि कर दी गयी। चर्च के पादरियों की नियुक्ति उन्हीं के हाथों में सौंप दी गई। चर्च में नहीं जाने वालों और चर्च के बाहर होने वाली धार्मिक सभा (कन्वेन्टिकल) में शामिल होने वालों के विरुद्ध कड़े कानून पास किये गये। उन्हें जुर्माना जेल तथा फांसी तक की सजा दी जाती थी। समझौते कराने की कोशिश की गयी लेकिन सफलता न हुई। अब कोविनेन्टर गुप्त तरीके से अपनी सभा करने लगे, किन्तु दमन-नीति भी उनके विरुद्ध कठोर होती गयी। लेकिन इतने पर भी प्रिस्बिटेरियन हतोत्साह न हुए। १६७७ ई० में भयंकर विद्रोह हुआ। उसी में जेम्स शार्प की हत्या कर दी गयी। उसे दमन करने के लिये क्लेवर हाउस का ग्राहम भेजा गया। लेकिन लङ्काशायर में ड्रमक्लोग नामक स्थान में उसकी हार हो गयी। अब विद्रोहियों ने ग्लासगो पर हमला कर दिया। लेकिन उस समय के कमिश्नर मन्मथ ने उन्हें बोथवेलब्रिज के युद्ध में हरा दिया। इस हार में विद्रोहियों का दिल टूट गया। १६८१ ई० में यौर्क का ड्यूक द्वितीय जेम्स स्कौटलैंड का कमिश्नर बन कर आया। उसने बड़ी ही कठोर नीति अपनायी। अतः १६८१ ई० से १६८७ ई० तक का युग स्कौटिश इतिहास में संघातक युग था, यह कत्लेआम का युग कहा जाता है। प्रेस्बिटेरियनों के साथ पशुओं जैसा व्यवहार किया गया, उन्हें कैद में बन्द किया गया, कितने ही गोली के शिकार हुए। इसी समय १६८५ ई० में चार्ल्स की मृत्यु हो गयी और जेम्स द्वितीय का अभिषेक हुआ। अब भी जेम्स की पुरानी नीति जारी रही। पार्लियामेंट ने भी इसी नीति का समर्थन किया। प्रेस्बिटेरियन नेता अर्जिल पहले तो कहीं भाग गया था लेकिन अब लौटकर मन्मथ के पक्ष में एक विद्रोह कराया। पर वह असफल रहा। उसे राजद्रोही घोषित कर फांसी दे दी गयी (१६६१ ई० में

उसके पिता की भी फांसी हो गयी थी)। परन्तु १६८७ ई० में उसकी नीति में परिवर्तन हुआ। कैथोलिकों को सुविधायें देने के ख्याल से जेम्स ने सहिष्णुता की नीति अपनायी। इससे प्रेस्बिटेरियनों को कुछ लाभ अवश्य हुए; उन्हें धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई और वे अमन-चैन से अपने दिन बिताने लगे। किन्तु विशेष लाभ तो कैथोलिकों को हुआ। अतः पार्लियामेंट ने इस नीति का विरोध किया। जेम्स ने पार्लियामेंट को बर्खास्त कर दिया और कैथोलिकों को सुविधायें देता रहा।

१६८८-८९ ई० में स्कौटलैंड की दशा—(ग) विलियम और एन के राज्य-काल में स्कौटलैंड (१६८९-१७१४ ई०)—इस प्रकार महान् क्रान्ति के अवसर पर स्कौटलैंड में जेम्स की नीति से बहुत असन्तुष्टता फैल रही थी। अमन चैन का सर्वथा अभाव था; लोग गरीबी और अकाल से पीड़ित थे; हाईलैंडरों का उत्पात मचा रहता था। लूट-पाट, मार-पीट तो उनके लिये व्यापार तथा मनोरञ्जन का साधन ही बन गया था। धार्मिक झगड़े अभी चल ही रहे थे। बिशपों का ही बोल वाला था। १६८८-८६ ई० में महान् क्रान्ति हुई। अब से स्कौटों की बुरी दशा में क्रमशः सुधार होने लगा। स्कौटलैंड में भी एक कन्वेन्सन पार्लियामेंट की बैठक हुई। इसने राजगद्दी विलियम तथा मेरी को प्रदान की और अधिकारों का दावा (क्लेम ऑफ राइट्स) नाम का एक मसविदा पेश किया। इसमें बिशप-व्यवस्था उठा देने की मांग की गयी। विलियम ने कन्वेशन के प्रस्तावों को स्वीकार कर लिया और अब स्कौट पार्लियामेंट को कार्य करने की स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई।

डंडी का विद्रोह (१६८९ ई०)—लेकिन अभी विलियम तथा मेरी की पूरी सत्ता स्कौटलैंड में स्थापित नहीं हुई। वाइकौंट डन्डी ने (जौन ग्राहम) विलियम को राजा स्वीकार नहीं किया और जेम्स द्वितीय के पक्ष में विद्रोह करा दिया। विद्रोहियों का दमन करने के लिये मैके के सेनापतित्व में एक सेना भेजी गई। किली क्रेन्की में युद्ध हुआ जिसमें अंगरेजी सेना परास्त हो गई। किन्तु दुर्भाग्यवश विजय के ही समय डन्डी की अचानक मृत्यु हो गई। इस दुर्घटना से पहाड़ी सैनिक निराश हो गये और विद्रोह भी शान्त हो गया।

ग्लेंको का हत्याकांड (१६९२ ई०)—फिर भी कुछ घराने के लोग विलियम को अभी भी राजा मानने को तैयार नहीं थे। अतः विलियम ने एक घोषणा प्रकाशित की कि ३१ दिसम्बर १६६१ ई० तक जो लोग राजभक्ति की शपथ ले लेगें उन्हें क्षमा प्रदान कर दी जायगी। बहुत से सरदारों ने तो शपथ ले ली किन्तु ग्लेंको के मैकडोनेल्ड ने अंतिम क्षण में ही शपथ लेने में अपना सम्मान समझा। उस समय भी वह एक गलत स्थान पर शपथ लेने गया। इस समय स्कौटिश मामलों

में विलियम का सलाहकार एक लोलैन्डर था। उसका नाम सर जान डेलरिम्पल था उसने मैक्डोनल्ड घराने को नष्ट कर देने के लिये विलियम को राय दी। विलियम ने राय मान ली और उस घराने के कट्टर दुश्मन कैम्पवेलों को यह कार्य सौंप दिया। मैक्डोनल्ड को इस बात की खबर न थी और कैम्पवेलों के स्वागत में अच्छी तैयारी की गई। लेकिन कृतघ्न केम्पवेलों ने एक दिन रात में उन पर अचानक आक्रमण कर दिया। बहुत से लोगों की हत्या की गई। यह क्रूर घटना ग्लेन्को के हत्याकांड के नाम से प्रसिद्ध है।

परिणाम—इससे विलियम के पक्ष में कोई विशेष लाभ न हुआ। इससे असन्तोष की अग्नि और तेज हो गई और मैक्डोनल्ड घराने ने इसे बहुत दिनों तक याद रखा। विलियम ने भी अपनी गलती महसूस की और अपने सलाहकार को पदच्युत कर दिया। लेकिन इससे विलियम के विरुद्ध कटुता में कोई विशेष कमी न दीख पड़ी।

डेरियन योजना तथा उसकी असफलता—विलियम के राज्यकाल में एक और घटना घटी और उससे भी उसके विरुद्ध स्कौटों में कटु भावना पैदा हुई। वह घटना थी डेरियन की असफलता। १६६५ ई० में भारत और अफ्रीका से व्यापार करने के लिये एक स्कौटिश कम्पनी स्थापित हुई। अंगरेजी ईस्ट इन्डिया कम्पनी के एकाधिकार में खतरा उपस्थित होने के भय से अंगरेजों ने इसका घोर विरोध किया। अतः लन्दन में रहने वाले स्कौटिश सेठ तो पीछे हट गये, लेकिन स्कौट्लैंड के सेठ-साहूकार ऐसा करना राष्ट्रीय गौरव के विरुद्ध समझते थे। उन्होंने डेरियन के डमरू-मध्य में एक उपनिवेश स्थापित करने के लिये सोचा। डेरियन (पनामा) उत्तरी तथा दक्खिनी अमेरिका के बीच में पड़ता है। उस समय यह स्पेन के राज्य में पड़ता था जिस राज्य के बटवारे की समस्या भी उपस्थित हुई थी। अतः इंगलैंड से स्कौटों को कोई सहायता प्राप्त न हुई। इसके फलस्वरूप कई बार कोशिश करने पर भी स्कौट असफल रहे। इससे उनका दिल अंगरेजो की ओर से बहुत खट्टा हो गया।

स्कौटलैंड की उन्नति और उसके कारण—उपर्युक्त दोनों घटनाओं के बावजूद भी विलियम के राज्यकाल में स्कौटलैंड की बुरी दशा में उन्नति हुई। इसके कई कारण थे। (१) १६८६ ई० में प्रेस्बिटेरियन धर्म को देश का धर्म स्वीकार कर लिया गया और बिशप-व्यवस्था में अनुयायियों के साथ सहिष्णुता की नीति अपनायी गई। अब पुराने धार्मिक संघर्ष का खात्मा हो गया। इस तरह वैधानिक स्वतन्त्रता के सिवा धार्मिक स्वतन्त्रता भी प्राप्त हो गयी। (२) १६६५ ई० में स्कौट्लैंड के बैंक की स्थापना हुई। इससे लोगों में मितव्ययिता की भावना पैदा होने लगी और देश के व्यापार में वृद्धि होने लगी। (३) १६६६ ई० में एक कानून के द्वारा प्रत्येक पेरिश

में एक स्कूल स्थापित करने की व्यवस्था की गयी। इससे शिक्षा का प्रचार हुआ तथा लोगों का मानसिक विकास हुआ। (४) १७०१ ई० में हेबियस कौर्पस एक्ट पास हुआ जिससे व्यक्तिगत आजादी की रक्षा हुई। (५) उपर्युक्त कारणों से स्कौटलैंड की उन्नति होने लगी। लेकिन उसकी उन्नति का एक प्रधान कारण था—१७०७ ई० में इंगलैंड तथा स्कौटलैंड की एकता। यह एन के राज्यकाल में प्राप्त हुई।

एकता के मार्ग में कठिनाइयाँ—इंगलैंड तथा स्कौटलैंड की एकता एन के राज्यकाल की एक महत्वपूर्ण घटना है। दोनों देशों की एकता के मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ थी।

(१) आर्थिक—व्यापारिक क्षेत्र में इंगलैंड स्काटलैंड की उन्नति नहीं देख सकता था। अंगरेज स्कौटों को विदेशी समझते थे। वे उन्हें ब्रिटिश उपनिवेशों से व्यापार करने की आज्ञा नहीं देते थे। ब्रिटिश बाजारों में स्कौटिश मालों पर कड़ा टैक्स लगाया जाता था। ब्रिटिश पार्लियामेंट के विरोध के कारण भारत तथा अफ्रीका से व्यापार करने के लिये स्कौटिश योजना असफल हो गयी थी। डेरियन योजना में भी अंगरेजों से कोई सहायता नहीं मिली। यद्यपि यह योजना यहाँ की अस्वस्थ्यकर जलवायु तथा स्पेन-वासियों के विरोध के कारण खास तौर से असफल हुई थी; फिर भी, इसकी असफलता के लिये स्कौट अंगरेजों को पूर्ण उत्तरदायी ठहराते थे। इस तरह इंगलैंड एक धनी तथा उद्योगशील देश था और स्कौटलैंड एक बहुत ही गरीब देश था जहां उद्योग धन्धों का सर्वथा अभाव था।

(२) धार्मिक—दोनों देशों की धार्मिक व्यवस्था विभिन्न थी। स्कौटलैंड प्रेस्बिटेरियन धर्म के और इंगलैंड बिशप-व्यवस्था के कट्टर समर्थक थे और एक दूसरे को सहिष्णुता प्रदान करना नहीं चाहते थे इसके अलावा स्टूअर्ट राजाओं की धार्मिक नीति के कारण स्कौटों में घोर असन्तोष और अविश्वास फैला हुआ था।

(३) राजनैतिक—(क) स्कौटों की राष्ट्रीयता—स्कौटलैंड एक स्वतंत्र राष्ट्र था और उसे अपनी राष्ट्रीयता का बड़ा गर्व था। अतः वह अपने स्वतंत्र राष्ट्रीय व्यक्तित्व को खोने के लिये तैयार नहीं था।

(ख) ग्लेंकों का हत्याकांड—स्कौटों के दिल-दिमाग में ग्लेंकों की हत्याकांड की क्रूर घटना अभी ताजी थी। इससे उनके हृदय में अंगरेजों के प्रति घृणा तथा क्रोध की भावना भरी हुई थी।

(ग) जैकोबाइट मनोवृत्ति—स्कौटलैंड में जैकोबाइट प्रवृत्ति प्रबल थी। बहुत से स्कौट जेम्स द्वितीय या उसके पुत्र के राज्याभिषेक के पक्ष में थे।

एकता की ओर ले जानी वाली परिस्थितियाँ—क्रमशः यह बात बहुत लोगों

के दिमाग में स्पष्ट होने लगी कि वर्तमान एकता को या तो समाप्त कर देना चाहिये या उसे दृढ़ बनाना चाहिये। विलियम तो दृढ़ एकता के ही पक्ष में था। १७०१ ई० के बाद इसकी आवश्यकता अंगरेज लोग और अधिक महसूस करने लगे। इसी साल इंगलैंड में उत्तराधिकार निर्णायक कानून पास हुआ। किन्तु स्कौटों ने इसे स्वीकार नहीं किया था और यह सम्भव था कि उसके विरुद्ध भी कार्य करते।

दूसरी ओर स्कौट लोग एकता का अन्त करने के ही पक्ष में थे। इसके लिये ऐन्ड्रू फ्लेचर के नेतृत्व में एक पार्टी भी स्थापित हो चुकी थी। १७०३ ई० में स्कौटिश पार्लियामेंट ने एक सुरक्षा-नियम (ऐक्ट आफ़ सीक्युरिटी) पास किया। इसके अनुसार यह घोषणा की गयी कि एन के मरने के बाद स्कौटलैंड अपना दूसरा राजा चुनेगा। संयुक्त राजा रहने पर स्कौटलैंड में वहाँ की पार्लियामेंट की एक कमेटी के हाथ में सम्पूर्ण सत्ता रहेगी। एक दूसरे नियम के द्वारा राष्ट्रीय सेना संगठन करने के लिए व्यवस्था की गई। इस समय इंगलैंड फ्रांस के साथ युद्ध में व्यस्त था। अतः स्कौटलैंड के रुख को देखकर वह बहुत ही कठिनाई में पड़ गया। परन्तु १७०४ ई० में ही ब्लेन्हीम में इंगलैंड को महान् विजय प्राप्त हुई। अब इंगलैंड का व्यवहार स्कौटलैंड के प्रति कड़ा होने लगा। उसने स्कौटों को विदेशी घोषित कर व्यापारिक सम्बन्ध-विच्छेद कर दिया। इंगलैंड सीमा पर अपनी सेना भी भेजने लगा था। इस तरह परिस्थिति गम्भीर होती जाती थी और युद्ध निश्चित-सा मालूम पड़ता था। किन्तु युद्ध से तो समस्या नहीं सुलझती; कई अंशों में परिणाम बुरा ही होता। स्कौटलैंड की ही अधिक हानि होने की सम्भावना थी। स्कौटों ने इस बात को क्रमशः अच्छी तरह समझा। स्कौटलैंड में फ्लाइंग स्कवैड्रोन नाम की एक मध्यस्थ पार्टी स्थापित हुई थी। यह पार्टी एकता की उचित शर्तों को स्वीकार करने के लिये तैयार थी। इंगलैंड में गोडोल्फ़िन मंत्रिमंडल की भी सहानुभूति प्राप्त हुई। अतः १७०६ ई० में दोनों देशों से ३१ कमिश्नर नियुक्त हुए। इसका कार्य था एकता की शर्तों को निश्चित करना। इनकी रिपोर्ट के आधार पर १७०७ ई० में संयोग का कानून (ऐक्ट आफ़ यूनियन) पास हो गया। यह कानून इंगलिश तथा स्कौटिश दोनों पार्लियामेंट में पास हुआ।

संयोग की शर्तें—(१) इंगलैंड तथा स्कौटलैंड की पार्लियामेंट एक हो गयी। स्कौटलैंड के १६ प्रतिनिधियों के लिये लार्ड-सभा में तथा ४५ प्रतिनिधियों के लिये कौमन्स सभा में जगह दी गयी। १७०१ ई० का उत्तराधिकार निर्णायक कानून कायम रहा। (२) संयुक्त राज्य का नाम ग्रेट ब्रिटेन पड़ा; दोनों का युनियन जैक नाम का एक झण्डा कायम हुआ, जिस पर सेन्ट ऐन्ड्रू तथा सेंट जार्ज के उजले तथा लाल क्रौस के चिह्न रखे गये। (३) दोनों देशों के चर्च कानून तथा न्यायालय पृथक-पृथक कायम

रहे। प्रत्येक राजा के लिये यह आवश्यक कर दिया गया कि गद्दी पर बैठने के समय वह प्रेस्बिटेरियन चर्च की रक्षा करने की शपथ लेगा। स्कौटिश न्यायालय से लार्ड-सभा में अपील करने के लिये स्कौटलैंड को अधिकार दे दिया गया। (४) अंगरेजों तथा स्कौटों के अधिकार एक समान कर दिये गये। दोनों देशों के बीच व्यापारिक समानता भी स्थापित कर दी गई। राष्ट्रीय कर्ज के लिये चार लाख पौंड सालाना और भूमिकर का ½ देना स्कौटलैंड के हिस्से में पड़ा।

परिणाम—दोनों देशों की परम्परा शत्रुता का अन्त हो गया। अब दोनों का इतिहास एक हो गया। स्कौटलैंड की आर्थिक उन्नति बड़ी ही तेजी से होने लगी; अब वह अंगरेजी उपनिवेशों से भी व्यापार करने लगा। इस तरह अपने उद्योग-धन्धों के विकास के लिये स्कौटलैंड को सुअवसर प्राप्त हो गया। बाजारों में स्कौटिश माल अंगरेजी माल का मुकाबला करने लगा। आर्थिक उन्नति के कारण कितने नये नगर बस गये, कितने पुराने नगरों की अपूर्व उन्नति होने लगी। लोगों के रहन-सहन का स्तर ऊँचा होने लगा।

संयोग से इंगलैंड को भी लाभ हुआ। इसके साम्राज्य तथा व्यापार-विकास में स्कौटलैंड महत्वपूर्ण हिस्सा लेने लगा। इसके सिवा अब इंगलैंड का यह भय दूर हो हो गया कि उत्तर से स्कौट या उनकी मदद से कोई विदेशी शत्रु हमला करेगा। अतः अंगरेज संयोग से बहुत ही खुश थे। १७१३ ई० में इंगलैंड को उत्तरी अमेरिका में जब आकाडिया नाम का प्रदेश मिला तो संयोग की स्मृति में ही इसका नाम नोवा-स्कोशिया कर दिया गया।

परन्तु एकता के प्रारम्भिक काल में दोनों देशों में कुछ लोग असन्तुष्ट भी थे। जार्ज तृतीय के समय में प्रधान मंत्री ब्यूट स्कौटवंश के होने से ही अप्रिय बन गया था। फिर भी इंगलैंड में असन्तोष साधारण था और घोर विरोध का अभाव था।

किन्तु स्कौटलैंड में तो बहुत से लोग असन्तुष्ट थे। स्कौटिश पार्लियामेंट में संयोग का कानून साधारण बहुमत से पास हुआ था। यदि लोकमत का आश्रय लिया जाता तो एकता स्थापित नहीं होती। १७१५ और १७४५ ई० के विद्रोहों के समय जनता की एक माँग संयोग भंग करने के लिये ही थी।

लेकिन दोनों देशों को एकता से पारस्परिक लाभ क्रमशः दीख पड़ने लगे और धीरे-धीरे पारस्परिक सम्बन्ध घनिष्ठ होता गया।

अध्याय १९

सत्रहवीं सदी में इंगलैंड की दशा

(क) आर्थिक दशा—इस समय इंगलैंड ने व्यापारिक क्षेत्र में अपूर्व उन्नति की। यह उन्नति रानी एलिज़ाबेथ के समय में प्रारम्भ हो गयी थी और स्टुअर्टों के युग में यह जारी रही। १५८८ ई० तक औपनिवेशिक और व्यापारिक क्षेत्रों में स्पेन को एकाधिकार-सा प्राप्त हो गया था, लेकिन उसी साल आर्मेडा के युद्ध में उसकी शक्ति कमजोर कर दी गयी। अब स्पेन की जगह इंगलैंड ने ले ली। लेकिन अभी उसके दो भीषण प्रतियोगी थे—हॉलैंड और फ्रांस। पूर्वकालीन स्टुअर्टों के समय में इंगलैंड की प्रगति कुछ मन्द-सी रही, लेकिन प्रजातन्त्र तथा उत्तरकालीन स्टुअर्टों के समय में तीव्र प्रगति हुई। १७१३ ई० तक हालैण्ड तथा फ्रांस दोनों की शक्ति तोड़ दी गई और उनके हौसले मिट्टी में मिल गये। इंगलैंड की व्यापारिक, सामुद्रिक और औपनिवेशिक प्रधानता स्थापित हो गई। बहुत से अंगरेज दूर-दूर के देशों में जा बसे और क्रमशः अपनी शक्ति दृढ़ करने लगे। बड़े-बड़े देशों के साथ इंगलैंड का व्यापारिक सम्बन्ध हो गया। उपनिवेशों का व्यापार इंगलैंड के नियन्त्रण में था। व्यापार का संचालन करने के लिये कई कम्पनियाँ खुल चुकी थीं। इस प्रकार स्टुअर्ट युग के आखीर तक इंगलैंड एक बड़ा ही समृद्धिशाली देश हो गया।

गरीब रक्षण कानून (Poor Law)—तथापि देश में गरीबों, कंगालों और भिखमंगों का सर्वथा अभाव न था। एलिजाबेथ के ही समय में एक गरीब रक्षण कानून बन चुका था। इसके द्वारा गरीबों की रक्षा का भार पैरिश के हाथ में दे दिया गया। इससे कितने पैरिश में बेकारों तथा गरीबों की भीड़ जमा होने लगी थी। अतः चार्ल्स द्वितीय के समय में एक कानून बना कि प्रत्येक पैरिश नवागन्तुक गरीबों को उनके अपने पहले के ही पैरिश में लौटा दें।

(ख) सामाजिक दशा—इस समय अंगरेजी समाज के चार विभाग थे। यह विभाजन धन तथा भूमि के आधार पर किया गया था।

(क) बड़े-बड़े भूमिपति—ये लोग बहुत से भूमिखण्डों के मालिक होते थे और दूसरों को जोतने के लिये अपनी जमीन दिया करते थे। समाज का यह बहुत ही प्रगतिशील विभाग था। अतः इसी वर्ग से बड़े-बड़े अफसर नियुक्त होते थे। इस वर्ग के लोग धनीमानी होने के कारण स्वाभाविक ही भोग-विलास में लीन रहते थे।

(ख) छोटे भूमिपति—ये लोग साधारण श्रेणी के भूमिपति थे। इनमें शिक्षा का अभाव था, लेकिन देहात में इनका प्रभाव कम न था।

(ग) मध्यम श्रेणी (योमैन)—समाज में इनका भी प्रभाव था और इनकी प्रतिष्ठा होती थी। इनकी एक विशेषता यह थी कि ये लोग खूब हट्टे-कट्टे होते थे। अतः सेना में इनकी अधिक पूछ होती थी।

(घ) किसान—समाज की यह बहुत बड़ी श्रेणी थी। इसमें कृषक तथा मजदूर लोग शामिल थे।

खान-पान—अभी हम देख चुके हैं कि इंगलैंड की धन-दौलत में तीव्र गति से वृद्धि हो रही थी। इससे पहले की अपेक्षा हरएक श्रेणी के लोगों का जीवन-स्तर ऊँचा हो गया। लोगों के रहन-सहन, खान-पान, में अन्तर पड़ गया। लोग शराब तो पीते ही थे, अब चाय और कहवा पीने का भी प्रचार होने लगा। यह प्रचार चार्ल्स द्वितीय के समय से प्रारम्भ हुआ। कितने ही कहवा-घर कायम होने लगे।

पहनावे और मनोविनोद—पोशाक, पहनावे तथा मनोविनोद के साधनों में भी पर्याप्त अन्तर दीख पड़ने लगा। चार्ल्स द्वितीय के राज्याभिषेक के पहले प्यूरिटनों का विशेष प्रभाव था। अतः उन लोगों ने इन सभी चीजों पर नियन्त्रण रखा था और सादगी पर विशेष ध्यान दिया था। लेकिन चार्ल्स द्वितीय के राज्यकाल में भीषण प्रतिक्रिया शुरू हुई। अब फैशन का बाजार गर्म हो चला। तरह-तरह के फैशन निकलने लगे। नाच-गान, रास-रंग और खेल-तमाशों में लोग—खास कर ऊँचे श्रेणी के लोग—मस्ती में लिप्त होने लगे। घुड़दौड़, ताश, जुआ, मुर्गों की लड़ाई और टेनिश के खेल अधिक प्रचलित थे। पालमाल नाम का एक नया खेल भी शुरू हुआ था। कहवे-घर में भद्र लोग गपशप और कभी राजनैतिक विषयों पर वाद-विवाद करते थे। नाटक तथा थियेटर का भी प्रचार था।

लोगों की पोशाकें बहुत ही भड़कीली होने लगीं। प्रजातन्त्र काल तक लम्बे कोट और डवलेट पहनने की विशेष प्रथा थी। लेकिन उसके बाद इनका व्यवहार बन्द हो चला और आधुनिक फैशन के कोट, वेस्टकोट तथा पतलून की प्रथा चल पड़ी। बहुत से पुरुष अपने सिर के बालों को कटाकर कृत्रिम बालों की टोपी (Wigs) पहनते थे और स्त्रियाँ भी पुरुषों की नकल करने लगी थीं।

सफर और सवारियाँ—इस समय लोग सफर करना चाहते थे, परन्तु उत्तम सड़कों तथा तेज सवारियों का अभाव था। चार्ल्स द्वितीय के समय सब से तेज गाड़ी (Flying Coaches) दिन भर में अधिक से अधिक ५० मील तक जा सकती थी। पालकी गाड़ियों का पूरा प्रचार हो चला था; किन्तु खर्चीली सवारी होने के कारण साधारण लोग इन्हें व्यवहार में नहीं लाते थे। ये लोग घोड़ों तथा ठेलों से ही अपना काम पूरा करते थे। ठेलों पर समान भी ढोया जाता था। पालकी गाड़ी से डाक भी ढोने का काम लिया जाता था।

शहर और देहात—अभी औद्योगिक क्रांति का श्रीगणेश नहीं हुआ था। अतः शहरों की संख्या अभी बहुत कम थी। लन्दन सबसे बड़ा शहर था जहाँ की जनसंख्या करीब ५ लाख थी। इसके बाद नार्विच तथा ब्रिस्टल नाम के दो शहर थे जिनमें प्रत्येक की आबादी करीब ३० हजार थी। शहरों की हालत बड़ी ही बुरी थी। मकान लकड़ी के बने हुए छोटे-छोटे तथा अस्वस्थकर होते थे। गलियों तथा सड़कों पर गन्दगी भरी रहती थी; कीचड़ के मारे गाड़ियों के निकलने में बड़ी कठिनाई होती थी। प्रकाश का भी कोई समुचित प्रबन्ध नहीं था। डाकुओं तथा चोरों का भी कोई अभाव न था। इस प्रकार शहर के जीवन में कोई खास अभिरुचि नहीं थी। किन्तु १६६६ ई० के अग्निकाण्ड से लन्दन शहर को एक बड़ा लाभ हुआ। पुराने और गन्दे सभी मकान जलकर मिट्टी में मिल गये। अब शहर का नये आधुनिक ढंग से निर्माण किया गया। अच्छे-अच्छे स्वस्थकर मकान बनाये गये। शहर की सुन्दरता में वृद्धि होने लगी। फिर भी शहरों की सफाई में अभी पूरा सुधार नहीं हुआ।

देहातों में रहनेवाले लोग अधिक थे, लेकिन इनकी हालत शहरों से भी अधिक खराब थी। बहुत भूमि परती पड़ी हुई थी; जहाँ-तहाँ जंगल दीख पड़ते थे। सभी लोगों को काम अधिक करना पड़ता था, किन्तु खाने-पीने की सहूलियत थी।

स्वास्थ्य के नियमों से अनभिज्ञ रहने के कारण शहरों और देहातों के लोग प्रायः बीमारियों के शिकार हो जाया करते थे। अतः लोग अधिक मरा करते थे।

(ग) सांस्कृतिक दशा शिक्षा और साहित्य—इस युग में शिक्षा का अधिक प्रचार नहीं था। सर्वसाधारण में बहुत कम लोग पढ़े-लिखे होते थे। उस समय लोगों का ख्याल था कि अच्छी चाल-ढाल, तौर-तरीका सीखना ही शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है। अतः लोग अधिकतर फ्रान्सीसियों की नकल करते थे। फिर भी देश में कुछ बड़े-बड़े विद्वान भी पाये जाते थे। कैम्ब्रिज तथा औक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी—शिक्षा के दो बड़े उन्नतिशील केन्द्र थे। लेकिन धार्मिक तथा राजनैतिक मतभेद होने

से कितने विद्वान देश निर्वासित कर दिये जाते थे। इससे शिक्षा के प्रचार में त्रुटि पड़ जाती थी।

समाचारपत्रों के प्रचार में भी विशेष उन्नति हुई। महान् क्रान्ति के पहले समाचारपत्रों के स्वतंत्र प्रकाशन पर नियंत्रण लगा हुआ था। लेकिन विलियम के राज्यकाल में यह नियंत्रण हटा दिया गया। अब समाचारपत्रों का प्रकाशन जोरों से होने लगा। दो सप्ताहिक अखबार—टैट्लर और स्पेक्टेटर—बहुत ही प्रसिद्ध थे। दैनिक समाचारपत्र का भी निकलना शुरू हो गया। अब राजनैतिक दल भी सिद्धांतों के प्रचार तथा लोकमत के निर्माण के लिये अखबारों पर अपना-अपना अधिकार स्थापित करने की कोशिश करते थे। एन के राज्यकाल में यह बात विशेष रूप से होने लगी।

साहित्य के क्षेत्र में भी उन्नति हुई। यह उन्नति एलिज़ाबेथ के ही समय में शुरू हो गयी थी जो स्टुअर्ट काल में बढ़ती गई। जेम्स प्रथम के समय १६२३ ई० में शेक्सपियर के लिखे हुए सभी नाटकों को एकत्र कर 'फर्स्ट फोलियो' के नाम से प्रकाशित कर दिया गया। शेक्सपियर के बाद दूसरा प्रसिद्ध नाटककार बेन जौनसन था। जौनड्राइडन स्टेज पर खेलनेवाले नाटक का पहला लेखक था। इस समय का एक महान् तथा सुप्रसिद्ध कवि जौन मिल्टन था। वह प्रजातंत्रकाल में विदेशी मामलों का मंत्री भी था। उसके सौनेट अंगरेजी साहित्य में बहुत प्रसिद्ध हैं। उसकी एक बड़ी और लोकप्रिय कविता 'पाराडाइज लौस्ट' है। मिल्टन के बाद गद्य-लेख की ओर लोगों का झुकाव विशेष होने लगा। बेकन, जौन बनियन और क्लेरेंडन के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। बेकन के लेख बड़े ही गम्भीर होते थे। बनियन के 'पिलग्रिम्स प्रोग्रेस' तथा क्लेरेंडन के 'हिस्ट्री ऑफ दी ग्रेट रेबेलियन' प्रसिद्ध किताबें हैं।

राज्य पुनर्स्थापन काल से साहित्यिक शैली में अन्तर पड़ने लगा। पहले की अपेक्षा अब लेख अश्लील तथा साधारण होने लगे। उनमें भाव तथा गम्भीरता का अभाव दीख पड़ने लगा और शृङ्गार रस की प्रधानता होने लगी।

समाचारपत्र के जरिये भी गद्य-लेख के विकास में बहुत बड़ी सहायता मिली।

कला और संगीत—कला, संगीत तथा शिल्प की दिशाओं में साधारण प्रगति हुई, क्योंकि इन दिशाओं में प्यूरिटनों का विशेष प्रभाव पड़ा था। प्यूरिटन लोग जीवन के हर क्षेत्र में सादगी के कट्टर समर्थक थे। सादा जीवन, उच्च विचार उनका लक्ष्य था। अतः वे कला, संगीत, सजावट और तड़क-भड़क में दिलचस्पी नहीं रखते थे। उन्होंने अद्भुतालय (म्यूजियम) के बहुत से चित्रों को बेंच या बर्बाद कर

डाला था। चर्च में गाना-बजाना बंद कर दिया था। फिर भी सभी प्यूरिटन इन सभी चीजों के शत प्रतिशत विरोधी नहीं थे। उनके दो बड़े नेता मिल्टन और क्रोमवेल तो कला तथा संगीत के प्रेमी ही थे। पुनर्स्थापन के साथ प्यूरिटनों द्वारा लगाये गये नियंत्रण भी समाप्त हो गये। चर्च में गाना बजाना होने लगा। कई विदेशी कलाकार आकर ब्रिटेन में जम गये और अपनी उत्तम-उत्तम कृतियों से देश की सेवा करने लगे। पीटरलेज़ी नाम का एक डच बड़ा ही कुशल चित्र खिंचनेवाला (फोटोग्राफर) था। वह प्रजातंत्र काल में ही इंगलैंड चला आया था और कई वर्षों तक यहाँ ठहरकर उसने सैकड़ों स्त्री-पुरुषों का फोटो लिया। एक दूसरे डच ने लकड़ी पर सुन्दर काम करने में दक्षता प्राप्त की थी। हेनरी पर्सेल नाम का एक सुविख्यात संगीतज्ञ था; किन्तु उसकी अकाल मृत्यु हो गई जिससे अङ्गरेजी संगीत को बड़ी क्षति पहुँची।

शिल्प की दिशा में एलिज़ाबेथ के समय की शैली जारी रही; लेकिन इस युग में दो नये प्रभाव का आगमन हुआ। पहला प्रभाव विलियम लौड तथा उसके शिष्यों का था। इस प्रभाव से गोथिक शैली का पुनरोद्धार हुआ। दूसरा प्रभाव वेल्स के इनिगोजोन्स का था। इस प्रभाव से क्लासिकल शैली की तरफ लोगों का झुकाव हुआ। इससे ग्रीक और रोमन शैली को पुनर्जीवन प्राप्त होने लगा। प्रजातंत्र के बाद क्रिस्टोफर रेन ने जेम्स के काम को और आगे बढ़ाया। उसने कई चर्चों का निर्माण इसी शैली के आधार पर किया जिनमें सेन्टपौल का चर्च अधिक प्रसिद्ध है। इस शैली में मीनार और बुर्ज विशेष महत्त्व की चीजें थीं।

विज्ञान—स्टुअर्टों के युग में विज्ञान के क्षेत्र में भी प्रगति हुई। जेम्स प्रथम का चांसलर बेकन तो एक प्रसिद्ध लेखक था ही, वह प्रसिद्ध वैज्ञानिक भी था। ऐसा माना जाता है कि आधुनिक विज्ञान को उससे बहुत बड़ी प्रेरणा मिली है। नेपियर और केप्लर ज्योतिष-शास्त्र में निपुण थे। सत्रहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में नेपियर ने 'लोगरीथम' का, गैस्कोईन ने 'माइक्रोमिटर' का तथा विलियम हार्वेन ने 'खून के दौड़ान' का आविष्कार किया। एक दूसरा सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक न्यूटन भी इसी युग में हुआ था, जिसने आकर्षणशक्ति के सिद्धान्त (लॉ ऑफ ग्रेविटी) को स्थापित किया। प्रकृति-शास्त्र में बौयल का नाम उल्लेखनीय है। वैज्ञानिकों की कभी-कभी बैठक भी होने लगी थी जिसमें पारस्परिक विचार-विनिमय होते थे। चार्ल्स द्वितीय भी विज्ञान की प्रगति चाहता था और उसकी आज्ञा से १६६२ ई० में वैज्ञानिकों का एक समाज संघटन हुआ जो रौयल सोसाइटी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह संस्था अब भी वर्तमान है और विश्व के बड़े-बड़े वैज्ञानिक इसके सदस्य हैं।

अध्याय २०

गृहनीति (१७४१—१७६० ई०)

युग का लक्षण—इस युग में लोग अपने पेट के लिये विशेष चिन्तित थे। आत्मिक विकास के लिये कोई परवाह नहीं थी। लोगों में आशा तथा उत्साह का अभाव था और करीब-करीब प्रत्येक क्षेत्र में सुस्ती तथा कुरीति फैली हुई थी। राजनीति प्रणाली में कई दोष थे, पार्टी किसी स्थापित सिद्धान्त पर काम नहीं करती थी। इंगलैण्ड के चर्च में किसी प्रकार की तत्परता नहीं दीख पड़ती थी और बिशप अपनी ईसाई आदर्शों को खो चुके थे। मालूम होता था कि चर्च सोया हुआ है। इस युग के आरंभ में तो शान्ति कायम रही, लेकिन पीछे युद्ध भी हुआ। किन्तु अंगरेज सैनिक तथा नाविक ने अपने को आलसी और कमजोर साबित किया। इस समय के साहित्य और कविता में कृत्रिमता की मात्रा विशेष थी। भावों की अपेक्षा शब्दों पर ही अधिक जोर दिया जाता था। पोप ने तो ऐसी कविता लिखने में सिद्धि ही प्राप्त कर ली थी।

इस प्रकार इस युग में बुरी बातें अधिक थीं, फिर भी कुछ अच्छी बातें भी पाई जाती थीं। इंगलैण्ड के लिये शान्ति एक बहुत बड़ी आवश्यक चीज थी जो इस युग के अधिकांश भाग में कायम रही। व्यापार तथा उद्योग के क्षेत्र में उन्नति हुई जिससे देश की समृद्धि में वृद्धि हुई। धार्मिक क्षेत्र में सहिष्णुता की भावना विकसित हो रही थी, किन्तु डिसेंटरों पर लगाये गये प्रतिबन्धों को उठाने की कोशिश न की गई। इसी समय में जौन वेस्ले नाम के एक महान् धार्मिक नेता तथा सुधारक का आगमन हुआ था। इस समय के ग्रे आदि जैसे कुछ कवियों की कीर्ति भी अच्छी श्रेणी में गिनी जाती है।

जार्ज प्रथम और जार्ज द्वितीय का चरित्र—१७०१ ई० के उत्तराधिकार निर्णायक कानून के अनुसार १७१४ ई० में हैनोवर का एलेक्टर जार्ज प्रथम के नाम से इंगलैण्ड की गद्दी पर बैठा। इस प्रकार १७१४ ई० में हैनोवेरियन घराने का शासन आरम्भ हुआ जो अभी तक चला जाता है। जार्ज ने १७२७ ई० तक राज्य किया

और उसके मरने पर उसका लड़का जार्ज द्वितीय के नाम से गद्दी पर आसीन हुआ। इसने १७६० ई० तक राज्य किया।

त्रुटियाँ—दोनों जार्ज विदेशी तो थे ही, अतः वे अंगरेजी राजनीति में सक्रिय भाग लेने में सर्वथा असमर्थ थे और हैनोवर में ही विशेष दिलचस्पी रखते थे। जार्ज प्रथम तो राजसी तौर-तरीकों से अनभिज्ञ था। दोनों को साहित्य, विज्ञान तथा कलाकौशल से कोई विशेष प्रेम नहीं था। दोनों ही कुशल पारिवारिक सदस्य नहीं थे। दोनों ने ही अपने बड़े पुत्रों से झगड़ा किया था। जार्ज प्रथम के चरित्र में कितने बड़े-बड़े दोष थे। वह लोभी, निर्दयी, नीच तथा विषयी था। उसकी अपनी पत्नी से ही नहीं पटती थी और उसने उसे ३० वर्ष तक एक जर्मन दुर्ग में कैद कर रखा था और दूसरी कितनी स्त्रियों के साथ भोग-विलास में लीन रहता था। लेकिन उसकी पत्नी का कोई प्रेमी था जिसकी उसने हत्या करवा दी थी।

आरेंज के विलियम जैसा ही जार्ज प्रथम को भी धार्मिक तथा राजनैकित कारणों से ही इंगलैण्ड की गद्दी प्रदान की गई थी। किन्तु विलियम की योग्यता जार्ज में नहीं थी, फिर भी दोनों में आकर्षक व्यक्तिगत गुणों का अभाव था।

जार्ज द्वितीय को इङ्गलैण्ड और अंगरेजी भाषा से ही अपने पिता की अपेक्षा विशेष जानकारी प्राप्त हो गई थी और टूटी-फूटी भाषा में अंगरेजी कुछ बोल भी लेता था। किन्तु इन परिवर्तनों से क्या ! वह भी कई त्रुटियों के कारण अपने पिता से आगे नहीं बढ़ सका और उसने उसी के पदचिन्हों का अनुसरण किया। वह कर्कश और चिड़चिड़ा स्वभाव का व्यक्ति था और अपने नौकरों की असावधानी पर भी बेहद चंचल हो उठता था। वह बड़ा मक्खीचूस भी था और किसी को जल्दी कोई पुरस्कार नहीं देता था। १५ साल की सेवा करने के बाद उसने वालपोल को एक हीरा उपहार में दिया था, किन्तु वह हीरा भी विशुद्ध नहीं था।

सद्गुण—उपर्युक्त त्रुटियों के रहते हुए भी दोनों राजाओं में कुछ ऐसे सद्गुण थे जिनके कारण वे अपनी प्रजा के प्रिय पात्र बन गये। दोनों ही बड़े साहसी सैनिक थे। जार्ज प्रथम १५ वर्ष की ही उम्र से सैनिक कार्य करने लगा और स्पेन के उत्तराधिकार की लड़ाई में थोड़े समय के लिये उसने सैन्य संचालन भी किया। जार्ज द्वितीय ने भी ऊदेनार्द और डेटिङ्गन के युद्धों में सक्रिय भाग लिया था। इसके सिवा दोनों ही में एक बड़ी विशेषता थी। दोनों ही अपने हैनोवर के लिये बड़े प्रेमी थे; जार्ज प्रथम तो ५४ वर्ष की अवस्था में ही इंगलैण्ड की गद्दी पर बैठा था और अंगरेजी भाषा तथा रीतियों से अनभिज्ञ था; हैनोवर में एकतन्त्र शासन था। ये सब होते हुए भी उन्होंने इंगलैण्ड में नियमित शासन की सीमाओं की कभी उपेक्षा नहीं की, अंगरेजों को ही

अपना मंत्री नियुक्त किया और जर्मनों के साथ पक्षपात का व्यवहार नहीं रखा। दोनों सत्यभाषी और विश्वासी थे। अपने मित्रों के साथ सच्चा व्यवहार करते थे और शत्रुओं के साथ भी सहानुभूति रखते थे।

जार्ज द्वितीय कई बातों में अपने पिता से भी अधिक योग्य था। वह योग्य व्यक्तियों को अच्छी तरह पहचानता था। उसी ने वुल्फ को अमेरिका के युद्ध में प्रधान सेनापति के पद पर नियुक्त किया था। उसकी पत्नी कैरोलाइन भी सुन्दर और विदुषी थी। उसकी अपनी रानी से खूब पटती थी।

राज्यारोहण का प्रभाव—(क) कैबिनेट प्रणाली का विकास—हैनोवेरियन वंश के राज्यारोहण ने इंगलैंड के इतिहास में युगान्तर उपस्थित कर दिया। इससे इंगलैंड की घरेलू राजनीति में महान् परिवर्तन हुआ। आधुनिक कैबिनट शासन-प्रणाली के विकास में बहुत बड़ी सहायता मिली। आधुनिक कैबिनट की निम्नलिखित विशेषतायें हैं :—

(१) कैबिनट के सदस्यों का कौमन्स सभा के बहुमत दल का सदस्य होना (२) राज की कैबिनट में अनुपस्थिति (३) प्रधान मंत्री का बोलबाला (४) सामूहिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त।

इनमें पहली विशेषता तो जैसा कि हमलोग पहले देख चुके हैं, विलियम तृतीय के ही राज्यकाल में स्थापित हो गई। क्रान्ति के बाद यह कैबिनेट शासन-विधान में एक स्थायी संस्था भी बन गयी और प्रिवी कौंसिल बड़ी होने के कारण मतप्रदर्शन के लिये अनुपयुक्त हो गई। लेकिन विलियम तथा एन के राज्यकाल में राष्ट्र की गृह तथा वैदेशिक नीति का निर्णय राजाओं के ही हाथ में रहा; कैबिनेट के मंत्रियों की नियुक्ति वे ही करते थे और इसकी बैठकों में सभापति-पद को भी वे ही सुशोभित करते थे।

लेकिन हैनोवेरियन वंश के राज्याभिषेक के साथ बहुत सी बातें बदल गईं। क्रांति ने जिस कार्य को अपूर्ण छोड़ दिया था वह अब पूरा हो गया। एक अंगरेज लेखक ने कहा—"उत्तराधिकार निर्णायक कानून ने हमें एक विदेशी शासक दिया, और विदेशी शासन की उपस्थिति ने हमें एक प्रधान मंत्री दे दिया।" यह कथन बिलकुल ही सत्य है।

राज्यारोहण—१७०१ ई० में उत्तराधिकार निर्णायक कानून पास हुआ था। इसके अनुसार इंगलैंड की गद्दी रानी एन के मरने के बाद हैनोवर की रानी सोफिया को दी गई। सोफिया जेम्स प्रथम की नतिनी थी। उसके जार्ज नाम का एक पुत्र भी था। लेकिन एन से भी पहले सोफिया की मृत्यु हो गई। अतः एन के मरने पर सोफिया का लड़का जार्ज प्रथम के नाम से इंगलैंड की गद्दी पर बैठा।

राजाओं की कमजोरियाँ तथा प्रधानमंत्री का आविर्भाव—लेकिन जार्ज था तो एक विदेशी—जर्मनी का रहने वाला; उसमें भी ५४ वर्ष का बूढ़ा। वह अंगरेजी भाषा तथा जटिल अङ्गरेजी राजनीति से पूरा अनभिज्ञ था। बुढ़ापे की अवस्था में नयी बातों को सीखना भी आसान नहीं था। इन बातों के सिवा वह अभी भी जर्मनी के मामलों से ही अधिक सम्बन्ध और दिलचस्पी रखता था। उसके लड़के जार्ज द्वितीय की भी यही हालत रही। उसने अङ्गरेजी भाषा तो कुछ सीखी पर अभी वह स्पष्ट तरीके से नहीं बोल सकता था। राजा और मंत्री टूटी-फूटी लैटिन में किसी तरह अपना भाव प्रकट करते थे। इन सभी कारणों से दोनों जार्ज ने कैबिनट की बैठकों में जाना बन्द कर दिया। जब जार्ज तृतीय १७६० ई० में राजसिंहासन पर बैठा तो उसे इच्छा न रहते हुए, अपने पूर्वजों के मार्ग का ही अनुसरण करना पड़ा। इस प्रकार कैबिनट के अधिवेधन में सभापति की कुर्सी खाली रहने लगी। लेकिन कैबिनट तो एक प्रमुख संस्था बन चुकी थी जहाँ राष्ट्र की नीति निर्धारित की जाती थी। अतः उस रिक्त जगह को भरना आवश्यक था। अब मन्त्रियों में से ही कोई योग्य मंत्री सभापति का पद ग्रहण कर कार्य संचालन करने लगा। धीरे-धीरे उसे प्रधान मंत्री की पदवी प्राप्त हो गई और वही राजा के बदले अपने सहयोगियों की भी नियुक्त करने लगा।

मंत्रियों का उत्तरदायित्व—अब देश के शासन का भार राजाओं के हाथ से निकलकर मंत्रियों के हाथ में चला आया। अब मंत्री बहुत आगे बढ़ गये। पहले राजा मंत्रियों के द्वारा शासन करता था, अब मन्त्री राजा के द्वारा शासन करने लगा। पहले राजा मन्त्री के सम्मति लेकर निर्णय करता था, अब मन्त्री राजा की सम्मति लेकर निर्णय करने लगा। कैबिनट के निर्णय की सूचना राजा के पास भेज दी जाती थी किन्तु राजा उसमें अदल-बदल किये बिना स्वीकार कर लेता था। इसी समय से यह भी प्रथा चल पड़ी कि पार्लियामेंट में पास हुए कानूनों को राजा अस्वीकार नहीं कर सकता।

कौमन्स सभा की प्रधानता—कैबिनेट प्रणाली के विकास के साथ कौमन्स सभा की भी प्रधानता स्थापित हो गई। १६८८–८९ ई० की क्रान्ति के फलस्वरूप देश के कानून तथा कर-व्यवस्था पर पार्लियामेंट का अधिकार स्थापित हो गया था। यह अधिकार कौमन्स सभा को ही विशेष रूप से प्राप्त था। अतः धन के लिये राजा तथा लार्ड उसी पर निर्भर थे। १७१४ ई० के बाद कौमन्स सभा का प्रभाव और भी बढ़ गया। अभी हम लोगों ने देखा कि शासन का उत्तरदायित्व राजा से हटकर मन्त्रियों के ऊपर चला आया। किन्तु मन्त्रीगण स्वयं अपनी स्थिति के लिये कौमन्स

सभा पर निर्भर थे। इस सभा से बहुमत दल का सहयोग न मिलने पर मन्त्रिमंडल की स्थिति समाप्त हो जाती थी। अतः नीति निर्धारण करने का अन्तिम अधिकार तो कौमन्स सभा के ही हाथ में चला आया।

कैबिनट प्रणाली का विकास—अपूर्णता—इस समय कैबिनट प्रणाली का विकास तो अवश्य हुआ लेकिन पूर्ण विकास में अभी त्रुटियाँ रह गई थीं।

(क) प्रधान मन्त्री की पदवी लोकप्रिय और वैध पदवी नहीं थी। अतः इस पद पर रहते हुए भी मन्त्री अपने को इस नाम से पुकारना नहीं चाहते थे और स्वयं इस पदवी को अस्वीकार करते थे।

(ख) अभी सामूहिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त स्थापित न हो सका था। सभी मन्त्री व्यक्तिगत रूप से राजा को भिन्न-भिन्न राय दे सकते थे और एक ही साथ पद-त्याग करने के लिये बाध्य नहीं थे।

(ग) अभी राजा बिल्कुल प्रभाव-शून्य नहीं था। अभी भी उसकी शक्ति वर्तमान थी और मन्त्री उसकी कृपा के इच्छुक थे। सुसंगठित राजनैतिक दलों के अभाव में राजा का प्रभाव विशेष रूप से देखने में आता था। अतः किसी मन्त्रिमन्डल के निर्माण या पतन में अभी भी राजा का हाथ रहता था।

इस प्रकार १८ वीं सदी में मन्त्रियों को राजा और कौमन्स सभा के बहुमतवाले दल यानी दो मालिकों की सेवा पड़ती थी।

(ख) **कुलीनों की शक्ति**—दूसरी बात ध्यान में रखने की यह है कि कौमन्स सभा की प्रधानता तो स्थापित हुई, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि अब इंगलैंड में जनतन्त्र राज्य क़ायम हो गया। राजाओं की खोई हुई शक्ति जनता को प्राप्त न होकर कुलीनों को प्राप्त हुई। अतः अब शासन के क्षेत्र में कुलीनों की धाक जम गई। बड़े-बड़े पदों पर वे ही लोग विराजमान थे और छोटे-छोटे साधारण पदों पर भी प्रायः उनके ही सगे-सम्बन्धी नियुक्त होते थे। एक कैबिनट में आधे सदस्य ड्यूक थे और दूसरी में सिर्फ एक सदस्य जनता की श्रेणी का था। इस प्रकार राजा पर इनका बड़ा प्रभाव था और दोनों पार्लियामेंट में भी इन्हीं का बोलबाला था। इनकी इस 'असीम-शक्ति का आधार जमीन-जायदाद थी जो कुछ थोड़े से ही परिवारों के अन्दर सीमित थी। अभी देश कृषि प्रधान था और तत्कालीन ब्रिटिश समाज में इन भूमि पतियों का बड़ा सम्मान।

ह्विगों का प्रभुत्व और इसके कारण—इस कुलीन श्रेणी में अधिकतर ह्विग ही थे। अतः यह ठीक ही कहा गया है कि हैनोवर वंश के राज्यारोहण से केवल

कैबिनेट प्रणाली का ही विकास नहीं हुआ, बल्कि करीब ५० वर्षों के लिये ह्विग दल का प्रभुत्व भी स्थापित हो गया। इसके कारण थे :—

(१) राजाओं की कृपा—ह्विगों के ही समर्थन के कारण हैनोवेरियन वंश को इंगलैण्ड का राज्यसिंहासन प्राप्त हो सका था और राज्याभिषेक के बाद भी ह्विग ही उनके कट्टर समर्थक थे। इनके समर्थन के अभाव में राजाओं के लिये खतरा उपस्थित होना आसान था क्योंकि टोरी दल स्टुअर्ट वंश के पक्ष में था। अतः अपनी सुरक्षा के लिए प्रथम दोनों जार्ज ह्विगों पर ही निर्भर थे। इसलिये स्वाभाविक ही ह्विगों में इन राजाओं की कृतज्ञता तथा विश्वास की भावना बड़ी ही दृढ़ थी। अतः उन पर राजाओं की कृपा सदा बनी रहती थी।

(२) राजाओं पर नियन्त्रण—इसके सिवा जार्ज प्रथम तथा द्वितीय अङ्गरेजी भाषा और राजनीति से अनभिज्ञ थे। अतः शासन का सम्पूर्ण भार उन्होंने ह्विगों के मत्थे छोड़ दिया। अब नीति-निर्धारण का अधिकार ह्विग मन्त्रियों के हाथ में आ गया और वे ही देश के वास्तविक शासक बन बैठे। अब राजा उनके हाथ में कठ-पुतली बन गये। ह्विगों के हाथ में एक बड़ा ही प्रभावशाली अस्त्र प्राप्त हो गया। वह अस्त्र था राजकीय संरक्षणता (पेट्रोनेज ऑफ दी क्राउन)। इससे सर्वसाधारण में ह्विगों की धाक जम गई। अब लोगों का यह ख्याल हो गया कि उन्नति के लिये ह्विग पार्टी का सदस्य होना आवश्यक है। सरकारी अफसरों की नियुक्ति तथा उन्नति में इस बात का ध्यान रखा जाता था।

(३) टोरियों की खराब हालत—दूसरी ओर टोरियों की हालत बहुत ही खराब थी। टोरी दल वाले निर्वासित स्टुअर्टों के पक्षपाती थे और वे 'जैकोबाइट' कहलाते थे। जैकोबाइट शब्द अब बहुत बुरा माना जाता था और इसे सुनते ही अङ्गरेजों के हृदय में घृणा की भावना उत्पन्न हो जाती थी। बड़े-बड़े टोरी नेताओं पर राजद्रोह का अभियोग चलाया गया था। ऑक्सफोर्ड को कैद कर लिया गया था और बोलिंग ब्रुक देश ही छोड़ कर भाग गया था। इस तरह टोरी पार्टी छिन्न-भिन्न हो गई थी।

(४) ह्विगों के योग्य नेता—लेकिन ह्विग पार्टी बड़ी ही सुसंगठित अवस्था में थी। इसकी आर्थिक स्थिति खूब अच्छी थी।। इसमें वालपोल, पिट आदि जैसे बड़े बड़े प्रतिभाशाली और चतुर व्यक्ति वर्तमान थे। विषम तथा कठिन परिस्थिति में भी राष्ट्र का संचालन करने के लिये इन नेताओं में अद्‌भुत शक्ति भरी हुई थी।

(५) प्रगतिशील नीति—ह्विगों की नीति प्रगतिशील और लोकप्रिय थी। वे जनमत तथा शान्ति के पक्षपाती और महान् क्रान्ति के परिणामों के सच्चे समर्थक थे। वे देश में शान्ति स्थापित कर राष्ट्र की समृद्धि और शक्ति बढ़ाना चाहते थे। वे चर्च

का विरोध करना नहीं चाहते थे और अपने विरोधियों के प्रति उदार नीति रखते थे। अतः उनके पीछे देश का लोकमत था; उन्हें सर्वसाधारण की सहानुभूति प्राप्त थी। व्यापारी लोग ह्विगों के साथ थे और समय-समय पर धन से सहायता किया करते थे।

टोरियों की नीति इसके विपरीत थी। इसके सिवा एन के राज्यकाल में टोरियों ने डिसेंटरों को बहुत ही सताया था। अतः लोगों की दृष्टि में वे लोग नीचे गिर गये थे।

(६) शासन में जनता की दिलचस्पी का अभाव—सर्वसाधारण लोग राजनीति के विषय से निश्चिन्त रहते थे। उनकी दृष्टि में समाज में दो वर्ग थे—शासक और शासित। वे समझते थे कि धनीमानी, अमीर और जमींदार लोग शासक वर्ग में और गरीब किसान तथा मजदूर—सभी साधारण लोग शासित वर्ग में हैं। उनके दिमाग में यह बात जम गई थी कि शासक वर्ग का अनुसरण करना ही उनका परम कर्तव्य है; उनकी उन्नति का प्रथम और सर्वोत्तम सोपान है।

(७) पार्लियामेंट पर अधिकार—देश की पार्लियामेंट पर ह्विगों का अधिकार भी उनकी प्रधानता का एक प्रमुख कारण था। लार्ड सभा में उनका प्रभुत्व तो स्वाभाविक ही स्थापित था, कॉमन्स सभा में भी उन्हीं का बोलबाला था। १८३२ ई० तक जब कि प्रथम सुधार बिल पास हुआ, कौमन्स सभा का संगठन गणतन्त्र प्रथा के किसी स्वीकृत सिद्धान्त पर आधारित नहीं था। प्रतिनिधित्व और निर्वाचन प्रणालियों में असमानता तथा विषमता फैली हुई थी। कार्नवाल राजा की एक जागीर (डची) में पड़ता था, अतः कौमन्स सभा में वहाँ के उतने अधिक सदस्य थे जितने सम्पूर्ण स्कौटलैंड के। स्कौटिश प्रतिनिधि वहाँ की जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करते थे बल्कि कुछ इने गिने निर्वाचकों का ही प्रतिनिधित्व करते थे, क्योंकि स्कौटलैंड की २५ लाख की आबादी में केवल ३ हजार व्यक्ति निर्वाचक थे। वेस्ट मिनिस्टर के एक उपनिर्वाचन में जितने मतदाता उपस्थित होते थे उतने स्कौटलैंड के किसी साधारण चुनाव में आते थे। जिन मन्त्रियों का इंगलैंड से सम्बन्ध था। वे बहुत ही प्रभावशाली होते थे और सरकार के पक्ष में सदस्य प्राप्त करने के लिये खूब कोशिश करते थे। वालपोल के मंत्रित्व काल में ड्यूक ऑफ अर्जिल तथा उसके भाई की तूती बोल रही थी। पिट के समय में हेनरी डंडाज की इतनी धाक जमी हुई थी कि वह नवम् हेनरी के नाम से प्रसिद्ध हो रहा था। वेल्स के प्रतिनिधियों में एकता का अभाव था। जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधि नहीं भेजे जाते थे। बरमिंघम तथा मैन्चेस्टर आदि जैसे बड़े बड़े उन्नतिशील नगरों का कौमन्स सभा में बिल्कुल ही प्रतिनिधित्व नहीं था, लेकिन कई छोटे-छोटे पुराने तथा उजड़े हुए स्थानों को प्रतिनिधित्व प्राप्त था। प्रत्येक काउंटी और

प्रत्येक बौरों से दो दो सदस्य आते थे लेकिन उसकी आबादी या उसके महत्व का कोई विचार नहीं किया जाता था।

निर्वाचकों की संख्या भी जनसंख्या के अनुपात में बहुत ही कम थी। काउंटी और बौरो—सभी जगह जमींदारों का ही बोलबाला था। बाथ नगर में सिर्फ ३५ मतदाता थे। इंगलैंड और वेल्स के बौरो में कौरपोरेशन के सदस्यों को ही मतप्रदान करने का अधिकार प्राप्त था। इनमें से अधिकांश लोग अपना मत बेंच दिया करते थे। कुछ दूसरे बौरो में निर्वाचन-प्रणाली विभिन्न थी। संक्षेप में बौरो तीन प्रकार के थे—

(क) स्वतंत्र बौरो—जिनमें निर्वाचकों की संख्या तो थी लेकिन ऐसे बौरो की संख्या ही बहुत कम थी।

(ख) रौटेन बौरो—जिनमें निर्वाचकों की संख्या मामूली थी और वे घूस के द्वारा अमीरों के प्रभाव में रखे जाते थे।

(ग) पाकेट बौरो—जो किसी पड़ोसी जमींदार के नियन्त्रण में थे और उस जमींदार द्वारा ही वहाँ के सदस्य मनोनीत होते थे। इसे मनोनीत बौरो भी कहा जाता है। १८ वीं सदी के मध्य में ड्यूक ऑफ न्यूकैसल के प्रभाव से करीब ५० सदस्यों को जगह मिली थी।

उस समय के निर्वाचन क्षेत्र संकीर्ण और छोटे होते थे अतः धनीमानी लोग मतदताओं को आसानी से प्रभावित कर लेते थे। व्यक्तिगत प्रभाव के अभाव में घूस और धमकी से काम निकाला जाता था। गुप्त रीति से मत देने की प्रथा अभी नहीं चली थी, अतः अत्याचार होने के भय से मतदाता अपने स्वामी के इच्छानुसार ही मत प्रदान किया करते थे।

उस समय की राजनीति बड़ी ही स्वार्थ तथा कुरीति पूर्ण थी। यह सांसरिक उन्नति का एक साधनमात्र समझा जाता था। पार्टी या मन्त्रियों की राजभक्ति पर ही किसी का चुनाव निर्भर करता था। मन्त्री अपने समर्थकों और सम्बन्धियों को ऊँचे-ऊँचे पद दिया करते थे जिनमें काम तो कम था किन्तु वेतन अधिक मिलता था। कितने लोग तो सरकार के पक्ष में मत देने की शर्त पर ही छोटे छोटे पदों पर बैठाये जाते थे। इन्हें प्लेसमेन कहा जाता था और कौमन्स सभा में इनकी संख्या $\frac{1}{4}$ और कभी-कभी इससे भी अधिक हो जाती थी। इस प्रकार कौमन्स सभा में स्कौटिश सदस्य के सिवा इस प्रकार के सदस्य थे—स्वतन्त्र सदस्य, मनोनीत सदस्य, और प्लेसमेन आदि।

(८) ह्विगों की धन दौलत और निपुणता—इस प्रकार मतदाताओं को प्रभावित करने या खरीदने के लिये धन दौलत की बड़ी ही आवश्यकता थी। ह्विगों में बहुत से लोग बड़े बड़े भूमि पति थे जो धन दौलत से परिपूर्ण थे। उन्हें विलक्षण

बुद्धि भी प्राप्त थी। वे कूटनीति में बड़े ही प्रवीण थे। अतः प्रचलित प्रणाली में मतदाताओं के ऊपर नियन्त्रण रखना उनके लिये आसान कार्य था।

ह्विग शासन की प्रकृति

अल्पजनों का शासन स्वेच्छाचारिता और भ्रष्टाचार—ह्विग पार्टी में कुछ थोड़े से महान् परिवारों की ही प्रधानता थी। ग्रेनविल, पेल्हम, ग्रैफ्टन आदि जैसे वंश के ही लोग इसमें अपना सिक्का जमाये हुए थे। इस प्रकार ह्विग शासन अल्पजनों का ही शासन था (ओलिगार्की) और ये अल्पजन धनी मानी तथा उच्च वंश के लोग थे। वे स्वच्छाचारी शासक के समान शासन करते थे और उन्हें दूसरे की सुविधा का कोई विशेष ख्याल नहीं रहता था। वे अपने ही हाथों में सारी शक्ति को सीमिति रखना चाहते थे और इसके लिये वे बुरा से भी बुरा साधन अपनाने के लिये तैयार रहते थे। इनके तरीके बहुत ही बुरे थे; उन्हें न्याय और नैतिकता का कोई विचार नहीं था। उन्होंने घूस को एक प्रथा के रूप में कायम कर डाला और सार्वजनिक जीवन स्तर को नीचा कर दिया। घूस की प्रथा से पादरी तक भी प्रभावित होने लगे थे, और इसके कारण लोगों की दृष्टि में एँग्लिकन चर्च का महत्व घटने लगा था। इसके सिवा पार्लियामेंट में सम्पूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधित्व नहीं हो रहा था। टोरियों का पार्लियामेंट से बहिष्कार कर दिया गया था और बड़े बड़े पदों पर भी उनकी नियुक्त नहीं होती थी।

ह्विग ही पूर्ण दोषी नहीं—परन्तु ऐसी बुरी स्थिति के लिये केवल ह्विग ही उत्तरदायी नहीं थे। समय का भी कुछ दोष था। उस समय घूस रिश्वत एक नियम सा बन गया था और यह एक साधरण बात हो गई थी। १८ वीं सदी में भ्रष्टाचार सर्व व्यापक था। लोग राजनीति को लाभदायक व्यवसाय मानने लगे थे। मंत्री लोग अपने समर्थकों और सम्बन्धियों को प्रायः ऐसे ही पद पर नियुक्त करते थे जिनमें काम तो साधारण थे परन्तु वेतन अधिक प्राप्त होते थे। वालपोल का तीसरा पुत्र होरेस वालपोल अपने इटन के विद्यार्थी जीवन में ही ३०० पौ० वार्षिक आमदनी प्राप्त करता था; २० वर्ष से कम की उम्र में ही एक पद पर उसकी नियुक्ति भी हो गई जिसका मासिक वेतन १२५ पौंड था। उसके पिता की मृत्यु के बाद उसे चुंगी घर से भी १००० पौंड वार्षिक मिलने लगा था। उसके दूसरे सभी भाई भी इसी तरह के पद पर कहीं न कहीं नियुक्त हुए थे। मंत्री या गुट्ट के समर्थकों को भी भिन्न-भिन्न रूप में पर्याप्त उपहार मिलते थे। कितने शिक्षक बिना स्कूल में गये ही वेतन पाते थे, बिना परीक्षा लिये ही युनिवर्सिटियाँ डिग्रियाँ बेंचा करती थीं और बिना निर्वाचन के ही लोग पार्लियामेंट के सदस्य हो जाया करते थे।

महत्त्व—(१) महान् क्रांति के सिद्धांतों को कार्यान्वित करना—यह सब होते हुए भी ह्विगों ने अपने देश की बड़ी भलाई की। देश को उनसे अनेकों महत्त्वपूर्ण लाभ हुए। वे महान् क्रांति के सिद्धान्तों के कट्टर समर्थक थे। उन्हीं के शासन काल में अंगरेज लोग यह भूलने लगे थे कि मतभेद के लिये किसी को सताना, प्रेस की स्वतन्त्रता हड़पना, न्याय के क्षेत्र में हस्तक्षेप करना और पार्लियामेंट के बिना शासन करना भी असम्भव है।

(२) पार्टी सरकार की स्थापना—ह्विगों ने पार्टी सरकार कायम की। पार्टी प्रथा के कारण सुचारु रूप से शासन का कार्य होने लगा और किसी निश्चित नीति के मुताबिक कार्य करना आसान हो गया। अब कौमन्स सभा की स्थिति में स्थिरता प्राप्त होने लगी और इसके सदस्य पहले की अपेक्षा स्वतन्त्रता का अनुभव करने लगे। इससे देश की राजनीतिक प्रगति में बहुत बड़ी सहायता पहुँची।

(३) राष्ट्रीय विश्वास की पुनर्स्थापना—ह्विगों में बड़े-बड़े अर्थ शास्त्री और पूँजीपति थे। उनकी आर्थिक नीति उत्तम थी और उससे उन्हें राष्ट्रीय विकास को पुनर्स्थापित करने में पर्याप्त सफलता मिली।

(४) खेती, व्यापार और उपनिवेशों का विकास—खेती, व्यापार तथा उपनिवेशों के क्षेत्रों में भी विशेष उन्नति हुई। समुद्र पर अंगरेजों का प्रभुत्व स्थापित हो गया और इससे व्यापार तथा उपनिवेशों की वृद्धि में सहायता प्राप्त हुई।

इस प्रकार ह्विगों के शासन काल में इंगलैंड ने भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में तीव्र गति से उन्नति की और इससे देश तथा राष्ट्र का बहुत बड़ा कल्याण हुआ।

ह्विगों की प्रमुखता के समय (१७१४–६० ई०) ब्रिटेन की जो राजनीतिक व्यवस्था रही व ह उसके बाद भी १८३२ ई० तक कायम रही। जार्ज तृतीय ने भी अपने राजनीतिक उद्देश्यों की सफलता के लिये ह्विगों के ही तरीकों को अपनाया था। लोकसभा के सदस्यों के लिये बहुत से पेन्शन तथा पद सुरक्षित रखे जाते थे। उसके राज्यकाल में राजनीतिक सेवाओं के पुरस्कार स्वरूप पदवियाँ बाँटी जाती थीं और इस प्रकार ३८८ पीयरों की संख्या बढ़ा दी गई थी।

(१) सभी व्यक्ति भ्रष्टाचारी नहीं—किन्तु यह स्मरणीय है कि इस काल (१७१४–१८३२) की राजनीतिक व्यवस्था शत प्रतिशत त्रुटि पूर्ण ही नहीं थी। सभी राजनीतिज्ञ एक से स्वार्थी, संकीर्ण और नीच नहीं थे। न्यूकैसल के ड्यूक ने करीब ५० वर्षों तक लोक-सेवा की परन्तु मरने के समय उस पर दो लाख पौंड का ऋण था। दोनों पिटों की चेष्टाओं के फलस्वरूप राजनीति में कुछ हद तक आदर्श का भी प्रवेश हुआ। १८ वीं सदी के अन्त तक बहुत से पद तथा पेंशन उठा दिये गये। लोकमत

की उपेक्षा तो की जाती थी किन्तु इसके बहुत प्रबल होने पर बराबर इसकी उपेक्षा करना सम्भव भी न होता था और कौमन्स सभा का ध्यान इस ओर आकर्षित होकर ही रहता था।

(२) कौमन्स सभा में, दूसरे वर्गों का भी प्रतिनिधित्व—यह भी सत्य है कि इस काल में भूमिपतियों का भी प्रभुत्व था, किन्तु इसका यही अर्थ नहीं कि कौमन्स सभा में दूसरे वर्गों का प्रतिनिधित्व शून्यवत् था। उनकी प्रभुता तो थी ही परन्तु दूसरे लोगों को भी स्थान प्राप्त था। साधारण नागरिक, बुद्धिजीवी, व्यापारी, स्थल तथा जल सेना के कर्मचारी—सबों के प्रतिनिधि कौमन्स सभा में उपस्थित थे।

(३) सुयोग्य व्यक्तियों का प्रवेश—निर्वाचन एक बड़ा ही झंझटपूर्ण और खर्चीला मामला है जिसमें योग्य होते हुए भी शान्त प्रकृति तथा साधारण स्थिति के लोग भाग लेने में असमर्थ रहते हैं। १८ वीं सदी में ब्रिटेन में जो प्रचलित प्रणाली थी उसी के फलस्वरूप वालपोल जैसे शान्तिप्रिय और पिट जैसे गरीब व्यक्ति कौमन्स सभा में बड़ी आसानी से प्रवेश कर पाये और भयंकर स्थिति में भी बहुत ही कुशलता पूर्वक इन लोगों ने राष्ट्र का पथ-प्रदर्शन किया। इस तरह राष्ट्र को कई सुयोग्य व्यक्तियों की बहुमूल्य सेवाएँ प्राप्त हो सकीं।

(४) पार्लियामेंट का स्थायित्व—इस काल में पार्लियामेंट को बहुत कुछ स्थायित्व प्राप्त हो गया था। पार्लियामेंट को बार-बार भंग नहीं करना पड़ता था, बार-बार नये-नये सदस्यों का प्रवेश नहीं होता था; अतः नीति में शीघ्र परिवर्त्तन नहीं होता था। अधिकांश प्रतिनिधि अनुदार विचार के होते थे जो क्रांतिकारी परिवर्त्तन के विरोधी थे। इसीलिये देश में अधिकतर शान्ति तथा व्यवस्था कायम रही और धन दौलत की विशेष उन्नति हुई।

अध्याय २१

प्रथम दो जार्ज राजाओं के ह्विग मंत्री
(१७१४–६० ई०)

भूमिका—जार्ज प्रथम के राज्य काल में ह्विगों के चार बड़े नेता थे : टाउनशेन्ड, स्टैनहोप, सन्डरलैंड और वालपोल। टाउनशेन्ड निष्कपट और व्यवहारिक था पर कुशल राजनीतिज्ञ नहीं था। स्टैनहोप विद्वान् तथा सैनिक था। उसी ने माइनौर्का पर विजय प्राप्त की थी और ह्विग पार्टी का वही नेतृत्व कर रहा था। वालपोल तो बड़ा ही योग्य व्यक्ति था और अर्थशास्त्र में इसका कोई समकक्ष नहीं था। संडरलैंड मार्लबरा का दामाद था। वह कुशल राजनीतिज्ञ था परन्तु प्रतिज्ञा शाली नहीं था।

टाउनशेन्ड मंत्रिमंडल (१७१४–१७ ई०)

(१) टोरियों को सजा—सन् १७१४ ई० से १७१७ ई० तक टाउनशेन्ड प्रधान था। इस समय में कोई विशेष महत्त्वपूर्ण घटनाएँ नहीं हुईं। ह्विग सरकार सर्वप्रथम टोरियों को सजा देने के लिये उत्सुक थी। ह्विगों की दृष्टि में यूट्रेक्ट की सन्धि के समय अंगरेजी स्वार्थ का पूरा ध्यान नहीं रखा गया और टोरियों ने उत्तराधिकार निर्णायक कानून को भी उठाने की कोशिश की थी। अतः उन पर अभियोग चलाया गया। बोलिंग ब्रुक और औरमंड भाग कर विदेश चले गये। तो भी अटेन्डर ऐक्ट के द्वारा उन्हें अपराधी बोधित कर दिया गया। ऑक्सफोर्ड को पकड़ कर कारावास में दे दिया गया किन्तु दो वर्ष के बाद उस पर से अभियोग हटा दिया गया।

(२) जैकोबाइट विद्रोह का दमन और बलवा कानून—इस तरह टोरी पार्टी तितर-बितर हो गई। सन् १७१५ ई० में जैकोबाइट विद्रोह हुआ। सरकार ने उसका दमन किया और प्रमुख नेताओं को सजा दी। एक बलवा कानून पास कर मजिस्ट्रेटों के अधिकार बढ़ा दिये गये।[1]

[1] देखिये अध्याय २२

(३) सप्तवर्षीय कानून १७१६ ई०—सन् १६६२ और १६६४ ई० का तीन-वर्षीय कानून रद्द कर दिया गया जिसके द्वारा पार्लियामेंट की अवधि ३ वर्ष निश्चित की गई थी। अप १८१६ ई० में सतवर्षीय कानून पास कर पार्लियामेंट की अवधि सात वर्ष निश्चित की गई। ह्विगों को यह भय था कि नये निर्वाचन में कहीं टोरियों को बहुमत न प्राप्त हो जाय। इसी उद्देश्य से पार्लियामेंट की अवधि ही बढ़ा दी गई और पार्लियामेंट की अवधि बढ़ा कर ह्विगों ने अपनी शक्ति दृढ़ कर ली। अवधि लम्बी हो जाने के कारण कौमन्स सभा भी अपने निर्वाचकों तथा सम्राट से अधिक स्वतन्त्र हो गई। अब पहले की अपेक्षा गृह तथा वैदेशिक नीति में विशेष स्थायित्व कायम हो गया। लेकिन इसमें एक बुराई यह थी कि लोक-सभा के सदस्य अपने निर्वाचकों तथा सम्राट से बहुत अधिक समय के लिये स्वतन्त्र हो गये।

इस बीच वैदेशिक नीति को लेकर ह्विग नेताओं के बीच झगड़े हो रहे थे। स्टैनहोप और संडरलैंड रानी एन के समय के ह्विगों की नीति अपनाना चाहते थे। वे राजा की हैनोवर सम्बन्धी नीति के समर्थक थे और विदेशों में हस्तक्षेप करना चाहते थे। किन्तु टाउनशेन्ड तथा वालपोल ऐसी नीति के विरोधी थे। अतः राजा ने टाउनशेन्ड को पदच्युत कर दिया। इस पर वालपोल ने भी त्याग-पत्र दे दिया।

स्टेनहोप मन्त्रिमण्डल (१७१७–२० ई०)

(१) हाई चर्च विरोधिनी नीति (२) इन्डेम्निटी ऐक्ट—अब १७१७ ई० में स्टैनहोप मंत्रिमंडल कायम हुआ जो तीन वर्षों तक रहा। यह मंत्रिमंडल विशेष रूप से तत्पर था। इसकी धार्मिक नीति हाई चर्च के विरुद्ध थी। रानी एन के समय टोरी पार्लियामेंट ने दो असहिष्णुतापूर्ण कानूनों को पास किया था। ये ओकेजनल कन्फर्मिटी ऐक्ट और शिज्म ऐक्ट थे। ह्विगों ने इन कानूनों को रद्द कर दिया और इस तरह डिसेंटरों को मुक्ति प्रदान की। टेस्ट और कौरपोरेशन ऐक्ट के विरुद्ध जो डिसेंटर किसी पद पर बहाल किये गये थे उनके लिये प्रति वर्ष क्षमा कानून (इन्डेम्निटी ऐक्ट) पास किया जाता था।

(३) डिक्लेयरेटरी ऐक्ट १७१९ ई०—१७१६ ई० में आयरलैंड सम्बन्धी एक डिक्लेयरेटरी ऐक्ट पास हुआ जिसके द्वारा इस बात की घोषणा की गई कि ब्रिटिश पार्लियामेंट आयरलैंड के लिये कानून बना सकती है और यह कानून आयरिश पार्लियामेंट के द्वारा बनाये गये कानून से ऊपर समझा जायगा।

(४) पियरेज बिल १७१९ ई०—लार्ड सभा के सदस्यों की संख्या में वृद्धि को रोकने के लिये स्टेनहोप ने एक पियरेज बिल पेश किया। इसके द्वारा वर्तमान पीयरों

के अन्त होने पर केवल छः पियर बढ़ाये जा सकते थे। इस बिल का यह उद्देश्य था कि लार्ड सभा में ह्विग बहुमत कायम रखा जाय और टोरी मंत्रिमंडल भी इस बहुमत को समाप्त न कर सके। इसका एक दूसरा उद्देश्य भी था। जिस प्रकार सप्तवर्षीय कानून के द्वारा कौमन्स सभा को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई उसी प्रकार लार्ड सभा को भी राजा से स्वतन्त्र रखने की कोशिश की गई। इस बिल के पास हो जाने से राजा के एक उपयोगी विशेषाधिकार का अन्त हो जाता, शक्ति कुछ थोड़े से परिवारों के हाथों में हस्तान्तरित हो सीमित हो जाती और लार्ड सभा में इन्हीं का आधिपत्य स्थापित हो जाता। कौमन्स सभा के विरोध में विद्रोह के द्वारा ही इनकी यह शक्ति नष्ट की जा सकती थी। किन्तु यह बिल लार्ड सभा में तो पास हुआ पर कौमन्स सभा में वालपोल और टोरियों के विरोध के कारण यह अस्वीकार कर दिया गया।

(५) दक्खिनी समुद्र का बुलबुला—स्टैनहोप का पतन और वालपोल का उत्थान (१७२० ई०)—१७११ ई० में दक्खिनी समुद्रों में व्यापार करने के लिये एक कम्पनी का निर्माण हुआ। प्रशान्त महासागर से लेकर हौर्न अन्तरीप तक तिजारत करने के लिये इसी कम्पनी को एकाधिकार दे दिया गया। यूट्रेक्ट की सन्धि के द्वारा इंगलैंड को जो व्यापारिक सुविधायें प्राप्त हुई थीं वे सभी क्रमशः इसी कंपनी को दे दी गई। अब यह कंपनी दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करने लगी। शीघ्र ही यह इंगलैंड के बैंक का प्रतियोगी बन गई। उस समय राष्ट्रीय कर्ज अधिक था। जिस पर सरकार को बड़ा कड़ा सूद देना पड़ता था। आठ वर्षों के बाद इस कंपनी ने सारा राष्ट्रीय कर्ज ले लेने के लिये अपनी इच्छा प्रकट की। दूसरे शब्दों में यह सरकार का महाजन बनना चाहती थी और नकद या हिस्सा के द्वारा दूसरे महाजनों को खरीद लेना चाहती थी। इस रियायत के लिये उसने सरकार को पूरा धन देने का वादा भी किया था। अतः इसने अपने पक्ष में करने के लिये कई मंत्रियों को घूस भी दी। सरकार ने कंपनी की बात मान ली।

सरकार के साथ संबंध स्थापित होने के कारण कंपनी का खूब प्रचार हो गया और लोगों का इसमें विश्वास बढ़ गया। कर्ज पर जितना सूद मिलता था उससे कहीं अधिक लाभ की आशा लोगों के दिल में संचरित होने लगी। अतः इसमें हिस्सा खरीदने के लिये माँग बहुत बढ़ गई। अपने आभूषणों तथा दूसरे माल असबाबों को भी बेंच कर लोग इसमें हिस्से खरीदने के लिये उतारू हो गये। हिस्सा लेने में एक होड़ सी लग गई। इसके फलस्वरूप प्रत्येक हिस्से का मूल्य दस गुना बढ़ गया। १०० पौंड के हिस्से का मूल्य करीब १०५० पौंड हो गया। फिर भी बड़ी कठिनाई से ही हिस्सा मिल पाता था।

अब लाभ के लोभ से प्रेरित हो कई जाली कंपनियाँ कायम होने लगीं। एक कंपनी चिल्सी पार्क में मल्बरी वृक्षों के लगाने और रेशम के कीड़ों को पैदा करने के लिये कायम हुई थी। एक दूसरी कंपनी खारा पानी को शुद्ध करने के लिये स्थापित हुई। इस प्रकार १७५० ई० तक १०० से अधिक कंपनियाँ खुल गयीं और लोग सबों में हिस्से खरीदने लगे थे। किन्तु भयभीत होकर दक्खिनी समुद्र की कंपनी ने उन सभी कंपनियों पर मुकदमा चला दिया। अब भीषण प्रतिक्रिया शुरू हुई और दक्खिनी समुद्र का भी बुलबुला फूट गया। इसका भी दिवाला निकल गया। साझीदार लोग आतंकित हो गये और अपने रुपये को वापस लेने को छटपटाने लगे। कितने लोग अपना हिस्सा बेंच देने को उतावले थे किन्तु कोई खरीदार ही नहीं मिलता था। अतः हिस्से की कीमत बहुत गिर गई। जितनी तेजी से कीमत बढ़ी थी उससे भी अधिक तेजी से यह घट गयी और हजारों व्यक्ति बरबाद हो चले। कंपनी के संचालकों और मंत्रियों के विरुद्ध जोरों से आवाज उठने लगी। देश में तहलका मच गया। संचालकों के धन जायदाद का लूटपाट होने लगा। सरकार का सत्यानाश हो गया और साथ ही साथ स्टैनहोप पर अनाचार का अभियोग लगा कर उसे टावर में कैद कर लिया गया और वहाँ पर मूर्छित दशा में उसकी मृत्यु हो गई। चांसलर ने तो आत्महत्या ही कर ली और सन्डरलैंड ने पदत्याग कर दिया। अब वालपोल के लिये रास्ता साफ हो गया क्योंकि कंपनी के साथ उसका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध न था और वह अपने युग का योग्यतम अर्थशास्त्री समझा जाता था। सरकार में जनता को जो सन्देह पैदा हो गया था उसे उसने दूर कर दिया। उसने दक्खिनी समुद्र-कंपनी की स्थिति को सुधार डाला और यह फिर सुचारु रूप से काम करने लगी। सन् १७२१ ई० में जार्ज प्रथम ने उसे अपना प्रधान मंत्री बना डाला।

वालपोल मंत्रिमंडल १७२१-४२ ई०—संक्षिप्त जीवनी—राबर्ट वालपोल का जन्म १६७६ ई० में नौफोर्क के एक जमींदार घराने में हुआ था वह अपने पिता का तृतीय पुत्र था। जब उसकी अवस्था २५ वर्ष की थी तभी उसके पिता संसार से चल बसे। लेकिन इससे भी पहले उसके दो ज्येष्ठ भ्राताओं की मृत्यु हो चुकी थी। अतः पिता के मर जाने पर वालपोल ही पैतृक जमींदारी का अधिकारी हुआ जिसकी वार्षिक आमदनी २०० पौंड की थी। उसने ईटन और कैम्ब्रिज में अपनी शिक्षा प्राप्त की और १७०२ ई० में राइजिंग नाम के एक बौर. से कौमन्स सभा का सदस्य चुना गया। छः साल तक साधारण पदों पर कार्य करने के बाद १७०८ ई० में उसे युद्ध मंत्री बनाया गया। किन्तु उस पर धन दुरुपयोग करने का अभियोग लगा कर १७१२ ई० में उसे कुछ समय के लिये टावर में बन्द कर दिया गया।

१७१४ ई० में हैनोवर राजवंश के राज्याभिषेक के साथ उसका भाग्योदय हुआ। दूसरे साल वह कोषाध्यक्ष (चांसलर) के पद पर नियुक्त हुआ। उस समय राजा अपने हैनोवर की सुरक्षा के लिये ही विशेष उत्सुक रहता था और अपने कुछ कृपापात्रों को जायदाद देकर सन्तुष्ट रखना चाहता था। वालपोल को यह नीति पसंद नहीं थी और वह इसका विरोध करने लगा। इस प्रकार मंत्रीमंडल में मतभेद पैदा हो गया और १७१७ ई० में पदत्याग कर वह विरोधी पक्ष में शामिल हो गया। १७१९ ई० में उसी के विरोध के फलस्वरूप पियरेज बिल कॉमन्स सभा में अस्वीकार हो सका। इस बीच दक्खिनी समुद्र-कम्पनी संबंधी घटना घटी और वालपोल का सितारा चमक उठा। १७२१ ई० में उसे ही प्रधान मंत्री बना दिया गया। २१ वर्षों तक वह इस पद पर रहा। १७४२ ई० में उसने पदत्याग किया और राजा ने उसे ऑक्सफर्ड का अर्ल बना कर कुछ पेंशन मंजूर कर दी। इसके तीन वर्षों के बाद वह परलोक सिधार गया।

चरित्र (सद्गुण)—वालपोल एक कुलीन घराने का व्यक्ति था और वह अपने गुणों तथा योग्यता के ही बल पर इंगलैंड का प्रधान मंत्री बन गया। वह सुशील, प्रसन्नचित, मिलनसार, धैर्यशील और परिश्रमी था। वह खेल तमाशों में भी दिलचस्पी रखता था और सर्वप्रथम शिकार संबंधी डाकों को ही पढ़ता था। वह व्यावहारिक पुरुष था और दूसरों की योग्यता परखने की उसमें शक्ति थी। वह मुसीबतों की परवाह नहीं करता था और उसे कोई चिन्ता नहीं सताती थी। वह कहा करता था—"मैं अपने कपड़ों के साथ अपनी चिन्ताओं को भी फेंक देता हूँ।" वह बड़ा ही आत्म-विश्वासी था और पहले ही से कहा करता था कि वह इंगलैंड के बड़े से बड़े पद पर आसीन होगा। वह सहिष्णु भी बढ़ चढ़ कर था। आलोचना तथा विरोध सहने की उसमें विलक्षण क्षमता थी। वह अपने विरोधियों तथा आलोचकों के साथ बदला चुकाने की भावना से नहीं जलता था। साधारण दंड तो वह अवश्य ही दिया करता था किन्तु किसी पर अभियोग चलाने की कोशिश नहीं करता था। सब होते हुए भी उसने भाषण, लेख तथा सभा पर कभी कड़ा नियन्त्रण नहीं लगाया।

दुर्गुण—उसमें जैसे ही बड़े-बड़े गुण थे वैसे ही बड़े-बड़े अवगुण भी थे। वह अपने समय की त्रुटियों से मुक्त नहीं था। वह मानवी दुर्बलताओं का शिकार था। उसका कोई उच्च आदर्श नहीं था। वह स्वयं ही कहा करता था कि मैं न तो कोई सन्त हूँ और न कोई सुधारक। उसमें प्रतिभा और नैतिकता का अभाव था। मानवी प्रकृति के विषय में उसके विचार बहुत तुच्छ थे। अपने स्वार्थ साधन के लिये वह नीच से नीच कर्म भी कर सकता था। उसे पदवी, जागीर (प्लेस), पेंशन और नगद के रूप में घूस देने या लेने में कोई हिचकिचाहट नहीं थी। उसने घूसखोरी को

नियम का ही रूप दे डाला था। उसका यह प्रधान उद्देश्य था कि वह अपनी पार्टी की शक्ति सुरक्षित रखे और इसमें उसकी प्रधानता बनी रहे। वह चिड़चिड़ा, अशिष्ट, कठोर, असहिष्णु, अहंकारी और भ्रष्ट था। वह दूसरों पर रोब जमाना चाहता था किन्तु अपने ऊपर दूसरों का रोब नहीं बर्दाश्त करता था। वह बहुत बड़ा वक्ता नहीं था किन्तु वाद विवाद में कुशल था। वह शक्ति तथा पद का लोलुप था। १७३९ ई० में जब अपनी इच्छा के विरुद्ध स्पेन से लड़ने को बाध्य हुआ तो भी उसने पदत्याग नहीं किया। उसके चरित्र और नीति से देश का सार्वजनिक जीवनस्तर नीचा हो गया। उसने अपने राष्ट्र को सुखी तो बनाया किन्तु उसे महान् नहीं बना सका। फिर भी इन सभी अवगुणों के होने पर भी इंगलैंड के महान् राजनीतिज्ञों में उसकी गिनती होती है।

१. सामान्य नीति—वैधानिक शासन का समर्थक—वह पिम के बाद एक महान् पार्लियामेंट मैनेजर था। वह १७०२ ई० में पार्लियामेंट का सदस्य हुआ किन्तु उसका सक्रिय राजनैतिक जीवन जार्ज प्रथम के राज्याभिषेक के साथ शुरू हुआ। वह प्रोटेस्टेंट उत्तराधिकार और वैधानिक शासन का कट्टर समर्थक था और उन्हें सुदृढ़ करने के लिये उसने सभी सम्भव उपायों का आश्रय लिया। वह ह्विग पार्टी का सदस्य था और पार्लियामेंट में इस पार्टी का बहुमत बनाये रखने के लिये कुछ भी उठा नहीं रखता था। जो मन्त्री उसकी राय से सहमत नहीं होता था उसे वह कैबिनेट से निकाल देता था।

शान्ति और समृद्धि का पक्षपाती—उसे जैकोबाइट विद्रोह का भय था और उसके विचार में किसी भी युद्ध से जैकोबाइटों को प्रोत्साहन मिलता। अतः वह युद्ध विरोधी नीति का समर्थक था। इसके सिवा वह समझता था कि पिछले बड़े लम्बे युद्धों के कारण देश निर्धन तथा शिथिल हो गया है, अतः वह इसे चंचल तथा समृद्धि शाली बनाना चाहता था। इसके लिये भी शान्ति की ही आवश्यकता थी। इसी लिये उसने युद्धनीति का विरोध करते हुए शान्ति तथा निष्क्रियता की नीति अपनायी वह कहता था—'सोये हुए कुत्ते को छोड़ दो।' इसका यह अर्थ था कि वह किसी राष्ट्र के आन्तरिक मामले में नहीं पड़ना चाहता था जिससे युद्ध की सम्भावना होती। इस प्रकार उसके समय में बड़ी घटना या लड़ाई नहीं हुई। उसका शासन उत्साह-हीन रहा। इसीलिये यह कहा गया है कि 'वालपोल के २१ वर्षों के शासन का इतिहास में कोई बड़ा स्थान नहीं है।' लेकिन यह कथन शत प्रतिशत ठीक नहीं है। इसमें सत्यता का कुछ ही अंश है। यद्यपि वालपोल का शासन वैदेशिक क्षेत्र में नगण्य था, फिर भी घरेलू क्षेत्र में उसका दीर्घकालीन शासन बड़ा ही महत्वपूर्ण रहा है।

२. आर्थिक नीति, कम्पनी की स्थिति में सुधार, कर्ज के सूद और अन्य खर्चों में कमी—इंगलैंड के आर्थिक इतिहास में वालपोल का शासन बड़ा ही

प्रसिद्ध है। वह अर्थशास्त्र में बड़ा ही निपुण था और दक्खिनी सामुद्रिक आतंक के समय उसकी इस निपुणता का परिचय लोगों को खूब मिल गया। उसने शीघ्र ही कम्पनी में लोगों का विश्वास पैदा कर दिया। उसने कम्पनी के हिस्सों की अच्छी व्यवस्था कर दी। प्रत्येक हिस्से का मूल्य १३५ पौंड पर रोक दिया और सभी साझी-दारों को उसके हिस्से का ⅓ मूल्य वापस कर दिया। संचालकों की २० लाख पौंड की जायदाद जब्त करके ही यह रकम प्राप्त की गई थी। सरकार के साथ कम्पनी का जो समझौता हुआ था, वालपोल ने उसे रद्द कर राष्ट्रीय कर्ज का उत्तरदायित्व पुनः ले लिया। इसमें कमी करने के लिये भी वह प्रयत्नशील रहा। राष्ट्रीय कर्ज का सूद बजट में शामिल रहता था किन्तु वालपोल ने सूद आधा कम कर दिया और इससे जो बचत हुई उसे ऋण के चुकाने में खर्च किया जाने लगा। वह सरकार के कितने खर्चों को भी घटा कर कुछ रकम बचाने लगा।

शुल्क सूची में सुधार—उस समय देश में प्रायः सभी चीजों के आयात निर्यात पर प्रायः चुंगी लगा दी जाती थी जिससे वाणिज्य-व्यवसाय के विकास में बड़ी बाधा पड़ती थी। यूरोप भर में इंगलैंड की शुल्क सूची (टारिफ) खराब तथा अनिश्चित थी। अतः उसने आयात निर्यात की बहुत सी चीजों पर से चुंगी हटा दी, शुल्क सूची में सुधार कर दिया और इस प्रकार उसने स्वतंत्र व्यापार की नीति की नीव डाली। वह अपने देश के पक्के मालों की निर्यात और विदेशों के कच्चे मालों की आयात को ही विशेष प्रोत्साहन देता था। इसी उद्देश्य से उसने औपनिवेशिक व्यापार का भी कई दिशाओं में नियन्त्रण किया था।

एक्साइज बिल—१७३३ ई० में वालपोल ने एक एक्ससाइज बिल पेश किया। शराब और तम्बाकू पर चुंगी बन्दरगाहों में लगती थी उसे वह विक्रय स्थानों में आब-कारी (एक्ससाईज) के रूप में बदल देना चाहता था। इसमें उसके तीन उद्देश्य थे :— (क) चोर बाजारी को रोकना, (ख) रेवेन्यु में वृद्धि करना; (ग) इंगलैंड को एक केन्द्रीय बाजार बनाना। उसकी नीति तो बड़ी अच्छी थी किन्तु दो कारणों से बिल का घोर विरोध किया गया—(क) एक्साइज शब्द डचों से लिया गया था लेकिन डच लोग इंगलैंड में बहुत ही अप्रिय और बदनाम हो गये थे। (ख) बहुत से लोगों ने यह समझा कि आबकारी विभाग के अफसर चुनाव को प्रभावित करेंगे और बकाया वसूल करने के लिए घरों की तलाशी करने लगेंगे। अतः अंगरेजों की स्वतन्त्रता चली जायगी और जीवन भार स्वरूप बन जायगा। अतः सड़कों पर जुलूस निकलने लगे और नारे लगाये जाने लगे कि 'आबकारी नहीं; गुलामी नहीं' 'चुंगी नहीं, हुदंग नहीं' आदि। कौमन्स सभा के अन्दर भी विरोधी दल के द्वारा बिल की कटु आलोचना की

गई। खून खतरा होने के भय से वालपोल ने लोकमत के सामने अपनी हार मान ली और बिल को वापस ले लिया।

३. धार्मिक नीति—धार्मिक क्षेत्र में उत्साह का अभाव था। पुराने धार्मिक झगड़ों का अन्त हो गया था। वालपोल चर्च को असन्तुष्ट किये बिना ही डिसेंटरों को सन्तुष्ट करना चाहता था। अतः डिसेंटरों के विरुद्ध जो कानून थे उन्हें विधिवत् रद्द तो नहीं किया गया, किन्तु वार्षिक क्षमा कानून के द्वारा डिसेंटरों को पदों पर नियुक्त होने के लिये आज्ञा दे दी जाती थी। इससे डिसेंटरों को तो लाभ होता था परन्तु वालपोल जैसे एक उच्च शासक के लिये इस तरह कानून भंग में सहायक होना उचित नहीं था।

४. वैधानिक नीति—कैबिनेट प्रणाली का विकास—कैबिनेट शासन प्रणाली के विकास में उसका शासन एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। उसी के समय में कैबिनेट शासन प्रणाली की कुछ विशेषताएँ कायम हो गयीं जो अब तक प्रचलित हैं। अतः ठीक ही उसे इंगलैंड का प्रधान मंत्री कहा गया है। अपने सभी धार्मिक सहकर्मियों की नियुक्ति वही करता था और सम्मिलित उत्तरदायित्व पर जोर देता था। कैबिनेट में प्रधान मंत्री के पद को उसने सर्वोच्च बनाया। उसका विचार था कि दूसरे सभी मंत्री प्रधान मंत्री की नीति को स्वीकार करें और उसके प्रति आज्ञाकारी बने रहें। इस तरह मंत्री केवल उसके सहयोगी नहीं थे बल्कि उसके अधीन भी थे, जो मंत्री स्वतन्त्र रहना चाहता था उसके लिये पदत्याग के सिवा और कोई चारा नहीं था। कार्यकारिणी का वही सर्व प्रधान बन बैठा और राजा का एकमात्र परामर्शदाता भी स्वयं बनना चाहता था। राजा के कृपापात्र होने पर भी वालपोल ने १७२४ ई० में राज्य-मंत्री कार्टरेट (सेक्रेटरी ऑफ स्टेट) को पदच्युत कर दिया जो फ्रांस के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने की उसकी नीति का विरोधी था। दूसरे साल उसने पुल्टनी नाम के एक योग्य ह्विग को त्याग दिया। इतना ही नहीं, उसने १७३० ई० में टाउनसेन्ड जैसे अपने निकट सम्बन्धी को भी मतभेद होने पर पदच्युत कर दिया जिसे खेतिहर तक होने के लिये बाध्य होना पड़ा। इस प्रकार वह अपने सहकारियों पर कड़ा नियंत्रण रखता था, अतः लोग उसे 'ह्विगों का ड्रिल सर्जेण्ट' कहने लगे थे।

कौमन्स सभा की प्रधानता—कैबिनेट शासन प्रणाली के विकास के साथ कौमन्स सभा की प्रधानता भी स्थापित हुई। कैबिनेट की स्थिति इसी सभा की बहुमत वाली पार्टी पर निर्भर थी, यानी यही पार्टी कैबिनेट का निर्माण करती थी। वालपोल ने इस दल नीति के सिद्धान्त को भी दृढ़ कर दिया। वह कौमन्स सभा में अपनी पार्टी के बहुमत को बनाये रखने के लिये सतत प्रयत्नशील रहा और १७४२ ई० में इस बहुमत के अभाव में राजा का विश्वासपात्र होते हुए भी उसने पदत्याग कर दिया।

कैबिनेट प्रणाली की अपूर्णता—इन सभी विशेषताओं के होते हुए भी आधुनिक कैबिनेट प्रणाली का वह कट्टर समर्थक नहीं था। वह सभी मन्त्रियों के साथ नहीं, बल्कि कुछ इने गिने मन्त्रियों के साथ ही शासन सम्बन्धी विषयों पर विचार विमर्श करता था। वह प्रधान मन्त्री की पदवी को भी पसन्द नहीं करता था। मन्त्री राजा को व्यक्तिगत और विरोधी राय भी देते थे फिर भी पदत्याग नहीं करते थे। राजा की शक्ति अभी भी मजबूत थी और वह किसी भी मंत्रिमंडल का पतन करा सकता था। मन्त्री अपने अधिकार के लिये अभी पूर्ण रूप से कॉमन्स सभा पर निर्भर नहीं थे और राजा की खोई हुई शक्ति जनता को न मिलकर कुलीनों को ही प्राप्त हुई।

५. स्कॉटिश नीति—पोर्टियस विद्रोह (१७३६) ई०—यों तो स्कॉटलैंड में शान्ति रही किन्तु १७३६ ई० में एक दुर्घटना घटी। एडिनबरा में विद्रोह हुआ जो पोर्टियस विद्रोह के नाम से प्रसिद्ध है। १७०७ ई० में इंगलैंड और स्कॉटलैंड का संयोग होने से पहले स्कॉटों को कम चुंगी देनी पड़ती थी लेकिन १७०७ ई० के बाद समानता स्थापित करने के लिये उस चुंगी में पहले की अपेक्षा वृद्धि कर दी गई। स्कॉट इन चुंगियों को चुकती नहीं करना चाहते थे। अतः इनसे बचने के लिये गुप्त रूप से व्यापार होने लगा। और देश में चोरबाजारियों का विस्तार होने लगा। १७३६ ई० में एक प्रमुख चोरव्यापारी को प्राणदंड दे देने के लिये सरकार ने हुक्म दे दिया। उसकी फाँसी होने के समय उसकी सहानुभूति में एक बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गई। उसकी फाँसी तो हो गई किन्तु भीड़ में हलचल मच गई और नगर रक्षक सेना पर पत्थर फेंके जाने लगे। सेना के कप्तान पोर्टियस ने भीड़ पर गोली चलवा दी। अब लोग बड़े उत्तेजित हो उठे और हलचल भी बहुत बढ़ गई। पोर्टियस पर मुकद्दमा चला और उसे फाँसी की सजा मिली। किन्तु सरकार ने उसकी सजा को स्थगित कर दिया। इस पर भीड़ ने बलवा कर दिया, लोग कैदखाने में घुस गये और पोर्टियस को पकड़ कर फाँसी के तख्ते पर लटका दिये। इस पर वालपोल रंज होकर एडिनबरा शहर को सजा देने के लिये एक बिल पास करना चाहता था। इसकी शर्तें बड़ी कड़ी थीं; प्रस्तावित दंड बड़े कठोर थे। वह इसके चार्टर को छीन लेना चाहता था जिससे वहाँ के नागरिकों की स्वतंत्रता का अपहरण हो जाता। विपक्षी दल ने वालपोल की इस नीति का फिर घोर विरोध किया। सरकार के पक्ष में मत देने के लिये वेतन पानेवाले स्कॉटिश सदस्य भी इस बिल का समर्थन नहीं किये। इस विरोध के कारण उसने अपनी शर्तों में कुछ परिवर्त्तन किया किन्तु अब तक उसकी बहुत बदनामी हो चुकी थी। स्कॉटलैंड का प्रभावशाली व्यक्ति अर्गिल का ड्यूक भी वालपोल से असन्तुष्ट हो गया था। स्कॉटलैंड में वालपोल का प्रभाव

बहुत घट गया। इसका प्रमाण यह था कि १७४१ ई० की नई पार्लियामेंट में केवल छः ही स्कौटिश सदस्य उसके पक्ष में रहे। पोर्टियस की पत्नी को पेंशन देने के लिये एक प्रस्ताव पेश किया गया जो बड़ी कठिनाई से पास हो सका।

यह सब होते हुए भी वालपोल के समय से ही पहाड़ी बाशिन्दों को शिक्षा मिलने लगी। जेनरल वेड के परिश्रम से कई सड़कें बनवायी गयीं, कई किलों का भी निर्माण किया गया। इस तरह पहाड़ियों को कई लाभ प्रदान किये गये।

६. आयरिश नीति—वूड का मामला—आयरलैंड में भी उसके शासन की शिकायत रही। १७१६ ई० के डिक्लेयरेटरी ऐक्ट के पास होने से आयरिश असन्तुष्ट और क्रुद्ध थे। वालपोल की नीति से उसमें और वृद्धि हो गई। आयरिश मुद्रा की हालत बहुत खराब हो गई थी और इसे ठीक सुधारने के लिये ही १७२३ ई० में वूड नाम के एक अङ्गरेज लोहार को आयरलैंड के लिये ताम्बे के सिक्के बनाने का ठीका दे दिया गया। यह इतना लाभप्रद व्यवसाय था कि इसके लिये वूड ने रानी को घूस तक भी दिया था। इस सम्बन्ध में आयरिशों ने कोई राय नहीं ली गयी थी। इस पर आयरलैण्ड में बहुत शोरगुल मचा। डीन स्वीफ्ट ने अपने व्यंग्यात्मक ड्रैपियर के पत्रों में ह्विग सरकार की बड़ी आलोचना की कि वह राजा के कृपापात्रों के लिये आयरलैंड का बलिदान कर रही है। आयरलैंड पर अङ्गरेजी सत्ता के खिलाफ यह प्रथम लोक विरोध था। इससे प्रभावित होकर वालपोल ने ठीका सम्बन्धी सरकारी स्वीकृति वापस ही ले ली।

७. औपनिवेशिक नीति—उपनिवेशों से मित्रता—उपनिवेशों के विकास में वालपोल ने कोई दिलचस्पी नहीं ली, किन्तु उनके साथ मित्रता कायम रखी। अङ्गरेजी नियंत्रण से अमेरिकन उपनिवेश रूब्ध रहे थे। लेकिन स्वतन्त्र व्यापार की नीति कुछ हद तक अपना कर वालपोल ने उनकी शिकायत कुछ अंश तक दूर कर दी। इसके सिवा उस समय भी कुछ लोग अमेरिकन उपनिवेशों पर कर लगाने के पक्ष में थे किन्तु वालपोल ऐसे प्रस्ताव से कभी भी सहमत नहीं हुआ क्योंकि उसे इससे हानि ही हानि होने की अधिक आशंका थी। वह किसी भी तरह उपनिवेशों से झगड़ा मोल लेना नहीं चाहता था। गवर्नरों और जजों पर अपना दबाव कायम रखने के लिये वे उपनिवेश उनके वार्षिक वेतन को ना मंजूर या उसमें कमीवेशी किया करते थे। इसकी शिकायत किये जाने पर वालपोल ने उन अफसरों को राय दी कि जो कुछ मिले वे उसे स्वीकार कर लें और किसी प्रकार से संघर्ष न करें। इसी समय १३ वाँ उपनिवेश जार्जिया की भी स्थापना हुई। परन्तु उसने उपनिवेशों को इतनी व्यापारिक स्वतन्त्रता नहीं दी जिससे ब्रिटिश व्यापार को धक्का पहुँचता।

उपनिवेशों को उन्हीं मालों का व्यापार स्वतन्त्र रूप से करने की आज्ञा दी गई जिनकी ब्रिटिश मालों से कोई प्रतियोगिता नहीं थी। इसके बाद तो औपनिवेशिक व्यापार पर उसने पूरा नियंत्रण रखा। जैसे—

(क) उपनिवेश निवासी अच्छी और सस्ती होने के कारण फ्रांसीसी पश्चिमी द्वीपसमूह से ही चीनी खरीदते थे और अङ्गरेजी पश्चिमी द्वीपसमूह से नहीं। वालपोल ने इसे रोकने की चेष्टा की और १७३३ ई० में एक 'मोलासेज-ऐक्ट' पास किया जिसके द्वारा उसने विदेशी चीनी के आयात पर निषेधात्मक चुंगी लगा दी। इसके सिवा (ख) उसने उपनिवेशों में हैट बनाने या तांबा गलाने पर भी रोक लगा दी थी। (ग) इंगलैंड में उपनिवेशों से भेजे जाने वाले मालों की सूची में इसने कुछ और चीज़ बढ़ा दीं।

८. वालपोल और विरोध पक्ष—यद्यपि वालपोल अपने मंत्रिमंडल में प्रधान था, उसे दूसरी दिशाओं से संगठित विरोध पक्षों का सामना करना पड़ा। पार्टी के आधार पर विरोध पत्र का निर्माण नहीं हुआ था, इसमें भिन्न-भिन्न मत के लोग शामिल थे जैसे टोरी, ह्विग और दूसरे मतावलम्बी।

देशभक्त ह्विग (पैट्रियट ह्विग)—पदच्युत किये गये मंत्री और कई पुराने ह्विग एक साथ मिलकर अपने को देशभक्त ह्विग (पैट्रियट ह्विग) कहने लगे और हौसला तथा भ्रष्टाचार के लिये वालपोल की कड़ी निन्दा करने लगे। वालपोल उन सबों को घृणा की दृष्टि से देखने लगा और उसने कहा—'इन सभी लोगों का भी मूल्य है' किन्तु उसने अपने विरोधियों को आवश्यक मूल्य देकर खरीदने से अस्वीकार कर दिया और कम योग्यता वाले किन्तु अधिक विश्वसनीय लोगों के साथ मिलकर वह शासन करता रहा।

लड़के (Boys)—बाद के कितने ह्विगों ने भी देशभक्तों का साथ दिया। वालपोल ने इन लोगों को उपेक्षा करने के ख्याल से 'लड़के' (Boys) कह कर पुकारने लगा और इनकी हँसी उड़ाने लगा। इनके बीच विलियम पिट नाम का एक बड़ा ही योग्य और प्रतिभाशाली व्यक्ति था जो वालपोल का बहुत बड़ा विरोधी था।

नये टोरी—बोलिंगब्रुक टोरियों का एक प्रधान नेता था। पहले वह स्टुअर्ट घराने का समर्थक था—लेकिन पीछे उसने हैनोवर घराने से सन्धि कर ली और राजनीति में भाग लेने की प्रतिज्ञा की। वह लार्ड सभा में बैठ या बोल नहीं सकता था। तब उसे १७२३ ई० में विदेश से इंगलैंड लौटने दिया गया। अब उसने एक नई टोरी पार्टी स्थापित की जो राजा के पक्ष में थी। वह ह्विगों के विरुद्ध राजा की शक्ति दृढ़ करना चाहता था, लेकिन जार्ज द्वितीय को अपने पक्ष में करने में असमर्थ होने पर उसने उसके लड़के फ्रेडरिक को प्रभावित किया और अपने पक्ष

में मिलाया। वह "क्रैफ्ट्समैन" नामक एक साप्ताहिक अखबार प्रकाशित करने लगा और वालपोल को अन्याय तथा अत्याचार का दानव कह कर उसकी कटु आलोचना करने लगा। १७३५ ई० तक वह राजनीतिक क्षेत्र से दूर हट गया किन्तु 'देशभक्त राजा' (पैट्रियट किंग) नाम की एक बड़ी ही सुन्दर पुस्तिका लिखी। इसमें उसने एक सच्चे राजा के कर्त्तव्य पर प्रकाश दिया और बतलाया कि राजा को ही अपनी प्रजा का नेता बनना चाहिये और किसी भी खास पार्टी से सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये।

जेम्स थौम्पसन तथा डीन स्वीफ्ट के जैसे कुछ साहित्यिक व्यक्ति भी विरोधी पक्ष में शामिल थे। इस तरह वालपोल के विरुद्ध एक जबर्दस्त शक्ति पैदा हो गयी थी।

परन्तु धन्य थी वालपोल की शक्ति! इस महान् विरोध की स्थिति में भी उसने राजा के समर्थन और अपनी निपुणता से पार्लियामेंट में अपना बहुमत बनाये रखा और इक्कीस वर्षों तक राष्ट्र का कर्णधार बना रहा।

वालपोल का पतन—एक्साइज बिल (आबकारी बिल) और पोर्टियस विद्रोह के कारण वालपोल की बहुत बदनामी हो चुकी थी, १७३७ ई० में उसकी एक बड़ी सहायिका रानी कैरालाइन की भी मृत्यु हो गयी। दो वर्षों के बाद वालपोल की इच्छा के विरुद्ध स्पेन के साथ युद्ध घोषित कर दिया गया जिसमें इंगलैंड अप्रतिष्ठित हुआ। युद्ध का संचालन सुचारु रूप से नहीं हो रहा था, अतः लोकमत उसके विरुद्ध होने लगा और १७४२ ई० में कौमन्स सभा में उसके बहुमत का अन्त हो गया जिसमें उसे पदत्याग करना पड़ा। किन्तु देश ने उसकी सेवाओं को नहीं भूला, वह ऑक्सफोर्ड का अर्ल बना दिया गया और उसे ४०० पौंड वार्षिक पेंशन मंजूर कर दिया गया। इसके तीन वर्ष बाद १७४५ ई० में ६६ वर्ष की उम्र में उसकी मृत्यु हो गई।

आलोचना—हम लोग पहले देख चुके हैं कि वालपोल में कई त्रुटियाँ थीं, फिर भी उसने अपने राष्ट्र और देश की सेवा करने में कुछ भी उठा नहीं रखा। यद्यपि उसके साधन कुटिल थे, फिर भी उसके लक्ष्य देशभक्ति और सम्मानपूर्ण थे। "इस प्रतिभाशाली तथा व्यावहारिक व्यक्ति की उपेक्षा बहुत से महान् राजनीतिज्ञों ने अपने देश की भलाई कम ही की है।"[1] उस समय इंगलैंड में उत्तराधिकार विवाद और संघर्ष का विषय बन गया था, वहाँ का राजा अप्रिय हो गया था, पार्लियामेंट कलह-प्रिय थी और लोग युद्ध प्रिय हो गये थे। किन्तु वालपोल ने इक्कीस वर्षों तक देश में शान्ति स्थापित रखी। उसने देश को बाहरी खतरों से सुरक्षित रखा और आन्तरिक स्थिति सुदृढ़ की। इस तरह उसने राष्ट्र की बड़ी सेवा की। पिछले ८० वर्षों से इंगलैंड विद्रोह और क्रान्ति का शिकार बना हुआ था और अब उसे शान्ति की ही आवश्य-

[1] टाउट—ऐडवान्सड हिस्ट्री ऑफ ग्रेट ब्रिटेन, पृष्ठ ५४७

कता थी। वालपोल ने इस आवश्यकता की बड़ी खूबी के साथ पूर्ति की। अब इंगलैंड अपनी खोई हुई शक्ति को प्राप्त कर सका और आगे चलकर इससे बहुत फायदा हुआ। 'यह ग्रेट ब्रिटेन के लिये बड़े सौभाग्य की बात थी कि वह वालपोल के नेतृत्व में मोटा ताजा बन गया और उसके बाद उसे कार्य में तत्पर करने के लिये पिट जैसा नेता प्राप्त हुआ।'[1] उसकी इस नीति से देश समृद्धिशाली बन गया क्योंकि व्यापार और वाणिज्य के विकास के लिये उसे सुअवसर मिल गया। इस तरह धन-दौलत में वृद्धि होने से अगली सदी के युद्धों का बोझ ढोने के लिये राष्ट्र योग्य बन सका। इससे प्रभावित होकर लोग हैनोवेरियन घराने के उत्तराधिकार का समर्थन करने लगे जिससे इसकी स्थिति सुरक्षित हो गई। उसने पार्लियामेंट की स्थिति भी सुधार ली और कौमन्स सभा को राज्य में शक्तिशाली संस्था बना दी। उसने कैबिनेट प्रणाली को एक नये रूप में ढाल दिया और लोगों को शान्तिप्रिय बना डाला।

इस प्रकार उसके शासन काल में कई बुराइयाँ दूर हो गयीं। वालपोल कुशल अर्थशास्त्री था, इस दृष्टि से उसकी तुलना छोटे पिट और पील्ड के साथ की जा सकती है। उसी ने स्वतंत्र व्यापार की नीति को प्रारम्भ किया और यदि उसे मौका मिलता तो देश का बहुत बड़ा कल्याण होता। जार्ज प्रथम के शब्दों में 'वह मिट्टी से सुवर्ण तो नहीं बना सकता था। किन्तु इसके समान वह बहुत कुछ कर सकता था।'

इस प्रकार वालपोल ने अपने देश और राष्ट्र को सुखी बनाया और उसका शासन ठीक ही इन कहावतों को चरितार्थ करता है—'युद्ध की अपेक्षा शान्ति की विजय कम गौरव पूर्ण नहीं होती है' और 'वह देश सुखी होता है जहाँ का इतिहासनीरस होता है।'

पार्टी और मंत्रिमंडल (१७४२–'६१ ई०) कार्टरेट मंत्रिमंडल (१७४२–'४४ ई०)—पेल्हम मंत्रिमंडल (१७४४–'५४ ई०)—१७४२ ई० में वालपोल के पदत्याग के बाद कार्टरेट प्रधान मन्त्री हुए। यह मंत्रिमंडल दो वर्षों तक रहा किन्तु इसके समय में कोई प्रमुख घटना नहीं हुई। उसके बाद १७४४ ई० में पेल्हम मंत्रिमंडल कायम हुआ जो १० वर्षों तक रहा। हेनरी पेल्हम वालपोल का शिष्य था और उसी के सिद्धान्तों के अनुसार शासन करना चाहता था। लेकिन उसकी कमजोरियों से उसने अनुभव भी प्राप्त कर लिया था और सभी प्रकार के स्वार्थों की रक्षा करने की कोशिश की। अतः उसने व्यापक आधार वाला शासन कायम किया जिसमें हरेक दल के लोगों ने भाग लिया। इस मंत्रिमंडल में बड़ा पिट सैनिकों का वेतन-अफसर था। इसी मंत्रिमंडल ने आस्ट्रिया के उत्तराधिकार युद्ध का अन्त और १७४५ ई० ने जैकोबाइट विद्रोह का शमन किया। घरेलू क्षेत्र में चार प्रमुख सुधार हुये—

---

[1] वार्नर ऐन्ड मार्टिन, ग्राउन्डवर्क ऑफ ब्रिटिश हिस्ट्री, भाग २, पृष्ठ ४६०

(क) अब तक पुराने रोमन कैलेन्डर का व्यवहार होता था। लेकिन करीब सारे यूरोप में कैलेन्डर का सुधार हो गया था जिसे ग्रिगरी १३वें ने १५८२ ई० में प्रारम्भ किया था। ब्रिटेन में भी वैसे ही किया गया और १७५२ ई० में ३ सितम्बर को १४ सितम्बर घोषित कर दिया गया। इस पर बड़ी हलचल पैदा हुई और 'हमारे ये दिन लौटाओ' के नारे से वायुमंडल गुञ्जित होने लगा किन्तु हलचल क्रमशः शान्त हो गई।

(ख) पहले साल का आरम्भ २५ मार्च से होता था, अब १ जनवरी से होने लगा।

(ग) कई प्रकार के कर्ज क एक श्रेणी में कर दिया गया जिस पर ३ प्रतिशत के हिसाब से सूद का दर निश्चित किया गया।

(घ) इस मंत्रिमंडल के समय १७५३ ई० में अंगरेजी अद्भुतालय (म्यूजियम) की स्थापना की गई जो वतमान काल में एक दर्शनीय वस्तु है।

न्यूकैसल मंत्रिमंडल (१७५४-५६ ई०)—पिट-डेवनशायर मंत्रिमंडल (१७५६-५७ ई०)—१७५४ ई० में हेनरी पेल्हम की मृत्यु हो गई और उसका भाई न्यूकैसल का ड्यूक प्रधान मंत्री हुआ। ड्यूक अयोग्य था किन्तु बड़ा ही धनी और प्रभावशाली व्यक्ति था। वह बोलता तो बहुत था किन्तु काम कम करता था। पिट से उसे नहीं बनती थी और पिट विरोधी पक्ष में शामिल हो गया। इस बीच १७५६ ई० में सप्तवर्षीय युद्ध छिड़ गया लेकिन इसका संचालन करने के लिये न्यूकैसल में शक्ति नहीं थी। इस लिये उसे पदत्याग करने को बाध्य किया गया। इसके बाद १७५६ ई० में पिट और डेवनशायर का संयुक्त मंत्रिमंडल स्थापित हुआ। किन्तु कुछ ही महीनों तक यह टिक सका। पिट राजा का प्रियपात्र नहीं था अतः वह दूसरे ही साल बर्खास्त कर दिया गया।

न्यूकैसल-पिट मंत्रिमंडल (१७५७-६१ ई०)—मंत्रिमंडल बनाने के लिये फिर न्यूकैसल को ही निमंत्रित किया गया किन्तु युद्धकालीन स्थिति में पिट का सहयोग भी आवश्यक था। यदि न्यूकैसल कौमन्स सभा का विश्वासपात्र था तो पिट को राष्ट्र का ही समर्थन प्राप्त था। अतः १७५७ ई० में न्यूकैसल तथा पिट का संयुक्त मंत्रिमंडल कायम हुआ। न्यूकैसल घरेलू मामलों को संभालता था और पिट के ऊपर युद्ध संचालन का भार सौंपा गया। पिट पालियामेंट और राजा दोनों ही का क्रमशः विश्वास पात्र बन गया। किन्तु यह संयुक्त मंत्रिमंडल १७६१ ई० तक कायम रहा क्योंकि एक वर्ष पहले ही जार्ज द्वितीय की मृत्यु हो चुकी थी और उसके उत्तराधिकारी जार्ज तृतीय के राज्याभिषेक से बहुत बड़ा परिवर्तन हो गया।

अध्याय २२

गद्दी के लिये स्टुअर्टों की चेष्टायें (१७१४–१७६० ई०)

१६८८-१७१४ ई०तक की स्थिति—१७१४ ई० के पहले भी स्टुअर्ट घराने के राज्य की स्थापना के लिये कोशिशें की गई थीं। विलियम के राज्यकाल में इंगलैंड में करीब ४०० पादरियों ने विलियम और मेरी को अपना सम्राट स्वीकार नहीं किया था। इसके फलस्वरूप उनका चर्च से बहिष्कार कर दिया गया। अब वे जेम्स द्वितीय के समर्थक बन गये और जैकोबाइट[1] कहलाने लगे। प्रारम्भ में कुछ समय तक उन लोगों ने बड़ी तत्परता से काम लिया और विलियम की जगह जेम्स को गद्दी पर बिठाने के लिये जी तोड़ कोशिश की। विलियम की हत्या के लिये कई षड्यन्त्र रचे जाने लगे परन्तु सफलता न मिली। १५८४ ई० में जिस प्रकार एलिजाबेथ की पार्लियमेंट ने किया था उसी का अनुसरण करते हुए १६९६ ई० में पार्लियामेंट ने एक बौन्ड औफ एसोसियेसन तैयार किया। इसके द्वारा पार्लियामेंट ने विलियम और प्रोटेस्टट उत्तराधिकार का समर्थन करने के लिये और इसके विरोधियों के साथ बदला चुकाने के लिये प्रतिज्ञा की।

स्कौटलैंड में (स्थिति)—स्कौटलैंड में भी हाईलैंडरों ने विलियम को अपना राजा स्वीकार नहीं किया और डंडी के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। किल्लीक्रैंकी के युद्ध में शाही पक्ष को हरा भी दिया। किन्तु विजय के साथ ही डंडी की मृत्यु हो गई और विद्रोह दब गया। उसके बाद ग्लेंको के हत्याकाण्ड की घटना हुई और स्कौटलैंड में विलियम का प्रभुत्व कायम हो गया।

आयरलैंड में (स्थिति)—वैसे ही आयरलैंड में भी विलियम ने आयरिशों, फ्रांसीसियों और जेम्स द्वितीय को बोयन के युद्ध में परास्त किया और अपनी सत्ता स्थापित की।

---

[1] जेम्स द्वितीय के पुत्र जेम्स तृतीय (ओल्ड प्रिटेंडर) के नाम पर उपर्युक्त शब्द बना है। जेम्स को लैटिन में 'जैकोबस' कहा जाता है। इसी जैकोबस के आधार पर जैकोबाइट नाम पड़ा और जेम्स के समर्थक जेकोबाइट कहलाने लगे।

प्रेस्टन षड्यन्त्र—१६९१ ई० में एक षड्यन्त्र की योजना बनायी गई जो 'प्रेस्टन प्लौट' के नाम से पुकारा जाने लगा। इसका यह उद्देश्य था कि यदि जेम्स प्रोटेस्टैंट धर्म को सुरक्षित रखने का वादा करे तो उसे ही राजगद्दी पर बैठाया जाय। लेकिन यह षड्यन्त्र शीघ्र ही समाप्त हो गया।

बार्कले षड्यन्त्र—१६९६-९७ ई० में बार्कले के नेतृत्व में एक षड्यन्त्र रचा गया। इसका उद्देश्य था कि विलियम की हत्या कर राज्यसिंहासन जेम्स को दिया जाय। लेकिन एक षड्यन्त्रकारी ने ही विश्वासघात किया और उसने सरकार को इसकी सूचना दे दी। अब प्रमुख नेताओं को पकड़ लिया गया और षड्यन्त्र विफल हो गया।

फ्रांसीसियों की हार—फ्रांसीसी भी जेम्स के कट्टर समर्थक थे और उन्होंने आयरलैंड में भी जेम्स के साथ युद्ध में भाग लिया था। वे समुद्र में भी युद्ध करते थे और कई जगहों में सफलता भी हो रही थी। लेकिन अंत में वे असफल रहे और १६९४ ई० में रिस्विक की सन्धि के द्वारा फ्राँस के राजा लूई ने जेम्स का पक्ष त्याग दिया और विलियम को इंगलैंड का राजा स्वीकार कर लिया।

लूई की पुनः चेष्टा—जेम्स द्वितीय को एक पुत्र था जिसका नाम जेम्स एडवर्ड था। वह ओल्ड प्रिटेंडर के नाम से प्रसिद्ध है। एन के राज्यकाल में, स्पेनिश युद्ध के समय लूई उसे जेम्स तृतीय के नाम से इंगलैंड की गद्दी पर बैठाना चाहता था। किन्तु वह अपनी चेष्टा में विफल रहा और १७१३ ई० में यूट्रेक्ट की सन्धि में प्रिटेंडर की सहायता नहीं करने के लिये उसने प्रतिज्ञा की।

रानी एन के ही राज्य काल में बोलिंगब्रूक ने जेम्स तृतीय को गद्दी पर बिठाने के लिये कठोर परिश्रम किया किन्तु सफलता नहीं मिली और १७१४ ई० में इंगलैंड में हैनोवर घराने का राज्य स्थापित हो ही गया।

जैकोबाइटों के दो भीषण विद्रोह और कारण—१७१४ ई० के बाद ब्रिटेन में भौतिकता का जोर था और राष्ट्र के अधिकांश भाग ने हैनोवर वंश के राज्य को स्वीकार कर लिया। लेकिन अभी भी स्टुअर्ट घराने के राज्याभिषेक के लिये कोशिश होती रही। १७१५ और १७४५ ई० में स्टुअर्टों के पक्ष में दो भीषण विद्रोह हुए जो जैकोबाइट विद्रोह के नाम से प्रसिद्ध हैं। इसके कई कारण थे :—

(१) जार्ज प्रथम का चरित्र—जार्ज प्रथम एक विदेशी और बूढ़ा था और वह अंगरेजी भाषा तथा रस्म-रिवाजों से अनभिज्ञ था। अतः इंगलैंड की अपेक्षा हैनोवर में ही अधिक दिलचस्पी रखता था। इसके सिवा उसके चरित्र में बहुत से

दोष थे। वह लोभी, निर्दयी और विषयी था। इन सब कारणों से वह अङ्गरेजों का प्रियपात्र न बन सका था।

(२) ह्विग तथा टोरियों की प्रतिद्वन्द्विता—ह्विग और टोरी भिन्न-भिन्न सिद्धांतों के साथ दो प्रतिद्वन्दी दल थे। जार्ज प्रथम ह्विगों का मित्र और टोरियों का दुश्मन था। अतः टोरी हैनोवर वंश को उलट देना चाहते थे ताकि ह्विगों का पतन हो जाय। इंगलैंड में टोरियों को छोड़कर सभी लोगों ने हैनोवर वंश के अभिषेक को स्वीकार किया था। टोरी लोग बदनाम और कमजोर हो गये थे। जब उन्हें षड्यन्त्र के द्वारा प्रिटेन्डर को गद्दी दिलाने में सफलता न मिली तो उन लोगों ने खुल्लम-खुल्ला बगावत शुरू कर दी।

१७१५ ई० में इंगलैंड और स्कॉटलैंड में बगावत कराने का जाल रचा गया लेकिन दोनों ही जगह दुर्भाग्य का सामना करना पड़ा। इंगलैंड में इस जाल का पता लग गया और प्रसिद्ध जैकोबाइट नेता गिरफ्तार कर लिये गये। केवल नौर्थम्बरलैंड में बगावत हुई सो भी मामूली रही। इस बगावत का नेता पार्लियामेंट का एक सदस्य था जिसका नाम थौमस फौस्टर था। वह उसी क्षेत्र का प्रतिनिधि था। बगावत में अमीरों का विशेष हाथ था और दक्खिन के स्कौटों ने भी हाथ बँटाया था। जनता ने कोई भाग नहीं लिया, अतः बगावत शीघ्र ही दब गई।

स्कौटलैंड में कारण-(१) संयोग से तात्कालिक लाभ का अभाव—स्कॉटलैंड में भीषण विद्रोह हुआ। इंगलैण्ड और स्कॉटलैण्ड के संयोग से अभी तात्कालिक लाभ नहीं दीख पड़ते थे और बहुत से स्कौट पहले ही से विरोधी थे।

(२) जातीय पारस्परिक द्वन्द्व—उत्तर के पहाड़ी निवासी स्टुअर्ट वंश में खास दिलचस्पी रखते थे। गृहयुद्ध के समय मौन्ट्रोज ने और विलियम तृतीय के समय डंडी ने अपनी भक्ति दिखलाई थी। १७१४ ई० के बाद भी वे अपनी भक्ति दिखलाते रहे। परन्तु उनकी भक्ति में विशेष वास्तविकता नहीं थी। वे सभी पहाड़ी बाशिन्दे थे और उनका रहन-सहन मोटा था। वे स्वभाव से लड़ाकू होते थे और अपने सरदारों को छोड़ किसी के प्रति अनुशासन ना पसन्द करते थे। सरदारों का अपने वंश के लोगों पर बड़ा प्रभाव रहता था और वे अपने जिले में राजकीय अधिकार का उपयोग करते थे। ऐसे ही कैम्पवेलों का सबसे बड़ा घराना था जिसका नेता अर्गिल का ड्यूक था। सरदारों के बीच ड्यूक का प्रथम स्थान था और वह नीचले प्रदेश का एक कुलीन था। वह जार्ज प्रथम का विश्वासपात्र और प्रिय था। कैम्पवेल वाले ह्विग और प्रेस्बिटेरियन थे तथा स्टुअर्ट घराने के शत्रु थे। दूसरे घराने वाले टोरी और कैथोलिक थे। वे स्टुअर्ट घराने के समर्थक और प्रोटेस्टेन्ट उत्तराधिकार के

विरोधी थे। ये लोग साधारण स्थिति के थे, अतः कैम्पबेलों से उन्हें पहले से भय तो था ही, १७१४ ई० के बाद वह भय और भी बढ़ने लगा। अतः वे सभी स्टुअर्टों के लिये लड़ने को तैयार हो गये।

(३) फ्रांस में स्कॉट अमीरों की शिक्षा—बहुत से स्कॉट अमीरों को फ्रांस में शिक्षा मिली थी। किन्तु फ्रांस कैथोलिक प्रधान देश था अतः वे सभी स्कॉट कैथोलिक और स्टुअर्ट घराने के पक्षपाती बन गये थे क्योंकि स्टुअर्ट राजाओं ने कैथोलिकों के प्रति विशेष सहानुभूति दिखलाई थी।

(४) राष्ट्रीय भावना—स्कॉटों को अपनी राष्ट्रीयता का गर्व था। स्टुअर्ट राजवंश तो उन्हीं का एक पुराना राजवंश था अतः इससे उन्हें कोई आपत्ति नहीं हुई। किन्तु हैनोवर राजवंश से तो उनका कोई सम्बन्ध नहीं था। अतः उनकी अधीनता स्वीकार करना वे अपनी मान मर्यादा के विरुद्ध समझने लगे।

१७१५ ई० का विद्रोह—इस प्रकार स्कॉटलैंड भी दोनों विद्रोहों का केन्द्र रहा।

घटनायें—प्रेस्टन का युद्ध (नवम्बर १७१५ ई०)—पहला विद्रोह सितम्बर १७१५ ई० में हुआ। इस विद्रोह के एक बड़े नेता का नाम 'मार' था अतः इसे 'मार का विद्रोह' भी कहा जाता है। मार को बोबिंग जौन भी कहा जाता था। वह चंचल और अयोग्य व्यक्ति था। उसने स्टुअर्टों के पक्ष में विद्रोह करने के लिये पहाड़ियों को उत्साहित किया और जेम्स तृतीय को राजा घोषित कर दिया। सारे स्कॉटलैण्ड तथा इंगलैण्ड में एक साथ विप्लव करने की योजना बनी। पर यह योजना बुरी तरह निष्फल रही। एक जैकोबाइट सेना स्कॉटिश सीमा को पार कर गई। कुछ अंगरेजों ने भी उसका साथ दिया किन्तु प्रेस्टन में ५ ही दिनों के युद्ध में इस सेना की हार हो गई। बहुत से सैनिक पकड़ लिये गये और उन्हें कत्ल कर दिया गया। उसी दिन स्कॉटलैण्ड में शेरिफमूर में 'मार' और अर्गिल के बीच एक अनिश्चित युद्ध हुआ। एडिनबरा की ओर जाने वाली सड़क अंगरेजी सेना के द्वारा अवरुद्ध कर दी गई। मार लौट कर पर्थ चला आया। इसी बीच प्रिटेन्डर स्वयं स्कॉटलैण्ड में आ पहुँचा लेकिन उसकी उपस्थिति से विद्रोहियों के बीच कोई उत्साह का संचार नहीं हुआ। उसके साथ धन जन का भी अभाव ही था। कई नेता भाग गये और विद्रोह दब गया। जेम्स लौट कर फ्रांस चला आया और पहाड़ी बाशिन्दे छिन्न-भिन्न हो गये। मार भी चुप बैठ गया। और १७१६ ई० के प्रारम्भ में ही विद्रोह शान्त हो गया।

विद्रोह की असफलता के कारण (१) अयोग्य नेतृत्व—इस विद्रोह के कई कारण थे। विद्रोहियों के कुशल नेतृत्व का अभाव था। मार एक अयोग्य, अविश्वासी

और चंचल व्यक्ति था। नौर्थम्बरलैंड विद्रोह के नेता थोमस फौस्टर में भी योग्यता का अभाव था। विद्रोह का नायक जेम्स एडवर्ड भी नीरस, अकृतज्ञ, सुस्त और अदूरदर्शी था। स्कौटलैंड में आने पर उसने अपने साथ धन तथा सैनिक कुछ नहीं लाया था और बड़े ही अनुपयुक्त समय में पहुँचा था। इसके अलावा प्रिटेन्डर कट्टर कैथोलिक था। वह अपनी धार्मिक संकीर्णता के ही कारण बोलिंगब्रुक जैसे सुयोग्य नेता का नेतृत्व प्राप्त करने से वंचित रह गया। बोलिंगब्रुक ने प्रोटेस्टैंटों की सुरक्षा घोषित करने के लिये उसे राय दी थी किन्तु उसने इस राय की उपेक्षा कर दी जिसका बुरा फल उसे ही चखना पड़ा।

(२) विदेशी सहायता का अभाव—१७१४ ई० में फ्रांस के लूई चौदहवें की मृत्यु हो गई और वही जेम्स का एकमात्र सहायक था। उसका उत्तराधिकारी लूई पन्द्रहवाँ अभी नाबालिग था अतः और्लियन्स का ड्यूक फिलिप उसके प्रतिनिधि की हैसियत से काम करने लगा। वह ब्रिटेन से लड़ना नहीं चाहता था अतः उसने जेम्स की सहायता नहीं की; क्योंकि वह फ्रांस की गद्दी का भावी अधिकारी था और आवश्यकता पड़ने पर उसने इंगलैंड से सहायता की आशा भी की थी। अतः उसने जैकोबाइटों को सहायता देने ही में अपना मुँह नहीं मोड़ लिया, बल्कि योजनाओं के भण्डाफोड़ करने में भी सहायक बनने लगा।

(३) ह्विग सरकार की तत्परता—ह्विग सरकार ने बड़ी तत्परता और सावधानी से काम किया और विद्रोह को दबाने की पूरी कोशिश की।

(४) जनमत का अभाव—विद्रोह व्यापक नहीं था क्योंकि इसके पीछे जनमत का अभाव था। अङ्ग्रेज कैथोलिकों को बुरी दृष्टि से देखते थे। प्रिटेंडर कैथोलिक था और उसके पुनर्स्थापन का मतलब था कैथोलिकों का जीतना। अतः प्रायः सभी अंगरेजों तथा बहुत से स्कौटों ने उसका समर्थन नहीं किया।

परिणाम—(१) ह्विगों का शक्तिशाली और टोरियों का कमजोर होना—विद्रोह को सफलतापूर्वक दबाने के कारण ह्विगों की स्थिति दृढ़तर हो गई और टोरी कमजोर हो गये। अब लोगों की दृष्टि में टोरी जैकोबाइट या राजद्रोही समझे जाने लगे और उनका स्थान बहुत नीचा हो गया। अब वे घृणा तथा उपेक्षा की दृष्टि से देखे जाने लगे।

(२) बलवा कानून—विद्रोहियों को सजा देने के लिये एक बलवा कानून (रायट ऐक्ट) पास कर दिया गया था जिससे ह्विग सरकार का हाथ बहुत मजबूत हो गया। १२ से अधिक व्यक्तियों की एक जगह बैठक करने की मनाही कर दी गई और मजिस्ट्रेटों की शक्ति बढ़ा दी गई। विद्रोहियों को दण्ड दिया गया किन्तु अपनी विजय से

उतावला होकर प्रतिहिंसा की भावना से ह्विगों ने बागियों को सजा नहीं दी। अतः १०० से भी कम व्यक्तियों को फाँसी दी गई, कुछ लोग निर्वासित कर दिये गये और कुछ लोगों को कारागृह में बन्द कर दिया गया।

(३) सप्तवर्षीय कानून—विषम परिस्थितियों में नया चुनाव करना ठीक नहीं समझा गया क्योंकि टोरियों की विजय का भय था अतः १७१६ ई० सप्तवर्षीय कानून पास कर पार्लियामेंट की अवधि सात वर्ष कर दी गई।

(४) हैनोवर राजवंश की दृढ़ता—इस प्रकार ह्विगों ने अपनी शक्ति सुदृढ़ कर ली किन्तु उनकी शक्ति के साथ हैनोवर राजवंश की शक्ति सम्बन्धित थी। एक की उन्नति पर दूसरे की भी उन्नति निर्भर थी। अतः हैनोवर राजवंश की स्थिति भी दृढ़तर हो गई।

१७१५ और १७४५ ई० के बीच तीन षड्यन्त्र रचे गये किन्तु सब विफल रहे!

१७१९ ई० का विद्रोह—१७१६ ई० में अर्ल मैरिस्कल के नेतृत्व में एक स्पेनिश सेना स्कॉटलैंड में भेजी गई। लगभग एक हजार पहाड़ी भी टुलिवार्डिन के मार्क्विस के नेतृत्व में उसमें शामिल हो गये किन्तु ग्लेन्शील में उन सबों की हार हो गयी।

१७२२ ई० और १७२७ ई० के विद्रोह—फिर १७२२ ई० में राजा और राजकुमार दोनों को पकड़कर मार डालने के लिये एक योजना बनाई गई। लेकिन इसका भंडा फूट गया और प्रमुख नेता गिरफ्तार कर लिये गये। रोचेस्टर के बिशप को देश निर्वासित कर दिया गया। इसके ५ वर्ष बाद फिर जार्ज प्रथम के मरने पर एक षड्यन्त्र हुआ किन्तु कुछ हो न सका।

१७४५ ई० का विद्रोह—१७४५ ई० में दूसरा मुख्य जैकोबाइट विद्रोह हुआ। अब तक जैकोबाइट आन्दोलन पूर्ण रूप से स्कौटिश आन्दोलन बन गया था। लेकिन पूर्व के विद्रोहों की अपेक्षा यह कहीं अधिक भीषण और प्रबल था।

कारण—इस विद्रोह के भी वे ही कारण थे जो पहले के विद्रोहों के थे। किन्तु उनके अलावा कुछ और बातें थीं जिनके कारण जैकोबाइटों के लिये अवसर तैयार हो गया था।

इस बार आन्दोलन का नायक चार्ल्स एडवर्ड था। वह जेम्स तृतीय का लड़का था। उसे यंगप्रिटेन्डर बोनीप्रिंस चार्ली भी कहा जाता था। वह अपने पिता की अपेक्षा अधिक सुयोग्य था। वह सुन्दर, साहसी तथा मोहक नवयुवक था। आस्ट्रिया के विरासत की लड़ाई हो रही थी। इसी समय फोन्टेनाय के युद्ध में अंगरेजों की हार भी हो गई थी जिससे अङ्गरेजी जनता क्षुब्ध थी और हनोवर राजवंश के प्रति उदासीन

सी हो गई थी। अतः फ्रांस के राजा ने जैकोबाइटों को सहायता करने की प्रतिज्ञा कर विद्रोह के लिये उन्हें उत्साहित किया।

इस समय इंगलैंड और फ्रांस के बीच विशेष कटुता भी पैदा हो गई थी। दोनों के बीच आस्ट्रिया के विरासत की लड़ाई अभी जारी ही थी।

घटनाएँ—प्रेस्टन पैन्स का युद्ध १७४५ ई०—१७४४ ई० में ही फ्रांसीसियों ने अपने कुछ वेड़ों को इंगलैंड पर चढ़ाई करने के लिये भेजा; किंतु एक तूफान ने उनके बेड़ों को छिन्न-भिन्न कर दिया और फ्रांसीसी हतोत्साहित होकर बैठ गये। फिर भी चार्ल्स ने साहस नहीं छोड़ा, और दो जहाजों को लेकर अगस्त १७४५ ई० में स्कौटलैण्ड में उत्तरी-पश्चिमी किनारे पर उपस्थित हुआ। उसके आने से कई पहाड़ी निवासी उत्साहित हुए और लड़ने के लिये तैयार हो गये। प्रेस्टन पैन्स के मैदान में सर जौन कोप के नेतृत्व में एक शाही सेना भेजी गई थी। किंतु चार्ल्स ने उस पर अचानक आक्रमण कर उसे कुछ मिनटों में ही हरा दिया। इसमें उसके बहुत कम सैनिक मारे गये और सारे स्कौटलैंड पर उसका प्रभुत्व स्थापित हो गया। मालूम होता था कि इस बार विद्रोह सफल हो जायगा, किंतु वैसा न हुआ।

फलकर्क १७४६ ई० तथा कुलोडेनमूर ई० की लड़ाई १७४६—चार्ल्स ने अपनी विजय से शीघ्र लाभ नहीं उठाया और एक महीने तक एडिनबरा में ही अपना समय गँवा दिया। इसके बाद वह आगे बढ़ा और कार्लाइल तथा प्रेस्टन जीतता हुआ दिसम्बर के पहले सप्ताह में डर्बी तक पहुँच आया। अब वह लन्दन से सिर्फ १५ मील की दूरी पर था। सारे इंगलैंड में सनसनी फैल गई, जनता बेचैन हो गयी, राजा और मंत्री घबड़ाने लगे। किन्तु ऐसा सुअवसर होने पर भाग्य ने चार्ल्स का साथ नहीं दिया। उसके मार्ग में कई अड़चनें पैदा हो गई। इंगलैंड में उसे सहानुभूति नहीं मिली और उसके सैनिक आगे जाने इन्कार करने लगे। अतः उसे लौटने के लिये बाध्य होना पड़ा और अब विद्रोह का रूप रक्षात्मक हो गया। अब इसकी विफलता निश्चित-सी हो गई। फिर भी चार्ल्स किसी तरह स्कौटलैण्ड में सकुशल पहुँच गया। लेकिन तब तक इसका अधिकांश भाग स्वतंत्र हो चुका था। जनवरी १७४६ ई० में फालकर्क की लड़ाई हुई, जिसमें वह विजयी भी हुआ। लेकिन अप्रैल में जार्ज के लड़के कम्बरलैण्ड के ड्यूक ने उसे कुलोडेनमूर की लड़ाई में बुरी तरह परास्त कर दिया। बहुत से विद्रोहियों को तलवार के घाट उतार दिया गया और विद्रोह के दब जाने पर भी यह सिलसिला कुछ समय तक जारी रहा। इससे विरोधी पक्ष उसे 'बूचर कम्बरलैण्ड' कहने लगा। किन्तु अंगरेज बहुत खुश हुए

और उसके सम्मान में एक फूल का नाम स्वीट विलियम और कई सरायों का नाम कम्बरलैंएड रख दिया।

चार्ल्स का शेष जीवन—चार्ल्स भागकर पहाड़ों में छिप गया और पाँच महीनों तक वह घरबार का मारा-मारा फिरा। किसी तरह कष्टों को झेलता हुआ वह फ्रांस पहुँचा। अब वह शराबी का जीवन बिताने लगा। १७६६ ई० उसके पिता की मृत्यु हो गयी और उसके छः वर्षों के बाद उसने अपना विवाह किया। किन्तु इससे वह सुखी न बन सका। १७८८ ई० में उसका देहान्त हो गया।

हेनरी नाम का उसका एक छोटा भाई था, जो अपने को नवाँ हेनरी कहने लगा था। वह बहुत गरीब था और जार्ज तृतीय के समय में उसे एक पेंशन मंजूर कर दिया गया। स्टुअर्ट घराने का वही अन्तिम प्रतिनिधि था जिसकी मृत्यु १८०७ ई० में हुई।

विद्रोह की असफलता के कारण—इस विद्रोह की भी असफलता के कई कारण थे—

(१) पहाड़ी निवासियों में कलह—इस विद्रोह में अधिकांश पहाड़ी निवासियों ने भाग लिया था, किन्तु आपसी मतभेद के कारण वे एक साथ काम नहीं कर सकते थे।

(२) फ्रांस की उदासीनता—फ्रांस ने जैकोबाइटों को सहायता देने की प्रतिज्ञा की थी। इसके अनुसार उसने कुछ सहायता भी दी, किन्तु जब एक तूफान के कारण फ्रांसीसी बेड़े नष्ट हो गये तब फ्रांस ने अपनी सहायता बन्द कर दी।

(३) अंग्रेजी जहाजों की तत्परता—अंगरेजी जहाजों की तत्परता के कारण फ्रांसीसी जहाज सहायता भेजने में असमर्थ रहे।

(४) ह्विग सरकार की सावधानी—ह्विग सरकार तो सावधान और तत्पर थी ही, उसने बड़ी बुद्धिमानी से विद्रोह का सामना किया।

(५) इंगलैण्ड के जैकोबाइटों की सुस्ती—इंगलैण्ड के जैकोबाइटों से कोई सहायता नहीं प्राप्त हुई। मौका आने पर वे चुप्पी लगाये बैठे रहे।

(६) मध्यम वर्ग का विरोध—इंगलैंड में मध्यमवर्ग के लोग ह्विगों की शान्तिपूर्ण नीति के कारण विशेष भौतिक उन्नति कर रहे थे। देश सुखी और समृद्धिशाली हो रहा था। अब जैकोबाइट या मध्यमवर्ग के लोग हैनोवर राजवंश को उखाड़ फेंकने का कोई कारण नहीं देखते थे।

(७) सर्वसाधारण का भय—सभी लोगों को यह भय था कि स्टुअर्टों के आने

से राष्ट्रीय ऋण समाप्त हो जायगा। अतः जनता ने पूर्ण रूप से सरकार का साथ दिया।

परिणाम—(१) जैकोबाइटों पर अत्याचार—गद्दी प्राप्ति के लिये स्टुअर्टों की आखिरी कोशिश थी, किन्तु असफल होने के कारण वे सदा के लिये निराश हो गये। जैकोबाइटों को कुचलने के लिये कुछ भी कोर-कसर उठा न रखा गया; उन पर तरह-तरह के अत्याचार कर उनके साथ अमानुषिक व्यवहार किया गया। कितने को कारावास में बन्द कर दिया गया; कितने का निर्वासन हुआ और कितने फाँसी के तख्ते पर लटका दिये गये।

(२) पहाड़ी निवासियों को कमजोर करने की चेष्टाएँ—पहाड़ियों को कमजोर करने के लिये उनके विरुद्ध कड़े-कड़े कानून पास किये गये। उनको निःशस्त्र कर दिया गया, वे कोई हथियार नहीं रख सकते थे। उन्हें राष्ट्रीय पोशाक भी पहनने के लिये मना कर दिया गया। उनकी पुरानी वंश-प्रथा तो इदो गई। सरदारों का अपने घराने के ऊपर परंपरागत अधिकार उठा दिया गया और वे जमींदार बना दिये गये। उनकी जाति के लोग कर देने वाले किसान बन गये। थोड़ी सी जमीन के लिये किसानों को बहुत कर देना पड़ता था और वे अपने परिवार के भरण-पोषण के लिये भी पर्याप्त पैदा नहीं कर सकते थे।

(३) स्कॉटलैंड में सुधार की योजनाएँ—स्कौटलैंड में उन्नति के साधनों का अभाव था। सड़क तथा स्कूल नहीं थे और सुरक्षा की भावना का भी अभाव था। अतः मुख्य जगहों मे सैनिक रख दिये गये और उन जगहों को सड़कों के द्वारा मिला दिया गया। अंगरेजी शिक्षा के प्रचार के लिये कई स्कूल कायम किये गये। अब स्कौटलैंड की दशा में महान् परिवर्तन होने लगा।

(४) पहाड़ी निवासियों की राजभक्ति—पहाड़ी लोगों में भी क्रमशः परिवर्तन हुआ और पीछे वे हैनोवर घराने के समर्थक बन गये। बड़े पिट ने दो स्कौटिश सैनिक दल स्थापित किया था और उन्हें राष्ट्रीय पोशाक पहनने के लिये भी आज्ञा दे दी थी। सप्तवर्षीय युद्ध के समय इन सैनिकों ने अमेरिका में राजा के लिये जी जान से युद्ध किया। हैनोवेरियन उत्तराधिकार और ऐंग्लो स्कौटिश संयोग सदा के लिये दृढ़ हो गया।

(५) विदेश-प्रवास—लेकिन सभी पहाड़ी निवासी एक समान राजभक्त नहीं बन गये। उनमें बहुत तो अपनी स्वतन्त्रता के कट्टर पुजारी थे और वे अपना देश छोड़कर अमेरिका आदि देशों में जाकर बस गये, किन्तु हैनोवेरियन वंश के प्रति राजभक्ति स्वीकार नहीं की।

अध्याय २३

वैदेशिक नीति तथा साम्राज्य स्थापन

(१७१४-१७६३ ई०)

वैदेशिक नीति पर हनोवर वंश के राज्यारोहण का प्रभाव—हैनोवर वंश के राज्याभिषेक का ब्रिटिश वैदेशिक नीति पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। जार्ज प्रथम और उसके उत्तराधिकारी (विक्टोरिया के राज्याभिषेक के समय तक) इंगलैंड के राजा और हनोवर के एलेक्टर थे। हैनोवर जर्मनी का एक प्रमुख राज्य था और उत्तरी समुद्र के कितने ही बन्दरगाह इसके अधिकार में थे। अतः प्रथम दोनों जार्ज हनोवर के स्वार्थों की भी रक्षा करने के करने के लिये विशेष चिन्तित रहते थे।

ग्रेटब्रिटेन और फ्रांस १७१३-३९ ई०—यूट्रेक्ट की सन्धि के बाद २६ वर्षों तक (१७१३-३९ ई०) ग्रेटब्रिटेन में शान्ति कायम रही। इस समय वालपोल प्रधान मंत्री था जो युद्ध का विरोधी था। अतः उसके बुद्धिमतापूर्ण घरेलू शासन की अपेक्षा उसकी वैदेशिक नीति की अधिक आलोचना की जाती है। ब्रिटेन और फ्रांस दोनों ही यूट्रेक्ट की सन्धि के समर्थक थे और दोनों ही देशों में शान्तिप्रिय मंत्री के हाथ में शासन की बागडोर थी। इंगलैंड में वालपोल १७२१-४२ ई० तक और फ्रांस में फ्लूरी १७२०-२६ ई० तक प्रधान मंत्री थे। इस प्रकार पुराने दुश्मन मित्र बन गये।

ग्रेटब्रिटेन और स्पेन १७१३-३९ ई०—आस्ट्रिया और स्पेन यूट्रेक्ट की सन्धि से असन्तुष्ट थे। स्पेन के साथ बड़ी दिक्कत पैदा हुई। १७१८ ई० में ग्रेटब्रिटेन ने स्पेन को सिसली लेने से रोका और उसके जंगी बेड़े को पसारो द्वीप में परास्त कर दिया। उसके सात वर्ष बाद जबकि स्पेन आस्ट्रिया ने वियना की सन्धि की; हालैंड और ग्रेटब्रिटेन ने स्पेन के विरुद्ध फ्रांस से सन्धि की जो हनोवर की सन्धि कहलाती है। अब युद्ध निकट मालूम होता था, किन्तु किसी तरह यह टाला गया। १७२६ ई० में स्पेन तथा इंगलैंड ने सेविल की सन्धि की और उसके दो वर्ष बाद वियना की दूसरी सन्धि हुई। इस बार युद्ध का टलना वालपोल की एक बहुत बड़ी विजय थी।

स्पेन के साथ लड़ाई (१७३९ ई०) के कारण (क) स्पेन के प्रति अंगरेजों का द्वेष (ख) व्यापारिक उलझनें—१७३३ ई० में फ्रांस और स्पेन एक दूसरे के निकट आ गये और एक स्पेनिश सेना ने नेपुल्स तथा सिसली से आस्ट्रिया के सम्राट चार्ल्स षष्ठम् को खदेड़ दिया। यह यूट्रेक्ट की सन्धि की शर्तों के खिलाफ था। लेकिन वालपोल ने इस मौके पर कोई दिलचस्पी नहीं दिखलाई। वह फ्रांस के साथ मित्रता कायम रखने के लिये उत्सुक था और उसने स्वयं एक बार अपनी प्रशंसा करते हुए कहा—"इस साल यूरोप में दस हजार आदमी कत्ल किये गये हैं, किन्तु उनमें एक भी अंगरेज नहीं था।' इसका परिणाम हुआ—आस्ट्रिया ने समर्पण कर लिया और १७३८ ई० में वियना की तीसरी सन्धि हुई। इसके अनुसार नेपुल्स में बोर्बन वंश का शासन कायम हुआ। स्पेन का यह पुनरोत्थान अंगरेजों की दृष्टि में खटकता था। इसके बाद क्रमशः व्यापारिक दिक्कत पैदा होने लगी। यूट्रेक्ट की सन्धि के अनुसार स्पेनिश अमेरिका में साल भर में एक जहाज माल भेजने के लिये इंगलैंड को अधिकार मिला था। किन्तु वे इससे अनुचित लाभ उठाकर एक से अधिक जहाज भेजने लगा। अतः समुद्रों में स्पेनवासी अंगरेजी जहाज की खोज करने लगे और इस सिलसिले में अंगरेजों के साथ उनका व्यवहार भी कटु होने लगा। इससे अंगरेजों के अहंकार को बहुत बड़ी ठेस लगी और वे युद्ध के पक्ष में प्रचार करने लगे। इसी मौके पर जेन्किन नाम के एक कप्तान ने पार्लियामेंट के सामने इस बात की शिकायत की कि स्पेनवासियों ने उसके एक कान को काट दिया है। वह कटे हुए कान को रूई में लपेटकर लाया था और पार्लियामेंट के सामने उसे रख दिया। अब लोकमत उत्तेजित हो उठा और युद्ध की माँग करने लगा। इसे सन्तुष्ट करने के लिये अपनी इच्छा के विरुद्ध भी वालपोल को स्पेन के खिलाफ युद्ध घोषित करना पड़ा। १७३९ ई० में यह युद्ध शुरू हुआ। यह जेन्किन के कान का युद्ध कहलाता है। इसके उपलक्ष में जब घंटियाँ बजने लगीं तब वालपोल ने घोषणा की—'वे इस समय घंटियाँ बजा सकते हैं। किन्तु शीघ्र ही उन्हें हाथ मलकर पछताना होगा।' उसका यह कथन सत्य साबित हुआ। युद्ध में उत्साह नहीं दिखाया गया, अतः युद्ध की प्रगति निराशाजनक थी। जिस प्रकार युद्ध का प्रारम्भ अंगरेजों के लिये अपमानजनक था वैसे ही इसका संचालन ब्रिटिश सैनिकों के लिये मर्यादाहीन था। स्पेन के बन्दरगाहों पर हमला तो हुआ किन्तु उसका कोई फल नहीं निकला। अमेरिका में कार्टेजिना के आक्रमण में भी अंगरेजों की हार हुई। इस युद्ध का केवल एक ही नतीजा हुआ कि आन्सन ने विश्व की परिक्रमा की और दक्खिनी अमेरिका के पश्चिमी किनारे पर मनीला से आने वाले खजानों से पूर्ण जहाजों को लूटा और अपने अधिकार में कर लिया।

आस्ट्रिया के उत्तराधिकार की लड़ाई १७४०-४८ ई०—१७४० में आस्ट्रिया के उत्तराधिकार की लड़ाई शुरू हुई। आस्ट्रिया के साम्राज्य को बाँटने के लिये यूरोप के राज्यों के बीच एक गुटबन्दी हुई। इस बार भी वालपोल चुप रहा। उसकी शान्ति-प्रिय नीति और स्पेनिश युद्ध में असफलता के कारण विरोधी पक्ष मजबूत हो गया और १७४१ ई० के साधारण चुनाव में उसे बहुमत प्राप्त हो गया। अतः दूसरे साल वालपोल को पदत्याग करने के लिये बाध्य होना पड़ा। उसके बाद दो वर्षों तक कार्टरेट मंत्रिमंडल कायम रहा। यह मंत्रिमंडल चाहता था कि ग्रेटब्रिटेन यूरोप की राजनीति में भाग ले। राजा भी इसी नीति का समर्थक था।

युद्ध के कारण प्रैगमैटिक सैंकशन—आस्ट्रिया के सम्राट चार्ल्स षष्टम[1] को कोई लड़का नहीं था, अतः उसने 'प्रैगमैटिक सैंकशन' नाम का एक विधान लिख दिया। इसमें यह घोषणा की गई कि आस्ट्रिया के साम्राज्य का विभाजन नहीं होगा और उसकी लड़की मेरिया थेरेसा सम्पूर्ण साम्राज्य की उत्तराधिकारिणी होगी। यूरोप के करीब सभी राज्यों ने इसे स्वीकार किया, किन्तु अक्टूबर १४४० ई० में सम्राट की मृत्यु होते ही साम्राज्य, विभाजन की कोशिश होने लगी। प्रशिया का फ्रेडरिक आस्ट्रिया पर अपना वंशगत अधिकार बतलाकर साइलेशिया को हड़प लिया। बवेरिया का एलेक्टर जो सम्राट के बड़े भाई का दामाद लगता था, बोहेमियाँ को ले लेना चाहता था और फ्रांस उसका सहायक था। फ्रांस की अपनी दृष्टि आस्ट्रिया नीदरलैंड पर गड़ी हुई थी। उसने आस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध घोषित कर शीघ्र ही राइन पार सेनायें भेज दी।

इस तरह मेरिया के सामने एक भयावह स्थिति उपस्थित हो गयी। इस रानी की हालत भी बड़ी खराब थी। उसका खजाना खाली था और उसकी सेनायें अव्यवस्थित थीं। उसे एक और बहुत बड़ा धक्का लगा। उसका पति लोरेन का फ्रांसिस चार्ल्स का उत्तराधिकारी नहीं चुन गया, बल्कि बवेरिया का एलेक्टर चार्ल्स सप्तम के नाम से सम्राट-पद पर विराजमान हुआ। इस समय मेरिया का कोई समर्थक नहीं दीख पड़ता था और वह असहाय तथा अकेली मालूम पड़ती थी।

आस्ट्रिया को ब्रिटिश सहायता—तो भी स्थिति की भीषणता से रानी तनिक भी विचलित नहीं हुई और इसका सामना करने के लिए धैर्यपूर्वक तैयारी करने लगी। हंग्री के लोगों ने उसकी सहायता करने की प्रतिज्ञा की। ग्रेटब्रिटेन ने आस्ट्रिया का साथ दिया। इसके पाँच कारण थे :—

[1] स्पेन के उत्तराधिकार के युद्ध के समय का आर्क ड्यूक चार्ल्स।

(क) हनोवर और हैप्सवर्ग के घरानों के बीच पुरानी मित्रता थी। (ख) यह एक अबला स्त्री का प्रश्न था और अंगरेज शौर्य प्रदर्शन की भावना से प्रेरित थे। (ग) नीदरलैंड्स की सुरक्षा के साथ ब्रिटेन का स्वार्थ सम्बद्ध था और उस पर फ्रांस की लोलुप दृष्टि पड़ने से खतरा उपस्थित हो गया था। (घ) प्रशिया के द्वारा युद्ध घोषित करने से हनोवर की सुरक्षा भी खतरे से खाली न रह गई थी। (ङ) ब्रिटेन तथा फ्रांस आपस में औपनिवेशिक और व्यापारिक प्रतिद्वन्द्वी रहे थे।

इस प्रकार एक महादेशीय युद्ध प्रारम्भ हो गया जिसमें एक ओर ग्रेटब्रिटेन और आस्ट्रिया तथा दूसरी ओर प्रशिया, बवेरिया और फ्रांस थे। अब इसी लड़ाई में जेन्किन के कान की लड़ाई भी मिल गई और स्पेन भी फ्रांस के पक्ष में मिल गया।

घटनायें—कार्टरेट ने सफलतापूर्वक जर्मनी के सभी राज्यों को फ्रांस के विरुद्ध मिला लिया। केवल प्रशिया अलग रह गया। वह जर्मनी से फ्रांस का बहिष्कार करना चाहता था। जार्ज द्वितीय स्वयं युद्ध का संचालन करने चला। उसकी सेना में अंगरेज और हैनोवेरियन दोनों थे और लार्ड स्टेयर इस संयुक्त सेना का सेनापति था। डेटिंजन में १७४३ ई० में युद्ध हुआ। पहले तो स्थिति बड़ी गंभीर थी। सेना के एक तरफ नदी, दूसरी तरफ जंगल और पहाड़ तथा आगे और पीछे के मार्गों पर फ्रांसीसी डटे हुए थे, तिस पर भी सैनिकों के भोजन में कमी। लेकिन स्थिति संभल गयी। फ्रांसीसियों ने अपनी जगह छोड़ दी और अंगरेजों ने उन्हें परास्त कर डाला। अब युद्ध का क्षेत्र जर्मनी से हटकर नीदरलैंड और समुद्र में बना। इसके पहले तो इंगलैंड और फ्रांस अपने मित्रों के सहायक होकर एक दूसरे से लड़ रहे थे किन्तु अब दोनों में स्वयं ही खुलकर युद्ध होने लगा।

फौन्टेनाय का युद्ध १७४५ ई०—इसी बीच जर्मन राज्यों के बीच गुटबन्दी टूट गयी। अब कार्टरेट भी मंत्रिमंडल से अलग हो गया। फ्रांसीसियों ने ८० हजार सेना के साथ आस्ट्रियन नीदरलैंड्स पर हमला कर दिया। इस सेना में एक आयरी ब्रिगेड भी शामिल था। फ्रांसीसियों का सेनापति मार्शल साक्स भी बड़ा ही योग्य और अनुभवी व्यक्ति था। १७४५ ई० में फौन्टेनाय के युद्ध में इन फ्रांसीसियों ने अंग्रेजों को बुरी तरह परास्त किया। इसके अलावा ग्रेटब्रिटेन में यंग प्रिटेन्डर के बलवा के कारण महादेश से अंगरेजी सेना वापस बुलानी पड़ी। फ्रांसीसियों ने सम्पूर्ण आस्ट्रियन नीदरलैण्ड्स को हड़प लेने की कोशिश की किन्तु डचों ने उनका घोर विरोध किया। दो वर्षों के बाद जब अंगरेज भी आ गये तब सफलता मिलनी और भी कठिन हो गई।

इस प्रकार यूरोप में अंग्रेजों को सफलता तो मिली किन्तु यह गौरवपूर्ण सफ-

लता नहीं कही जा सकती। उन्हें इससे अधिक सफलता समुद्री युद्ध में प्राप्त हुई। ब्रिटेन की जलशक्ति के प्रभाव से नेपुल्स इस युद्ध में तटस्थ रहने को बाध्य हुआ। अंग्रेजों ने केप ब्रिटन द्वीप के बन्दरगाह लूईबर्ग को अपने अधिकार में कर लिया। यह फ्रांसीसियों का प्रमुख बन्दरगाह था जो नई दुनियाँ के लिये जिब्राल्टर के समान था। किन्तु हिन्दुस्तान में फ्रांसीसियों ने मद्रास को अपने अधिकार में करने में सफलता प्राप्त कर ली थी।

एक्सला शैपल की सन्धि १७४८ ई०—इस तरह १७४८ ई० तक युद्ध चलता रहा। लेकिन अब इंगलैण्ड और फ्रांस दोनों ही शान्ति के लिये उत्सुक थे और १७४८ ई० में एक्सला शैपल की सन्धि के द्वारा युद्ध समाप्त कर दिया गया।

सन्धि की शर्तें—(क) सभी जगह दोनों ने एक दूसरे के जीते हुए प्रदेश को लौटा दिये। (ख) फ्रांस ने प्रिटेन्डर को निकाल देने और हैनोवेरियन उत्तराधिकार को स्वीकार करने के लिये प्रतिज्ञा की। (ग) प्रैगमैटिक सैंकशन का पुनः समर्थन किया गया और मेरिया थेरेसा आस्ट्रिया की रानी स्वीकार कर ली गई। किन्तु साइलेशिया प्रशिया की ही अधीनता में छोड़ दिया गया। फ्रांसीसियों ने अंगरेजों को मद्रास लौटा दिया और कनाडा में अंगरेजों ने फ्रांसीसियों को लूई वर्ग लौटा दिया। (घ) स्पेन के साथ भी सन्धि की गई लेकिन युद्ध का एक प्रधान कारण—अंगरेजी जहाजों की खोज का प्रश्न तो पूर्ववत् कायम ही रहा। और भी कई दूसरी बातें अनिश्चित रह गयीं।

सप्तवर्षीय युद्ध १७५६–६३ ई०—अतः एक्सला शैपेल की सन्धि से स्थायी शान्ति कायम न रह सकी। १७५६ ई० में एक दूसरा युद्ध शुरू हुआ जो १७६३ ई० तक जारी रहा। अतः यह सप्तवर्षीय युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है।

कारण

(१) इंगलैंड और फ्रांस के बीच व्यापारिक और सामुद्रिक प्रतिद्वन्द्विता—(क) भारत में ग्रेटब्रिटेन तथा फ्रांस (१७४०–५५ ई०)—हिन्दुस्तान और अमेरिका में अंगरेजी तथा फ्रांसीसी स्वार्थों के बीच संघर्ष पैदा हुआ। हिन्दुस्तान में दोनो ही की कंपनियाँ थीं—अङ्गरेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी और फ्रांसीसी ईस्ट इंडिया कम्पनी। पश्चिमी किनारे पर बम्बई अंगरेजी कंपनी के अधीन और माही फ्रांसीसी कंपनी के अधीन था। ये दोनों स्थान एक दूसरे से बहुत दूर थे। परन्तु पूर्वी किनारे पर एक ही जिले में दोनों की फैक्टरियाँ स्थित थीं। अंगरेजों का कलकत्ता फ्रांसीसियों के चन्द्रनगर के निकट था और दक्षिण में मद्रास और फोर्टसेंट डेविड अङ्गरेजों के

अधीन थे और इन दोनों के बीच फ्रांसीसी पांडीचेरी था। दोनों ही कंपनियाँ अपने-अपने स्वार्थ-साधन के लिये हिन्दुस्तान की राजनीति में हस्तक्षेप करना चाहती थीं। इसके लिये अच्छा मौका भी प्राप्त था। १७०७ ई० में औरंगजेब की मृत्यु के बाद हिन्दुस्तान में अव्यवस्था और अराजकता फैल रही थी। दक्षिण में विभिन्न राज्यों
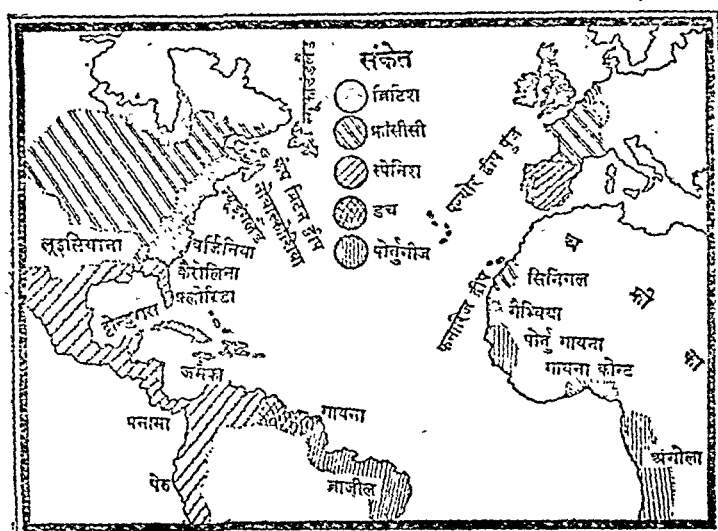
सतवर्षीय युद्ध (१७५६ ई०) के पूर्व यूरोपीयन
राज्यों के औपनिवेशिक साम्राज्य।

के बीच निरन्तर संघर्ष चल रहा था। जब यूरोप में शान्ति थी तब हिन्दुस्तान में इसका अभाव था। १७४६ ई० में पांडीचेरी के गवर्नर डूप्ले ने मद्रास जीत लिया। यद्यपि दो वर्षों के बाद उसे लौटा देना पड़ा, फिर भी इससे हिन्दुस्तान में फ्रांसीसियों की प्रतिष्ठा बढ़ गई और उनका नाम फैलने लगा। इसके कुछ समय बाद कर्नाटक में नवाब होने के होने के लिये दो उत्तराधिकारियों के बीच झगड़ा पैदा हो गया। इसी क्षेत्र में मद्रास और पांडीचेरी स्थित थे। अङ्गरेज और फ्रांसीसी दोनों ने ही दो विरोधी उत्तराधिकारियों का समर्थन किया। मद्रास की एक फैक्टरी में क्लाइव नाम का एक क्लार्क था। १७५१ ई० में उसने कर्नाटक की राजधानी आरकाट पर हमला कर दिया और डूप्ले को हराकर इसे अपने कब्जे में कर लिया। इसी समय १७१४ ई० में डूप्ले फ्रांस वापस बुला लिया गया और उसकी योजना असफल होने लगी। कर्नाटक में अङ्गरेजों के ही पक्ष का एक व्यक्ति नवाब बनाया गया और वहाँ अङ्गरेजों का प्रभाव स्थापित हो गया। कर्नाटक की इस सफलता से अंग्रेजों

की सामरिक शक्ति तथा युद्ध-कौशल का पहले पहल परिचय लोगों को प्राप्त हुआ। किन्तु अभी हिन्दुस्तान में दोनों का संघर्ष बिल्कुल समाप्त नहीं हो गया।

(ख) उत्तरी अमेरिका में ग्रेटब्रिटेन तथा फ्रांस—अमेरिका में भी हिन्दुस्तान के जैसा ही प्रभुत्व के लिये अङ्गरेजों तथा फ्रांसीसियों के बीच संघर्ष चल रहा था। वहाँ पर दोनों ही के उपनिवेश थे। अटलांटिक समुद्र के पश्चिमी किनारे पर १३ अङ्गरेजी उपनिवेश बसे हुए थे। न्यूफाउंडलैंड पर भी अङ्गरेजों का ही अधिकार था। इनके उत्तर में फ्रांसीसी उपनिवेश कनाडा था। इसका विस्तार ग्रेटलेक से लेकर सेंटलारेंस नदी तक था। इनके दक्षिण और पश्चिम में फ्रांसीसी लुईसियाना था। इस उपनिवेश के होने से मिसिसीपी घाटी भी फ्रांसीसियों के अधिकार में था। वे कैनाडा और लुईसियाना को मिलाने के ख्याल से अङ्गरेजी उपनिवेशों के पीछे की जमीन को अपने अधिकार में कर लेना चाहते थे। न्यूफाउंडलैंड में भी फ्रांसीसियों के अधिकार में सेन्ट जौन (प्रिन्स एडवर्ड) और केप ब्रिटेन द्वीप थे। अतः फ्रांसीसीम छुए न्यूफाउंड लैंड की मछली के व्यापार में हिस्सेदार थे।

अंग्रेजों की सुविधायें—(क) अंग्रेजों को आबादी और धन की शक्ति थी। अंग्रेजी उपनिवेश धन और आबादी में तीव्र गति से बढ़ रहे थे। फ्रांसीसियों की संख्या जहाँ ६० हजार थी वहाँ अंग्रेजों की संख्या १५ लाख थी। इस तरह दोनों के बीच २५ गुना का अन्तर था।

(ख) समुद्र पर अंग्रेजों का आधिपत्य था अतः वे कहीं से किसी समय भी आसानी से सहायता पहुँचा सकते थे और फ्रांसीसियों के मार्ग में बाधा उपस्थित कर सकते थे।

फ्रांसीसियों की सुविधायें—(क) फ्रांसीसी उपनिवेशों के बीच एकता थी; वे एक दूसरे के निकट और सुसंगठित थे। वहाँ एकतन्त्र शासन स्थापित था। फ्रांसीसी अफसर योग्य थे और वे अपने देश के प्रभाव को बढ़ाने के लिये उत्सुक थे।

इसके विपरीत अंग्रेजों के तेरहों उपनिवेश सुसंगठित नहीं थे। वे तितर बितर थे। उपनिवेशों में प्रजातन्त्र शासन स्थापित था।

(ख) अमेरिका के बहुत से आदिमनिवासी (रेडइंडियन्स) फ्रांस के पक्ष में थे। (ग) अंग्रेजों की अपेक्षा फ्रांसीसी युद्ध में अधिक अभ्यस्त थे और विजय के द्वारा ही उसने अपना साम्राज्य स्थापित किया था। (घ) भौगोलिक स्थिति भी फ्रांसीसियों के अनुकूल और अंग्रेजों के प्रतिकूल थी। फ्रांसीसी नदियों की घाटी में बढ़ सकते थे किंतु अलिघनी पहाड़ के कारण पश्चिम की ओर अंग्रेजों का प्रसार कठिन था। अंग्रेजी उपनिवेश अलिघनी पहाड़ और फ्रांसीसी समुद्र के बीच में थे।

घाटियों को सुरक्षित रखने के लिये फ्रांसीसी उत्तर से दक्षिण की ओर कई किले बनवाने लगे थे। इस दुर्ग पंक्ति के निर्माण से वे अलिघनी, ओहियो और मिसिसिपी नदियों की घाटियों पर अपना अधिकार स्थापित कर सकते थे। इसकी अन्तिम श्रेणी में सब से प्रमुख फ्रांसीसी किला ड्यूकेनी था। यह पेन्सिलवेनियाँ के पश्चिमी तट और तीन नदियों के संगम पर स्थित था। इसके द्वारा सेंट लारेंस की खाड़ी से लेकर मेक्सिको की खाड़ी तक के सभी किले मिला दिये गये। १४५४ ई० में वर्जिनियाँ के एक सैनिक ने, जिसका नाम वाशिगटन था, फ्रांसीसी किला पर हमला कर दिया। दूसरे साल ब्रेंडा के नेतृत्व में भी हमला हुआ। दोनों ही हमलों में अंग्रेजी उपनिवेशों की हार हो गई। इस तरह १७५६ ई० में हिन्दुस्तान की अपेक्षा अमेरिका में फ्रांसीसियों की स्थिति बहुत अच्छी थी।

इस प्रकार हम लोग देखते हैं कि १७५६ ई० के पहले हिन्दुस्तान और अमेरिका में ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस के बीच झगड़े शुरू हो गये थे। १७५१ ई० में क्लाइव ने आरकाट पर आक्रमण कर उसे जीत लिया। उ के ३ वर्ष बाद १७५४ ई० में अमेरिका में अंग्रेजों ने ड्यूकेनी किले पर चढ़ाई कर दी। १७५५ ई० में समुद्र पर भी दोनों के बीच लड़ाई छिड़ गई और अंग्रेजों ने फ्रासीसियों के दो जंगी बेड़े जब्त कर लिये।

यूरोप में शक्ति सन्तुलन का प्रश्न आस्ट्रिया और प्रशिया के बीच प्रतिद्वन्दिता—साईलेशिया नहीं मिलने से मेरिया थेरेसा बहुत दुखी थी और वह इसे प्रशिया से किसी तरह लेना चाहती थी। वह इंगलैंड से भी असंतुष्ट थी क्योंकि उसी के प्रभाव से ऐसी अपमानजनक सन्धि उसे माननी पड़ी थी। अब इंगलैंड आस्ट्रिया का विश्वासपात्र नहीं रह गया था। अतः मेरिया थेरेसा प्रशिया के विरुद्ध एक प्रबल गुट्ट कायम करना चाहती थी जिसमें वह इंगलैंड को शामिल नहीं कर सकती थी। फ्रास ने उसका साथ दिया। कुछ समय के बाद रूस भी आस्ट्रिया और फ्रांस के पक्ष में मिल गया। इस समय फ्रांस की रानी मैडम-डी पम्पेडर और रूस की जारिना एलिजाबेथ दोनों ही प्रशिया के राजा फ्रेडरिक से बेतरह बिगड़ी हुई थीं।

अब प्रशिया के ग्रेटब्रिटेन की ओर झुकने के लिये बाध्य होना पड़ा। ब्रिटेन को भी कई कारणों से उसी का पक्ष लेना पड़ा। (क) प्रशिया की ओर से हैनोवर पर खतरे की आशंका थी। अतः जब मेरिया ब्रिटेन की सहायता करने के लिये तैयार नहीं थी तो प्रशिया से दोस्ती कर लेना ही ब्रिटेन के हक में विशेष लाभदायक था। (ख) आस्ट्रिया ब्रिटेन के स्वार्थ के विरुद्ध कार्य करने लगा। पूर्वी देशों में व्यापार करने के लिये मेरिया ने एक कम्पनी स्थापित करने के लिये आज्ञा दे दी थी। इससे

अंग्रेज असन्तुष्ट हो गये। (ग) फ्रांस ब्रिटेन का शत्रु था। मेरिया जब फ्रांस से मिल गई तो उसके शत्रु प्रशिया से भी मिल जाना ब्रिटेन के लिये स्वाभाविक था।

इस तरह गुट के निर्माण में महान् परिवर्त्तन हुआ। ब्रिटेन आस्ट्रिया का पुराना मित्र था और फ्रांस दुश्मन। किन्तु अब स्थिति बदल गई। ब्रिटेन आस्ट्रिया का शत्रु बन गया और उसका मित्र बना फ्रांस। इस परिवर्त्तन को इतिहास में १७५६ की कूटनीति क्रान्ति कहते हैं।

इस प्रकार १७५६ ई० में सप्तवर्षीय युद्ध छिड़ गया। इसी साल फ्रांसीसियों ने माइनोर्का पर आक्रमण कर दिया और इसके साथ ही दोनों में नियमित रूप से लड़ाई घोषित हो गयी। एक ओर आस्ट्रिया, फ्रांस तथा रूस थे और दूसरी ओर प्रशिया तथा इंगलैंड। परन्तु यूरोप में युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व ही हिन्दुस्तान और अमेरिका में अंगरेजों और फ्रांसीसियों के बीच संघर्ष शुरू हो गया था। जैसा पहले लिखा जा चुका है, १७५६ ई० के बाद इंगलैंड और फ्रांस के बीच का तथा आस्ट्रिया और प्रशिया के बीच का संघर्ष मिलकर एक युद्ध के रूप में परिवर्त्तित हो गया।

युद्ध-क्षेत्र और घटनाएँ—युद्ध के चार केन्द्र थे—यूरोप, अमेरिका, हिन्दुस्तान और समुद्र।

अंगरेजों की प्रारम्भिक असफलतायें—सभी जगह युद्ध का प्रारम्भ अंगरेजों के विरुद्ध था। प्रथम दो वर्षों में अंगरेजों की निरन्तर असफलतायें होती रहीं। तत्कालीन प्रधान मंत्री न्यूकैसल भीरु और अयोग्य थे। युद्ध का संचालन सुचारु रूप से नहीं हो रहा था। पूरब से यह समाचार मिला कि बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला और अंगरेजों के बीच लड़ाई हुई। कलकत्ता अंगरेजों के हाथ से निकल गया और ब्लैक होल की दुर्घटना हुई। तीसरे कर्नाटक युद्ध में भी अंगरेज असफल हो गये। पश्चिम से यह समाचार मिला कि ओहियो और सेंट लारेंस नदी के पास अंगरेजों की बड़ी क्षति हुई। ओसवेगो और फोर्ट विलियम उनके अधिकार से निकल गये। फ्रांसीसी लूईबर्ग पर चढ़ाइयाँ हुईं किन्तु उसमें भी अंगरेजों की विफलता ही हुई। यूरोप की हालत और भी खराब थी। प्रशिया का फ्रेडरिक द्वितीय किसी तरह अपने स्थान को बनाये रखा। फ्रांसीसियों ने कम्बरलैंड के ड्यूक को सेनवेक में परास्त कर दिया और क्लौस्टर सेवुन की सन्धि स्वीकार करने के लिये उसे बाध्य किया। फ्रांसीसियों ने हनोवर पर भी हमला करके उसे अपने कब्जे में कर लिया जहाँ से वे सहज ही प्रशिया पर आक्रमण कर सकते थे। समुद्र में भी अङ्गरेजों की हार ही हो रही थी। १७०८ ई० से ही माइनोर्का अङ्गरेजों के हाथ में था किन्तु फ्रांसीसियों ने इस पर

आक्रमण कर दिया था और 'बिंग' नाम का एक अङ्गरेज नौसेनापति इसे समर्पण कर भाग गया। कर्तव्यच्युत होने के कारण उस पर मुकद्दमा चलाया गया। एक सैनिक न्यायालय ने उसके अभियोग की जाँच की और उसे दोषी साबित किया। इस निर्णय के अनुसार उसे पोर्टस्मथ के बंदर में अङ्गरेजी जहाज पर ही गोली मार दी गई। इस तरह ब्रिटिश सरकार की शिथिलता और नौसेना की अकर्मण्यता का फल बेचारे 'बिंग' को ही भोगना पड़ा।

इंगलैंड के लिये भीषण संकट—अब परिस्थिति बड़ी ही विकट हो गयी थी। इंगलैंड पर फ्रांस के द्वारा और प्रशिया पर आस्ट्रिया और रूस के द्वारा आक्रमण की सम्भावना हो गई। अङ्गरेजों का भविष्य अंधकारमय था। उस समय की स्थिति का वर्णन लार्ड चेस्टरफील्ड ने बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है—"हम लोग घर और बाहर, सभी जगह बर्बाद हो चुके। अब फ्रांसीसी ही अमेरिका में मालिक बनकर मनमाना कर रहे हैं। अब हमलोग एक राष्ट्र नहीं रहे। अब तक मैंने ऐसा भयानक दृश्य नहीं देखा था।" यह कथन प्रचलित उदासीनता की भावना का प्रतीक है।

बड़े पिट का युद्ध सचिव होना १७५७ ई०—परन्तु सभी दिन एक समान नहीं होते। अब शीघ्र ही परिस्थिति में परिवर्तन होने लगा। इसी संकट काल में बड़े पिट युद्ध सचिव हुए और अङ्गरेजों का सितारा चमक उठा। अब युद्ध के अन्तिम पाँच साल निरन्तर विजय के रूप परिवर्तित हो गये। १७५७ ई० के मध्य में पिट और न्यूकैसल का संयुक्त मंत्रिमंडल स्थापित हुआ। न्यूकैसल घरेलू मामलों को संभालते और पिट युद्ध का संचालन करते थे। चार वर्षों तक पिट इंगलैंड के एकतन्त्र शासक बने रहे और यह काल अङ्गरेजों के इतिहास में बड़ा ही गौरवपूर्ण है। पिट ने युद्ध-सचिव के रूप में अपनी महानता और प्रतिभा का अद्भुत प्रदर्शन किया। एक सफल युद्ध-सचिव के सभी गुण उसमें भरपूर थे। वह आत्मविश्वासी, दृढ़ प्रतिज्ञ, कुशल निर्णायक और अदम्य उत्साही पुरुष था। उसने राष्ट्रीय भावना को जाग्रत किया और राष्ट्र की प्रशंसा का उचित पात्र बन गया। उसने स्वयं एक बार कहा था कि मेरे सिवा दूसरा कोई भी इस देश को नहीं बचा नहीं सकता। युद्ध के परिणाम ने उसके इस कथन को सत्य साबित कर दिया।

योजनायें और नीति—पिट व्यूह-रचना में बड़ा ही कुशल और चतुर था। वह आक्रमण की बड़ी-बड़ी योजनाएँ तैयार करता था जिसमें सभी हिस्से एक दूसरे से सम्बन्धित होते थे।

(१) सेना का निर्माण (२) फ्रांस को यूरोप में व्यस्त रखने की चेष्टा (३) अंगरेजी शक्ति को समुद्र पार लगाने का निश्चय—वह एक व्यवहारिक

राजनीतिज्ञ भी था। दूसरों की योग्यता परखने की उसमें विलक्षण शक्ति थी। उसने कितने पुराने अयोग्य और उत्साहहीन सेनापतियों को पदच्युत कर दिया। उनके स्थान पर नये और होनहार सेनापतियों की नियुक्ति हुई। अपने देश की रक्षा के लिये उसने एक सेना इंगलैंड में रख दी। स्कॉटलैंड के पहाड़ियों को एक कर देने की व्यवस्था हुई और उपनिवेशों को सेना भरती करने का आदेश दिया गया। प्रशिया के राजा फ्रेडरिक की वह धन और जन से खूब मदद करना चाहता था। फ्रेडरिक भी बड़ा योग्य पुरुष था और उसी ने प्रशिया राज्य की नींव दृढ़ की थी। वह फ्रांस को यूरोप में ही व्यस्त रखना चाहता था ताकि बाहर के लिये उसे अवकाश प्राप्त न हो। इसी कारण से उसने कहा था—'एल्ब नदी के किनारे ही हम लोग कनाडा को जीतेंगे।" इस नीति को कार्यान्वित करने के लिए उसने चार उपायों का सहारा लिया। उसकी योजना का दूसरा अंश था—फ्रांसीसी किनारे पर स्थित जगहों पर हमला करना। उसने सोचा कि इससे फ्रांसीसी सरकार बाहर अपनी सेना नहीं भेज सकेगी। अतः फ्रांसीसियों को भयभीत करने के लिये और उसकी सेना को कार्यव्यस्त रखने के लिये किनारों पर के स्थानों पर हमला होने लगा। इस तरह ३० हजार फ्रांसीसी सेना घर के ही भीतर व्यस्त रह गई। फिर उसने हैनोवर तथा प्रशिया की पश्चिमी सीमा की रक्षा करने के लिये ब्रन्सविक के नेतृत्व में जर्मनी में एक सेना भेज दी। उसने नौसेना का भी संगठन किया और फ्रांसीसी बन्दरगाहों पर घेरा डालने के लिये इस सेना को भेजा। इससे अब फ्रांस किसी तरह की सहायता अमेरिका में नहीं पहुँचा सकता था। फ्रांस की रखवाली करने के लिये भूमध्यसागर में भी नौसेना का एक विभाग रखा गया था। फ्रेड्रिक की सहायता करने के बाद जो शक्ति बच जाती उसका उपयोग यूरोप के बाहर समुद्र पार करने का निश्चय किया। पश्चिमी द्वीप-समूह में उसके दो उद्देश्य थे—(क) अङ्गरेजी व्यापार की रक्षा करना और (ख) बाद में प्रदेशों को जीतना।

विजय का युद्ध (१७५८-६३ ई०)—पिट जिस कुशलता से योजनाओं का निर्माण करता था उसी कुशलता से वह उन्हें कार्यान्वित भी करता था। उसकी महानता उसके कार्यों में ही थी। कार्य करने की उसमें अद्भुत क्षमता थी। उसकी योजना और नीति के फलस्वरूप अब सफलता मिलने लगी। एक लेखक ने ठीक ही कहा है—"जिस दिशा से भी हवा बहती थी, वह किसी युद्ध में विजय, किसी किले पर आधिपत्य और किसी नये प्रदेश का साम्राज्य में मिलने की ही खबरें लाती थीं।"

यूरोप की स्थिति—१७५८ ई० से विजय प्राप्ति का युद्ध प्रारम्भ हुआ। पिट ने क्लोस्टर सेवुन की अपमानजनक सन्धि को रद्द कर दिया। हैनोवर की रक्षा करने के

लिये उसने पहले योग्य जर्मन सेनापति के नेतृत्व में एक सेना भेज दी थी। वह फ्रेड्रिक को भी धन-जन से सहायता करने लगा। फ्रेड्रिक ने फ्रांसीसियों को रोसवेक में और आस्ट्रियनों को ल्युथेन में बुरी तरह परास्त कर दिया। ब्रिटेन और प्रशिया की सम्मिलित सेना ने अगस्त १७५६ ई० में फ्रांसीसी सेना को मिन्डेन में हराकर हैनोवर को सुरक्षित कर लिया।

अमेरिका की स्थिति—अमेरिका में तीन प्रधान अङ्गरेज सेनापति काम कर रहे थे—वुल्फ, एमहर्स्ट और हो। एमहर्स्ट ने केप ब्रिटन के ऊपर विजय प्राप्त की और फ्रांसीसी ड्यूकेनी पर हमला किया। इसे भी जीतकर इसका नाम पिट्सबर्ग रख दिया गया। उसने लूईबर्ग के किले को भी नष्ट कर दिया। अब कनाडा और लूइ-सियाना को मिलाने के लिये फ्रांसीसी स्वप्न का अन्त हो गया और अङ्गरेजों के प्रसार के लिये पश्चिम का क्षेत्र खुल गया। १७५८ ई० में हो के नेतृत्व में कनाडा पर भी हमला हुआ। इसी समय हो की मृत्यु हो गई और १७५६ ई० में उसकी जगह पर वुल्फ भेजा गया। उसने क्वीवेक पर चढ़ाई कर दी। यह सेंट चार्ल्स और सेंट लारेंस नदियों के संगम के निकट एब्राहम पहाड़ पर स्थित था। वुल्फ ने वहाँ अपनी अद्भुत बहादुरी का प्रदर्शन किया और बड़ी ही गौरवपूर्ण विजय प्राप्त की। युद्ध तो लगभग आध घंटे में ही समाप्त हो गया, किन्तु दोनों पक्ष के बहादुर सेनापति मोन्तकाम और वुल्फ बुरी तरह घायल हो गये। दुर्भाग्यवश वुल्फ की ता मृत्यु ही हो गय किन्तु अमेरिका में फ्रांसीसी सत्ता की नींव समाप्त हो गई। अब अङ्गरेजों के लिये कनाडा पर विजय पाना आसान हो गया। वुल्फ के अधूरे काम को मुर्रे तथा एमहर्स्ट ने पूरा किया। मुर्रे ने क्वीवेक को आत्मसमर्पण करने के लिये बाध्य किया। तत्पश्चात् फ्रांसीसी सेनापति लेविस ने पुनः क्वीवेक लेने का प्रयास किया परन्तु सफल न हो सका। १७६० ई० के ग्रीष्म में मौन्ट्रीयल पर अङ्गरेजों ने तीनतरफा हमला कर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। कनाडा अङ्गरेजों के हाथ से चला गया और अमेरिका में फ्रांसीसी सत्ता का अन्त हो गया।

हिन्दुस्तान की स्थिति—हिन्दुस्तान में भी अंगरेजों को अद्भुत सफलता मिली। १७५७ ई० में प्लासी के युद्ध में क्लाइव विजयी हुआ और सिराजुद्दौला हार गया। अंगरेजों ने मीरजाफर को नवाब मनोनीत कर दिया। नये नवाब ने बदले में कलकत्ते के पास बहुत बड़ी जमींदारी दे दी। यहीं से बंगाल में अंगरेजी ईस्ट इन्डिया कम्पनी की प्रधानता शुरू होने लगी। १७५६ ई० में अंगरेजों ने मसलीपट्टम पर चढ़ाई कर सरकार प्रदेश को अपने अधिकार में कर लिया। निजाम के दरबार में भी इनकी धाक जम गई। १७६० ई० में वांडीवाश के युद्ध में सर आयरकूट ने फ्रांसीसियों को

परास्त किया। वांडीवाश का युद्ध कर्नाटक के लिये वैसा ही निर्णायक था जैसे प्लासी बंगाल के लिये। दूसरे साल कूट ने फ्रांसीसी भारत की राजधानी पांडीचेरी पर भी धावा बोल दिया और उसे अपने अधिकार में कर लिया। हिन्दुस्तान में भी अंगरेजी साम्राज्य की दृढ़ नींव पड़ गयी और फ्रांसीसियों की आशा पर पानी फिर गया।

सामुद्रिक स्थिति—सागर पर भी ब्रिटेन को पर्याप्त सफलता मिली। फ्रांस के किनारे पर दो बार जहाजी आक्रमण किये गये और फ्रांस के कितने ही बेड़े बर्बाद कर डाले गये। १७५६ ई० में फ्रांसीसियों ने एक योजना बनाई किन्तु सब प्रयास विफल हुआ। ब्रिटेनी के दक्खिन क्वीबेरन की खाड़ी में हॉक ने फ्रांसीसियों को बुरी तरह हरा दिया; उनके दो जहाज पकड़ लिये और उन्हें नष्ट कर डाला। उनके बाकी सभी जहाज छिन्न-भिन्न हो गये। अब अङ्गरेजों की सामुद्रिक प्रधानता पुनः स्थापित हो गयी। इंगलैंड पर फ्रांसीसी हमले का भय जाता रहा। उनके उपनिवेशों और फैक्टरियों को जीतने के लिये अङ्गरेजों का रास्ता साफ हो गया।

पिट का पतन (१७६१ ई०)—१७५६ ई० में नेपुल्स का डौनकारलौस चार्ल्स तृतीय के नाम से स्पेन की गद्दी पर बैठा। फ्रांस और स्पेन ने १७३३ ई० में "फैमिली कम्पैक्ट" को फिर से जारी किया। इसके द्वारा फ्रांस, स्पेन और इटली के बोर्बन दरबार इंगलैंड के विरुद्ध संगठित हो गये। पिट चाहता था कि सन्धि की पूर्त्ति होने के पहले ही स्पेन पर आक्रमण कर दिया जाय और अमेरिका से आने वाले उसके कोष-पोत पर अधिकार कर लिया जाय। किन्तु राजा और उसके कुछ मन्त्रियों ने पिट का साथ नहीं दिया, अतः अक्टूबर १७६१ ई० में पिट ने पदत्याग कर दिया। इस मौके पर उसने कहा था—'मैं जनता के प्रति उत्तरदायी हूँ कि जिसने मुझे यहाँ भेजा है। अतः उन योजनाओं के लिये उत्तरदायी नहीं हो सकता जिसका पथ-प्रदर्शन मैं नहीं कर सकता।"

स्पेन के साथ लड़ाई (१७६२ ई०)—परन्तु दूसरे ही साल १७६२ ई० में इंगलैंड को स्पेन के विरुद्ध युद्ध घोषित करना ही पड़ा। अङ्गरेजों ने फिलिपाइन द्वीपों की राजधानी मनीला और क्यूबा की राजधानी हैवेना पर चढ़ाई कर उन्हें अपने कब्जे में कर लिया।

अब दोनों ही दल युद्ध से ऊब गये थे। फ्रांस शांति चाहता था। जार्ज तृतीय भी अपनी घरेलू नीति को कार्यान्वित करने के लिये अवकाश चाहता था, अतः युद्ध समाप्त करने का भार उसने अपने मंत्री ब्यूट को सौंप दिया।

युद्ध की समाप्ति—अतः फरवरी १७६३ ई० में इंगलैंड, फ्रांस और स्पेन ने पेरिस की सन्धि पर हस्ताक्षर कर दिया। इस तरह यह युद्ध समाप्त हो गया।

पेरिस की सन्धि १७६३ ई०—ग्रेट ब्रिटेन को फ्रांस से कैनाडा, नोवास्कोशिया, केप ब्रिटन द्वीप तथा सेंट लारेंस नदी और उसकी खाड़ी के दूसरे सभी द्वीप तथा स्पेन से फ्लोरिडा मिले। परन्तु फ्रांस को न्यूफाउंडलैंड की मछली के व्यापार में कुछ हिस्सा दिया गया और उसके तट पर दो छोटे-छोटे द्वीप दे दिये गये। ब्रिटेन को पश्चिमी-द्वीप-समूह में डोमिनिका, टुबागो आदि द्वीप और अमीका में सेनीगल नदी के तट पर के स्थित प्रदेश मिले। ग्रेट ब्रिटेन ने स्पेन को मनीला और हैवेना लौटा दिया। फ्रांसीसी लूईसियाना भी स्पेन के हाथ बेच दिया गया। फ्रांस ने ब्रिटेन को माइनौर्का (भूमध्यसागर में) और ब्रिटेन ने फ्रांस को पांडीचेरी तथा चन्द्रनगर (हिन्दुस्तान में) लौटा दिया। किन्तु एक शर्त यह थी कि फ्रांसीसी इन जगहों में किले नहीं बनवा सकते। पश्चिमी-द्वीप-समूह और अफ्रीका में भी ग्रेट ब्रिटेन ने फ्रांस को कई द्वीप लौटा दिये।

परिणाम

प्रत्यक्ष—(१) ग्रेट ब्रिटेन की महत्ता—ग्रेट ब्रिटेन को उसकी आशा के मुताबिक युद्ध से लाभ नहीं हुआ। यदि संधि के समय पिट प्रधान मंत्री रहता तो इसकी शर्तें और भी अधिक लाभप्रद होतीं। फिर भी देश को बहुत से बहुमूल्य लाभ हुए। इस युद्ध के द्वारा इंगलैंड तथा फ्रांस के बीच स्थित परम्परागत संघर्ष का निर्णय इंगलैंड के पक्ष में हो गया। यह निर्णय बिल्कुल स्पष्ट और अन्तिम था। उसने भारत, उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका और पश्चिमी द्वीप समूह के अधिकांश भूभागों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। अमेरिका तथा हिन्दुस्तान में अङ्गरेजों के पैर जम गये। हिन्दुस्तान में यद्यपि फ्रांसीसी प्रदेश लौटा दिये गये, फिर भी वे अब इन स्थानों में कोई सैनिक प्रदर्शन नहीं कर सकते थे। इस तरह उन्हें अङ्गरेजों की राजनैतिक प्रभुता मान लेनी पड़ी। समुद्र पर भी अङ्गरेजों का आधिपत्य निश्चित हो गया। अब साम्राज्य स्थापित करने के लिये फ्रांसीसी स्वप्न का अन्त हो गया। ग्रेट ब्रिटेन औपनिवेशिक, व्यापारिक और सामुद्रिक शक्ति के रूप में विश्व का अग्रगणी प्रसिद्ध हो गया। अङ्गरेजी साम्राज्य की दृढ़ नींव पड़ गई। पूरब और पश्चिम दोनों दिशाओं में तथा समुद्र पर अङ्गरेजी शक्ति प्रधान हो गई।

(२) प्रशिया का महत्व—(३) यूरोप में शक्ति-सन्तुलन की सुरक्षा—प्राशया ने साइलेशिया को अपने आधीन ही रखा और अपना स्थान मजबूत कर लिया। इस युद्ध में भाग लेने से फ्रेड्रिक का बड़ा नाम हुआ और प्रशिया का महत्व बढ़ गया। अब यूरोप के प्रथम श्रेणी के राज्यों में उसकी गिनती होने लगी और वह जर्मनी में आस्ट्रिया का शक्तिशाली प्रतिद्वन्द्वी बन गया। इस तरह यूरोप में शक्ति-सन्तुलन भी कायम रखा गया।

परोक्ष परिणाम—(१) अमेरिका के स्वातन्त्र्य-संग्राम में प्रोत्साहन—अमेरिका के स्वातन्त्र्य-युद्ध के कारणों में सप्तवर्षीय युद्ध भी एक था। अब तक उपनिवेशवासियों को फ्रांसीसियों के आक्रमण का बराबर भय बना रहता था। अतः उनकी रक्षा के लिये ब्रिटेन की सैन्य सहायता की आवश्यकता पड़ती थी। किन्तु अब तो कनाडा से फ्राँसीसियों की विदाई हो गई। अतः उपनिवेशवासियों का भय भी जाता रहा और अंगरेजी सहायता की अब आवश्यकता ही न रह गई। अब वे आसानी से ब्रिटेन के विरुद्ध विद्रोह कर सकते थे। एक फ्राँसीसी ने ठीक ही कहा था—"उपनिवेशों को भयत्रस्त रखने के लिये एक ही अवरोध था और उसे हटा देने से इंगलैंड को अफसोस करना पड़ेगा।" यह कथन १० ही वर्षों के अन्दर सत्य साबित हुआ। अतः यह बिल्कुल ठीक ही कहा गया है कि "कनाडा से फ्राँसीसियों के निष्कासन के साथ ही प्रत्यक्ष रूप से ब्रिटेन और उसके अमेरिकन उपनिवेशों के बीच संघर्ष की धारा प्रवाहित होने लगी।"[1] युद्ध-जनित और रक्षा के खर्च की पूर्ति के लिये ग्रेट ब्रिटेन ने उपनिवेशों के ऊपर टैक्स लगाने की कोशिश की। परन्तु ब्रिटिश पार्लियामेंट में उपनिवेशों का कोई प्रतिनिधि नहीं था। अतः 'बिना प्रतिनिधित्व के टैक्स नहीं' के सिद्धान्त पर उपनिवेशों ने ब्रिटेन को टैक्स देने से इनकार कर दिया। परन्तु ब्रिटेन व्यर्थ ही कोशिश करता रहा। उत्तर और दक्खिन के सभी उपनिवेश वासियों ने संगठित रूप से ब्रिटेन का सामना किया और अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर ली। इसीलिये यह कहा जाता है—"एब्राहम के पहाड़ बुल्फ की विजय के साथ संयुक्त राज्य के इतिहास का प्रारम्भ हुआ।" दूसरे शब्दों में अमेरिकन उपनिवेशों का विद्रोह और अमेरिका के संयुक्त राज्य का निर्माण खासकर सप्तवर्षीय युद्ध में फ्रांस के विरुद्ध ब्रिटेन की विजय के फलस्वरूप ही हुआ।

(२) प्रशिया की शत्रुता—सन्धि करने के समय मित्र राष्ट्रों की राय नहीं ली गई। इससे प्रशिया के राज्य में कोई वृद्धि नहीं हुई। अतः इस उपेक्षा के कारण वह ग्रेट ब्रिटेन से बहुत रुष्ट हो गया और आगे उसकी सहायता करने के लिये फिर कभी तैयार नहीं हुआ।

इसके सिवा सप्तवर्षीय युद्ध में उसकी सफलता और प्रगति देखकर दूसरे राष्ट्र भी ईर्ष्या तथा डाह से जलने लगे और अमेरिका के स्वातन्त्र्य-युद्ध के समय किसी राष्ट्र ने भी ब्रिटेन का साथ नहीं दिया। परन्तु फ्राँस ने अमेरिकनों की सहायता की और उसका युद्ध में शामिल होना उनकी सफलता का एक प्रधान कारण प्रमाणित हुआ।

---

१ टाउट—ऐंन ऐडवान्सड हिस्ट्री औफ ग्रेट ब्रिटेन, बुक ३, पृष्ठ ५७७

अध्याय २४

गृहनीति (१७६०–१८१५ ई०)

युग की प्रकृति—१७६० से १८१५ ई० तक यानी ५५ वर्ष के इस युग की दो विशेषताएँ हैं :—

(क) ब्रिटिश वाणिज्य-व्यवसाय की उन्नति[1] और (ख) ग्रेटब्रिटेन की निरंतर युद्ध में प्रवृत्ति। केवल दो बार १७६३–७५ ई० तक और १७८३–९३ ई० तक युद्ध नहीं था। फिर भी पहले समय में अमेरिकन संघर्ष की ओर और दूसरे समय में फ्रांसीसी क्रांति की ओर सार्वजनिक ध्यान आकर्षित था और वहाँ का लोकमत भयत्रस्त रहा।

इस प्रकार इस युग में वैदेशिक नीति की ही प्रधानता रही है, घरेलू क्षेत्र में कोई प्रमुख सुधार नहीं हुआ, कोई प्रसिद्ध कानून पास नहीं हुआ, व्यवस्थापन सम्बन्धी कार्य की प्रगति बड़ी ही मन्द रही। तो भी जार्ज तृतीय का दीर्घ राज्यकाल दो बातों के लिये महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है। प्रथम भाग में ह्विगों के प्रभुत्व से छुटकारा पाने के लिये राजा की कोशिश और उत्तरकालीन भाग में छोटे पिट का मन्त्रित्व।

जार्ज तृतीय का राज्यारोहण—जार्ज द्वितीय के फ्रेडरिक नाम का एक लड़का था, परन्तु १७५१ ई० में ही उसकी मृत्यु हो गई थी। अतः १७६० ई० में जार्ज द्वितीय के मरने पर उसका पोता जार्ज तृतीय के नाम से गद्दी पर बैठा। इस समय उसकी अवस्था २२ वर्ष की थी। इसने कुल ६० वर्षों तक शासन किया। परन्तु अपने राज्यकाल के पिछले १० वर्षों में यह शासन-कार्य के लिये कमजोर हो गया था और इसका पुत्र जार्ज चतुर्थ इसे सहायता कर रहा था। १८२० ई० में जार्ज तृतीय मर गया।

जार्ज तृतीय का चरित्र—जार्ज तृतीय के चरित्र में बहुत सी प्रसंशनीय बातें

---

१ इसका वर्णन आगे है।

थीं जिसके कारण उसकी प्रजा उससे खुश रहती थी। उसके पूर्वजों की अपेक्षा उसमें कई विशेष गुण थे। इंगलैंड में उसका जन्म अपने वंश की तीसरी पीढ़ी में हुआ था। एक अंगरेज़ के रूप में उसका लालन-पालन हुआ और उसकी शिक्षा-दीक्षा हुई। हैनोवर की अपेक्षा वह ब्रिटेनों से अधिक दिलचस्पी रखता था। उसने स्वयं कहा था 'इसी देश में पैदा और शिक्षित होने के नाते मैं ब्रिटेन के नाम में गौरव अनुभव करता हूँ।" वह दूसरों के साथ व्यवहार में सज्जन, अपने खान-पान, पोशाक-पहनावे में सादा, अपने आचार-विचार में नैतिक और अपने धर्म में सच्चा था। १८०७ ई० में उसने एक बार घोषणा की थी 'मैं प्रोटेस्टेंट देश का ही प्रोटेस्टेंट राजा होऊँगा अन्यथा राजा नहीं होऊँगा।" यह उन दुष्कर्मों से मुक्त था जिनका इसके पूर्वज और इसके अपने लड़के शिकार थे।

वह दृढ़ इच्छाशक्ति, अदम्य उत्साह और उत्तम चरित्र का व्यक्ति था। वह एक आदर्श पुत्र, कर्त्तव्यशील स्वामी और दयालु पिता था। वह परिश्रमी था, वह शिकार का भी शौकीन था। वह साहित्य, कला तथा शिक्षा में भी पूरी दिलचस्पी रखता था। उसका पुस्तकालय सुन्दर और सुसज्जित था। वह ग्रामीणों से सहानुभूति रखता था, अतः प्रेम में लोग उसे 'फार्मर जार्ज' भी कहा करते थे। फिर भी वह एक मानव था और उसमें कुछ भारी त्रुटियाँ भी थीं। वह कम पढ़ा-लिखा और संकीर्ण प्रकृति का व्यक्ति था। वह प्रारम्भिक अवस्था में विशेषरूप से एकान्त जीवन व्यतीत करता था। वह अपनी ही बुद्धिमत्ता और योग्यता में विश्वास करता था। अतः वह कट्टर और हठी बन गया था। १८०१ ई० में उसने छोटे पिट जैसे योग्य मंत्री का त्याग कर दिया, किन्तु कैथोलिकों को मुक्ति प्रदान नहीं की। वह दूसरों के विचारों का कुछ भी ख्याल करने को तैयार नहीं था। वह किसी भी बात के दोनों पक्षों को नहीं देखता था। उसके चरित्र में यह एक विचित्रता थी कि वह बुरी योजनाओं का समर्थन और अच्छी योजनाओं का विरोध करता था जैसे वह गुलामों के व्यापार के पक्ष में और पार्लियामेंट के सुधार तथा कैथोलिकों की मुक्ति के विपक्ष में था। उसके इस चरित्र के कारण इंगलैंड को बड़ी क्षति उठानी पड़ी। "अमेरिकन उपनिवेशों के ब्रिटेन के हाथ से निकल जाने, पार्लियामेन्ट के सुधारों में विशेष विलम्ब होने, आयरलैंड को असन्तुष्ट रहने देने तथा गुलामों के व्यापार को अधिक समय तक जारी रखने का उत्तरदायित्व बहुत कुछ उसी के सिर पर है।"[1] सचमुच "आधुनिक युग में सर्वोत्तम उद्देश्य रखते हुए भी जार्ज तृतीय ने अपने देश की जितनी भीषण क्षति की वैसी क्षति अन्य किसी राजा ने अपने देश की नहीं की है।"[2]

१ वार्नर ऐन्ड मार्टिन, भाग ३, पृष्ठ ५६१

२ कार्टर ऐन्ड मीयर्स, पृष्ठ ६१६

फिर भी यह याद रखना चाहिये कि उसके समय में ब्रिटेन की जितनी भी क्षति हुई उन सब के लिये जार्ज ही शत प्रतिशत उत्तरदायी नहीं था। उसके कुछ विचार तो ऐसे थे जो उस समय के बहुत अंगरेजों के भी थे। अतः तत्कालीन क्षति के लिये कुछ अंश में उसकी प्रजा भी दोषी है।

उसकी नीति—जार्ज तृतीय राज्य और शासन दोनों ही करना चाहता था। जार्ज की माँ जर्मन थी और जर्मनी में स्वेच्छाचारी शासन था। अतः वह अपने पुत्र को भी बराबर यही शिक्षा देती थी कि 'जार्ज तुम राजा बनो' उसके शिक्षक ब्यूट भी उसे यही पाठ पढ़ाते थे। जार्ज ने बोलिंगब्रुक की 'पैट्रियट किंग' नाम की पुस्तिका का भी अध्ययन किया और इससे भी प्रभावित हुआ। अतः जार्ज सिद्धान्त और व्यवहार दानों ही में राजा बनना चाहता था। वह अपने पूर्वजों के द्वारा खोई हुई शक्ति को प्राप्त करना चाहता था।

वह पार्टी-सरकार का विरोधी था क्योंकि इस प्रणाली में एक ही पार्टी की प्रधानता स्थापित हो जाती है। वह किसी पार्टी से अपना सम्पर्क रखना नहीं चाहता था। फिर भी ह्विगों का सामना करने के लिये उसने बोलिंगब्रुक स्कूल के नये टोरियों को अपने पक्ष में मिलाया और उनके साथ निकट सम्बन्ध स्थापित कर लिया। परन्तु जिस प्रकार जार्ज प्रथम और द्वितीय ह्विग राजा थे उस प्रकार जार्ज तृतीय टोरी राजा नहीं था। वह अपने मंत्रियों को स्वयं नियुक्त करना और नीति स्वयं निर्धारित करना चाहता था। १६८८ ई० की क्रान्ति जनित वैधस्थिति को स्वीकार करने के लिये वह प्रस्तुत था, लेकिन प्रथम दो जार्जों के समय जो वैधानिक प्रथाएँ उत्पन्न हुई थीं, जिनके द्वारा राजकीय शक्ति कमजोर हो गई थी, उन्हें वह मानने के लिये तैयार नहीं था।

अपनी नीति को कार्यान्वित करने के लिये ह्विगों के आधिपत्य का अन्त करना आवश्यक था। अतः वह पार्लियामेंट को अपने नियन्त्रण में करना चाहता था। उसने अपनी एक पार्टी कायम की जो (किंग्स फ्रेन्ड्स) 'राजा के मित्र' के नाम से प्रसिद्ध है। इस पार्टी की राजनीति राजा की आज्ञा का पालन करनी ही था। अपनी पार्टी को सन्तुष्ट रखने के लिये वह ह्विगों के जैसा घूस या भ्रष्टाचार के तरीकों को अपनाने से जरा भी नहीं हिचकता था।

लेकिन राजा को प्रारम्भ में ह्विगों पर ही निर्भर रहना पड़ा क्योंकि ये शासन कार्य में अनुभवी थे। उसे कुछ समय के लिये अपनी नीति में सफलता प्राप्त हुई। उसका प्रभाव बहुत बढ़ गया। प्रत्येक व्यक्ति दरबार की ओर दौड़ता था और दरबार की इच्छानुसार चलने के लिये तैयार रहता था। इसमें कुछ परिस्थितियाँ उसके

अनुकूल थीं। (क) उसके व्यक्तिगत चरित्र और महान् उद्देश्य के कारण बहुत से लोग उसे सम्मान की दृष्टि से देखते थे। (ख) कौमन्स सभा में भ्रष्टाचार प्रचलित था। (ग) ह्विग बहुत बदनाम और छोटे-छोटे दलों में विभक्त हो गये थे। (घ) बोलिंगब्रूक के नेतृत्व में टोरियों का पुनरोत्थान होने लगा था और ये लोग भी अब हैनोवर वंश के समर्थक बन गये थे।

ह्विगों का पतन और इसके कारण—जार्ज तृतीय के राज्याभिषेक के साथ-साथ ह्विगों की प्रधानता का अन्त हो गया और टोरियों ने उनका स्थान ग्रहण कर लिया। प्रथम १० वर्षों में तो सफलता न मिली और उसे ह्विगों पर भी निर्भर रहना पड़ा। लेकिन १७७० ई० में उसे मन चाहा प्रधान मंत्री मिल गया और अब अगले ६० वर्षों तक टोरियों की ही प्रधानता बनी रही। इसके कई कारण थे :—

(१) आपसी फूट—१७६१ ई० में बड़े पिट के पदत्याग के बाद ह्विग कई छोटे-छोटे दलों में बँट गये। भिन्न-भिन्न दल के भिन्न-भिन्न नेता थे और वे सभी एक दूसरे से झगड़ने लगे। इस आपसी फूट से जार्ज तृतीय को मौका मिल गया और वह एक दल को दूसरे दल के विरुद्ध भिड़ाने की कोशिश करने लगा।

(२) ह्विगों की बदनामी—ह्विगों की शासन प्रणाली बड़ी ही दूषित थी। उनके तरीके-घूसखोरी, भ्रष्टाचार, दमन तथा धमकी, अन्यायपूर्ण और अनैतिक थे। बड़े पिट जैसा महान् ह्विग नेता भी इन तरीकों को बुरी दृष्टि से देखता था। अतः लोकमत क्रमशः ह्विगों के विरुद्ध होने लगा।

(३) टोरियों का पुनरुत्थान—१७६० के पहले टोरियों की जो स्थिति थी वह अब न रही। अब उनमें जैकोबाइट मनोवृत्ति नहीं रह गई थी। प्रिटेन्डर और उसका पुत्र दोनों ही देश निर्वासित थे और अब गद्दी पर उनके पुर्नस्थापन का कोई प्रश्न ही नहीं था। जार्ज तृतीय के समय टोरियों ने हैनोवेरियन वंश को स्वीकार कर लिया और राजसत्ता सम्बन्धी उनके तथा राजा के विचारों में बहुत कुछ समानता स्थापित हो गई। अतः यद्यपि टोरी प्रथम दो जार्जों के विरोधी थे तो भी अपने पुनरुत्थान के साथ वे जर्ज तृतीय के समर्थक बन गये।

(४) जार्ज तृतीय का व्यक्तित्व—हम लोग पहले जार्ज तृतीय के चरित्र, व्यक्तित्व तथा नीति का अध्ययन कर चुके हैं। उसने शाही शक्ति को दृढ़ करने का निर्णय कर लिया था। इसके लिये ह्विगों को कुचलना उसका प्रधान लक्ष्य था। अतः ह्विगों को कमजोर करने के लिये उसने कोई कोर कसर नहीं उठा रखी।

(५) कौमन्स सभा की भ्रष्टाचार तथा अनुत्तरदायित्वपूर्ण प्रकृति—जार्ज

ने अनुचित उपायों द्वारा 'राज-मित्र' नाम की अपनी एक पार्टी कायम कर ली। भिन्न-भिन्न पदों पर नियुक्ति करने का अधिकार जार्ज ने स्वयं अपने हाथों में ले लिया, अतः उसके समर्थक अपनी उन्नति के लिये अब राजा पर न कि प्रधान मंत्री पर, निर्भर रहने लगे। अब कौमन्स सभा में राजा के समर्थकों की संख्या बढ़ने लगी और उन्हें सन्तुष्ट रखने के लिये वह सब कुछ करने को तैयार था। किसी भी कुशल ह्विग की तरह वह भी घूसखोरी तथा भ्रष्टपूर्ण तरीकों से काम लेता था। जिन क्षुद्र तथा नीच तरीकों को ह्विगों ने अपनी शक्ति सुदृढ़ करने के लिये अपनाया था, उनका उपयोग जार्ज ने बड़ी खूबी के साथ उन्हीं की शक्ति का अन्त करने के लिये किया। उसने इस नीति का आश्रय लेने में अपूर्व उत्साह तथा धैर्य का परिचय दिया। इस प्रकार कौमन्स सभा की जिस भ्रष्टाचार तथा अनुत्तरदायित्व पूर्ण प्रकृति ने ह्विगों की प्रधानता कायम की थी, उसी ने उनकी प्रधानता का अन्त करने में जार्ज तृतीय की सहायता भी की।

शाही शक्ति की पुनर्प्राप्ति के लिये जार्ज की चेष्टायें और परिणाम १७६०—१७८३ ई०—जार्ज तृतीय अपनी नीति के अनुसार अपने मंत्रियों को नियुक्त करने की चेष्टा करने लगा। वह ऐसा प्रधान मंत्री चाहता था जो उसकी आज्ञानुसार काम करे। यदि उसे ऐसा प्रधान मंत्री नही प्राप्त होता था तो उसे पदच्युत कर वह दूसरा प्रधान मंत्री नियुक्त करता था। अतः मंत्रिमंडल में बराबर परिवर्त्तन होता रहा। इस तरह उसके राज्यकाल के प्रथम १० वर्षों में ही, सात मंत्रिमंडल स्थापित हुए।

(१) पिट-न्यूकैसिल मंत्रिमंडल १७६०-६२ ई०—जार्ज के राज्यारोहण के समय पिट-न्यूकैसिल का संयुक्त मंत्रिमंडल था। जार्ज यदि बुद्धिमानी से काम करता तो वह पिट के साथ मित्रता कर लेता। पिट और उसके कई विचारों में समता थी जैसे दोनों ही दलबन्दी तथा ह्विग शासन के विरोधी थे। किन्तु जार्ज ने वैसा नहीं किया। वह शक्तिशाली तथा लोक प्रियमंत्री होने के कारण पिट से घृणा करता था और उसे पदच्युत करने का मौका खोज रहा था जो शीघ्र ही प्राप्त भी हो गया। पिट स्पेन के विरुद्ध लड़ाई घोषित करना चाहता था, लेकिन ब्यूट की चालबाजी से कैबिनेट में फूट पैदा हो गयी। दूसरे मंत्री और न्यूकैसिल भी पिट के प्रस्ताव से सहमत नहीं हुए। पिट ने यह घोषणा की कि वह जनता के प्रति उत्तरदायी है और जिन कामों में उसका हाथ नहीं है, उनके लिये वह उत्तरदायी नहीं हो सकता है। उसने अक्तूबर १७६१ ई० में झट पदत्याग कर दिया। उसके कुछ महीनों बाद न्यूकैसल ने भी ऊबकर इस्तीफा दे दिया क्योंकि उसके मार्ग में भी बहुत बाधायें पैदा की जाती थीं।

(२) ब्यूट मंत्रित्व १७६२-६३ ई०—इसके बाद लार्ड ब्यूट प्रधान मंत्री बना। यह टोरी था और राज का शिक्षक रह चुका था। वह राजा के हाथ का खिलौना

था। उसी के समय में पेरिस की सन्धि के द्वारा सप्तवर्षीय युद्ध समाप्त हुआ। उसे शासन कार्य का न तो अनुभव था और न वह इसके लिये योग्य ही था। वह राजनीति से अनभिज्ञ था। उसने स्पेन के विरुद्ध युद्ध घोषित किया यद्यपि उसने कुछ समय पहले इस सम्बन्ध में पिट का विरोध किया था। वह अंगरेजों का प्रिय पात्र नहीं था क्योंकि वह एक स्कॉट था तथा जार्ज की जर्मन माँ का कृपापात्र था। वह अपनी रक्षा के लिये सैनिकों पर निर्भर था और उसके समय में घूसखोरी बहुत बढ़ गई थी। १७६३ ई० में उसे पदत्याग करना पड़ा।

(२) जार्ज ग्रेनविल मंत्रित्व—१७६३-६५ ई०—अब बड़े पिट का एक सम्बन्धी ग्रेनविल प्रधान मंत्री हुआ। वह एक ह्विगदल का नेता था और परिश्रमी वकील था। परन्तु वह संकीर्ण और दम्भी था। उसके मंत्रित्व काल में दो घटनाएँ हुईं जिनके कारण वह राजा तथा प्रजा दोनों की दृष्टि में गिर गया। इसी के समय स्टाम्प ऐक्ट पास हुआ जिससे अमेरिका का राजनीतिक वातावरण विक्षुब्ध हो गया।[1] दूसरी घटना विल्क्स की गिरफ्तारी सम्बन्धी थी, जिसके कारण इंगलैंड के राजनीतिक वातावरण में अशान्ति पैदा हो गई। विल्क्स पार्लियामेंट का एक सदस्य था और 'नौर्थ ब्रिटन' नामक एक अखबार का सम्पादक भी था। ग्रेनविल प्रेस की स्वतन्त्रता पर आघात पहुँचाना चाहता था। एक बार विल्क्स ने अपने पत्र के ४५ वें अंक में पार्लियामेंट के अधिवेशन प्रारंभ होने के समय राजा के भाषण की कटु आलोचना की।

विल्कस निन्दालेख अभियोग का शिकार हुआ और ग्रेनविल की सरकार ने उस पत्र के प्रकाशक, मुद्रक और लेखक की गिरफ्तारी के लिये एक सामान्य वारन्ट (बिना नाम का) जारी किया। विल्क्स ने यह दावा किया कि पार्लियामेंट के सदस्य की हैसियत से उसकी गिरफ्तारी नहीं होनी चाहिये। ग्रेटब्रिटेन का लोकमत उसके पक्ष में था क्योंकि ऐसा वारण्ट अवैध समझा जाता था। प्रधान न्यायाधीश 'प्रैट' ने विल्कस को रिहा कर दिया। इसके दो कारण थे:—बिना नाम के वारन्ट द्वारा गिरफ्तारी अनुचित थी और पार्लियामेंट के सदस्य होने के कारण निंदालेख के अभियोग पर उसकी गिरफ्तारी नहीं हो सकती थी।

इस मामले का महत्व—(क) बिना नाम के वारन्ट को अवैध घोषित कर व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा की गई। (ख) अब पार्लियामेंट का कोई भी सदस्य निन्दा-लेख के लिये गिरफ्तार नहीं हो सकता था।

उपर्युक्त दोनों घटनाओं के कारण ग्रेनविल सरकार को बड़ी शिकायत हुई। राजा

[1] देखिये अध्याय २५

भी ग्रेनविल के बकवाद से ऊब गया था और उससे अपना पिंड छुड़ाना चाहता था। अतः १७६५ ई० में बाध्य होकर उसे पदत्याग करना पड़ा।

(४) रौकिंघम मंत्रित्व १७६५-६६ ई०—ई० में रौकिंघम नामक एक ह्विग प्रधान मंत्री हुआ। यह उत्तम चरित्र किन्तु कम योग्यता का व्यक्ति था। इसने स्टाम्प ऐक्ट को रद्द कर दिया तथा सामान्य वारन्ट को अवैध घोषित कर दिया। लेकिन इसने एक डिक्लेयरेटरी ऐक्ट पास किया जिसके द्वारा इस बात पर ज़ोर दिया गया कि इंगलैंड को उपनिवेशों के उपर टैक्स लगाने का अधिकार है। राजा उसे घृणा की दृष्टि से देखता था और पिट भी उसके अधीन काम करना नहीं चाहता था। अतः राजा ने रौकिंघम को पदच्युत कर दिया और पिट को कैबिनेट निर्माण के लिए निमन्त्रित किया।

(५) बड़े पिट का मंत्रित्व १७६६-६८ ई०—पिट ने राजा के निमन्त्रण को स्वीकार किया और मंत्री पद ग्रहण किया। इसी समय उसे चैथम का अर्ल भी बना दिया गया। पिट का मंत्रिमंडल किसी खास पार्टी पर आधारित नहीं था और उसने राजा की इच्छानुसार शासन करने की घोषणा कर दी थी। किंतु इस समय पिट का स्वास्थ्य अच्छा नथा। वह हीं एकान्त वास पसन्द करता था। दूसरे मंत्री आपस में झगड़ रहे थे। इसी समय चाँसलर टाउनशेन्ड ने अमेरिका में आयात की कुछ चीजों पर कर लगाकर स्थिति गंभीर कर डाली। ऐसी ही परिस्थिति में १७६८ ई० में पिट ले इस्तीफा दे दिया।

(६) ग्रेफ्टन का मंत्रित्व १७६८-७०ई०—अब १७६८ ई० में ग्रेफ्टन प्रधान मंत्री हुआ। वह सुस्त मिजाज का व्यक्ति था। उसके मंत्रित्व काल में फिर विल्क्स सम्बधी एक घटना घटी। पार्लियामेंट में राजा के मित्र भरे हुए थे। जब विल्क्स अदालत से रिहा होगया तब उस पर दूसरे तरीके से अत्याचार होने लगा। यह घोषणा की गई कि पार्लियामेंट के सदस्यों को निन्दालेख लिखने की स्वतंत्रता नहीं है। इस आधार पर पार्लियामेंट ने विल्क्स को निकाल बाहर कर दिया। विल्कूस फ्रांस चला गया और उसे कानून के दायरे से बाहर कर दिया गया। कुछ समय के बाद वह फ्रांस से लौट आया। मिड़लसेक्स काउन्टी ने विल्क्स को चार बार निर्वाचित किया। परन्तु कौमन्स सभा बारबार उसका वहिष्कार करती रही। चौथी बार कौमन्स सभा ने उसके विपक्षी को ही निर्वाचित घोषित कर दिया यद्यपि विल्क्स को ११४३ और उसके विपक्षी को २९६ मत मिले थे। यह बड़ा ही अवैधनिक तथा अन्यायपूर्ण कार्य था। निर्वाचकों के अधिकार की उपेक्षा की गई। उसका घोर विरोध किया गया। जुनियस के गुमनाम पत्रों में ग्रेफ्टन मंत्रिमंडल की कटु आलोचन की गई। एड मंड

बर्क ने भी तत्कालीन असंतोष के कारण पर एक पुस्तिका लिखी थी जिसमें उसने ह्विगों की पार्टी-सरकार की प्रथा का समर्थन किया और ग्रैफ्टन सरकार की बड़ी निन्दा की। अतः १७७०ई० में ग्रैफटन को पदत्याग कर देना पड़ा।

(७) लार्ड नौर्थ का मंत्रित्व १७७०–८२ ई०—१७७० ई० में जार्ज को अपने मन लायक प्रधान मंत्री मिल गया। लार्ड नार्थ नाम का एक टोरी इसपद पर नियुक्त हुआ। वह सदा प्रफुल्लित रहता था और सरल प्रकृति का व्यक्ति था। राकी एन के मरने के बाद वह पहला टोरी था जिसने प्रधान मन्त्री के पद को सुशोभित किया। लेकिन वास्तव में वह टोरी नहीं था। उसे टोरी की अपेक्षा 'राजा का मित्र' कहना अधिक उपयुक्त है। वह केवल नाम के लिये प्रधान मंत्री था। व्यावहारिक दृष्टि से जार्ज स्वयं अपना प्रधान मंत्री बन बैठा। नीति निर्धारण तथा शासन कार्य दोनों ही उसने अपने हाथों में कर लिये। नौर्थ को प्रधान मंत्री के बदले प्रधान क्लार्क और राजा को व्यक्तिगत नौकर कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी। यह मंत्रिमंडल १२ वर्षों तक कायम रहा। दोनों धारा सभाओं में इसे बहुमत प्राप्त था। इसकी नीति के पीछे राष्ट्र का समर्थन था। टोरी इसके सहायक थे। केवल थोड़े से ह्विग इसके विरोध पक्ष में रह गये। इस प्रकार नौर्थ के मंत्रित्व काल में शाही शक्ति को पुनर्स्थापित करने में जार्ज को सफलता प्राप्त हुई। लेकिन राजा की बढ़ती हुई शक्ति के कारण देश में असंतोष फैलने लगा था और १७८०ई० में कौमन्स सभा में डनिंग ने राजा की शक्ति घटाने का एक प्रस्ताव पेश किया—'सम्राट का प्रभाव बढ़ गया है, बढ़ रहा है और अब कम करना चाहिये।' यह प्रस्ताव पास हो गया।

इस मंत्रि मंडल के समय अच्छे और बुरे दोनों ही प्रकार के कार्य हुए। हिन्दुस्तान में कम्पनी की स्थिति सुधारने के लिये १७७२ ई० में एक रेगुलेटिंग ऐक्ट पास हुआ। आयरलैंड को बहुत सी व्यापारिक सुविधायें दी गईं। ब्रिटेन में कैथोलिकों को सुविधायें देने के ख्याल से उनके विरुद्ध के कई कठोर नियम हटा दिये गये। इसके विरुद्ध लार्ड जार्ज गार्डन के नेतृत्व में एक प्रोटेस्टेंट विद्रोह हो गया। न्यूगेट जेल का फाटक तोड़ कर कई कैदी मुक्त कर दिये गये और रोमन कैथोलिक चैपिल में आग लगा दी गई। लंदन में आतंक फैल गया। विद्रोहियों पर गोली चलाई गई और क्रमशः शान्ति स्थापित हुई। स्कौटिश कैथोलिकों को भी सुविधायें देने के लिये एक बिल पेश करने का विचार हो रहा था, लेकिन इस पर बड़ी हलचल मची और यह विचार स्थगित कर देना पड़ा। इसी समय अमेरिका ने ब्रिटेन के विरुद्ध विद्रोह कर अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर ली। १७८२ ई० में यार्क टाउन में अंगरेजों की हार हो गयी और मिनौर्का अंगरेजों के हाथ से निकल गया।

इन विभिन्न दुर्घटनाओं के कारण जार्ज और नौर्थ दोनों ही की कड़ी निन्दा होने लगी। अब नौर्थ ने पदत्याग कर देना ही उचित समझा और १६८२ ई० में राजा की इच्छा के विरुद्ध उसने पदत्याग कर ही डाला। इस पर राजा को बहुत क्षोभ हुआ और उसने आर्त्तस्वर में कहा—'आप ही मुझे छोड़ रहे हैं, मैं आप को नहीं छोड़ रहा।'

(८) रौकिंघम का द्वितीय मंत्रित्व १७८२ ई०—लार्ड नौर्थ के पदत्याग के बाद ह्विग दल का पुनः जोर बढ़ने लगा। १७८२ ई० में रौकिंघम ने अपना द्वितीय मंत्रिमंडल कायम किया। यह मंत्रिमंडल दो कार्यों के लिये प्रसिद्ध है:—

(क) पोआयनिंग ऐक्ट तथा डिक्लेयरेटरी ऐक्ट रद्द कर दिये गये और आयरलैंड को स्वतन्त्र पार्लियामेंट निर्माण करने की अनुमति दे दी गई।

(ख) बर्क के प्रभाव से राजनीतिक भ्रष्टाचार और राजा का प्रभाव कम करने की चेष्टा की गई। निर्वाचकों का छठा भाग राजा के इच्छानुसार ही मत प्रदान करता था। अतः एक बिल पास किया गया। इसके द्वारा राजा का खर्च नियंत्रित किया गया। बहुत से कर्मचारी पदच्युत कर दिये गये। बहुत से अफसरों की पेंशन कम कर दी गई; लगान के कर्मचारियों से मताधिकार छीन लिया गया और ठेकेदारों के लिये पार्लियामेंट का दरवाजा बन्द कर दिया गया। अब चुनाव को प्रभावित करना और कौमन्स सभा को नियन्त्रण में रखना राजा के लिये सम्भव न रहा। वालपोल के जिन तरीकों को अपना कर जार्ज तृतीय ने व्यक्तिगत शासन की नींव कायम की थी, वह अब डोल गयी।

(९) शेलबोर्न का मंत्रित्व १७८२-८३ ई०—कुछ ही महीनों के बाद रौकिंघम मर गया और लार्ड शेलबोर्न नाम का दूसरा ह्विग प्रधान मंत्री बनाया गया। वह योग्य और दूरदर्शी व्यक्ति था, फिर भी वह लोगों का विश्वासपात्र न था। इसके समय में वर्सेल्स (वर्साय) की सन्धि के द्वारा अमेरिकन युद्ध समाप्त कर दिया गया। उसे कौमन्स सभा में स्पष्ट बहुमत नहीं था, अतः फौक्स तथा नौर्थ का संयोग उसके पतन का कारण हुआ क्योंकि ये दोनों उसके शत्रु थे।

(१०) फौक्स तथा लार्ड नौर्थ का संयुक्त मंत्रित्व १७८३ ई०—फौक्स तथा नौर्थ का संयोग तो हुआ किन्तु यह अस्वाभाविक होने के कारण बहुत समय तक टिक न सका और आठ ही महीनों में इसका अन्त हो गया। फौक्स एक प्रगतिशील ह्विग था और नौर्थ एक उग्र टोरी। जार्ज तृतीय फौक्स और नौर्थ दोनों ही को घृणा की दृष्टि से देखता था फिर भी इस मंत्रिमंडल के पीछे कौमन्स सभा में बहुमत था अतः राजा को भी इसे स्वीकार करने के लिये बाध्य होना पड़ा।

इसी समय हिन्दुस्तान की शासन व्यवस्था के लिये पिट ने एक इंडिया बिल पेश किया। इसके द्वारा हिन्दुस्तान का शासन कुछ ऐसे कमिश्नरों के हाथ में दिया जाता जो फौक्स के ही पक्षपाती होते। अतः इससे उसके प्रति लोगों को सन्देह हो गया कि वह भ्रष्टाचार का एक नया तरीका उपस्थित कर रहा है। कम्पनी तथा 'राजमित्र' दोनों ने ही इसका घोर विरोध किया। कौमन्स सभा में यह बिल पास तो हुआ परन्तु लार्ड सभा में राजा के प्रभाव से वह अस्वीकृत हो गया। राजा ने घोषणा कर दी थी कि इस बिल के पक्ष में मत देने वाला उसका दुश्मन समझा जायगा। इसके बाद उसने शीघ्र ही इस मंत्रिमंडल का अन्त कर डाला।

अब छोटे पिट के लिये रास्ता साफ हो गया। १७८३ ई० में वह प्रधान मंत्री हुआ। उसके प्रधान मंत्रित्व के साथ जार्ज की व्यक्तिगत शासन प्रणाली का भी निश्चित रूप से अन्त हो गया, यद्यपि इसके बाद भी कभी कभी राजा का प्रभाव देख पड़ता रहा। इस स्थिति के कई कारण थे:—

(क) राजा को पिट के व्यक्तित्व में विश्वास पात्र मंत्री प्राप्त हो गया।

(ख) पिट से वह झगड़ा भी नहीं कर सकता था क्योंकि ऐसी दशा में उसे फिर विरोधी ह्विगों पर निर्भर करना पड़ता।

(ग) राजा अब शारीरिक तथा मानसिक कमजोरियों का शिकार बना रहा था। १७८८ ई० में उसे कुछ मानसिक कष्ट शुरू हो गया। १८०५ ई० में उसकी आँखों की ज्योति कम हो गई। १८१० ई० के बाद वह पागल होने लगा और शासनकार्य के लिये असमर्थ हो गया। अतः उसका पुत्र उसके प्रतिनिधि की हैसियत से राजकार्य संभालने लगा।

अध्याय २५

अमेरिका का स्वातन्त्र्य-संग्राम

(१७६३–८३ ई०)

भूमिका—कोई भी क्रान्ति एकाएक नहीं हो जाती, उसकी जड़ बहुत पीछे तक जाती है। सामान तो पहले से मौजूद रहते हैं और कोई ऐसी घटना घट जाती है जो चिनगारी का काम करती है और क्रान्ति का विस्फोट हो जाता है। इस तरह प्रत्येक क्रान्ति के लिये दो प्रकार के कारण होते हैं—(क) दूरवर्त्ती या मौलिक; और (ख) समीपवर्त्ती या तात्कालिक। अमेरिकन क्रान्ति इस नियम के अपवाद में नहीं है और उसके कारण भी ऐसे ही दो प्रकार के थे।

मौलिक कारण

(१) अमेरिकन उपनिवेशवासियों का ब्रिटेन के प्रति बुरा रुख—उपनिवेशों में बराबर ही कुछ लोग ऐसे थे जो ब्रिटेन के प्रति शत्रुता की भावना रखते थे। खास कर न्यूइंगलैंड के बाशिन्दे उन प्रोटेस्टेंटों के वंशज थे जो स्टुअर्ट काल में धार्मिक मतभेद होने से इंगलैण्ड से निर्वासित कर दिये गये थे। कितने कैथोलिक भी थे जो धार्मिक अत्याचार के भय से इंगलैण्ड छोड़कर यहाँ बस गये थे। अतः स्वाभाविक ही इन लोगों का ब्रिटेन के प्रति बुरा रुख था। स्वतन्त्रता के ये पुजारी अन्ध राजभक्ति के आदी नहीं थे। अतः वे ब्रिटेन के अन्याय तथा अत्याचार की पुनरावृत्ति कब सहने के लिये तैयार हो सकते थे?

(२) उपनिवेशों का क्रमिक विकास तथा उनके द्वारा स्वतन्त्रता का स्वाद—यह स्पष्ट है कि एक नवयुवक की अपेक्षा एक लड़के को नियन्त्रण में रखना अधिक आसान है। ऐसे ही ब्रिटेन ने उपनिवेशों को प्रारंभिक अवस्था में अपने नियन्त्रण में रखा, परन्तु अब वे पूर्ण विकसित हो गये और अब उन्हें नियन्त्रण में रखना आसान नहीं रहा। अतः अब ब्रिटेन की नीति में परिवर्त्तन की आवश्यकता थी। पहले की उपयुक्त नीति अब अनुपयुक्त हो गई।

इसके सिवा विश्व के सभी उपनिवेशों की अपेक्षा अमेरिकन उपनिवेश अधिक स्वतन्त्र थे। राजनैतिक क्षेत्र में बहुत से उपनिवेशों में स्वायत्त शासन स्थापित था। गवर्नर की नियुक्ति तो सम्राट् करता था, परन्तु धारा सभा के सदस्यों का निर्वाचन जनता करती थी और व्यवस्थापन तथा अर्थ के ऊपर इसी धारा सभा का अधिकार था। गवर्नर के वेतन की व्यवस्था भी धारा सभा के हाथ में थी जिससे वह अपनी इच्छानुसार चलने के लिये गवर्नर पर दबाव दे सकती थी। आर्थिक दृष्टि से फ्रांसीसी, स्पेनिश तथा डच उपनिवेशों पर जितने कड़े प्रतिबन्ध थे उनकी तुलना में अमेरिकन उपनिवेशों के ऊपर नाममात्र का प्रतिबन्ध था। उतने ही प्रतिबन्ध के बदले में भी ब्रिटेन ने उन्हें कई सुविधायें दे रखी थीं। वे अन्न, मछली आदि जैसे अपने कई मालों का कहीं भी निर्यात कर सकते थे, अंगरेज प्रायः अमेरिकन तम्बाकू का ही उपयोग करते थे और सामुद्रिक नियम से भी उनके जहाजों को विशेष लाभ हुआ था। उनकी रक्षा के लिये अंगरेजी सेना बराबर तैयार रहती थी। वे स्वतन्त्रता-पूर्वक चोर बाजारी भी करते थे और मातृ-भूमि इसकी उपेक्षा कर देती थी। अतः गृह सरकार किसी भी प्रकार उनके प्रति अत्याचारी नहीं थी।

फिर भी पहले से ही उनके ऊपर कुछ प्रतिबन्ध था तथा कुछ और लगाने की कोशिश की जा रही थी। परन्तु ये लोग तो स्वतन्त्रता के प्रेमी थे और किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध सहने में असमर्थ थे।

(३) जातीय समानता—उपनिवेश के बाशिन्दे भी अंगरेज जाति के ही थे। उनकी धमनियों में वही रक्त प्रवाहित था जो ब्रिटेन वासियों की धमनियों में था। स्वतन्त्रता तथा स्वराज्य के विचार दोनों के एक समान थे। कोई भी अङ्गरेज किसी का गुलाम रहना पसन्द नहीं करता। तब भला ये उपनिवेश-वासी अपनी ही जाति के और अपने समान ही लोगों का गुलाम होना कब स्वीकार कर सकते थे? तत्कालीन स्थिति में दूसरे किसी भी उपनिवेश के लोग ऐसा कभी भी नहीं कर सकते थे। एक अमेरिकन ने सत्य ही कहा है—'अमेरिका की स्वतन्त्रता की स्थापना करने वाले अङ्गरेज ही थे, अन्य कोई नहीं; और उन्होंने यह कार्य अङ्गरेजी इतिहास के ही आधार पर किया।'

(४) दृष्टिकोणों की भिन्नता—दोनों राष्ट्रों के दृष्टिकोणों में पर्याप्त अन्तर था। इंगलैंड में कुलीनों का शासन था जिसका प्रधान जार्ज तृतीय था और मताधिकार भी कुछ इने-गिने लोगों को ही प्राप्त था। अंगरेजी राजनीति में गरीबों के लिये कोई स्थान नहीं था। परन्तु अमेरिका के उत्तरी राज्यों के उग्रपन्थी जनतन्त्र के ही कट्टर समर्थक थे। उनकी राजनीति में धनी गरीब सभी समान थे। 'अंगरेजी समाज धन

पर आधारित कुलीनों का समाज था, परन्तु अमेरिकन समाज में समानता थी और बड़े से बड़े पदों पर भी प्रतियोगिता प्रणाली के द्वारा ही नियुक्ति की जाती थी। दक्षिणी राज्यों में ही कुलीनता का कुछ विशेष प्रभाव था। अंगरेज साम्राज्यवादी थे परन्तु अमेरिकनों में साम्राज्यवाद की भावना का अभाव था। उनके विचार में अंगरेजी साम्राज्य में केवल उच्च वर्ग के गवर्नरों, सेनाध्यक्षों तथा प्रतियोगी व्यापारियों और दास वणिकों का ही स्थान था।

(५) असन्तोषजनक शासन प्रणाली—उपनिवेशों में शासन प्रणाली बड़ी ही असन्तोषजनक थी। कार्यकारिणी और व्यवस्थापिका सभा में निरन्तर संघर्ष होता रहता था। गवर्नर और उसकी कौंसिल के सदस्य सम्राट् के द्वारा मनोनीत होते थे और वे सम्राट के प्रति ही उत्तरदायी थे परन्तु व्यवस्थापिका सभा के सदस्य जनता के द्वारा निर्वाचित होते थे और वे जनता के प्रति ही उत्तरदायी थे। गवर्नर को विशेषाधिकार (वीटो) प्राप्त था। वह लोक सभा के कानून को रद्द कर सकता था। जब वह अनुत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार करता तो लोक सभा भी वैसा ही व्यवहार करती थी। वह गवर्नर के वेतन तथा नियमों को अस्वीकार कर देती थी। उपनिवेश अपनी धारा सभा को सर्वशक्तिशाली मानता था किन्तु ब्रिटिश सरकार उसे स्थानीय तथा अधीनस्थ संस्था मानती थी। इस प्रकार की शासनप्रणाली से अमेरिकन कब संतुष्ट रह सकते थे ?

(६) असन्तोषजनक वाणिज्य प्रणाली—वाणिज्य प्रणाली उपनिवेशों के असन्तोष का एक प्रधान कारण था। इसी क्षेत्र में उनकी सबसे बड़ी शिकायत थी। प्रचलित वाणिज्य सिद्धान्त के अनुसार ग्रेट ब्रिटेन उपनिवेशों के व्यापार पर नियन्त्रण रखता था और उनके बाजारों पर अपना एकाधिकार समझता था। उसकी दृष्टि में उपनिवेश धन के उत्पादन के लिये साधनमात्र थे। कई मालों के बनाने पर उपनिवेशों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। वे ऊन बहुत पैदा करते थे किन्तु उससे कोई चीज बनाकर वे बाहर नहीं भेज सकते थे। उनके पास लोहे की खानें थीं किन्तु वे लोहे के सामान नहीं तैयार कर सकते थे। दूसरे देशों से सीधा व्यापार करने के लिये भी रोक था। अमेरिका के लिये यूरोप से जो भी माल आते थे वे पहले ग्रेट ब्रिटेन में जाते थे और वहाँ पर चुंगी देने के बाद वे अंगरेजी या औपनिवेशिक जहाजों पर ही फिर अमेरिका भेजे जाते थे। उपनिवेशों में भी सामुद्रिक व्यापार नियम (नेविगेशन ऐक्ट) लागू था। वे अंगरेजी या औपनिवेशिक जहाज पर ही माल मँगा या भेज सकते थे। उपनिवेशों के रुई तथा तम्बाकू जैसे कुछ कच्चे माल केवल ग्रेट-ब्रिटेन में भी भेजे जा सकते थे। उपनिवेश ऐसी प्रणाली को तोड़ देना चाहते थे।

अब इसके दिन लद चुके थे। उपनिवेशों को इससे बहुत नुकसान होता था और इससे उनकी स्वतन्त्र भावना पर आघात पहुँचता थी।

इस दूषित प्रणाली का निर्माण उपनिवेशों की राय से नहीं बल्कि बृटिश पार्लियामेंट की इच्छा से हुआ था। यह पारस्परिक स्वार्थ पर आधारित आधुनिक 'इम्पीरियल प्रेफरेन्स' प्रणाली की जैसी नहीं थी बल्कि यह मनाही तथा आज्ञा पर ही निर्भर थी। इस प्रणाली के लाभ को तो देख कर उपनिवेश खुश होते थे किन्तु इसके नुकसान से उन्हें बड़ा क्षोभ होता था। वे अभी तक इसके विरुद्ध आवाज नहीं उठाते थे जब तक इसके कार्यान्वित करने में ढिलाई होती थी। इसके अलावा इन प्रतिबन्धों के बावजूद भी वे चोरबाजारी कर लिया करते थे जिसकी ह्विग सरकार उपेक्षा कर देती थी।

(७) कनाडा से फ्रांस का निष्कासन—सप्तवर्षीय युद्ध में फ्रांस की हार हो गई और कनाडा से उनका निष्कासन हो गया। अब ब्रिटेनवासियों को ब्रिटेन के विरुद्ध विद्रोह करने का सुअवसर प्राप्त हो गया।[1]

(८) ग्रेनविल के चार आपत्तिजनक कार्य—१७६३ ई० में जार्ज ग्रेनविल ग्रेट ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री हुये। उसके समय में चार आपत्तिजनक घटनायें घटीं।

(क) कागज पत्रों के पढ़ने से ग्रेनविल को मालूम हुआ कि अमेरिका से केवल दो हजार पौंड की वार्षिक आमदनी होती है। वह समझता था कि चोरबाजारी के कारण ही ऐसा हुआ है। अतः उसने इसे रोकने का भरपूर प्रयत्न किया। उसने प्रचलित कानूनों को एकत्रित तथा परिवर्त्तित करने की कोशिश की। सामुद्रिक व्यापार नियम बड़ी ही कड़ाई से लागू किया और चोरबाजारी के मामलों को देखने के लिये 'ऐडमिरल्टी कोर्ट' कायम किया। ग्रेनविल के इन कार्यों से उपनिवेशों में बड़ी हलचल पैदा होने लगी। अतः यह कहा जाता है कि 'ग्रेनविल के द्वारा कागज पत्रों के पढ़े जाने के कारण इंगलैंड ने अमेरिका को खो दिया।'

(ख) फ्रांसीसी पश्चिमी द्वीप समूह में ब्रिटिश पश्चिमी द्वीपसमूह से शीरा अधिक सस्ता था। अतः अमेरिका के उपनिवेश फ्रांसीसी पश्चिमी द्वीप से ही शीरा मंगाते थे। इसी को रोकने के लिये १७३३ ई० में एक शीरा कानून (मोलासेज-ऐक्ट) पास कर दिया। इसके द्वारा विदेशी शीरा की आयात पर बहुत अधिक चुंगी लगा दी गई। ग्रेनविल ने इस चुंगी को बहुत कम कर दी। लेकिन चुंगी के लगाने और इसकी वसूली में बहुत सावधान रहा। ब्रिटेन के आर्थिक संकट का ख्याल करते

[1] देखिये अध्याय २३ सप्तवर्षीय युद्ध का परोक्ष परिणाम।

हुये ग्रेनविल का यह कार्य अनुचित नहीं कहा जा सकता है, फिर भी उपनिवेशवासी इसे पसन्द नहीं करते थे।

(ग) मिसीसिपी नदी के पूरब में कुछ प्रदेश थे जिन्हें फ्रांस से लिया गया था। इन प्रदेशों पर ब्रिटिश सरकार तथा उपनिवेश अपना अपना अधिकार समझते थे। ग्रेनविल ने एक घोषणा प्रकाशित की। इसके अनुसार इन प्रदेशों के बड़े-बड़े भाग आदि मूलनिवासियों (रेड इन्डियन्स) के लिये सुरक्षित कर दिये गये। इसके अलावा सम्राट के द्वारा मनोनीति अध्यक्ष की बिना अनुमति के आदिम निवासियों द्वारा भूमि-दान की मनाही कर दी गई। गोरों के शोषण से आदिम निवासियों की रक्षा करने के लिये यह पहली चेष्टा थी। परन्तु उपनिवेशवासियों ने इसे अपने विकास की स्वतन्त्रता में बाधक और अपने अधिकारों पर अतिक्रमण समझा। अतः वे ब्रिटिश सरकार के प्रति सशंकित और रुष्ट हो गये।

(घ) अमेरिकन उपनिवेशों पर फ्रांसीसियों तथा आदिम निवासियों के आक्रमण की सम्भावना थी। अतः ग्रेनविल के विचारानुसार उनकी रक्षा के लिये एक छोटी स्थायी सेना की जरूरत थी। अतः उसने १० हजार की एक सेना स्थापित करनी चाही जिस पर तीन लाख वार्षिक खर्च होता। ग्रेट ब्रिटेन इसका सारा खर्च नहीं दे सकता था क्योंकि अंगरेजों पर राज्यकर का बोझ बहुत अधिक था, सप्तवर्षीय युद्ध के कारण ब्रिटेन का राष्ट्रीय कर्ज दूना बढ़ गया था और स्पेन तथा फ्रांस से लड़ाई हो जाने की शंका बनी हुई थी। अतः ग्रेनविल चाहता था कि खर्च का एक तिहाई हिस्सा उपनिवेश ही दें।

तात्कालिक कारण—अमेरिकन क्रान्ति का तात्कालिक कारण यहीं से शुरू होता है। प्रस्तावित रकम को प्राप्त करने के लिये ग्रेनविल ने अपनी एक सूझ भी स्थापित की। वह चाहता था कि एक स्टाम्प ऐक्ट पास कर सभी कानून कागजों पर टिकट का व्यवहार अनिवार्य कर दिया जाय। इस प्रकार विचार करने के लिये या अन्य कोई साधन ही खोज निकालने के लिये ग्रेनविल ने उपनिवेशों को एक साल का समय दिया। उसका यह प्रस्ताव उचित ही था—(क) कर सन्धारण था, (ख)इसका खर्च इंगलैंड में न हो कर अमेरिका की रक्षा पर ही होता, और (ग) कितने ही लोगों की सम्मति में उपनिवेशों के ऊपर टैक्स लगाने के लिये ब्रिटिश पार्लियामेंट का अधिकवैर घ था।

(१) स्टाम्प ऐक्ट १७६५ ई०—उपनिवेशों ने प्रस्ताविक धन को प्राप्त करने का कोई नया साधन नहीं बतलाया अतः ग्रेनविल ने १७६५ ई० में स्टाम्प ऐक्ट पास कर दिया।

पार्लियामेंट भवन में स्टाम्प ऐक्ट पास करना तो सहज था किन्तु अमेरिका में टैक्स वसूलना कठिन था। उपनिवेशों में बड़ी उत्तेजना फैली। उपनिवेशवासियों की दृष्टि से ब्रिटिश पार्लियामेंट को उन पर आन्तरिक टैक्स लगाने का कोई अधिकार नहीं था। अतः उन्होंने इसका एक स्वर से विरोध किया। इसके कई कारण थे— (क) ब्रिटिश पार्लियामेंट तीन हजार मील की दूरी पर स्थित थी। (ख) इसमें उनका कोई प्रतिनिधित्व नहीं था। यह अंगरेजों का परम्परागत सिद्धान्त है कि बिना प्रतिनिधित्व के कोई टैक्स नहीं लगाया जा सकता। (ग) उन्हें यह सन्देह हुआ कि शिपमनी के जैसा इसे स्थायी कर बनाने की कोशिश की जा रही है। (घ) उन्हें यह भी भय होने लगा कि यदि वे इस बार इस टैक्स को स्वीकार कर लेंगे तो आगे भी नये टैक्स लगाने के लिये पार्लियामेंट उत्साहित हो जायगी। और (ङ) इस समय उन पर कोई बाहरी खतरा भी नहीं था।

अतः जब टैक्स वसूली करने की कोशिश होने लगी तो स्थिति गम्भीर हो गई। जहाँ-तहाँ दंगे होने लगे। गवर्नरों के घरों में आग लगाई जाने लगी और कलेक्टरों की मूर्तियाँ बनाकर उनका अपमान किया जाने लगा। अमेरिका में ब्रिटेन के विरुद्ध मोर्चा पैदा हो गया। १३ में से ६ उपनिवेशों के प्रतिनिधि टैक्स का विरोध करने के लिये न्यूयार्क में जमा हुये। अंगरेजी माल का बहिष्कार करने की बात सोची जाने लगी।

अमेरिकन नीति के सम्बन्ध में ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के बीच मत भेद था। कुछ अमेरिकनों के पक्ष में और कुछ विपक्ष में थे। १७६६ ई० में रौकिंघम ने स्टाम्प टैक्स रद्द कर दिया किन्तु एक दूसरा ऐक्ट यह दिखाने के लिये पास किया गया कि ग्रेट ब्रिटेन को उपनिवेशों पर टैक्स लगाने का वैध अधिकार था।

(२) इंम्पोर्ट ड्यूटीज ऐक्ट १७६७ ई०—अब स्थिति में सुधार की आशा हुई, किंतु शीघ्र ही फिर गड़बड़ी पैदा हो गई। १७६७ ई० में पिट मन्त्रिमण्डल के चाँसलर टाउनशेन्ड ने 'अमेरिकन इम्पोर्ट ड्यूटीज ऐक्ट' पास कर अमेरिका में शीशा चाय, कागज और रंग के आयात पर चुंगी लगा दी। उसके विचार में बन्दरगाहों पर वसूल होने के कारण ये वाह्य कर थे, अतः इनके विरोध की सम्भावना नहीं थी। इस रकम से वह उपनिवेशों के गवर्नरों तथा दूसरे अफसरों का वेतन देना चाहता था जो अब तक वहाँ की धारा सभा दिया करती थी। उपनिवेशवासियों की दृष्टि में यह औपनिवेशिक स्वराज्य के मौलिक सिद्धान्त पर बहुत बड़ा अघात था। अतः इसका भी घोर विरोध किया गया।

(३) चाय पर चुंगी जारी रखने की चेष्टा १७७० ई०—१७७० ई० में लार्ड नौर्थ प्रधान मन्त्री हुआ और उसका मन्त्रित्व १२ वर्षों तक कायम रहा। उसने

कागज तथा शीशा पर से चुंगी हटा दी परन्तु ब्रिटेन के टैक्स लगाने के अधिकार को कायम रखने के लिये चाय पर की चुंगी पूर्ववत् जारी रखी। पर उसकी बड़ी भूल साबित हुई। उसने यह नहीं समझा कि उपनिवेशवासियों ने टैक्स लगाने के सिद्धान्त का ही विरोध किया था, रकम का नहीं। अतः उनका रोष पूर्ववत् जारी रहा।

(४) उत्तरकालीन तीन दुर्घटनाएं १७७३--७३ ई०—अगले तीन वर्षों में कुछ ऐसी उत्तेजनात्मक घटनायें हुई जिनसे दोनों पक्षों के बीच कटुता और भी बढ़ गई। (क) बोस्टन शहर के नागरिक ब्रिटिश रेजिमेंटों का अपमान करने लगे। एक दल ने कुछ सैनिकों को ही घेर लिया और उनके साथ बुरा व्यवहार करने लगा। उनको गाली होने लगी और उन पर पत्थर के टुकड़े फेंके जाने लगे। उस पर गोली चलाई गई और कुछ व्यक्ति मर गये। उपनिवेशवासियों ने इसे एक बड़ा खूनी हत्याकान्ड के नाम से प्रचार कर डाला और उपनिवेशों में तहलका मच गया। (ख) अमेरिका में चोरबाजारी को रोकने के लिये एक शाही जहाज भेजा गया था। १७७२ ई० में अमेरिकनों ने इसे जला डाला और इसके लिये उपनिवेशों में खुशियाँ मनाई जाने लगीं। परन्तु इंगलैंड में हलचल मच गई।

बोस्टन टी पार्टी—(ग) दूसरे साल एक नया 'चाय कानून' (टी ऐक्ट) पास किया गया। इसके द्वारा ईस्ट इन्डिया कम्पनी को भारत वर्ष से सीधे अमेरिका चाय भेजने के लिये अनुमति दे दी गई। इससे कम्पनी को आर्थिक लाभ होता और अमेरिका में चाय भी सस्ती हो जाती; परन्तु उग्रपन्थियों ने अमेरिकनों को खुश करने के लिये इसे ब्रिटिश सरकार का एक चाल मात्र समझा। अतः विरोधी प्रदर्शन किये जाने लगे और जब बोस्टन के बन्दरगाह में कम्पनी के जहाज पहुँचे तो कुछ लोग वहाँ के मूलनिवासियों के वेश में जहाजों में घुस गये और चाय के ३४० बक्से समुद्र में फेंक दिये।

इस दुर्घटना का समाचार पाकर अंगरेज बड़े ही उत्तेजित हुए। अब उन्हें विश्वास हो गया कि अमेरिकनों ने उनके विरुद्ध विद्रोह कर दिया है। पार्लियामेंट बड़ी ही कड़ाई से काम करने लगी। इसने १७७४ ई० में 'मेसाचुसेट्स गवर्नमेंट ऐक्ट' पास किया जिसके अनुसार एक तरह से दिया गया चार्टर वापस ले लिया गया। बहुत से अफसर पदच्युत कर दिये गये और बहुतों की नियुक्ति सरकारी हाथों में कर दी गई। 'गेज' नाम का एक सैनिक 'मेसेचुसेट्स' का गवर्नर नियुक्त किया गया और उसकी सहायता के लिये पर्याप्त सेना भेजी गई। कोई लोक सभा करने के लिये गवर्नर की अनुमति आवश्यक कर दी गई। सभी वाणिज्य के लिये बोस्टन का बन्दरगाह बन्द कर दिया गया जिससे हजारों व्यक्ति बेकार हो गये। उपनिवेशवासियों के राजनैतिक

मुकद्दमों की जाँच अब ब्रिटेन में ही होने लगी। इस तरह कुछ व्यक्तियों के दुष्कर्म का फल समूचे प्रान्त को भोगना पड़ा। उसी साल एक 'क्यूबेक ऐक्ट' पास किया गया जिसके द्वारा कनाडा की सीमा ओहियो नदी तक कर दी गई और वहाँ के कैथोलिकों को बहुत कुछ सुविधायें दे दी गईं। इससे प्यूरिटन लोग और भी रुष्ट हो गये क्योंकि इससे उनके विस्तार में रुकावट पैदा हो गयी और कैथोलिक चर्च की प्रधानता स्थापित हो गई।

दमननीति का प्रतिकूल फल—ब्रिटिश सरकार की दमनकारी नीति का फल उनके प्रतिकूल ही हुआ। अपने पारस्परिक अधिकारों की रक्षा करने के लिये जार्जिया के सिवा सभी उपनिवेशों के प्रतिनिधियों ने फिलडेलफिया सर्वप्रथम एक सभा की। इस सभा ने अधिकारों का एक घोषणा पत्र (डिक्लेरेशन ऑफ राइट्स) तैयार किया। पार्लियामेंट के द्वारा पास किये गये १३ ऐक्टों का अन्त करने के लिये माँग पेश की गई। अंगरेजी माल का बहिष्कार भी आरम्भ कर दिया गया। फरवरी १७७५ ई० में नौर्थ ने समझौता करने की चेष्टा की। उसने एक घोषणा की कि जो उपनिवेश साम्राज्य के खर्च में स्वेच्छा से हाथ बटायेंगे वे सभी राजकीय टैक्सों से मुक्त कर दिये जायेंगे। परन्तु यह रियायत बहुत मामूली थी और बहुत देर करके आई। होनहार होकर ही रहा। बृटिश सरकार ने मेसेचुसेट्स की धारा सभा को भंगकर देने की आज्ञा दी, किन्तु आज्ञा की उपेक्षा कर दी गई और लड़ने की तैयार होने लगी। १७७६ ई० में ग्रेट ब्रिटेन और अमेरिका के बीच युद्ध का श्री गणेश हो ही गया।

युद्ध की प्रगति और स्वतन्त्रता प्राप्ति ७७५-८१ ई०—प्रथम अनिर्णयात्मक युद्ध लेकिंसगटन में हुआ लेकिन बंकरहिल में उपनिवेशवासियों की हार हो गई। यदि बोस्टन का गर्वनर गेज उनका पीछा करता तो उनकी बड़ी क्षति होती किन्तु उसने ऐसा नहीं किया और वे वापिस चले आये। इस बीच एक दूसरी कांग्रेस की बैठक हुई और इसने जार्जवाशिंगटन को सेनाध्यक्ष नियुक्त किया। वाशिंगटन ने अंगरेजों को बोस्टन से निकल जाने के लिये बाध्य किया। ४ जुलाई १७७६ ई० को तृतीय अमेरिकन कांग्रेस की बैठक हुई। इसने स्वतन्त्रता की घोषणा कर ब्रिटेन के साथ राजनैतिक सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। १३ उपनिवेशों ने अमेरिका के संयुक्त राज्य के नाम से एक संघ शासन कायम किया।

किन्तु उसी साल ब्रुकलिन के युद्ध में वाशिंगटन की हार हो गई और अंगरेजों ने न्यूयार्क को अपने कब्जे में कर लिया। युद्ध के लिये इसे ही केन्द्रीय दफ्तर बनाया गया। इस समय अमेरिकनों की दशा दयनीय थी। बृटिश सेनापति हो ने वाशिंगटन को दुबारा हरा दिया। वाशिंगटन ने पेन्सिलवेनिया में शरण ली। उसकी सेना में रसद

और सामान सभी चीजों का पूरा अभाव हो गया था, इस पर भी जाड़े का मौसम ! सेना में बीमारी भी हो गई थी। वाशिंगटन की सेना लगभग ४ हजार और हो की सेना लगभग १० हजार थी, किन्तु वाशिंगटन की सैन्यशक्ति तो घटती ही जा रही थी। फिर भी वह अविचल रहा। लेकिन हो ने इस विकट स्थिति से कोई लाभ नहीं उठाया और न्यूयार्क में आलस तथा आराम का जीवन बिताने लगा। तब तक वाशिंगटन मौक़ा पाकर दिसम्बर १७७६ ई० में ट्रस्टन में अंगरेज़ी सेना पर धावा बोल दिया और उसे छिन्न-भिन्न कर दिया।

अंगरेजी योजना और साराटोगा का प्रथम आत्म-समर्पण १७७७ ई०— अंगरेजों ने अब एक नयी योजना का निर्माण किया। यह तय किया गया कि बरगोयन अपनी सेना के साथ कनाडा से दक्खिन की ओर तथा हो न्यूयार्क से अपनी सेना के साथ उत्तर की ओर बढ़े और दोनों मिल कर हडसन नदी के तट पर स्थित भूभागों पर अधिकार स्थापित कर ले। इससे न्यूइंगलैंड के उपनिवेश अलग हो जाते। किंतु हो ने बड़ी भूल की। वह सीधे उत्तर की ओर बढ़ने के बजाय कुछ केन्द्रीय उपनिवेशों पर हमला कर दिया जिससे बरगोयन को उचित समय पर सहायता नहीं पहुँच सकी। वह कनाडा से तो चल चुका था। किन्तु उसे बीहड़ रास्ता का सामना करना पड़ा और उसके सामान तथा रसद घट गये। अतः अक्तूबर १७७७ ई० में औपनिवेशिकों ने उसे हडसन पर स्थिति साराटोगा में घेर लिया और उसने अपनी ३½ हजार सेना के साथ आत्म-समर्पण कर दिया।

युद्ध का प्रचार १७७८--८० ई०—ग्रेटब्रिटेन की नाजुक स्थिति—यह घटना बड़ी निर्णायक साबित हुई। अब युद्ध की प्रगति में महान् परिवर्तन हो गया। अब तक बहुत से राष्ट्रों का यही ख्याल था कि ब्रिटेन और अमेरिका का संघर्ष गृहकलह है जिसे ब्रिटेन शान्त कर लेगा। किन्तु अब तो उसकी कमजोरी संसार के सामने प्रत्यक्ष हो गयी। उससे बदला चुकाने के लिये विदेशों को सुअवसर प्राप्त हो गया। अब उसे केवल विद्रोही उपनिवेशों का ही नहीं, बल्कि आधे यूरोप के गुट्ट का सामना करना पड़ा। फ्रांस ने १७१६ ई० में अमेरिका की स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली और उपनिवेशों की ओर से युद्ध में शामिल हो गया। स्पेन तथा हॉलैंड ने भी फ्राँस का अनुसरण किया। इस बीच हो ने फिलडलफिया को जीत लिया और ब्रेन्डीवाइन के युद्ध में वाशिंगटन को परास्त किया। किन्तु साराटोगा की हार के सामने यह सफलता तुच्छ ही सिद्ध हुई। यूरोप के उत्तरी राज्य रूस, स्वेडन तथा डेनमार्क ने 'सशस्त्र तटस्थता' (आर्मंड न्युट्रलिटी) की नीति घोषित की। इसका उद्देश्य था कि यदि ब्रिटेन तटस्थ राज्यों के अधिकारों की उपेक्षा करेगा तो उसके साथ युद्ध तक किया जायगा। तटस्थ

राज्यों का यह विचार था कि स्वतन्त्र देशों के जहाजों पर लदे हुए मालों पर न तो आक्रमण किया जा सकता है और न जब्ती ही। किन्तु ग्रेट ब्रिटेन इस विचार का विरोधी था। इस बात पर भी मतभेद था कि कौन-कौन से माल युद्ध-सामग्री में सम्मिलित कर उन्हें निषिद्ध घोषित किया जाय। इस तरह ब्रिटेन के लिये बड़ी ही नाजुक स्थिति पैदा हो गई। हिन्दुस्तान में भी युद्ध शुरू हो गया। हैदरअली और मराठे उत्पात मचाने लगे थे और फ्राँसीसियों के साथ मिलकर षड्यन्त्र करने लगे। दूसरी सामुद्रिक शक्तियों ने भी उसके विरुद्ध जलयुद्ध प्रारम्भ कर दिया। उस समय इंगलैंड की जलसेना कमजोर थी और फ्राँसीसी जलसेना का बोल-बाला था। अतः उसके भाग्य फैसला निश्चित हो गया! स्पेन ने भूमध्यसागर में जिब्राल्टर को घेर लिया तथा फ्रांसीसियों ने पश्चिमी द्वीपसमूह में कई द्वीपों को अपने कब्जे में कर लिया। स्पेन तथा फ्रांस के कुछ बेड़े इंगलिश चैनल में भी घुस गये। मिनौर्का भी घेर लिया गया।

अमरीकी युद्ध की स्थिति—यार्कटाउन में अंगरेजों का द्वितीय आत्म-समर्पण, १७८१ ई०—अमेरिका में हो की जगह पर नया ब्रिटिश सेनापति क्लिन्टन आया। वह फिलडेल्फिया छोड़कर न्यूयार्क चला गया। इस समय अंगरेजों को कुछ सफलता तो मिली किन्तु उससे कोई लाभ न हुआ। १७८० ई० उन्होंने दक्खिनी कैरोलिना पर आक्रमण कर उसकी राजधानी चार्ल्स टाउन को ले लिया। ब्रिटिश सेनापति कार्नवालिस ने साराटोगा के विजेता गेट्स को भी केमडन में परास्त कर दिया। उसने १७८१ ई० में उत्तरी कैरोलिना पर भी चढ़ाई कर दी और उपनिवेशों के सुयोग्य सेनापति ग्रीन को मिल्डफोर्ड कोर्ट हाऊस पर नाकों दम कर दिया और उसे अपनी हार स्वीकार करनी पड़ी। उनके बाद कार्नवालिस ने वर्जीनियाँ के लिये प्रस्थान किया। यह स्थिति देखकर अमेरिकन चिन्तित होने लगे थे। किन्तु शीघ्र ही भाग्य ने पलटा खाया। कार्नवालिस दक्खिन में बहुत थोड़ी सेना छोड़ गया था अतः उसके हटते ही उसके जीते हुए प्रदेश अंगरेजों के हाथ से निकल गये। क्लिन्टन ने भी न्यूयार्क से कार्नवालिस की मदद में नयी सेना नहीं भेजी। अतः अंगरेजी जहाज पाने की आशा में कार्नवालिस समुद्र के किनारे यार्कटाउन बन्दरगाह पर चला गया। परन्तु फ्रांसीसी जल सेना ने उसे घेर लिया और स्थल की ओर वाशिंगटन एक बड़ी सेना के साथ धमक गया अब कार्नवालिस जल तथा स्थल दोनों ओर से घिर गया और उसकी स्थिति संकटापन्न हो गयी। अतः उसने अपने सभी सैनिकों के साथ अक्टूबर १७८१ ई० में यार्कटाउन में आत्म। समर्पण कर दिया। इस दूसरे आत्म-समर्पण के साथ युद्ध का प्रायः अन्त हो गया अमेरिकनों के चार्ल्सटाउन पर पुनः अपना अधिकार कर लिया और केवल न्यूयार्क ही अंगरेजों के अधीन रह गया।

उत्तरी अमेरिका १७६३ ई० ।
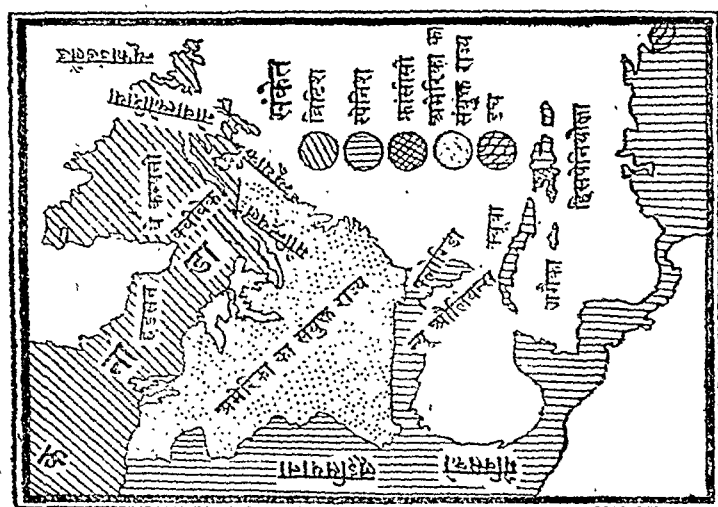
उत्तरी अमेरिका १७८३ ई० ।

अन्यत्र लड़ाई की स्थिति १७८०—८२४७—अन्यत्र भी लड़ाई की स्थिति अंगरेजों के लिये बुरी ही थी। पश्चिमी द्वीप समूह में बारबेडोस तथा जमैका को छोड़कर करीब सभी द्वीप उनके अधिकार से निकल गये। जिब्राल्टर घिरा ही हुआ था। हिंदुस्तान में उनकी स्थिति गम्भीर ही थी। १७८२ ई० के प्रारम्भ में ही फ्रांसीसियों ने मिनौर्का 'पर अधिकार कर लिया और इसके साथ ही युद्ध में कुप्रबन्ध तथा अप्रतिष्ठा के कारण मार्च में लार्ड नौर्थ को पदत्याग करना पड़ा। फ्रांसीसी नौसेनापति 'ग्रासे' जमैका को भी जीतने के ख्याल से पश्चिमी द्वीप समूह में उपस्थित हुआ। तदुपरान्त अंगरेजों को दो सफलताएँ प्राप्त हुई। अप्रैल १७८२ ई० में सेन्ट्स के युद्ध में अंगरेज नौसेनापति रोडनेन ने फ्रांसीसी बेड़े पर विजय प्राप्त की और जमैका की रक्षा की। इसके अलावा साढे तीन वर्ष से भी अधिक घेरे में रहने के बाद जिब्राल्टर की रक्षा की गई। वहाँ के गवर्नर इलियट ने अपने सात हजार सैनिकों के साथ बड़ी वीरतापूर्वक शत्रुओं का सामना किया था हिंदुस्तान में भी अंगरेज सफल हुए। उनके गवर्नर जेनरल वारेन हेस्टिंग्स और सेनापति सर आयरकूट ने बड़ी ही कुशलता से शत्रुओं को पराजित किया। अन्त में इन्हीं कुछ सफलताओं से अंगरेजों की प्रतिष्ठा बच गयी।

वर्सेल्स की सन्धि १७८३ ई०—ह्विग मन्त्रिमंडल ने वर्सेल्स की सन्धि के द्वारा १७८३ ई० में युद्ध का अन्त कर दिया।

शर्तें—इसके द्वारा (क) इंगलैंड ने अमेरिका की स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली। कनाडा और संयुक्त राज्य के बीच की सीमा मिसीसिपी नदी और झीलों को निश्चित कर दी गई। (ख) स्पेन ने १७१३ ई० में मिनौर्का और १७६३ ई० में फ्लोरिडा अंगरेजों के हाथ खो दिया था। इन्हें उसे लौटा दिया गया (ग) फ्रांस को पश्चिमी द्वीप समूप में सेंट लूशिया तथा टोबैगो, अफ्रीका में सेनिगल तथा हिंदुस्तान में भी कुछ जीते हुए प्रदेश लौटा दिये गये।

(१) ग्रेट ब्रिटेन पर प्रभाव (क) पुराने तिजारती साम्राज्य अन्त (ख) द्वितीय साम्राज्य का जन्म—ग्रेट ब्रिटेन को इस युद्ध से लाभ और क्षति दोनों ही हुए। एलिजाबेथ के समय स्पेनिश आर्मेडा का पराजय के बाद प्रथम अंगरेजी साम्राज्य स्थापित किया गया। यह तिजारती साम्राज्य था जो व्यापारिक प्रतियोगिता, शोषण तथा युद्ध की नीति पर आधारित था। अब इस साम्राज्य का अन्त हो गया। एक नये साम्राज्य का जन्म हुआ जिसे द्वितीय अंगरेजी साम्राज्य कहते हैं। यह आजादी, न कि गुलामी की नींव पर खड़ी की गई। अमेरिका के स्वतन्त्रता संग्राम की पुनरावृत्ति को रोकने के लिये ब्रिटेन को अपना रुख बदलना पड़ा। एक लेखक ने कहा था

कि 'उपनिवेश उन फलों के समान हैं, जो जब तक पकते नहीं तभी तक वृक्ष में लगे रहते हैं।' अब ब्रिटेन को इस कथन की सत्यता में पूरा विश्वास हो गया। उसे यह भी समझ में आ गया कि राष्ट्रीय चेतना का विकास सभी उपनिवेशों में कभी न कभी अवश्य ही होगा।

(ग) जार्ज तृतीय के व्यक्तिगत शासन का अंत तथा (घ) कैबिनेट की प्रगति—जार्ज तृतीय के व्यक्तिगत शासन का अन्त हो गया और कैबिनेट शासन प्रणाली का पुनरुत्थान हुआ। किंतु जार्ज तृतीय ने अपने पूर्वजों के द्वारा खोये हुए अधिकारों को प्राप्त करने की चेष्टा की थी और लार्ड नौर्थ के मंत्रित्व काल (१७७०–८२ ई०) में उसे पर्याप्त सफलता भी मिली थी। अमेरिकन युद्ध में कुप्रबन्ध और निन्दा के कारण लार्ड नौर्थ को पदत्याग करना पड़ा। १७७७ ई० के बाद युद्ध में फ्रांस के शामिल होने के बाद से नौर्थ सरकार की बड़ी बदनामी होने लगी और तेजी से उसका विरोध होने लगा। अब वह जनता का विश्वासपात्र नहीं रह गई। ह्विग राजकीय प्रभाव को कम करने के लिये कोशिश करने लगे। वैधानिक सुधार के लिये जोरों से माँग होने लगी, राजा की शक्ति कम करने के लिये कौमन्स सभा में १७८० ई० में एक प्रस्ताव पास हुआ। आर्थिक तथा पार्लियामेंटरी दोनों प्रकार लिये आन्दोलन होने लगा। नौर्थ के पदत्याग के बाद छोटे पिट के लिये रास्त सुगम हो गया जिसने प्रधान मन्त्री की प्रमुखता स्थापित कर कैबिनेट शासन प्रणाली सुदृढ़ कर दिया।

(ङ) व्यापारिक अवनति—अमेरिकन के स्वतन्त्र हो जाने से ब्रिटेन के व्यापार तथा वाणिज्य में कमी हो गई।

(च) युद्ध से ब्रिटेन की शिक्षा—अमेरिकन युद्ध ने ब्रिटेन के लिये एक शिक्षालय का भी काम किया। ब्रिटेन ने इस युद्ध से बहुत कुछ शिक्षा तथा अनुभव प्राप्त कर लिया और इससे उसने आगे विशेष लाभ उठाया।

अभी हमलोग देख चुके हैं कि उपनिवेशों के प्रति उसकी नीति में किस तरह परिवर्तन हो गया। बृटिश सरकार को अच्छी तरह यह मालूम हो गया कि युवती लड़की के साथ बच्ची की तरह व्यवहार नहीं होना चाहिये बल्कि उसकी माता की ही तरह उसके साथ समानता का व्यवहार होना चाहिये। जिस तरह माता अपने गृह की स्वामिनी होती है उसी तरह सयानी हो जाने पर लड़की को भी गृह का कार्य भार सौंप देना चाहिये। इस तरह १६ वीं और २० वीं सदी में ब्रिटेन ने उपनिवेशों के प्रति उदार नीति अपनायी और स्वराज्य तथा पारस्परिक सहयोग के आधार पर द्वितीय तथा तृतीय साम्राज्य का निर्माण हुआ।

उसने दूसरी बात यह सीखी की शान्ति तथा समझौता के सिद्धान्त पर युद्ध

नहीं किया जा सकता। इस नीति से केन्द्रित शक्ति के साथ युद्ध संचालन का कार्य नहीं हो पाता।

उसने तीसरी बात यह सीखी कि शत्रु कैसा ही हो, उसे उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखना चाहिये। पूरी तैयारी के साथ ही उसका सामना करने के लिये आगे बढ़ना चाहिये। किंतु ब्रिटेन ने इस शिक्षा को पूर्ण रूप से ग्रहण कर व्यवहार में नहीं लाया। अमेरिका के स्वतन्त्रता-संग्राम को हुए अभी पूरे १० वर्ष भी न बीते होंगे कि ब्रिटेन को एक दूसरे महा युद्ध में भाग लेने के लिये विवश होना पड़ा। यह महायुद्ध फ्रांस के साथ शुरू हुआ जो २२ वर्षों तक चलता रहा। इसके प्रारम्भ ब्रिटेन ने कितनी ऐसी भूल की जिन्हें उसने अमेरिकन युद्ध के समय की थीं। उसके अफसर तथा सैनिक, सवार और पैदल, सभी अशिक्षित थे; छोकड़े तथा कुली-कबाड़ी, भुक्खड़ तथा घुमक्कड, सभी सेना में भर्ती कर युद्ध के मोर्चे पर दिये जाते थे। ऐसे कितने सैनिक थे जिन्होंने कभी गोली भी न चलायी थी। अस्त्र-शस्त्र, गोला बारूद आदि सामानों की बड़ी कमी थी। न तो कोई सवारी का उचित प्रबन्ध था और न घायल सैनिकों की सेवा-सुश्रुषा के लिये ही। इन भूलों के दुहराने का परिणाम भी बुरा ही हुआ। कई जगहों में अंगरेजों को पराजित ही होना पड़ा।

(२) अमेरिका के संयुक्त राज्य का निर्माण—ऐंग्लो सैक्सन जाति की दो शाखायें अलग-अलग हो गईं, अमेरिका स्वतन्त्र हो गया और संयुक्त राज्य का जन्म हुआ। अमेरिका अब अपनी स्वतन्त्र नीति का अनुसरण करने लगा और यह विश्व में सबसे धनी और शक्तिशाली राज्य बन गया है। किंतु वहाँ राज भक्त अमेरिकनों की स्थिति बुरी रही जिससे वे कनाडा में भागने लगे।

(३) कनाडा और आस्ट्रेलिया पर प्रभाव—अमेरिका के खो जाने से ब्रिटिश सरकार के सामने राजभक्त और कैदी सम्बन्धी दो समस्यायें उत्पन्न हुईं। लड़ाई के समय बहुत से उपनिवेशवासी ब्रिटेन प्रति के राजभक्त बने रहे थे। अब उनका संयुक्त राज्य में रहना कठिन होने लगा। उपनिवेशवासी उनसे बदला लेने लगते। अतः वे कनाडा आने लगे। उन्हें 'संयुक्त साम्राज्य के राजभक्त, कहते हैं। वे कनाडा में बस गये और अपनी उन्नति करने लगे। लेकिन फ्रांसीसियों के साथ जातीय और धार्मिक भेद होने के कारण नहीं पटती थी। इसी के बदौलत आगे चलकर कनाडा 'औपनिवेशिक स्वराज्य' की नींव पड़ी।

कनाडा के ऐसा आस्ट्रेलिया भी प्रभावित हुआ। ब्रिटेन से बहुत कैदी अमेरिका के उपनिवेशों में निर्वासित कर दिये जाते थे। इस तरह वहाँ करीब ½ लाख ब्रिटिश

कैदी एकत्रित थे। इन कैदियों को आस्ट्रेलिया में भेद दिया गया और उसकी आबादी का बीजारोपण हुआ।

(४) आयरलैंड पर प्रभाव—ब्रिटिश सत्ता को कमजोर करने के लिये आयरलैंड भी कोशिश करने लगा। फिलडेलफिया कांग्रेस की नकल में आयरिशों ने भी 'डूनगेनन' में एक कन्वेशन बुलाई और अपनी शिकायतों को दूर करने के लिये ब्रिटिश सरकार से माँग पेश की। वे व्यापारिक प्रतिबन्धों का अन्त स्वतन्त्र आयरिश पार्लियामेंट की स्थापना चाहते थे। १७८२ ई० में आयरिशों को व्यापारिक स्वतन्त्रता मिल गई और उन्हें स्वतन्त्र पार्लियामेंट निर्माण करने के लिये अनुमति दे दी गई। इस प्रकार अमेरिका के उदाहरण से आयरलैंड बहुत ही प्रभावित हुआ। 'संयुक्त राज्यों की स्वतन्त्रता के बाद अमेरिकन युद्ध का यह बड़ा ही महत्वपूर्ण परिणाम था। यह मालूम होता कि अब केवल अंगरेजी साम्राज्य ही नहीं बल्कि ब्रिटिश द्वीप समूह भी कई हिस्सों में विभक्त हो जायगा।[1]

(५) फ्रांस पर प्रभाव(क) आर्थिक संकट—अमेरिकन क्रान्ति ने फ्रांसीसी क्रांति को अनिवार्य बना दिया। एक तरह से यह फ्रान्सीसी क्रान्ति की भूमिका थी। यों तो मालूम होता था कि अमेरिकन क्रान्ति में भाग लेने से फ्रांस की प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई है, लेकिन वास्तव में फ्रान्स को लाभ के बदले विशेष क्षति ही हुई। फ्रान्स का आर्थिक संकट बढ़ गया जिसके कारण स्टेट्स जेनरल की बैठक बुलाना आवश्यक हो गया और यहीं से क्रान्ति का श्रीगणेश हुआ।

(ख) प्रजातन्त्रतात्मक विचारों का प्रचार—दूसरे प्रकार से भी अमेरिकन क्रान्ति का फ्रांस पर प्रभाव पड़ा। बहुत से फ्रान्सीसी सैनिकों ने अमेरिकन युद्ध में भाग लिया और उन्होंने अपनी आँखों से यह देखा कि फ्रान्स के दार्शनिकों ने जिन सिद्धान्तों का प्रचार किया है उन्हें अमेरिकनों ने कार्य-रूप में परिणत किया है। ये सैनिक बड़ी आशा और उत्साह के साथ अपने देश में लौटे। उन्होंने फ्रान्स में भी उन सिद्धान्तों को कार्यरूप में लाने को कोशिश की। अतः क्रान्ति के विस्फोट होने में अब देर न लगी।

अमेरिकन संग्राम की विशेषताएँ—अप्रैल १७७५ ई० में यह संग्राम शुरू हुआ और आठ वर्षों तक जारी रहा। लेकिन इस में बहुत तथा महान् युद्ध नहीं हुए। इस संग्राम का सामरिक महत्त्व साधारण है। दोनों तरफ की सेनायें छोटी थीं और सैनिक युद्ध क्षेत्र में तत्परता से नहीं काम कर रहे थे। दोनों पक्षों के नायकों में भी स्फूर्ति तथा सक्रियता का अभाव था। इसका कारण यह था कि ब्रिटेन तथा

१ रैम्जेमूर—ब्रिटिश हिस्ट्री, पृष्ठ ४२४

अमेरिका दोनों देशों में कुछ ऐसे लोग थे जो युद्ध के विरोधी थे। ब्रिटेन में ह्विग और अमेरिका में दक्षिणी राज्यों के लोग युद्ध नहीं चाहते थे।

परन्तु राजनैतिक दृष्टि से अमेरिकन संग्राम बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। हमलोग पहले देख चुके हैं कि इस संग्राम का क्या-क्या प्रभाव पड़ा है।

सप्तवर्षीय युद्ध में अंगरेजों की सफलता तथा अमेरिका में उनकी हार के कारण—सप्तवर्षीय युद्ध में अंगरेजों को कई सुविधाएँ प्राप्त थीं और परिस्थितियाँ अनुकूल थीं :—

१. **ब्रिटेन तथा फ्रांस के लिये समान दूरी**—ग्रेटब्रिटेन तथा फ्रांस दोनों ही उत्तरी अमेरिका में लड़ रहे थे अतः दोनों ही अपने घर से समान दूरी पर थे।

२. **युद्ध के विविध केन्द्र**—वह युद्ध केवल एक जगह में केन्द्रित नहीं था, बल्कि यूरोप, अमेरिका, हिन्दुस्तान तथा समुद्र के केन्द्र थे। अतः फ्रान्स की शक्ति विभाजित थी। चारों केन्द्रों में युद्ध संचालन करना उसकी शक्ति से परे था।

३. **बड़े पिट का व्यक्तित्व और उसकी नीति**—उस समय बड़ा पिट इंगलैंड का युद्ध मंत्री था। उसके व्यक्तित्व तथा युद्ध-नीति के ही बदौलत अंगरेज इस युद्ध में सफल हो सके।[२]

४. **यूरोपीय और औपनिवेशिक प्रश्नों का सम्बन्ध**—सप्तवर्षीय युद्ध के समय यूरोपीय और औपनिवेशिक प्रश्न मिश्रित हो गये थे। किन्तु अमेरिकन युद्ध के समय यह मिश्रण विलग हो गया।

अमेरिकन संग्राम में अंगरेजों को कई असुविधाएँ थीं। प्रारम्भ में तो कई सुविधाएँ दीख पड़ती थीं और कोई भी ब्रिटेन की हार के विषय में नहीं सोच सकता था। उपनिवेश ब्रिटेन के सामने तुच्छ मालूम पड़ते थे। उनके पास जलसेना का अभाव था। उनसे आय के साधन मामूली और सीमित थे। बहुत से उपनिवेशवासी या तो ब्रिटेन के प्रति राजभक्त थे या घटनाओं के प्रति अन्यमनस्क। औपनिवेशिक सैनिक अपने घर से दूर नहीं जाना चाहता था, वह अस्थायी समय के लिये ही भर्ती होता था और संकट के समय भी युद्धक्षेत्र से चला जा सकता था। वह किसी के अधीन और खासकर दूसरे उपनिवेश के सेनापति के अधीन रहना नहीं चाहता था। सेना को सामान देनेवाले ठीकेदार झूठे तथा बेईमान होते थे और सेनापतियों की व्यवस्था करने वाली कांग्रेस स्वयं अयोग्य तथा बकवादी थी। इन सभी असुविधाओं के बावजूद भी उपनिवेशों की ही सफलता हुई और अङ्गरेजों की हार हो गई। इसके कई कारण थे :—

२ देखिए अध्याय २३, पिट की योजनाएँ और नीति।

१. दूरी तथा जंगल—ब्रिटेन को अपने घर से ३००० मील की दूरी पर अमेरिका से लड़ना पड़ता था। अमेरिका के अन्दर ही १००० मील तक जंगल फैला हुआ था अतः एक जगह से दूसरी जगह आवश्यकता के समय युद्ध सामग्रियाँ तथा सूचनाएँ भेजने में बड़ी कठिनाई होती थी और वे नहीं पहुँच सकती थीं।

२. जातीय समानता—अमेरिका में ऐंग्लोसैक्सन जाति की ही दो प्रधान शाखाओं के बीच युद्ध हो रहा था। दूसरे शब्दों में यह युद्ध माँ और उसकी युवती पुत्रियों के बीच था। मा ने अपनी लड़कियों को आर्थिक तथा राजनीतिक क्षेत्रों में पहले ही बहुत कुछ स्वतंत्रता दे रखी थी। इस प्रकार अमेरिकन अंगरेज थे और अंगरेज होने के कारण ही उन्होंने अंगरेजी इतिहास के ही आधार पर अपनी स्वतंत्रता कायम कर लिया। किसी दूसरी जाति के उपनिवेशवासी के लिये ऐसा कर सकना शायद सम्भव न होता।

३. उपनिवेशवासियों की एकता—उपनिवेशवासी अपने घर में और घर के निकट लड़ रहे थे। वे अपने घरबार तथा जीवन की सुरक्षा के लिये लड़ रहे थे। वे ब्रिटेन के अन्याय तथा अत्याचार का विरोध कर रहे थे। अतः उनमें नैतिक शक्ति का विशेष रूप से संचार हुआ था। घर के निकट होने के कारण कहीं और कभी भी सहायता पहुँचाना उनके लिये आसान था। ये सभी मार्गों तथा स्थानीय स्थितियों से पूरे परिचित थे।

४. उपनिवेशों की शक्ति की उपेक्षा तथा समझौता के लिये प्रयत्न—ब्रिटेन ने उपनिवेशों की शक्ति की उपेक्षा की। वह उन्हें तुच्छ दृष्टि से देखता था और अपनी शक्ति में बहुत अधिक विश्वास करता था। एक युद्धकुशल कर्मचारी ने तो यहाँ तक कहा था कि अमेरिका-विजय के लिये ४ रेजिमेंट ही पर्याप्त हैं। अतः उसने अपनी पूरी तैयारी नहीं की और उपनिवेशों की शक्ति का ठीक अनुमान नहीं कर सका। साथ ही उनसे बराबर समझौता कर लेने की आशा भी करता रहा। साराटोगा के प्रथम आत्मसमर्पण तक यही हालत रही। ब्रिटेन भूल गया था कि 'शान्ति के सिद्धान्तों पर युद्ध करना असम्भव होता है।' यदि सेनाध्यक्ष योग्य थे तो सैनिकों तथा सामानों के अभाव से उन्हें बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। उनकी सेना में भाड़े के बहुत से सैनिक शामिल थे। जिनमें देश भक्त सैनिकों का उत्साह नहीं पाया जा सकता था।

५. जार्ज तृतीय और लार्ड नौर्थ की अयोग्यता—(क) स्वार्थपूर्ण नीति—जार्ज तृतीय और उसके मंत्री लार्ड नौर्थ ब्रिटेन की हार के लिये विशेष रूप से उत्तरदायी थे। दोनों ही अयोग्य व्यक्ति थे। किसी देश के शासन का प्रधान उद्देश्य वहाँ

भर कोशिश की परन्तु उसे सारे राष्ट्र का पूर्ण सहयोग प्राप्त न हो सका। जिस तरह रानी एन के राज्यकाल में टोरी फ्रांस के साथ युद्ध के विरोध में थे वैसे ही जार्ज तृतीय के राज्यकाल में ह्विग अमेरिका के साथ युद्ध के विरोध में थे। इसके अलावा ब्रिटेन के राजनीतिज्ञों के बीच अमेरिकन नीति के सम्बन्ध में मतभेद था। राजा तथा ग्रेनविल उपनिवेशों पर ब्रिटेन के द्वारा टैक्स लगाये जाने के अधिकार को उचित और वैध समझते थे। पिट के विचारानुसार ब्रिटिश पार्लियामेंट को उपनिवेशों पर कर लगाने का कोई अधिकार नहीं था और उसने अमेरिकनों को इसका विरोध करने के उत्साहित किया। उसकी सम्मति में गुलामी स्वीकार कर लेने पर ही उपनिवेशवासी इसका विरोध नहीं करते। एडमंड बर्क जैसे महान् विचारक का सिद्धान्त कुछ दूसरा ही था। वह इसको वैधता सम्बन्धी वादविवाद में पड़ना नहीं चाहता था। उसके विचार से ब्रिटेन की यह चेष्टा असामयिक और अनुचित थी। वह उपनिवेशों के साथ समझौता कर लेने के पक्ष में था। कौमन्स सभा में बर्क का एक कथन यहाँ उद्धृत करना उपयुक्त होगा :—

"अमेरिका के विरोध से मैं खुश हूँ। अन्याय तथा अत्याचार के कारण अमेरिकन पागल हो गये हैं। क्या आप लोग इस पागलपन के लिये उन्हें सजा देंगे जिसका बीजारोपण आप ही लोगों ने किया है?"

इस प्रकार अधिकतर देशवासी भी युद्ध को अनुचित तथा अन्यायपूर्ण समझने लगे थे और सेना में भर्ती होने के लिये लोगों में उत्साह का अभाव दिखाई पड़ता था।

७. ब्रिटिश शक्ति का विभाजन—इस तरह ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के बीच मतभेद तो था ही, ब्रिटिश सरकार की शक्ति तथा ध्यान भी विभाजित थे। घरेलू झंझटों के कारण बाहर भी कई समस्यायें उत्पन्न हो गईं। हिन्दुस्तान में फ्रांसीसी तथा मराठों की सहायता पाकर मैसूर का हैदर अली अंगरेजों के विरुद्ध विद्रोह करने की तैयारी कर रहा था। आयरिश भी अंगरेजों को अपने देश से भागने के लिये बराबर ही सुअवसर की ताक में रहते थे।

यूरप का बर्ताव भी ब्रिटेन के साथ अच्छा नहीं था। फ्रांस के सिवा स्पेन तथा हॉलैंड भी उसके दुश्मन थे। फ्रांस तथा स्पेन के सम्मिलित आक्रमण का ब्रिटेन को भय था। अतः वह अपनी सीमाओं की रक्षा करने के लिये भी चिन्तित था। यूरोप के दूसरे राज्यों की भी सहानुभूति उसे प्राप्त नहीं थी।

८. मित्रों का अभाव—सप्तवर्षीय युद्ध में विजय के फलस्वरूप ब्रिटेन की औपनिवेशिक, सामुद्रिक तथा व्यापारिक शक्ति सुदृढ़ हो गई तथा वह विश्व में सबसे बड़ा और शक्तिशाली राज्य बन गया। इस कारण दूसरे राज्य उससे ईर्ष्या और द्वेष करने

अध्याय २६

बड़े पिट तथा छोटे पिट

बड़े पिट (१७०८—१७७८ ई०)

संक्षिप्त जीवनी—पिट का जन्म १७०८ ई० में वेस्टमिनस्टर शहर के एक गरीब घराने में हुआ था। वह मद्रास के गवर्नर टोमस पिट का पोता था। प्रारम्भिक अवस्था में उसने इटन स्कूल और ट्रिनिटी कालेज में शिक्षा पाई। तत्पश्चात् १७३० ई० में वह अश्वसेना में झंडावाहक (कार्नेट) के पद पर नियुक्त हुआ। २७ वर्ष की उम्र में वह १७३५ ई० में वह पार्लियामेंट का सदस्य बना और ओल्ड सारम नाम के एक मौरूसी रौटन बौरो से प्रतिनधि चुना गया। वालपोल के मंत्रित्व काल में वह विरोधी पक्ष का नेता था और वह वालपोल के आचार तथा नीति का कटु आलोचक था। उसके तथा राजा की वैदेशिक नीति का भी वह विरोधी था। वह खासकर हैनोवर के प्रति राजा के पक्षपात की नीति का विरोध करता था। उसके विचार से राजा ग्रेट ब्रिटेन को अपने एलेक्टरेट का एक प्रान्त ही समझता था। पिट के इन कटु आलोचनाओं से राजा ने असन्तुष्ट हो उसे सेना से निकलवा दिया। किन्तु वह राष्ट्र तथा राजकुमार का प्रिय हो रहा था। अपनी योग्यता के बल पर उसने पार्लियामेंट में पूरी धाक जमा ली। १७४६ ई० में पेल्हम के मंत्रित्व काल में वह आयरिश सैनिकों का वेतन अफसर नियुक्त हुआ। इस पद पर वह आठ वर्षों तक आसीन रहा, फिर भी वह सरकारी नीति की आलोचना करता रहा। १७५४ ई० में पेल्हम की मृत्यु के बाद न्यूकैसल प्रधान मंत्री हुआ। पिट को इससे नहीं बनती थी। वैदेशिक नीति को लेकर दोनों में घोर मतभेद पैदा हो गया। अतः पिट विरोधी पक्ष में जा मिला। १७५६ ई० में सप्तवर्षीय युद्ध प्रारम्भ हुआ। न्यूकैसल के लिये शासन तथा युद्ध दोनों का भार संभालना कठिन हो गया। अतः उसने पिट के साथ १७५७ ई० में संयुक्त मंत्रिमंडल स्थापित किया।

पिट एक बड़ा ही सफल तथा प्रतिभाशाली सेनानी और युद्ध सचिव था। उसी

समय उसने अपनी कुशाग्र बुद्धि और अपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया। सप्तवर्षीय युद्ध की प्रारम्भिक अवस्था में ब्रिटेन का भविष्य अन्धकारमय दिखलाई पड़ता था किन्तु युद्ध का संचालन कर इसने उस भविष्य को उज्ज्वल तथा गौरवपूर्ण बना डाला।[1]

१७६१ ई० में उसकी स्पेन विरोधी नीति का राजा तथा अन्य मंत्रियों द्वारा समर्थन नहीं किये जाने पर उसने पदत्याग कर दिया।

इसके बाद उसने कुछ समय तक शान्तिमय जीवन व्यतीत किया परन्तु अमेरिका सम्बन्धी जो घटनाएँ हो रही थीं उनसे वह अपरिचित नहीं था। वह अमेरिकन उपनिवेशों के पक्ष में था और उसके विचारानुसार अमेरिकनों पर आन्तरिक कर लगाने का ब्रिटेन को कोई अधिकार नहीं था। वह ब्रिटेनवासियों को ऐसा करने से मना कर रहा था परन्तु उन्होंने उसकी बात नहीं सुनी, अतः वह अमेरिकनों के विद्रोह से खुश था। १७६६ ई० में उसे चैथम का अर्ल बना दिया गया और उसी साल वह प्रधान मंत्री भी नियुक्त हुआ। वह पार्टी सरकार का समर्थक नहीं था अतः उसने एक सर्वदलीय मंत्रिमंडल कायम किया। इसमें भिन्न-भिन्न मत के लोग शामिल थे। यह ऐसी खिचड़ी थी कि बर्क ने इसे एक 'विचित्र तमाशा' ही कहा था। वह दो वर्षों तक प्रधान मंत्री के पद पर कायम रहा, इसी बीच कुछ समय तक वह बीमार पड़ गया। उस समय कोषाध्यक्ष टाउनशेन्ड कार्य सम्भालने लगे। उसने अमेरिका में चाय, शीशा और कागज के आयात पर कर लगा दिया। पिट ने इसका विरोध किया। उसने मिड्लसेक्स चुनाव सम्बन्धी कौमन्स सभा के अन्याय के विरुद्ध भी आवाज उठाई। लेकिन उसकी कमजोरी के कारण उसके विरोध का कोई विशेष असर न हुआ। अब सरकार में दलबन्दी और अमेरिका के साथ उसकी सहानुभूति के कारण राजा तथा अन्य मंत्री पिट से असन्तुष्ट हो गये। पिट भी गठिया का शिकार होने के कारण कमजोर हो गया था, अतः १७६८ ई० में उसने इस्तीफा दे डाला।

१७७७ ई० में साराटोगा के आत्म-समर्पण के बाद अंगरेजों के लिये अमेरिकन युद्ध की स्थिति खराब होने लगी थी। यूरोप के साथ लड़ाई निश्चित सी मालूम पड़ती थी। परिस्थिति वैसी ही नाजुक थी जैसी १७५७ ई० में। उस बार पिट ने ही ब्रिटेन की रक्षा की थी। अतः इस बार भी सबों की दृष्टि उसी पर लगी हुई थी। इस विकट परिस्थित का सामना करने के लिये वही एक सुयोग्य व्यक्ति दीख पड़ता था। परन्तु वह तो अमेरिकनों का पक्षपाती और मित्र था। ब्रिटेन की अमेरिकन नीति का वह विरोधी था। लेकिन साथ ही वह अमेरिका की पूर्ण आजादी के पक्ष में भी नहीं

[1] देखिये अध्याय २३, सप्तवर्षीय युद्ध।

था। उसके इस विचार का यह फल हुआ कि वह राजा या ह्विग पार्टी किसी के साथ मिल कर काम न कर सकता था। जार्ज अमेरिकनों को कुचल देना चाहता था, तो ह्विग लोग उन्हें स्वतन्त्र कर देना चाहते थे। अतः जब जार्ज ने पिट को कैबिनेट में शामिल करना चाहा तो पिट ने अस्वीकार कर दिया और अपने ही नेतृत्व में कैबिनेट कायम करने के लिये प्रस्ताव पेश किया। जार्ज ने भी उसके प्रस्ताव को ठुकरा दिया लेकिन असल बात यह थी कि पिट अब अधिक बूढ़ा और कमजोर हो जाने के कारण काम करने में समर्थ भी न था। फिर भी वह अमेरिका की पूर्ण स्वतन्त्रता बर्दाश्त नहीं कर सकता था। इसी सम्बन्ध में कुछ बोलने के लिये वह अपने लड़के के कन्धे का सहारा लेकर लार्ड-सभा में गया। उसने भाषण तो दिया परन्तु बुढ़ापे तथा कमजोरी के कारण बेहोश होकर गिर पड़ा। तत्पश्चात् मई १७७८ ई० में ७० वर्ष की उम्र में वह मर गया।

चरित्र और नीति गुण—पिट में कई बड़े बड़े गुण थे जिनके कारण उसकी गिनती ब्रिटेन के महान् राजनीतिज्ञों में होती है। उस समय अकर्मण्यता, चोरी, बेईमानी, घूसखोरी आदि भ्रष्टाचार का साम्राज्य फैला हुआ था। उस समय के वालपोल जैसे बड़े बड़े कहे जाने वाले लोग भी इस दूषित वातावरण के शिकार और उत्पादन थे। परन्तु पिट उच्च और-आदर्श व्यक्ति था और प्रायः सभी विषयों में उसकी भावनाएँ व्यापक थीं। वह अपने युग की बुराइयों से ऊपर था। वह बहुत ही निर्भीक और ईमानदार था। भ्रष्टाचार के ही कारण उसने वालपोल का घोर विरोध किया था। पेल्हम मंत्रिमंडल में वेतन अफसर की हैसियत से निश्चित दस्तूरी भी लेने से अस्वीकार कर उसने अपनी सच्चाई का अद्भुत परिचय दिया। इन गुणों के कारण वह लोगों का विश्वासपात्र बन गया था और उनके ध्यान को अपनी ओर आकर्षित करने लगा था।

वह एक कुशल पार्लियामेंटरी नेता था। वक्तृता शक्ति खूब थी। अपने भाषण से वह पार्लियामेंट के सदस्यों को मुग्ध और अचम्भित कर देता था। अतः एक बार वालपोल ने कहा था कि सेना के इस भयानक झण्डावाहक का मुख बन्द कर देना चाहिये। परन्तु यह उसकी शक्ति के बाहर की बात साबित हुई। उसके भाषण से श्रोताओं पर जादू सा असर होता था। उसकी ओजस्वी वक्तृता से नीरस और कमजोर व्यक्ति भी थोड़ी देर के लिये उत्साह से ओतप्रोत हो जाते थे। इसी से उसके सैनिकों का जोश बराबर बना रहता था और वे संकट के समय कभी मुह नहीं मोड़ते थे। एक समकालीन के शब्दों में 'उसके शब्द इतने गम्भीर होते थे कि युवकों तक के तीव्र

दौड़ने वाले रक्तसंचार को स्तब्ध कर देते थे और कभी इतने उग्र कि उनकी शिराओं का रक्तप्रवाह इतना तेज हो जाता था मानों वे फट जायँगी।'

पिट प्रजातन्त्र का समर्थक था। वह राजसत्ता कर का स्रोत जनता को ही समझता था। वह राजा की खुशी या नाराजगी की परवा नहीं करता था। लेकिन अपनी प्रजा की भलाई के लिये सदा चिंतित रहता था। वह कहा करता था कि 'जनता ने ही मुझे यहाँ भेजा है।' इसी लिये वह ग्रेट कौमोनर के नाम से प्रसिद्ध है।

वह किसी पार्टी के सिद्धान्तों का कट्टर समर्थक नहीं था। यह कहना कठिन है कि वह ह्विग था या टोरी। वह पार्टी सरकार में विश्वास नहीं करता था। अतः १७६६ ई० में उसने सर्वदलीय मंत्रिमंडल स्थापित किया था।

परन्तु प्रजातन्त्रवादी के साथ साथ वह साम्राज्यवादी भी था। उसकी साम्राज्यवादी भावना में देशभक्ति की भावना भरी हुई थी। उसका पक्का विश्वास था कि इंगलैंड का भाग्य देश के अन्दर तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह समुद्र पर और उससे भी आगे है। अतः वह संसार में अपने देश का सिर ऊँचा करना चहता था, विश्व में इसे अग्रणी बनाना चाहता था।

अवगुण—उसमें कुछ बड़ी त्रुटियाँ भी थीं। उसके विचार परस्पर विरोधी होते थे जिस सिद्धान्त का वह पहले विरोधी था उसका अब मंत्री होने पर समर्थक बन गया। अतः कुछ लोग उसे प्रवंचक भी समझने लगे थे। उसमें सादापन की बहुत कमी थी, वह तड़क भड़क, दिखावा और कृत्रिमता को विशेष पसन्द करता था। वह हठी, उदंड तथा असहिष्णु स्वभाव का था। वह जरा सा भी विरोध नहीं बर्दाश्त करता था और अपने सहयोगियों पर रोब गाँठता था। वह कभी कभी अपने विरोधियों पर अभियोग तक चलाने की धमकी देता था।

आलोचना पिट की महत्ता—इतिहास के महान् पुरुषों में पिट की गणना होती है। संसार के तत्कालीन राजनीतिज्ञों में उसका भी एक प्रमुख स्थान है। एक साधारण और गरीब परिवार में उसका जन्म हुआ था। अतः सामन्तों और कुलीनों तक उसकी पहुँच नहीं थी। फिर भी वह अपनी बहुमुखी प्रतिभा और योग्यता के बल से उसने अपने को 'इंगलैंड का प्रथम व्यक्ति और अपने देश को संसार में सर्वोत्कृष्ट बना डाला।' उसकी योग्यता की चर्चा सारे यूरोप में होती थी। 'वह इंगलैंड की आँखों का पुतला था, फ्रांस के लिये आतंक पैदा करने वाला था तथा सभ्य दुनिया की प्रशंसा का पात्र था।' प्रुशिया का महान् फ्रेडरिक उसके गुणों से बड़ा प्रभावित हुआ था और कहा था—'इंगलैंड को बहुत दिनों से प्रसव पीड़ा थी और अब पिट के रूप में सुयोग्य व्यक्ति का प्रादुर्भाव हुआ है।'

पिट की विभिन्न सेवायें सार्वजनिक जीवन-स्तर का उत्थान—पिट के हाथ में सत्ता की बागडोर जाने के पहले ब्रिटेन का सामाजिक तथा राजनैतिक वातावरण बड़ा ही दूषित था। वालपोल जैसे बड़े-बड़े लोग भी इसके शिकार थे। सार्वजनिक जीवनस्तर बहुत ही नीचे चला गया था, शासन बड़ा भ्रष्टपूर्ण था, किन्तु पिट का चरित्र बहुत ही ऊँचा था उसने अन्याय और अनाचार का घोर विरोध किया। वह भ्रष्टाचारियों को फूटी आँखों से भी नहीं देख सकता था। अपने देश के सार्वजनिक जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिये उसने सिरतोड़ परिश्रम किया। एक साधारण परिवार का होते हुए भी वेतन अफसर की हैसियत से उसने दस्तूरी को भी लेने से अस्वीकार कर दिया और इस प्रकार अपनी सच्चाई का आदर्श लोगों के सामने उपस्थित किया। उसने शासन से सभी बुराइयों को दूर कर दिया और उसे उच्च कोटि का बना दिया। उसकी अपूर्व तथा सफल शासन पद्धति को ही देखकर फ्रेडरिक ने कहा था कि 'यदि इंगलैंड में कोई शासन करना जानता है तो पिट ही।'

राष्ट्रीय भावना की जागृति—इतना ही नहीं, उसने अंगरेजों की सुषुप्त राष्ट्रीय भावना को भी जाग्रत किया। वह ब्रिटेन को दिल से प्यार करता था और इस बात में विश्वास करता था कि ब्रिटेन का कार्य क्षेत्र केवल देश की सीमा के अन्दर ही सीमित नहीं है, बल्कि समुद्र में और समुद्र पार के देशों में भी है। इस प्रकार उसने एलिज़ाबेथ के समय का वातावरण पुनः उपस्थित किया और होनहार नवयुवकों के लिये एक नयी सृष्टि का ही सृजन कर दिया।

राष्ट्र की रक्षा—हम लोग देख चुके हैं कि किस तरह सप्तवर्षीय युद्ध की प्रारम्भिक अवस्था में ब्रिटेन अन्धकार और संकट के गड्ढे में गिर रहा था और किस खूबी के साथ पिट ने अपने देश को बरबाद होने से बचा लिया। उसमें एक महान् तथा सफल युद्ध-सचिव के सभी गुण भरे हुए थे जिसका परिचय उसी समय लोगों को भलीभाँति मिल गया।

प्रजातंत्र का समर्थन—अट्ठारहवीं सदी में राजनीति को एक बड़ा ही लाभप्रद व्यवसाय समझा जाता था। यह एक लक्ष्य नहीं, बल्कि साधन बन गयी थी। इसके जरिये राजनीतिज्ञ अपना व्यक्तिगत स्वार्थ ही पूरा करना चाहते थे। लेकिन पिट ने राजनीतिक स्तर को ऊँचा उठाया वह अपने को जनता का प्रतिनिधि समझता था। प्रधान मंत्री होने पर भी वह अपने को जनता का स्वामी नहीं, बल्कि सेवक ही मानता था। वह अपनी शक्ति के लिये जनता पर ही अवलम्बित था, राजा या स्वार्थी कौमन्स सभा पर नहीं। वह किसी भी अपील को जनता के ही उच्च न्यायालय में करता था। वह कहा करता था—'यह जनता ही है जिसने मुझे यहाँ भेजा है।' इसीलिये उसे

ठीक ही 'ग्रेटकौमोनर' की पदवी से विभूषित किया गया। इस क्षेत्र में जार्ज द्वितीय ने भी पिट से बहुत कुछ सीखा था। यह स्वीकार करते हुए उसने एक बार पिट के विरोध करने पर कहा था—'अपनी प्रजा की राय जानने के लिये आपने ही मुझे कौमन्स सभा से हट कर किसी दूसरी जगह दृष्टि डालने की शिक्षा दी है।'

उसके प्रजातंत्रवादी होने का परिचय कुछ दूसरे उदाहरणों से भी मिलता है। कर्तव्यच्युत बिंग को गोली से मार देने के विचार का कौमन्स सभा ने विरोध किया था। पिट ने भी इस सम्बन्ध में कौमन्स सभा का साथ दिया। वह पार्लियामेंट में सुधार कर मतदाताओं के अधिकारों की रक्षा करना चाहता था। वह रौटेन बौरों को नष्ट कर देना चाहता था और प्रत्येक ३ वर्ष पर पार्लियामेंट का निर्वाचन कराने के पक्ष में था। उसने व्यक्तिगत तथा प्रेस की स्वतन्त्रता का भी समर्थन किया था, इसी लिये वह सामान्य वारन्ट और प्रेस प्रतिबन्ध का विरोध करता था। उसी ने सर्वप्रथम स्कौटों को समानता का अधिकार प्रदान किया। वह अमेरिकन उपनिवेशों को भी आन्तरिक मामलों में स्वतन्त्र छोड़ देना चाहता था और इसीलिये ब्रिटेन की टैक्स लगाने की अमेरिकन नीति का घोर विरोध किया था।

साम्राज्यवाद का भी समर्थन—इस प्रकार पिट प्रजातंत्र वादी विचारों का समर्थक तथा पोषक था। परन्तु उसमें कट्टरता का अभाव था। प्रजातंत्रवादी होते हुए भी उसने साम्राज्यवाद की उपेक्षा नहीं की। उसमें प्रजातंत्र तथा साम्राज्यवाद का विचित्र समन्वय था। उसके विचार से ब्रिटेन की महानता समुद्रपार साम्राज्य की स्थापना पर निर्भर करती थी। अतः उसने सैन्यप्रसार तथा औपनिवेशिक विस्तार पर खूब जोर दिया। उसने ब्रिटिश राष्ट्रीयभावना का साम्राज्यशाही दिशा में ही उपयोग किया। पश्चिमी द्वीप-समूह और पूरब में उसका प्रधान उद्देश्य यही था कि पहले व्यापारिक सुविधा प्राप्त कर पीछे साम्राज्यविस्तार किया जाय। इस प्रकार उसने साम्राज्य की अपेक्षा व्यापार को ही अधिक प्रधानता दी। हिन्दुस्तान में फ्रांसीसियों ने व्यापार की उपेक्षा कर साम्राज्य विस्तार ही कर लेना चाहा, अतः वे हार गये और अंगरेज विजयी हुए। उन्होंने व्यापारिक उन्नति की और साथ ही साम्राज्य भी स्थापित कर लिया। हम लोग यह भी देख चुके हैं कि पिट ने सप्तवर्षीय युद्ध में फ्रांस को हरा कर नवजात अंगरेजी साम्राज्य की बड़ी ही कुशलता के साथ रक्षा की। अतः यह बात निश्चित मालूम होती है कि यदि पिट नहीं होता तो अंग्रेजी साम्राज्य भी नहीं होता। इस तरह उसने अपने जीवन काल में ब्रिटेन को बहुत ही आगे बढ़ाया। इस लिये यह ठीक ही कहा गया है कि 'वालपोल के समय में ब्रिटेन बहुत मोटा तगड़ा बन गया था' लेकिन पिट ने उसे द्रुतगामी बना दिया।'

पिट से देश की क्षति—वालपोल की सेवाओं ने इंगलैंड को सुखी बना दिया, किन्तु वह महान् नहीं बन सका। लेकिन पिट की सेवाओं से वह महान् हो गया पर उससे सुख की प्राप्ति नहीं हुई। सप्तवर्षीय युद्ध में फ्रेडरिक को आर्थिक सहायता देने तथा सैन्यप्रसार में इंगलैंड का अपरिमित धन खर्च हुआ था, जिससे उसकी आर्थिक शक्ति क्षीण हो गयी। वह दिवालिया सा हो रहा था। अतः अमेरिकन उपनिवेशों पर कर लगाने के लिये उसे बाध्य होना पडा जो अमेरिकन विद्रोह का तत्कालिक कारण साबित हुआ। इसका फल भी उसके लिये बहुत ही घातक सिद्ध हुआ। अमेरिका का विस्तृत राज्य भी उसके हाथ से निकल गया और उसके वाणिज्य-व्यवसाय में मन्दी आ गई।

फिर भी इंगलैंड को पिट से जो लाभ हुए उनके सामने ये हानियाँ नगण्य हैं। और भी, यदि ब्रिटिश सरकार उसकी अमेरिकन नीति स्वीकार कर लेती तो इंगलैंड हानियों से बहुत कुछ बच जाता। अमेरिकन उपनिवेश अंगरेजों के हाथ से नहीं निकलते और व्यापार की भी क्षति नहीं होती। इस तरह सप्तवर्षीय युद्ध में उसकी नीति के कारण जो विशेष खर्च हुए, उनकी पूर्ति भी भविष्य में हो जाती।

अब यह स्पष्ट हो जाता है कि पिट रचनात्मक और प्रतिभाशाली राजनीतिज्ञ था यदि उसके हाथों में कुछ और अधिक समय तक सत्ता रह जाती तो विश्व का इतिहास कुछ दूसरा ही होता। इंगलैंड में पार्लियामेंट का सुधार १८३२ ई० के पहले ही हो जाता; आयरलैंड भी सन्तुष्ट हो जाता; अमेरिका ब्रिटिश साम्राज्य से अलग नहीं होता; भारतीय साम्राज्य भी कुछ पहले ही सुव्यवस्थित हो जाता और १८५७ ई० का कथित सिपाही विद्रोह भी शायद स्थगित हो जाता। सचमुच पिट अपने समय का एक अद्वितीय राजनीतिज्ञ था। धन्य है उसकी शक्ति और दूरदर्शिता। किसी लेखक ने सत्य ही कहा है कि 'महान् व्यक्तियों में शायद ही किसी का नाम पिट के समान बेदाग और उससे अधिक शानदार रहा है।'

वालपोल और बड़े पिट का तुलनात्मक अध्ययन—वालपोल तथा बड़े पिट दोनों ही बुद्धिमान् व्यावहारिक और योग्य व्यक्ति थे। दोनों ही राजनीति में पूरी दिलचस्पी रखते थे और दोनों का सार्वजनिक जीवन दीर्घकालीन रहा। दोनों का राजनीतिक जीवन करीब एक ही उम्र में आरम्भ हुआ था—वालपोल का २६ वर्ष की उम्र में और पिट का २७ वर्ष की उम्र में। दोनों ही देश भक्त थे और अपने-अपने तरीकों के द्वारा इसे उन्नतिशील बनाने के लिये प्रयत्नशील रहे।

इन गुणों के सिवा कई त्रुटियों में भी दोनों समान थे। दोनों ही अशिष्ट, अस-

दिम्भु और अहंकारी थे। दोनों ही दूसरों पर अपना रोब जमाते थे किन्तु अपना जरा सा भी विरोध सहने के लिये तैयार नहीं थे।

लेकिन दोनों में समता की अपेक्षा भिन्नता की ही मात्रा अधिक है। वालपोल का जन्म धनी परिवार में हुआ था किन्तु वह बहुत बड़ा विद्वान् नहीं हुआ। फिर भी वह अर्थशास्त्र में खूब निपुण था। पिट का जन्म दरिद्र परिवार में हुआ था तो भी उसने उच्च शिक्षा प्राप्त कर ली, परन्तु वह वालपोल के ऐसा कुशल अर्थशास्त्री नहीं हुआ।

वालपोल तुच्छ स्वभाव और संकीर्ण विचार का व्यक्ति था। अपने स्वार्थ साधन के लिये वह अनुचित उपायों का आश्रय लेने से भी बाज नहीं आता था। किन्तु पिट व्यापक स्वभाव और उच्च विचार का व्यक्ति था और इस दृष्टि से वह वालपोल का कट्टर विरोधी था। अतः वालपोल ने जहाँ लौकिक जीवन के धरातल को नीचा किया, वहाँ पिट ने उसे ऊपर उठा दिया।

दोनों ही वक्ता थे, किन्तु वालपोल की अपेक्षा पिट बहुत ही कुशल वक्ता था। पिट के चमत्कारपूर्ण और प्रभावोत्पादक भाषण से श्रोतागण मुग्ध हो उठते थे।

पिट की अपेक्षा वालपोल अधिक शक्ति लोलुप था। जब वालपोल की इच्छा के विरुद्ध भी स्पेन के साथ युद्ध घोषित कर दिया गया तब भी उसने पदत्याग नहीं किया और अनिच्छापूर्वक युद्ध संचालन करने लगा। किन्तु स्पेन से ही युद्ध घोषित करने के प्रश्न पर जब राजा और अन्य मन्त्रियों से मत भेद हुआ तब पिट ने चट त्याग पत्र दे दिया।

दोनों की नीतियाँ भी अलग-अलग थीं। वालपोल युद्धनीति का घोर विरोधी और शान्ति नीति का कट्टर समर्थक था। वालपोल में युद्ध सचिव होने की क्षमता नहीं थी और मौका आने पर उसने अपने को बड़ा ही अयोग्य युद्ध संचालक साबित किया। उसने अपने नेतृत्व काल में देश में शान्ति रखी और राष्ट्र को समृद्धिशाली बना कर इसे सुखी किया।

परन्तु पिट वालपोल के प्रतिकूल था। वह युद्धनीति का कट्टर समर्थक और शान्ति नीति का घोर विरोधी था। युद्ध सचिव होने की उसमें अपूर्व क्षमता थी और सप्तवर्षीय युद्ध के समय उसने अपनी इस क्षमता का बड़ी ही खूबी के साथ लोगों को परिचय भी दिया। लेकिन पिट ने अपने देश को महान् ही बनाया, वालपोल के इसे सुखी तथा समृद्धिशाली नहीं बना सका।

छोटे पिट की संक्षिप्त जीवनी १७५९-१८०६ ई०—१७५६ ई०[1] में, जो विजय का साल था, छोटे पिट का जन्म हुआ। वह बड़े पिट का दूसरा पुत्र था। बचपन से ही उसे राजनैतिक शिक्षा मिलने लगी। १७८० ई० में २१ वर्ष की उम्र में वह पार्लियामेंट का सदस्य हुआ। शेलबोर्न मंत्रिमंडल के समय वह कौमन्स का नेता और कोषाध्यक्ष था। फौक्स तथा नौर्थ के संयुक्त मन्त्रिमंडल के समय उसने फौक्स के इंडिया बिल का विरोध किया था। इस प्रकार वह राजा का विश्वासपात्र बन गया था और उस मन्त्रिमंडल के भंग होने के बाद राजा ने कैबिनेट निर्माण के लिये उसे ही निमंत्रित किया। इस प्रकार २४ वर्ष की अवस्था में वह ब्रिटेन का प्रधान मंत्री हुआ और इस पर १७ वर्षों तक कायम रहा। १८०१ ई० में कैथोलिक मुक्ति के प्रश्न पर राजा से मतभेद होने के कारण उसने पदत्याग कर दिया। लेकिन १८०४ ई० में नेपोलियनिक युद्ध के समय उसे फिर प्रधानमन्त्री का भार सौंपा गया। परन्तु दो ही वर्ष बाद ४६ वर्ष की उम्र में १८०६ ई० में उसकी मृत्यु हो गयी।

चरित्र और नीति दोनों पिटों की तुलना—पिट योग्य पिता का योग्य पुत्र था। दोनों चरित्रों में बहुत कुछ समता पाई जाती है। ब्रिटेन के एक प्रभावशाली प्रधान मन्त्री का पुत्र होते हुये भी छोटा पिट अपने पिता के जैसा ही सामन्तशाही श्रेणी का व्यक्ति नहीं था। प्रारम्भ से ही दोनों अकेले थे और कुलीनों के प्रियपात्र नहीं थे। दोनों को मित्रों की संख्या साधारण थी। मनोविनोद और ऐशआरामों में दोनों ही की दिलचस्पी रहती थी। अपने पिता के समान ही वह परिश्रमी, आत्मविश्वासी और ईमानदार था। उसका भी व्यक्तिगत जीवन पवित्र था। वह तात्कालीन बुराइयों का शिकार नहीं था। वह अपने लिये पदवी तथा पुरस्कारों को नहीं चाहता था यद्यपि उन्हें दूसरे को दे दिया करता था। वह भी अनाचार का कट्टर विरोधी था। दोनों ही निर्भीक और देश भक्त थे तथा अपने शुभचिन्तकों के कृतज्ञ थे।

पिट भी अच्छा वक्ता था लेकिन अपने पिता की श्रेणी का नहीं। किन्तु वाद-विवाद में वह अपने पिता की अपेक्षा अधिक निपुण था। वह शब्दों के चुनाव और व्यवहार की कला जानता था। परन्तु उसमें बड़े पिट के उद्दीन जोश और फौक्स के असीम उत्साह का अभाव था। इतना ही नहीं, छोटा पिट अर्थ शास्त्र में पारंगत था, परन्तु बड़े पिट को इसका साधारण ज्ञान था। युद्ध सचिव की दृष्टि से वह अपने पिता की तुलना में अयोग्य था। उसमें दूरदर्शिता का अभाव था। वह फ्रांस की राज्य क्रान्ति

---

१ इस अध्याय में पिट की १७९३ ई० तक ही की गृह नीति वर्णित है। शेष के लिये देखिये अध्याय २७; वैदेशिक नीति के लिये अध्याय २८ और आलोचना के लिये अध्याय ३०।

के महत्व और उसके परिणाम को ठीक न समझ सका और १७९२ ई० में उसने यह विचार प्रकट किया था कि ब्रिटेन में १५ वर्ष तक शान्ति रहेगी। अतः उसने जल और स्थल सेना में कमी भी करनी चाही। परन्तु एक ही वर्ष के बाद उसे ऐसे युद्ध में शामिल होने के लिये विवश होना पड़ा जिसकी गणना आधुनिक इतिहास के महायुद्धों में होती है। युद्ध प्रारम्भ हो जाने पर अपने पिता की तरह योग्य व्यक्तियों के चुनने और चोट करने की जगह परखने की क्षमता उसमें नहीं थी यही नहीं, उसने औद्योगिक क्रान्ति के परिणामों का भी ठीक-ठीक अनुमान नहीं किया; इसलिये सामाजिक सुधारों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। महान् उद्देश्यों के प्रति वह अपनी सहानुभूति तो प्रदर्शित करता था, लेकिन इनमें सफलता पाने के लिये त्याग नहीं कर सकता था। वह संकट मोल लेने से बहुत दूर रहता था। अतः जब उसके सुधार और बिल का विरोध होता था तो वह इसे वापस ले लेता था या चुपचाप बैठ जाता था।

अपने पिता के समान छोटा पिट भी उद्दंड था। वह अपने सहयोगियों और पार्टी के सदस्यों के साथ सहानुभूति तथा बड़प्पन नहीं दिखलाता था। वह अहंकारी और ईर्ष्यालू था और अपने समान किसी योग्य व्यक्ति को कैबिनेट में रखना नहीं चाहता था। व्यंग्य के रूप में यह कहा जाने लगा कि उसके दूसरे मंत्रिमंडल में केवल विलियम और पिट थे। लेकिन यहाँ कुछ राजा का भी दोष था। अपने पिता के जैसा पिट भी सर्वदलीय कैबिनेट कायम करना चाहता था, परन्तु राजा ने इसका विरोध किया। पिट में एक और बहुत बड़ा अवगुण यह था कि वह मद्यपान करता था।

लेकिन उसके गुणों की तुलना में उसके अवगुण मामूली थे। जब वह प्रधान मंत्री बनाया गया तो उसके दुश्मन यह कह कर हँसी उड़ाने लगे कि राज्य का भार एक विद्यार्थी के हाथ में सौंप दिया गया। लेकिन इस आलोचना से वह तनिक भी विचलित नहीं हुआ, आगे बढ़ता गया और उसके आलोचकों को लज्जित होना पड़ा। यद्यपि वह एक टोरी सरकार का प्रधान था, उसके विचार उदार थे। वह अपने पिता की भाँति इंगलैंड के औपनिवेशिक तथा व्यापारिक विकास का पार्लियामेंटरी सुधार और शासन की शुद्धि में विश्वास करता था। उसने आदमस्मिथ की पुस्तक 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' का अध्ययन किया और स्वतन्त्र व्यापार के सिद्धान्त का समर्थन किया था। वह कैथोलिकों के ऊपर लगाये गए प्रतिबन्ध को उठाने तथा आयरिशों को शान्त करने के पक्ष में भी था।

पिट का प्रथम मन्त्रित्व (१७८१–८०१ ई०)—नीति की दृष्टि से प्रथम मंत्रित्व काल को दो भागों में बाँटा जा सकता है :—

(क) पिट विभिन्न रूपों में

(१) अर्थशास्त्री पिट (२) करों में कमी—आर्थिक क्षेत्र में पिट ने बहुमूल्य कार्य किया। वह अर्थशास्त्र का अच्छा ज्ञाता था और एक कुशल तथा सफल अर्थ-सचिव था। राष्ट्र यद्यपि समृद्धिशाली था, राष्ट्रीय अर्थ की स्थिति सन्तोषजनक नहीं थी। वह स्वतन्त्र व्यापार की नीति में विश्वास करता था और इसे कार्यान्वित करने का भगीरथ प्रयत्न किया। आयात की बहुत सी चीजों पर से कर बहुत घटा दी या बिल्कुल उठा दी। चाय कर में ३/४ की कमी हो गयी (रैम्जे मूर के अनुसार ९/१०)। इससे लगान में जो कमी हुई उसकी पूर्ति भी कर दी गई। भोग विलास की साम-ग्रियों पर चुंगी लगा दी गई। इन सुधारों के फलस्वरूप चोर बाजारी बहुत हद तक रुक गई। लगान में वृद्धि हो गई। चीजें सस्ती हो गईं और अब सरकार को बचत होने लगी। अब पिट कुछ दूसरे अत्याचारी करों को भी उठाने में समर्थ हो सका।

(३) आय व्यय की चिट्ठा का प्रकाशन—वह आय व्यय का चिट्ठा प्रकाशित करने लगा और कम सूद पर ही खुलेआम कर्ज लेना शुरू किया।

(२) राष्ट्रीय कर्ज चुकाने की योजना—राष्ट्रीय कर्ज को चुकाने के लिये उसने एक फन्ड खोला जो सिंकिंग फन्ड के नाम से प्रसिद्ध है। इस फन्ड में सालाना कुछ रकम जमा करने की योजना थी जो चक्रवृद्धि व्याज के दर से बढ़ायी जाती थी। लेकिन उसकी यह योजना सफल न हो सकी। महादेशीय युद्ध के कारण राष्ट्रीय कर्ज में बहुत वृद्धि हो गई और बचत का भी अन्त हो गया।

(४) कान्सोलिडेटेड फन्ड की स्थापना—कुछ ऐसी चीजें थी जिन पर विभिन्न कर अलग-अलग लिये जाते और विभिन्न खातों में लिखे जाते थे। इससे बड़ी गड़-बड़ी होती थी। अतः पिट ने सब प्रकार के करों के लिये एक ही फण्ड कायम कर दिया जो 'कान्सोलिडेटेड फन्ड' के नाम से प्रसिद्ध है।

(५) फ्रांस के साथ सन्धि—उसने १७८६ ई० में फ्रांस के साथ एक व्यापारी सन्धि की। इसके द्वारा दोनों देशों ने अपने आयात की चीजों पर से कर घटा दिया। अब दोनों देशों में विशेष रूप से व्यापार होने लगा। फ्रांसीसी शराब और रेशम के बदले अंगरेजी माल अधिक मात्रा में फ्रांस आने लगे।

ऐसे ही वह आयरलैंड के साथ भी एक सन्धि करना चाहता था। लेकिन अंग-रेज व्यापारियों की ईर्ष्या के कारण इसमें वह सफल न हो सका।

(ख) साम्राज्यवादी पिट

(१) हिन्दुस्तान—सन् १७७२ ई० में हिन्दुस्तान में कम्पनी के मामलों को

व्यवस्थित करने के लिये लार्ड नॉर्थ ने एक 'रेग्यूलेटिंग ऐक्ट' पास किया था। इसमें बहुत त्रुटियाँ रह गई थीं। इन्हें दूर करने के विचार से १७८४ ई० में पिट ने 'इंडिया ऐक्ट' पास किया। इसने एक बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल की स्थापना की। इसका प्रेसिडेंट कैबिनेट का ही एक मंत्री होता था। कम्पनी के राजनीतिक मामले इसी बोर्ड के आधीन सौंप दिये गये। कम्पनी के डाइरेक्टरों के लिये नीति निर्धारण में इसकी सम्मति लेना आवश्यक कर दिया गया। इस तरह ब्रिटिश सरकार ने ब्रिटिश भारत के शासन का अन्तिम उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया। फौक्स के जैसा इस सुधार में डायरेक्टरों के राजनीतिक अधिकार पर हस्तक्षेप नहीं किया गया। यह प्रणाली १८५८ ई० तक कायम रही।

(२) कनाडा—लोअर कनाडा (क्वीबेक) में फ्रांसीसी लोग बसे हुए थे। वहाँ के रोमन कैथोलिकों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिये नार्थ ने १७७४ ई० में एक 'क्वीबेक ऐक्ट' पास किता था। इसके द्वारा एक मनोनीत कौंसिल की नियुक्ति हुई। क्वीबेक की सीमा विस्तृत कर दी गई. और कैथोलिक चर्च स्वीकार कर लिया गया। उसके बाद बहुत से अंगरेज अमेरिकन संग्राम के समय उपनिवेशों से भाग कर अपर कनाडा (झील क्षेत्र) में बस गये। अब जातीय और धार्मिक मतभेद होने के कारण फ्रांसीसियों तथा अंगरेजों में संघर्ष होने लगा। इसे दूर करने के लिये १७९१ ई० में पिट ने कनाडा ऐक्ट पास किया। इसके द्वारा आबादी के आधार पर कनाडा को पूर्वी तथा पश्चिमी-दो भागों में बाँट दिया गया। प्रत्येक भाग को सीमित स्वायत्त शासन प्रदान कर दिया गया—मनोनीत गवर्नर, मनोनीत कौंसिल तथा निर्वाचित एसेम्बली की व्यवस्था कर दी गई। सर्वप्रथम फ्रांसीसियों को शासन प्रबन्ध में कुछ हिस्सा मिला। इस तरह पिट ने ही कनाडा को स्वतन्त्रता का बीजारोपण किया जिससे औपनिवेशिक स्वराज्य की नींव पड़ी।

(३) आस्ट्रेलिया—अब तक आस्ट्रेलिया की खोज हो चुकी थी। पहले ब्रिटेन के कैदी अमेरिका भेजे जाते थे, किन्तु अमेरिका के स्वतन्त्र हो जाने के बाद अब यह सम्भव न रहा अतः अब आस्ट्रेलिया में ही ब्रिटेन से कैदी भेजे जाने लगे। पहली आबादी सिडनी में कायम हुई जिसका नामकरण गृहमंत्री लार्ड सिडनी के नाम पर हुआ। करीब आठ सौ कैदी वहाँ भेजे गये थे। कुछ समय के बाद १७९३ ई० में स्वतन्त्र नागरिकों का एक दल बसने के लिये आस्ट्रेलिया भेजा गया। इस तरह आस्ट्रेलिया का विकास होना भी पिट के समय में शुरू हुआ।

(ग) सुधारवादी पिट

अपने पिता की भाँति पिट सुधार का पक्षपाती था और सुधारवादियों को

उससे बड़ी उम्मीदें थीं। पर उन्हें निराश होना पड़ा क्योंकि इस क्षेत्र में पिट को नाममात्र की सफलता प्राप्त हुई। १७८५ ई० में उसने एक बिल पेश किया। इसके द्वारा वह ३६ रौटेन बौरो को मताधिकार से वंचित कर उनके मालिकों को हरजाना देना चाहता था। परन्तु कौमन्स सभा में यह बिल पास न हो सका और उसके बहुत से अनुगामी भी इस बिल के विपक्ष में ही मत प्रदान किये। फिर भी पिट ने पद-त्याग नहीं किया।

विलवरफोर्स ने दास-व्यापार को उठाने के लिये एक बिल पेश किया था। पिट ने भी इसका समर्थन किया था। यह बिल भी अस्वीकार कर दिया गया। उसने संयोग के मौके पर आयरिश कैथोलिकों को मुक्त कर देने की प्रतिज्ञा की थी। लेकिन जार्ज के विरोध से वह अपनी प्रतिज्ञा पालन में असमर्थ रहा। इस समय उसने पदत्याग भी कर दिया।

प्रतिनिधित्व का प्रश्न—१७८८ ई० में राजा के पागलपन के कारण अव्यवस्था सी फैलने लगी थी। अतः ह्विग और फौक्स चाहते थे कि राजकुमार को ही राजा के सभी अधिकार सौंप दिये जाँय। उन्हें यह आशा थी कि ऐसा होने से उनके हाथ में सत्ता आ जायगी लेकिन पिट ने इसका विरोध किया और उसने एक 'रिजेन्सी बिल' पेश किया। इसके द्वारा राजकुमार को राजा के प्रतिनिधि की हैसियत से ही शासन कार्य सँभालने के लिये सीमित अधिकार दिया गया, लेकिन शीघ्र ही राजा होश में आ गया और वह पिट के प्रति पहले से भी अधिक कृतज्ञ बन गया।

अध्याय २७

फ्रांस की राज्यक्रान्ति और ब्रिटेन

क्रान्ति और अंगरेजी लोकमत (१७८९-९३ ई०)—१७८९ ई० में फ्रांस की राज्यक्रान्ति शुरू हुई। इसका उद्देश्य था फ्रांस में स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व स्थापित करना। राजतन्त्र की शक्ति नियंत्रित करने से ही यह सम्भव था। अंगरेजों ने इस आन्दोलन का समाचार पाकर बड़ी खुशियाँ मनाईं। उन्होंने इसका दिल से स्वागत किया। इस घटना के सुनने पर फौक्स और पिट के भी आनन्द का पारावार न रहा। फौक्स की समझ में वार्साइ का पतन विश्व में सबसे महान् और सर्वोत्तम घटना थी। पिट को भी ऐसी कोई शंका नहीं थी कि ब्रिटेन की नीति पर क्रान्ति का अशुभ प्रभाव पड़ेगा। ह्विग राजनीतिज्ञों ने क्रान्ति का हृदय से स्वागत किया। उन्होंने सोचा कि जिस तरह से १६८८ ई० की क्रान्ति के द्वारा ब्रिटेन में वैधानिक शासन की स्थापना हो गई वैसे ही फ्रांस में भी स्वेच्छाचारी राजतन्त्र की जगह पर वैधानिक शासन कायम होगा। इसके बाद दोनों देशों में मैत्री पूर्ण घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित हो जायगा। वर्ड्सवर्थ तथा कोलरिज जैसे कवियों ने इस क्रान्ति में सौख्य, उल्लास तथा स्वतन्त्रता के एक नये युग का प्रादुर्भाव देखा। प्रगतिशील पादरियों ने भी इसका समर्थन किया। पार्लियामेन्टरी सुधार के लिये लोगों में सरगर्मी पैदा हो गई और क्रान्तिकारी सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिये बड़े-बड़े शहरों में समितियाँ स्थापित की जाने लगीं। अग्रगामी राजनीतिज्ञ क्रान्ति के नेताओं से पत्र-व्यवहार तथा विचार विनिमय करने लगे।

बर्क का विरोध—लेकिन बर्क में, जो ह्विगों का एक प्रमुख नेता था, दूसरी ही प्रतिक्रिया हुई। प्रारम्भ से ही क्रान्ति के प्रति उसे आशंका उत्पन्न हो गई। नवम्बर सन् १७९० ई० में उसने 'फ्रांस की क्रान्ति पर विचार' नामक एक किताब प्रकाशित की। इसमें उसने अंगरेजी और फ्रांसीसी क्रान्तियों के नेताओं के उद्देश्यों और तरीकों में भिन्नता दिखलाई। उसकी दृष्टि में फ्रांस के क्रान्तिकारी विधायक नहीं बल्कि विना-

शक मान्त्र थे। उसका यह विचार था कि फ्रांसीसी क्रान्ति के फलस्वरूप उग्रपन्थी शक्तिशाली होंगे और फ्रांस में सैनिक शासन स्थापित होगा। उसने यह भी घोषणा कर दी कि मैं मरते दम तक भी फ्रान्स के विधान से दूर रहने के लिये ही अंगरेजों को राय दूँगा।[1] इस तरह क्रान्ति को नष्ट कर देने के लिये उसने सारे यूरोप के शासकों को प्रोत्साहित किया।

दूसरे साल टॉमपेन ने अपनी एक किताब[2] प्रकाशित की। इसमें उसने सरकार स्थापित करने या बदलने के लिये जनता के अधिकारों का समर्थन किया। बहुतों ने इस किताब की प्रशंसा की। कुछ समय बाद पेन ने गणतन्त्र की प्रशंसा करते हुये एक दूसरी पुस्तक निकाली। इसका परिणाम दूसरा ही हुआ। वह अपने देश में अप्रिय बन गया।

इस प्रकार वर्क और टॉम दो विभिन्न अंगरेजी विचार धाराओं के प्रतीक थे। परन्तु राष्ट्र का बहुमत बर्क के ही साथ था। सरकार भी उसी के विचारों से सहमत थी।

क्रांति के प्रभाव

(१) राजनितिक ह्विग विभाजन (१७९२ ई०)—अब ब्रिटिश लोकमत में क्रान्ति के प्रति परिवर्तन होने लगा। अब अंगरेज सावधान होने लगे क्रान्ति के फल स्वरूप सर्व प्रथम ह्विग पार्टी दो भागों में बँट गई। बहुत से ह्विग इंगलैंड में क्रान्तिकारी विचारों के प्रचार की आशंका करने लगे और वे पिट के साथ मिल गये। यह दल अपने को 'न्यू ह्विग' कहने लगा। फौक्स अपने पूर्व के विश्वास पर अटल रहा और कुछ ह्विग उसके साथ रह गये। ये लोग ओल्ड ह्विग के नाम से प्रसिद्ध हुये। अब इस काल में ह्विग तथा टोरी इस तरह से मिश्रित हो गये कि किसी को ठीक से पहिचानना कठिन हो गया।

पिट की गृहस्थनीति में परिवर्तन (१७९३—१८०१)–सुधार तथा दमन का जोर—योजनायें स्थगित—पिट टोरी होते हुये भी उदार विचार का टोरी था। लेकिन अब वह वास्तविक टोरी हो गया। यह ठीक ही कहा गया है कि 'फ्रांसीसी क्रान्ति ने ही पिट को टोरी बनाया।' उसका मतलब यह था कि अब वह किसी भी सुधार का कट्टर विरोधी बन गया। १७९३ ई० में ब्रिटेन और फ्रांस के बीच युद्ध छिड़ गया। सुधार की सभी योजनायें स्थगित कर दी गईं। एक समकालीन के तूफान के समय शब्दों से ही कोई अपना घर मरम्मत नहीं करा सकता।' पिट उनसे

१. 'रिफ्लेक्सन्स ऑफ दी फ्रेन्च रिवोल्यूशन'

२. 'राइट्स ऑफ मैन'

सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसने दमन नीति भी अपनाई। नागरिकों के सभी अधिकार छीन लिये गये। स्वतन्त्रता नियम स्थगित कर दिया गया। सुधारवादी क्रान्तिकारी समझे जाने लगे। उन्हें अनिश्चित समय के लिये कैद में दिया जाने लगा। एक विदेशी नियम (एलियन्स एक्ट) पास हुआ जिसके द्वारा ब्रिटेन में विदेशियों का प्रवेश निषेध कर दिया गया और सन्देह होने पर देश से उनका बहिष्कार होने लगा। 'गैगिंग एक्ट' पास कर उसने लेख भाषण तथा सभा पर प्रतिबन्ध लगाया। विधान में किसी प्रकार के परिवर्तन की माँग राजद्रोह समझी जाने लगी। उदार विचार वाले समाचार पत्रों का प्रकाशन बन्द कर दिया गया।

जिस समाज की क्रान्तिकारी विचारों के साथ सहानुभूति पाई जाती थी उस समाज को कुचल दिया जाता था। उसके सदस्य तथा नेता गिरफ्तार कर लिये जाते थे। ऐसी ही एक 'कौरसपोन्डिंग सोसाइटी' थी जिसका नेता टॉमस हार्डी था। यह मजदूरों का एक साधारण संगठन था। फिर भी हार्डी पर राजद्रोह का अभियोग लगा कर मुकदमा चलाया गया किन्तु उसकी रिहाई हो गई। इतना ही नहीं, १७९९ और १८०० ई० में 'कम्बिनेशन एक्ट' पास किये गये जो मजदूरों के लिये बड़े ही घातक सिद्ध हुये। अब मजदूर अपने उचित दुखों को प्रकट करने के लिये भी एकत्रित नहीं हो सकते थे। वे वेतन बढ़ाने और काम के घन्टे कम कराने के लिये भी अपनी बैठक नहीं कर सकते थे। इस तरह उनके व्यवसाय-संघ अवैध घोषित कर दिये गये। १८२४ ई० में इन कानूनों के रद्द होने के समय तक ब्रिटेन में मजदूर संगठन असम्भव हो गया।

स्कौटलैंड भी इस दमन नीति का शिकार हुआ। १७९३ ई० में एडिनबरा में सुधारवादियों ने एक बैठक की। 'उचित तथा वैध तरीकों के द्वारा' सुधार की प्रगति करने पर उन्होंने विचार किया। फिर भी बहुतों पर राजद्रोह का अभियोग लगाया गया और उन्हें कैद कर लिया गया, कितनों को फाँसी दे दी गई और चार व्यक्तियों को कैदी के रूप में आस्ट्रेलिया निर्वासित कर दिया गया।

(२) आर्थिक—नकदी चुकती का अन्त और बैंक नोटों की कानूनी माह्यता—फ्रांस में आर्थिक संकट फैलने लगा। १७९७ ई० में असुरक्षा की भावना फैली हुई थी। लोग आतंकित हो रहे थे। कर्ज मिलने में कठिनाई होने लगी थी। व्यापारी कर्ज देना नहीं चाहते थे क्योंकि देश में सोना चांदी का अभाव होने लगा था। लोग बैंक से अपना रुपया वापस ले लेने के लिये उत्सुक थे और बैंक के फेल कर जाने की सम्भावना थी। लेकिन पिट ने एक कानून पास कर ऐसी स्थिति उत्पन्न होने से बचा ली। इसने बैंक के द्वारा नकदी चुकती

रोक दी और नोटों को कानूनी ग्राह्यता दे दी। २२ वर्षों के बादसे ही पुनः नगदी चुकती होने लगी।

सिक्के का मूल्य ह्रास और अन्य सामानों की मूल्य वृद्धि—अब सोने के अनुपात में सिक्के न होने से इनका मूल्य बहुत घट गया और सामानों का मूल्य बढ़ गया। मध्यम श्रेणी के लोगों को तो लाभ हुआ लेकिन गरीब मजदूरों की तकलीफें बढ़ गईं, क्योंकि मूल्य वृद्धि के अनुपात में उनके वेतन में वृद्धि न हुई।

'सिंकिंग फन्ड' योजना की बेकारी—पिट की शान्ति काल की नीति असफल होने लगी। युद्ध के कारण कर्ज में वृद्धि होने लगी। अब बचत की जगह घाटा होने लगा। अतः 'सिंकिंग फन्ड' की योजना व्यर्थ हो गई। आँग्ल-फ्रांसीसी सन्धि पूर्ण रूप से कार्यान्वित न हो पाई।

कर्ज और टैक्स में वृद्धि—पिट ने यह अनुमान किया था कि युद्ध अल्पकाल में ही समाप्त हो जायगा। अतः नये टैक्स लगाने के बदले उसने चालू करों में ही वृद्धि कर दी और १७९८ ई० में स्थायी तौर पर आयकर लगाया। वह कड़े सूदों पर कर्ज भी लेने लगा। फल यह हुआ कि राष्ट्र के ऊपर कर्ज अथवा टैक्स का बोझ बहुत भारी होने लगा। युद्ध के अन्त में राष्ट्र को कर्ज पर उतना वार्षिक सूद देना पड़ता था जितना कि प्रारम्भ में युद्ध का कुल वार्षिक खर्च था।

खाद्यपदार्थों का अभाव—बढ़ती हुई आबादी की वजह से ब्रिटेन को खाद्य पदार्थ बाहर से मंगाना पड़ता था। युद्ध के कारण इन चीजों का आयात कठिन तथा खर्चीला हो गया था। सरकार ने घर पर पैदावार बढ़ाने की कोशिश की और अन्न का मूल्य बढ़ा दिया। इस प्रकार बाड़ों का बांधना शुरु हुआ और खेती में उन्नति होने लगी। परन्तु इसके बुरे परिणाम भी प्रचुर मात्रा में दीख पड़ने लगे।

बाजारों का अभाव—ब्रिटेन में पक्के माल का उत्पादन बहुत अधिक हो रहा था। इनकी खपत के लिये विस्तृत बाजारों की आवश्यकता थी। लेकिन युद्ध के कारण बाजार का क्षेत्र संकुचित रह गया।

(३)सामाजिक दरिद्र रक्षण नीति—गरीबों की मजदूरी में कमी के कारण तकलीफें बहुत अधिक थीं। १७९५ ई० में बर्केन शायर के मजिस्ट्रेट ने स्पीनहम-लैंड के पेलीकन सराय में एक सभा की थी। जिसमें यह निर्णय हुआ कि मजदूरों के परिवार की संख्या के अनुसार मजदूरी की कमी पेरिश की दरों से पूरी की जाय। यह निर्णय सारे देश में फैल गया। अतः यह 'स्पीनहमलैंड निर्णय' के नाम से प्रसिद्ध हो गया। लेकिन इस निर्णय से भी बहुत बुराइयाँ हुईं।

(क) इससे मजदूरी बढ़ाने की प्रवृत्ति रुक गई। क्योंकि कमी की पूर्ति तो निश्चित ही थी।

(ख) इससे परिवारों की वृद्धि में प्रोत्साहन मिला क्योंकि परिवार की संख्या पर ही कमी की पूर्ति निर्भर थी।

(ग) उचित वेतन के अभाव में मजदूर भिखमंगे की स्थिति में पहुँच गये।

(घ) पेरिश की दरों में वृद्धि हो जाने के कारण छोटे किसानों की स्थिति दयनीय हो गई। इस प्रकार इसने अधिकांश जनता को गुलाम बना दिया।

लोकमत तथा पिट की गृह-नीति में परिवर्तन के कारण

(१) बर्क की पुस्तक का प्रभाव—बर्क की पुस्तक का प्रभाव ब्रिटेन के साथ-साथ यूरोप के सभी देशों पर पड़ा। इसके प्रचार से सभी जगहों में सनसनी पैदा हो गई। उसने इसमें स्पष्ट तरीके से बतलाया था कि १६८८ ई० की अंगरेजी क्रान्ति के नेता शासन की बुराइयों को ही दूर करना चाहते थे, लेकिन फ्रांसीसी क्रान्तिकारी शासन को ही उलट देना चाहते थे। इस प्रकार उसने फ्रांसीसी क्रान्ति को अराजकवादी विद्रोह बतलाया। और बहुत से लोगों ने इसी में विश्वास किया। पिट भी इस पुस्तक से बड़ा ही प्रभावित हुआ और क्रान्तिकारी विचारों के प्रचार से भयभीत हो गया। वस्तुतः 'इस गंभीर और प्रभावशाली पुस्तक का प्रकाशन सबसे महत्त्वपूर्ण राजनीतिक घटना थी।'

(२) हिंसात्मक तरीके—क्रान्ति क्रमशः हिंसात्मक होती गई। क्रान्तिकारी सिद्धान्तों के नाम पर हजारों की संख्या में लोगों की हत्या की जाने लगी और मनुष्यों के खून की धारा प्रवाहित होने लगी। सितम्बर १७९५ ई० के हत्याकाण्ड ने ब्रिटिश जनता को आतंकित बना दिया था और वह बर्क के विचारों में अधिक से अधिक सत्यता देखने लगी।

(३) क्रान्तिकारी सिद्धान्तों का प्रचार—फ्रांस के क्रान्तिकारी, क्रान्ति के सिद्धान्तों को यूरोप के दूसरे देशों में फैलाना चाहते थे। इस उद्देश्य से वे बागियों को राजाओं के विरुद्ध बलवा करने के लिये उत्साहित करते थे। यह एक तरह से राजाओं के विरुद्ध युद्ध की घोषणा थी। अतः सभी मुकुटधारी क्रान्ति के विरोधी बन गये। डंडी, शेफील्ड और अन्य कई जगहों में विद्रोह होने लगे जिससे क्रान्ति के प्रति आशंका गंभीर होती गई। अंगरेजी जनता भयत्रस्त होने लगी।

(४) आक्रमणात्मक नीति—१७९२ ई० में क्रान्तिकारियों ने आस्ट्रिया के साथ युद्ध आरम्भ कर दिया और बेल्जियम को अपने कब्जे में कर लिया। इससे चैनल के

बन्दरगाहों पर भी फ्रांस का अधिकार हो गया। शेल्ट के मुहाने पर स्थित ऐन्टवर्प भी फ्रांस के अधीन चला गया जो नेपोलियन के शब्दों में ब्रिटेन की छाती पर एक पिस्तौल के समान था। इस तरह ब्रिटेन के लिये भीषण संकट पैदा हो गया। शेल्ट नदी को सभी देशों के व्यापार के लिये भी खोल दिया। १६४८ ई० से ही एक सन्धि के द्वारा डच तथा अंगरेजी व्यापार के विकास के लिये इस नदी को दूसरे राष्ट्रों के लिये बन्द कर दिया गया था। परन्तु क्रान्तिकारियों ने यूरोपीय सन्धि की उपेक्षा की। उन्होंने हौलैण्ड पर भी चढ़ाई करने की धमकी दी क्योंकि शेल्ट का मुहाना अपने राज्य में होने के कारण डच सरकार ने उसपर अपना अधिकार स्थापित कर रखा था। इससे ऐन्टवर्प की उन्नति में बाधा पड़ती थी। किन्तु ब्रिटेन का स्वार्थ हौलैंड की स्वतंत्रता से सम्बद्ध था। अतः पिट ने उसकी रक्षा करने की घोषणा कर दी।

(५) लूई १६ वें की फाँसी—जनवरी १७९३ ई० में फ्रांसीसियों ने अपने राजा लूई १६वें को फांसी दे दी। इससे बृटिश लोकमत फ्रांस के विरुद्ध उत्तेजित हो गया। फरवरी में फ्रांस ने ही ग्रेटब्रिटेन के विरुद्ध युद्ध भी घोषित कर दिया। पिट ने शान्ति कायम रखने की यथासम्भव चेष्टा की परन्तु फ्रांस के कार्य से उसका प्रयत्न विफल हुआ।

पिट की आयरिश नीति (१७८३–१८०१)—फ्रांस की क्रान्ति से प्रभावित होकर अपनी स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये आयरिश लोग भी विद्रोह करना चाहते थे। परन्तु पिट उन्हें शान्त रखना चाहता था। अतः १७९३ ई० में उसने कैथोलिकों को मताधिकार दे दिया। यूनियन ऐक्ट पास हो जाने के बाद कैथोलिकों पर लगाये गये सभी प्रतिबन्धों को हटा देने के लिये उसने वादा किया। लेकिन जार्ज के विरोध के कारण वह अपना वादा पूरा नहीं कर सका और १८०१ ई० में पदत्याग भी कर दिया।[1]

पिट का दूसरा मंत्रिमंडल (१८०४–१८०६ ई०)—पिट के पदत्याग के बाद एडिंगटन नाम का टोरी प्रधान मन्त्री हुआ। १८०२ ई० में फ्रांस के साथ उसने आमिन्स की सन्धि की। दूसरे ही साल नेपोलियन की आक्रमणात्मक नीति के कारण ब्रिटेन में संकट उपस्थित हो गया। इसका सामना करने में एडिंगटन सरकार बिल्कुल असमर्थ थी। अतः १८०४ ई० में जार्ज ने पिट को मंत्रिमंडल कायम करने के लिये फिर निमन्त्रित किया। संकट का ख्याल कर पिट ने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। अपने पिता के जैसा वह सर्वदलीय मन्त्रिमंडल कायम करना चाहता था, जिसमें उसे

१ देखिये अध्याय ३०, पिट की आयरिश नीति

फौक्स को शामिल करने की इच्छा थी। लेकिन राजा फौक्स का विरोधी था। अतः उसने पिट की इस नीति का विरोध किया। तब पिट ने टोरी मन्त्रिमन्डल स्थापित किया। इसी समय १८०५ ई० में ब्रिटेन ने ट्रैफलगर के युद्ध में गौरवपूर्ण विजय प्राप्त की। परन्तु इसके डेढ़ महीने बाद ही नेपोलियन आस्टर्लीज के युद्ध में विजयी हुआ और यूरोप में अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। इससे पिटके दिल को बड़ा आघात पहुँचा। इसी समय उसके प्रिय सहयोगी डंडाज पर अर्थ संबंधी गड़बड़ी करने का अभियोग लगाया गया। इन घटनाओं का उसके दुर्बल स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ा और जनवरी १७०६ ई० में उसका देहान्त हो गया।

अन्य मंत्रिमंडल (१८०६–१८१५ ई०)—पिट के बाद एक ह्विग मंत्रिमंडल कायम हुआ जिसमें ह्विग, टोरी तथा राजमंत्री सभी सम्मिलित थे। इस तरह इसमें 'समस्त-कौशल' का प्रतिनिधित्व था। जार्ज ग्रेनविल का पुत्र लार्ड ग्रेनविल प्रधान मंत्री बना था। इसी समय फौक्स ने दास व्यापार की प्रथा उठाने की चेष्टा की, लेकिन शीघ्र ही वह मर गया। दूसरे साल यह प्रथा उठा दी गयी, परन्तु कैथोलिक स्वतन्त्रता के प्रश्न पर मतभेद होने के कारण उसी साल जार्ज ने ग्रेनविल मंत्रिमन्डल को बर्खास्त कर दिया। उसकी यह अन्तिम और बड़ी विजय थी। अब १८०७ से १८३० ई० तक टोरिओं के ही हाथ में सत्ता रही।

१८०७ से १८०९ ई० तक ड्यूक ऑफ पोर्टलैंड का मंत्रिमन्डल था। ड्यूक तो नाम मात्र का ही प्रधान मंत्री था, छोटे पिट के दो शिष्य कैनिंग और कैसलरे ही बड़े प्रभावशाली व्यक्ति थे। १८०९ ई० में ड्यूक की मृत्यु हो गई और स्पेन्सर पर्सिवल प्रधान मंत्री हुआ जो तीन वर्षों तक इस पद पर कायम रहा। वह सुधार विरोधी था और १८१२ ई० में उसकी हत्या हो गई। इसके बाद लार्ड लिवरपूल प्रधान मन्त्री हुआ जो १२ वर्षों तक उस पद पर काम करता रहा।

इस बीच में १८१० ई० में जार्ज का पागलपन फिर शुरू हो गया और शासन कार्य के लिये अब वह बिलकुल असमर्थ हो गया अब राजकुमार उसके प्रतिनिधि की हैसियत से शासन में बिना कोई परिवर्तन लाये कार्य की देखभाल करने लगा।

अध्याय २८

वैदेशिक नीति (१७८३-१८१५ ई०)

छोटा पिट और क्रान्तिकारी फ्रांस (१७८३-१८०१ ई०)

छोटे पिट की वैदेशिक नीति (१७८३-९३ ई०)—पिट शान्ति प्रिय नीति का समर्थक था। अमेरिका के साथ युद्ध के बाद ब्रिटेन को शान्ति की पूरी आवश्यकता थी। पिट इसे अच्छी तरह समझता था। अतः उसने अपने शासन के प्रारम्भ में शान्तिपूर्ण नीति का अनुसरण किया।

फ्रांस से सन्धि—१७८६ ई० में पिट ने फ्रांस के साथ एक व्यापारिक सन्धि की जिससे दोनों देश आर्थिक उन्नति करने लगे।

प्रशिया तथा हालैंड से सन्धि—उसने प्रशिया तथा हालैंड से भी सन्धि की। १७६३ ई० के बाद से प्रशिया ब्रिटेन से अप्रसन्न था, क्योंकि पेरिशया की सन्धि के समय उसकी उपेक्षा की गई थी। पिट ने उसके साथ मित्रता स्थापित कर ली। अब ब्रिटेन अकेला नहीं रह गया।

स्पेनियों से समझौता—१७८६ ई० में वैन्कोवर द्वीप से स्पेनवासियों ने कुछ अंगरेजों को खदेड़ दिया था। किन्तु अंगरेज ही वहाँ पहले जाकर बसे थे, अतः पिट ने यह दावा किया कि इसपर उन्हीं का अधिकार है। स्पेनवासियों को झुकना पड़ा और इस तरह ब्रिटिश कोलम्बिया का भविष्य अंगरेजों के हाथ में सुरक्षित हो गया।

रूस के साथ सन्धि की विफल चेष्टा—उसने रूस के साथ भी मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना चाहा किंतु इसमें वह सफल नहीं हुआ। रूस की जारिना कैथेराइन ने काले समुद्र के निकट तुर्की साम्राज्य के कुछ भागों को हड़प लिया था। पोलैंड के बटवारे को भी उसने प्रोत्साहन दिया। पिट ने रूस का विरोध किया लेकिन कोई प्रभाव न हुआ।

क्रान्तिकाल के युद्ध (१७९३-१८०२ ई०)—प्रथम गुट्ट और उसकी असफलता (१७९३-९६ ई०)—१७६३ ई० में फ्रांस के साथ ब्रिटेन के मैत्री-

पूर्ण सम्बन्ध का अन्त हो गया। उसी साल के प्रारम्भ में फ्रांस ने ही ब्रिटेन के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। इसके पहले ही आस्ट्रिया और प्रशिया फ्रांस के विरुद्ध युद्ध घोषित कर चुके थे। अतः ब्रिटेन भी इन्हीं के साथ मिल गया। कुछ समय बाद स्पेन, हौलैंड और सार्डीनियाँ भी इन राज्यों के साथ मिल गये। इस प्रकार फ्रांस के विरुद्ध प्रथम महान् गुट्ट का निर्माण हुआ। फ्रांसीसियों को इस समय बहुत सी असुविधायें थीं। उनकी जलसेना कमजोर और अनुशासनहीन थी। उनके सैनिक अशिक्षित थे। कई प्रान्तों में राजपक्षी दल वाले विद्रोह करने पर उतारू थे और क्रान्तिकारियों के बीच आपस में मतभेद था। फ्रांस की भूमि पर आठ विदेशी सेनायें उपस्थित थीं। ऐसी स्थिति में फ्रांस अपनी सफलता की कब आशा कर सकता था! लेकिन परिणाम कुछ दूसरा ही हुआ। फ्रांस के विरुद्ध गुट्ट ही असफल रहा। इसके कई कारण थे (क) गुट्ट के सदस्यों के बीच एकता का अभाव था। सभी स्वार्थी और प्रतिद्वन्द्वी थे। अतः एक नायक के नेतृत्व में संयुक्त मोर्चा नहीं उपस्थित किया गया। वे पृथक् पृथक् सीमान्त किलों पर अधिकार करने में व्यस्त थे। (ख) दूसरी ओर फ्रांसीसी देशभक्ति से ओत-प्रोत थे और उनका नायक कार्नेट बड़ा ही योग्य व्यक्ति था। (ग) मित्र राष्ट्रों की कुछ गलतियाँ तो थीं ही, ब्रिटेन ने भी कई भूलें कीं। सुशिक्षित सैनिकों तथा युद्ध के सामानों का पूरा अभाव था। इसपर भी एक ही साथ कई जगहों में आक्रमण किये जाते थे। उसने अपनी सामुद्रिक शक्ति का भी पूर्ण रूप से उपयोग नहीं किया। अतः फ्राँस, आवश्यकता के समय जहाँ-तहाँ सहायता भेजने में समर्थ हो सका। कहीं-कहीं प्राकृतिक आपत्तियों का भी सामना करना पड़ा और सर्दी तथा शीतज्वर के कारण भी ब्रिटिश सेना को भीषण क्षति उठानी पड़ी।

सैनिक कार्रवाइयाँ (१७९३–९६ ई०) फ्रांस की सफलतायें—फ्रांस ने खूब तत्परता से काम किया। उसने सभी विद्रोहों को दबा दिया और सात विदेशी सेनाओं को अपने देश से खदेड़ दिया। १७९३ ई० में यूरोप में तीन अलग-अलग जगहों में युद्ध हो रहा था और सभी जगह अंगरेज परास्त ही हुये। फ्रांसीसी राजपक्ष वालों की सहायता के लिये एक सेना टुलोन में भेजी गई, परन्तु बहुत कुछ क्षति सहने के बाद उसे पीछे हटने के लिये बाध्य होना पड़ा। दूसरी सेना उसी उद्देश्य से ब्रिटेन भेजी गई किंतु बहुत विलम्ब के बाद पहुँचने के कारण वह कुछ न कर सकी। तीसरी सेना यौर्क के ड्यूक के अधीन नीदरलैंड भेजी गई। ड्यूक ने डनकर्क की नाकेबन्दी की पर विफल रहा। बेल्जियम पर फ्रांस का अधिकार बना रहा और उसने हौलैंड पर भी आक्रमण कर दिया। नीदरलैंड से मित्रराष्ट्र भगा दिये गये और राइन नदी

को फ्रांस की सीमा घोषित कर दिया गया। इस नदी को प्राकृतिक सीमा बनाने के लिये फ्रांस पिछले कई सदियों से प्रयत्न कर रहा था और १७६४ ई० में उसका यह प्रयत्न सफल हो गया। इस साल कई युद्धों में फ्रांसीसियों को विजय प्राप्त हुई थी और लड़ाई के सामान भी हाथ लगे थे। अब १७६४ ई० में हौलैंड और दूसरे साल प्रशिया तथा स्पेन गुट्ट से अलग हो गये और इस तरह महान् गुट्ट का अन्त हो गया। १७६६ ई० में नेपोलियन बोनापार्ट के नेतृत्व में इटली पर भी हमला कर दिया गया। उसने पीडमोन्ट पर चढ़ाई की और सार्डीनिया के राजा को भी गुट्ट से निकल जाने के लिये विवश किया।

पच्छिमी द्वीपसमूह भी युद्ध का मुख्य केन्द्र था। युद्ध का प्रारम्भ तो आशापूर्ण था किन्तु उसका अन्त निराशा जनक ही हुआ। प्रारम्भ में अंगरेजों ने कुछ विजय प्राप्त की थी किन्तु फ्रांसीसियों ने सहायता भेज कर अपने सभी स्थानों पर फिर दखल कर लिया। इतना ही नहीं, उन्होंने अंगरेजी द्वीपों के हबशी गुलामों के बीच भी खलबली पैदा कर दी जिससे अंगरेज बड़े चिन्तित हुये। अन्त में एवर क्रोम्बी ने उन द्वीपों में शान्ति स्थापित की और फ्रांस अधिकृत कई द्वीपों को भी अपने अधिकार में कर लिया। परन्तु इस प्रयत्न में बहुत से अंगरेजों की जानें भी गईं।

पूरब में अंगरेजों को कुछ विशेष सफलता मिली। सुदूर पूरब में हौलैंड के और हिन्दुस्तान से फ्रांस के कई प्रदेश उनके हाथ में आ गये।

ब्रेस्ट का जल युद्ध (१७९४ ई०) भूमध्य सागर से भी हटने के लिये अंगरेजों को बाध्य होना पड़ा। केवल १ जून १७६४ ई० को लार्ड 'हो' ने ब्रेस्ट के जल युद्ध में फ्रांसीसियों को परास्त किया और केप औफ गुड होप को अपने कब्जे में कर लिया। फ्रांसीसियों ने १७६६ ई० में ब्रिटेन पर हमला कर दिया और आयर्लैंड में विद्रोह कराने के लिये एक बेड़ा भेजा। किन्तु प्रतिकूल वायु के कारण उनकी योजना असफल रही।

सेंटविंसेंट तथा कैम्परडाउन के जलयुद्ध (१७९७ ई०)—उपर्युक्त कुछ सफलताओं के अलावा १७९७ ई० में ब्रिटेन ने अपनी जलशक्ति का उपयोग किया। फरवरी १७६७ ई० में जर्विस ने स्पेनी बेड़ों को सेंटविंसेंट अन्तरीप के पास परास्त कर दिया। इसी युद्ध में नेल्सन ने बहुत बड़ा नाम प्राप्त किया और सफलता का अधिक श्रेय उसी को था। अक्तूबर में फिर डन्कन ने डच बेड़ों को कैम्परडाउन में हराया। इसमें डचों के ११ बेड़े नष्ट हो गये और उनकी जलशक्ति बहुत क्षीण हो गई।

ब्रिटेन की संकट पूर्ण स्थिति (१७९७ ई०)—फिर भी ब्रिटेन की स्थिति १७६७ ई० में बड़ी ही नाज़ुक थी। मित्र राष्ट्रों ने धोखा दे दिया और अब यूरोप

में उसका कोई मित्र नहीं रह गया था। फ्रांस ने डच बेड़े और सम्पूर्ण नीदरलैंड पर अधिकार कर लिया था। स्पेन के बेड़े पर भी उसका अधिकार था। आयरलैंड विद्रोह करने पर उतारू था और स्कॉटलैंड भी असन्तुष्ट था।

बुरी आर्थिक स्थिति—ब्रिटेन की अर्थिक स्थिति भी सन्तोषजनक नहीं थी। वार्षिक आय फन्ड में पहले की अपेक्षा आधी रकम ही दी जा सकती थी और बैंक से लोग अपनी पूँजी ही वापस लेने के लिये बेचैन हो रहे थे और बहुत से उसे निकाल भी रहे थे। युद्ध के कारण सरकार के खर्च में बहुत वृद्धि हो गयी थी; प्रजा पर टैक्स का बोझ बढ़ता जा रहा था; ३ वर्षों में राष्ट्रीय कर्ज ८ करोड़ पौंड तक चला गया। सभी वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि होने लगी। लेकिन उस हिसाब से वेतन में कोई परिवर्तन न हुआ। अतः लोगों का जीवन दुखमय होने लगा।

जहाजियों के विद्रोह—सबसे अधिक आपत्ति जनक घटना तो यह थी कि जहाजियों ने भी दो जगहों में विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। एक तो उन्हें वेतन बहुत कम मिलता था, दूसरे वेतन-अफसर भी उसका कुछ भाग हड़प लेते थे। उन्हें भोजन भी पर्याप्त नहीं मिलता था किन्तु उनसे कठिन काम लिया जाता था, उन्हें छुट्टी बहुत कम दी जाती थी और उन पर अनुशासन बहुत कड़ा रहता था। अतः स्पिटहेड पर जहाजियों ने विद्रोह कर डाला। लार्ड 'हो' ने उनकी कठिनाइयों को दूर करने की प्रतिज्ञा की। तब विद्रोह शान्त हो गया। किन्तु नौरे का विद्रोह उससे कहीं अधिक भयानक था। विद्रोहियों का नेता पार्कर बड़ा क्रान्तिकारी था। लेकिन उन्हें जमीन पर कोई मदद न प्राप्त हुई और सरकार ने भी दृढ़ता-पूर्वक कार्य कर उन्हें कुचल डाला और कई नेताओं को प्राणदण्ड दे दिया।

नेपोलियन की सफलता और ब्रिटिश पूर्वी साम्राज्य के लिये खतरा—नेपोलियन ने इटली से आस्ट्रियनों को खदेड़ कर बड़ी ख्याति प्राप्त कर ली थी और फ्रांसीसी सेना का सेनापति भी बन बैठा था। उसने माल्टा ले लिया और मिश्र में आ धमका। पिरामिडों के युद्ध में उसने ममलूकों को हराकर काहिरा पर अपना प्रभुत्व भी स्यापित कर लिया। नेपोलियन की इस विजय से ब्रिटेन के पूर्वी साम्राज्य के लिये भी खतरा उपस्थित हो गया।

स्थिति में परिवर्तन— अंगरेजी सफलतायें—लेकिन शीघ्र ही स्थिति बदल गई। नेल्सन अलेक्जेन्ड्रिया पहुँचा और उसने देखा कि नील नदी के मुहाने के निकट अबुकिर की खाड़ी में फ्रांसीसियों ने अपने जहाजों को लगा रखा था। लेकिन उन्होंने दो भूलें की थीं। उनके जहाज किनारे के निकट तक नहीं लगे हुए थे और वे किसी जंजीर के द्वारा एक दूसरे से सम्बन्धित नहीं थे। अंगरेजों ने उनकी इन भूलों

से बड़ा ही लाभ उठाया। फ्रांसीसी जहाज के दोनों बगल आना-जाना उनके लिये आसान कार्य था और वे उनके अग्र, केन्द्र तथा पृष्ठ भाग पर सहज ही आक्रमण कर सकते थे। पहली अगस्त १७९८ ई० में दोनों के बीच नील नदी के किनारे घमासान युद्ध हुआ जो नील के युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है। नेल्सन अंगरेजों का नायक था जो युद्ध-विद्या में बड़ा ही प्रवीण था। सन्ध्या समय ६ बजे युद्ध प्रारम्भ हुआ और रात भर चलता रहा। उसने फ्राँसीसियों पर गौरवपूर्ण विजय प्राप्त कर ली। उनके १३ जहाजों में केवल दो ही बच गये और बाकी सभी जब्त या नष्ट कर दिये गये।

नील नदी के युद्ध का महत्व—नील नदी के युद्ध का बहुत गहरा असर पड़ा। (क) भूमध्य सागर में अंगरेजों का आधिपत्य स्थापित हो गया। (ख) नेपोलियन के पूर्वी विजय के स्वप्न टूट गये। फ्रांस अपने दोस्त टीपू सुल्तान की मदद न कर सका और हिन्दुस्तान में फ्रांसीसी प्रभाव स्थापित करने की आशा पर पानी फिर गया। (ग) अब नेपोलियन सीरिया की ओर बढ़ा और उसने 'एकर' पर चढ़ाई कर दी लेकिन तुर्की और अंगरेजी सेना ने उसे परास्त कर दिया। इस समय अंगरेजी सेना का नायक सिडनी स्मिथ था। उसने बड़ी बहादुरी से काम किया और नेपोलियन के तोपखानों को समुद्र पर जाते समय पकड़ लिया। (घ) अब ब्रिटेन की यह उन्नति देखकर उसके पुराने दोस्त फिर उसके साथ मित्रता करने के लिये उत्सुक हो उठे। अतः रूस, आस्ट्रिया और टर्की को मिलाकर फ्रांस के विरुद्ध दूसरे गुट्ट का निर्माण हुआ।

दूसरी गुटबन्दी और इसकी असफलता (१७९९–१८०० ई०)—लेकिन दूसरी गुटबन्दी बहुत दिनों तक कायम न रह सकी। साल के अन्त होते-होते मित्र-राष्ट्रों की पूरी तरह हार हो गयी। रूसियों तथा डचों से सहायता मिलने के भरोसे ब्रिटिश सेनाएँ हॉलैंड पर चढ़ाई करने गयी थीं। किन्तु डच सेना पहुँची नहीं और रूसी सेना बेकार ही साबित हुई। अंगरेजी सेनाओं के पास सामानों की भी बड़ी कमी थी। अतः उन्हें आत्म-समर्पण कर अपने देश में लौट आना पड़ा। दूसरी ओर स्वीटजरलैंड में अस्ट्रियन तथा रूसी सेना पर भी फ्रांसीसियों ने विजय प्राप्त की। अब आस्ट्रिया और रूस आपस में झगड़ने लगे। अतः रूस गुट्ट से अलग हो गया।

नेपोलियन फ्राँस का विधायक (१७९९–१८१५ ई०)—इसी समय नेपोलियन मिश्र से फ्रांस लौटा और डायरेक्टरी के शासन का बलात् अन्त कर दिया। एक नया शासन विधान तैयार कराया जिसके द्वारा वह फ्रांस का प्रथम कौन्सल बन बैठा। अब क्रमशः वह अपने हाथ में सत्ता प्राप्त करता गया और १५ वर्षों तक अपने देश के भाग्य का विधायक बना रहा।

मारेंगो और होहिनलिन्डन के युद्ध (१८००–१८०१ ई०)—फ्रांस में शांति

स्थापित कर, नेपोलियन का ध्यान आस्ट्रिया की ओर गया जो इटली में लड़ रहा था। उसने आस्ट्रियनों को मारेंगो (१८०० ई०) और होहिनलिन्डन (१८०१) के युद्धों में बुरी तरह परास्त कर दिया। अब आस्ट्रिया ने फ्रांस के साथ लूनेविल की सन्धि की जिसके द्वारा फ्रांसीसियों को जीते हुये प्रदेश लौटा दिये गये। इस प्रकार नीदरलैंड और राइन नदी के वामपत्तीय प्रदेश आस्ट्रिया के अधिकार से निकल गये। अब फ्रांस उत्तरी इटली का मालिक बन बैठा और दूसरा गुट्ट टूट गया।

सशस्त्र तटस्थता (१८०० ई०)—इसी बीच रूस, डेनमार्क और स्वीडन ने ब्रिटेन के विरुद्ध 'सशस्त्र तटस्थता' स्थापित की। १७८० ई० में भी इसका निर्माण हुआ था। इसका यह उद्देश्य था कि फ्रांसीसी मालों के लिये ब्रिटेन के द्वारा जहाजों की तलाशी को रोका जाय। उसके नहीं मानने पर उससे युद्ध किया जायगा। फ्रांस के साथ मिलने के लिये इन उत्तरी बाल्टिक राज्यों का यह पहला कदम था।

ग्रेट ब्रिटेन की संकट पूर्ण स्थिति (१८००-१८०१ ई०)—अब १८०१ ई० में ब्रिटेन के लिये १७९७ ई० की जैसी स्थिति फिर उत्पन्न हो गई। उसका कोई साथी नहीं रह गया। इसी साल पिट ने पदत्याग भी कर दिया और एडिंगटन जैसा अयोग्य व्यक्ति प्रधान मन्त्री हुआ। सशस्त्र तटस्थता के कारण युद्ध हो जाने की विशेष आशंका थी।

स्थिति में परिवर्तन—किन्तु घटना चक्र शीघ्र ही उलटने लगा। १८०१ ई० के मार्च महीने से ही परिस्थिति में परिवर्तन होने लगा। एबरक्रौम्बे एक सेना के साथ मिल गया और एलेक्ज़ेन्ड्रिया पर गौरवप्रद विजय प्राप्त की। इसके छः महीने के भीतर फ्राँसीसियों ने जिन्हें नेपोलियन ने वहीं छोड़ दिया था, आत्म समर्पण कर दिया। इस बीच तटस्थ राष्ट्रों को कई संकटों का सामना करना पड़ा। इसी समय रूस के ज़ार पाल की हत्या कर डाली गई और उसके मरते ही तटस्थ देशों का बल टूट गया क्योंकि सशस्त्र तटस्था नीति का वही सबसे बड़ा समर्थक था। उसका उत्तराधिकारी अलेक्जेन्डर प्रथम ब्रिटेन का पक्षपाती था और उसने उसके साथ एक सन्धि कर ली। पश्चिमी द्वीप-समूहों में डेनों तथा स्वीडों के द्वीपों पर अंग्रेजों ने अपना अधिकार कर लिया। अंगरेज सेनापति सरहाइड पार्कर और नेल्सन ने डेनों को कोपेनहेगेन के युद्ध में बुरी तरह परास्त कर दिया। अब डेनमार्क को भी सशस्त्र तटस्थता की नीति त्यागने के लिये विवश होना पड़ा और अब बाल्टिक समुद्र का रास्ता ब्रिटिश जहाजों के लिये खुल गया। इस प्रकार सशस्त्र तटस्थता टूट गई और इसके साथ ही अंगरेजों के सामुद्रिक आधिपत्य का अन्त करने के लिये नेपोलियन की अन्तिम आशा भी समाप्त हो गई।

आमीन की संधि (१८०२ ई०)—अब दोनों पक्ष युद्ध से ऊब गये थे। ब्रिटेन का प्रधान मन्त्री एडिंगटन अयोग्य और युद्ध विरोधी था। राष्ट्रीय कर्ज का बोझ भी बढ़ता जा रहा था। अतः ब्रिटेन सन्धि कर लेना चाहता था। नेपोलियन भी तैयार था। अतः १८०२ ई० में आमीन सन्धि के द्वारा युद्ध समाप्त कर दिया गया।

सन्धि की शर्तें—ग्रेट ब्रिटेन ने सीलोन तथा ट्रिनीडाड को छोड़ कर सभी विजित प्रदेशों को लौटा दिया। आस्ट्रियन नीदरलैंड (बेल्जियम) और राईन की सरहद फ्रांस के अधीन रही, लेकिन उसे मध्य तथा दक्षिणी इटली से हटना पड़ा। माल्टा को इसके पुराने मालिक सेंट जौन के नाइट को लौटा देने के लिये तय कर दिया गया। तुर्की को मिश्र लौटा दिया गया।

आलोचना—यह बड़ी ही विचित्र सन्धि थी। एक समकालीन के शब्दों में यह ऐसी सन्धि थी जिसके लिये प्रत्येक व्यक्ति खुश था लेकिन किसी को गर्व नहीं था। यह फ्राँस के लिए जितनी ही गौरवप्रद थी, ब्रिटेन के लिये उतनी ही अपमानजनक। बेल्जियम में फ्राँस के प्रवेश को रोकने के लिए ही ब्रिटेन युद्ध में शामिल हुआ था। सदियों से उसकी यही नीति रही थी कि बेल्जियम किसी शत्रु के हाथ में न जाय। किन्तु इस बार उसी का बेल्जियम से बहिष्कार हो गया और फ्राँस का अधिकार उस पर सुरक्षित रहा। ब्रिटेन को सभी विजित प्रदेश भी लौटा देने पड़े। यह स्थिति देख कर आश्चर्य होता है कि युद्ध में ब्रिटेन पराजित भी नहीं हुआ था, फिर भी उसने इतना मानहीन कार्य किया।

अध्याय २६

नेपोलियन के युग के युद्ध

(१८०३–१५ ई०)

युद्ध का प्रारम्भ(१८०३ ई०)—इसके कारण—नेपोलियन का उत्तरदायित्व—आमीन की सन्धि अस्थायी साबित हुई। ब्रिटेन वैसी अपमान जनक सन्धि से कब सन्तुष्ट रह सकता था। नेपोलियन भी दिल से शान्ति नहीं चाहता था। उसे तो अपनी शक्ति दृढ़ करने के लिये कुछ समय की आवश्यकता थी। अतः १८०३ ई० में उसने अपनी आक्रमणकारी नीति प्रारम्भ कर दी और सैन्य प्रसार करने लगा। उसने पीडमौन्ट, एल्बाद्वीप और हॉलैंड को फ्रांसीसी साम्राज्य में मिला लिया। जर्मन राज्यों की सीमाओं का नये सिरे से निर्माण किया जो फ्रांसीसी स्वार्थ के अनुकूल था। स्विटजरलैंड में ३० हजार सेना भेजकर वहाँ एक नया शासन विधान स्थापित किया। कोई भी महादेशीय शक्ति उसका सामना करने के लिये तैयार नहीं थी। रूस उसका दोस्त ही था और आस्ट्रिया तथा प्रशिया आपस में झगड़ रहे थे। इस तरह अंगरेजों के आधिपत्य के मार्ग में फिर खतरा उपस्थित हुआ। नेपोलियन उत्तरी समुद्र से लोगों को भगा देना चाहता था। लेकिन उसके हौसले यूरोप तक ही सीमित नहीं थे। वह हिन्दुस्तान, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया तथा अमेरिका में भी अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहता था। वह अपने खोए हुए उपनिवेशों को प्राप्त करने, सामुद्रिक व्यापार को बढ़ाने और फ्रांसीसी जलसेना को सुदृढ़ करने के लिये उत्सुक था। उसके इन उद्देश्यों की पूर्ति में केवल ब्रिटेन ही बाधा स्वरूप था।

ब्रिटेन का उत्तरदायित्व—ब्रिटेन की तरफ से भी कुछ दिक्कतें पैदा की गईं। उसने माल्टा खाली करने से इनकार कर दिया और अंगरेजी अखबारों में नेपोलियन की कटु आलोचना की जाती थी। फ्रांस से भागे हुये कुलीनों और बोर्बनों को वहीं शरण मिलती थी।

युद्ध का उद्देश्य—अतः भीतर तथा बाहर अपने को सुरक्षित समझते हुए नेपो-

लियन ने ब्रिटेन के विरुद्ध आक्रमणात्मक रुख धारण किया और १८०३ ई० में दोनों के बीच युद्ध शुरू हो गया जो निरन्तर १८१५ ई० तक जारी रहा। यह नेपोलियनिक युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है क्योंकि यह युद्ध फ्रांसीसी रिपब्लिक के साथ नहीं, बल्कि नेपोलियन के साम्राज्य के साथ था। नेपोलियन ने यूरोप की शक्ति सन्तुलन नीति और स्वतन्त्रता को खतरे में डाल दिया था, अतः उनकी रक्षा के लिये ही यह युद्ध हुआ था।

ब्रिटेन पर आक्रमण की योजना (१८०३-१८०५ई०)—पिट का दूसरा मंत्रिमंडल (१८०४-१८०६ई०)—१८०४ई० में युद्धसंचालन करने के लिए पिट को फिर प्रधान मंत्री बनाया गया। उसके एक ही वर्ष बाद नेपोलियन भी फ्रांन्स का सम्राट बना। उसने अपने को इटली का भी राजा घोषित कर लिया। अब वह ब्रिटेन को मटिया मेट करदेना चाहता था। उस पर हमला करने के लिए उसने बोलन में एक बड़ी सेना इकट्ठी कर ली जिसकी शक्ति लग भग एक लाख की थी। स्पेन भी उसके साथ था। लेकिन उसकी आशा पूरी नहीं हुई। फ्रान्स के छोटे छोटे जहाज राजफोर्ड तथा फेरं ल के और बड़े बड़े जहाज टुलोन तथा ब्रेस्ट के बन्दरगाहों में पड़े हुए थे। किन्तु बाहर अंग्रेजी बेड़े बड़ी सावधानी पूर्वक निरीक्षण कार्य कर रहे थे। कार्नवालिस ने ब्रेस्ट का तथा नेल्सन ने टुलोन का निरोध कर डाला। अब नेपोलियन के सामने यह विकट समस्या थी कि वह किस तरह अपनी सेना चैनल पार भेजे। उसने कितनी ही योजनाएँ बनायी किन्तु अंग्रेज पोताध्यक्षो की तत्परता के कारण वे सभी असफल रहीं। फ्राँसीसी पोताध्यक्ष विलेनेव नेल्सन का सामना तो किया लेकिन वह उसके सामने टिक न सका।

तृतीय गुट्टका निर्माण—ट्राफाल्गर का युद्ध १८०५ई०—१८०५ई० में पिट ने आस्ट्रिया, रूस और स्वीडन को मिला कर फ्रान्स के विरुद्ध तीसरे गुट्ट का निर्माण किया। अब नेपोलियन ने बोलन स्थित सेना को हटाकर आस्ट्रिया से लड़ने के लिए भेजा। नेल्सन ने विलेनव की गतिविधि पर कड़ी निगरानी रखी थी। इधर अंग्रेज भूमध्यसागर में फ्राँसीसी बस्तियों पर हमला करने लगे। अब विलेनव भी अपने जहाजी बेड़े के साथ कैडिज बन्दरगाह से निकल कर बाहर आया। २१अक्टूबर १८०५ई० को ट्राफालगर का प्रसिद्ध युद्ध हुआ। खूब घमासान लड़ाई हुई। अंग्रेजी बेड़े २७ थे और फ्राँसीसी बेड़े ३३। फिर भी नेल्सन ने फ्रान्स और स्पेन की सम्मिलित सेना को बुरी तरह हरा दिया और उनके १८ जहाजों को पकड़ लिया।

परिणाम—अब तक नेपोलियन स्थल युद्ध में सफल होता रहा था, लेकिन इस जल युद्ध में उसे मुँह की खानी पड़ी। यह निर्णयात्मक युद्ध था। इससे एक ओर ब्रिटेन की सामुद्रिक शक्ति सुरक्षित हो गई और दूसरी ओर फ्रांस की जलशक्ति

कमजोर हो गई। अब ब्रिटेन पर हमला करने की नेपोलियन की योजना नष्ट हो गयी और युद्ध के अन्त तक यूरोप के किसी राष्ट्र ने समुद्र पर ब्रिटेन का सामना करने के लिये साहस नहीं किया।

नेपोलियन की शक्ति का विकास (१८०५-१८०८) ई०—लेकिन स्थल पर नेपोलियन की विजय होती रही। ट्राफालगर के २ महीने बाद नेपोलियन ने आस्टर्लीज में आस्ट्रिया तथा रूस की सम्मिलित सेनाओं को हराया और आस्ट्रिया को प्रेसवर्ग की अपमानजनक सन्धि करने को बाध्य किया।

अब नेपोलियन जर्मनी और इटली में प्रधान बन गया। १८०६ ई० में पुराने 'पवित्र रोमन साम्राज्य' का अन्त हो गया। इसी प्रकार तीसरा गुट्ट भी टूट गया और नेपोलियन की इस सफलता का समाचार पाकर पिट बड़ा ही दुःखित हुआ और शीघ्र ही उसका देहान्त हो गया।

अब नेपोलियन के भाग्य का सितारा चमकता सा दिखाई पड़ा। उसे विजय पर विजय मिलने लगी। उसने १८०६ ई० में ही प्रशिया को भी जेना के युद्ध में परास्त किया और एक विजयी के रूप में बर्लिन में प्रवेश किया। दूसरे साल रूस को भी फ्रीलैंड के युद्ध में हराकर ठिलसिठ की सन्धि करने के लिए बाध्य किया। इसके द्वारा नेपोलियन और जार ने यूरोप को अपने बीच बाँट लिया। प्रशिया को उन्होंने आपस में बाँट लिया और जर्मनी का पुनर्संगठन करना चाहते थे। नेपोलियन प्रशिया को और जार अलेकजेन्डर, स्वेडन तथा टर्की को क्षति पहुँचाकर स्वयं अपना राज्य विस्तार करने लगे। इस सन्धि की गुप्त शर्तों के अनुसार जार ने ब्रिटेन के विरुद्ध नेपोलियन को सहायता देने के लिये प्रतिज्ञा की। अब रूस फ्रांस से जा मिला और दोनों का यह गठबन्धन १८१२ ई० तक जारी रहा।

नेपोलियन की स्थिति (१८०८) ई०—अब नेपोलियन अपनी शक्ति की पराकाष्ठा पर पहुँच गया। करीब सम्पूर्ण यूरोप उसके सामने झुका हुआ था। लिस्बन से मास्को तक उसकी धाक जमी हुई थी। फ्रांसीसी साम्राज्य में बेल्जियम, राइन प्रदेश, पिडमौन्ट तथा टस्कनी शामिल थे। इटली के राजा के नाते नेपोलियन लोम्बार्डी और वेनिस का शासक था। राइन संघ के संरक्षक की हैसियत से आस्ट्रिया तथा प्रशिया को छोड़कर सभी जर्मन राज्यों पर उसका अधिकार था। आस्ट्रिया और प्रशिया भी कम से कम शान्त तो अवश्य ही थे, रूस उसका दोस्त ही था। उसके तीन भ्राताओं में लुई हालैंड का, जोसेफ स्पेन का और जेरोम वेस्टफालिया का शासक था और उसका एक बहनोई मरट नेपुल्स का।

महादेशीय नियम (१८०१-१८०७ ई०)—फिर भी अभी तक इंगलैंड उसके

दबाव में न आ सका। वह इसे जल और स्थल संघर्ष में पराजित करने में बुरी तरह से असमर्थ रहा। अतः अब उसने ब्रिटेन को अपने दबाव में लाने के लिए एक नया ही तरीका निकाला। उसने ब्रिटिश व्यापार पर चोट करने की कोशिश की। ब्रिटेन दूकानदारों का देश था और विस्तृत व्यापार के ही कारण उसे विशाल धन-दौलत प्राप्त हो रहा था। उसका यह नया तरीका महादेशीय नियम (कान्टिनेन्टल सिस्टम) के नाम से प्रसिद्ध है। १८०६ ई० में उसने बर्लिन-आदेश के द्वारा ब्रिटिश द्वीप पुंज को घेरे की स्थिति में घोषित कर दिया। लेकिन वास्तव में किसी भी ब्रिटिश बन्दरगाह के चारों तरफ कई मीलों तक एक भी जहाज नहीं था। उसने फ्रांस या फ्रांस के मित्रराष्ट्रों के साथ भी सभी व्यापार बन्द कर दिया। इनके बन्दरगाहों में ब्रिटेन तथा उसके उपनिवेशों से आनेवाले माल के जहाज नहीं जा सकते थे। मिलन आज्ञा पत्र के द्वारा उसने यह भी घोषणा की थी कि तटस्थ राज्यों के जहाज भी ब्रिटिश बन्दरगाहों से होकर जाने पर लूट लिये जायेंगे और उन्हें युद्ध में जीता हुआ सामान समझा जायगा। नेपोलियन के अधीनस्थ सभी राज्यों ने इस नियम को अपनाया और अपनाने के लिए बाध्य किये गये। दूसरे साल ब्रिटिश सरकार ने 'औंर्डर-इन-कौंसिल' के द्वारा जवाब दिया। इसके द्वारा फ्रान्स और उसके मित्रों के बन्दरगाह भी घेरे की स्थिति में घोषित कर दिए गये और उसके मित्रराष्ट्रों तथा तटस्थ राज्यों को फ्रांस या उसके मित्रों से व्यापार करने की मनाही कर दी गयी।

परिणाम—यह नेपोलियन की एक बड़ी भारी भूल साबित हुई और उसके लिए विनाशक सिद्ध हुआ। इस नियम के कारण साधारण व्यापार में क्षति हो गयी। ब्रिटिश खाद्य पदार्थों का मूल्य बढ़ गया जिससे ब्रिटिश मजदूरों को तकलीफों का सामना करना पड़ा। फिर भी सामुद्रिक शक्ति होने के कारण ब्रिटेन खाद्य पदार्थों का कहीं न कहीं से प्रबंध कर ही लेता था। लेकिन बहुत से दूसरे देश भी कितनी आवश्यक चीजों के लिये ब्रिटेन तथा उसके उपनिवेशों पर ही एकमात्र निर्भर थे। अब वे चीजें मंहगी होने लगीं। फिर भी कितने देशों ने ब्रिटेन के साथ गुप्तरीति से व्यापारिक सम्बन्ध कायम रखा। नेपोलियन इस चोर बाजारी को रोकने में असमर्थ रहा। स्वयं फ्रान्स भी ब्रिटिश जहाज और ब्रिटिश मालों पर ही बहुत कुछ निर्भर रहता था। फ्राँसीसी सैनिक अंगरेजी जूते या वर्दी का ही विशेष प्रयोग करते थे। अतः इस नियम से नेपोलियन के अपने ही देश में बहुत तकलीफ हुई।

प्रत्यक्ष परिणाम की अपेक्षा उसके अप्रत्यक्ष परिणाम बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं।

(क) उस समय के विदेश मंत्री कैनिंग को यह सन्देह होने लगा था कि नेपोलियन डेनिश बेड़ों को अपने कब्जे में कर लेना चाहता है। अतः उसने डेनमार्क को इन्हें

समर्पण कर देने के लिए आज्ञा दी। आज्ञा की अवहेलना करने पर कोपेनहेगेन का दूसरा युद्ध हुआ। डेन हार गये और अपने बेड़ों को त्याग दिया। इसके सिवा अंगरेजों ने पश्चिमी द्वीप-समूह में फ्रांसीसियों से मोरिशश और डचों से पूर्वी द्वीप समूह के कई द्वीप छीन लिये।

(ख) जार इस नियम को स्वीकार नहीं करना चाहता था क्योंकि उसके देश को ब्रिटिश मालों की आवश्यकता थी, इस कारण रूस से भी संघर्ष हो गया।

(ग) अपने नियम को पूरा करने के लिए नेपोलियन ने हालैंड, पुर्तगाल और स्पेन पर कब्जा कर लेने की चेष्टा की। डच सरकार इस नियम को लागू करने में ढिलाई करती थी। अतः नेपोलियन ने उस पर आक्रमण कर अपना अधिकार स्थापित किया। पुर्तगाल ने इसे अस्वीकार किया, इस कारण नेपोलियन ने एक सेना भेजकर पुर्तगाल पर १८०७ ई० में दखल कर लिया तथा पुर्तगाल की सरकार को ब्राजील में शरण लेनी पड़ी।

नेपोलियन ने स्पेन में भी हस्तक्षेप किया। वहाँ के राजा चार्ल्स चतुर्थ और उसके पुत्र फर्डिनेंड में झगड़ा हो गया था। दोनों ने फैसला करने के लिये नेपोलियन को पंच बनाया था। लेकिन १८०८ में नेपोलियन ने उन्हें अपने भाई जौसेफ के लिये स्पेन को गद्दी छोड़ देने को बाध्य किया। स्पैनिश जनता ने इसका घोर विरोध किया और विद्रोह कर जौसेफ को भगा दिया। पुर्तगाल ने भी विद्रोह कर दिया। प्रायद्वीप की इस घटना से सैनिक कार्रवाई के लिए ब्रिटेन को सुअवसर मिल गया। (घ) ब्रिटेन और अमेरिका के बीच भी संघर्ष पैदा हो गया (१८१२–'१४ ई०)।

प्रायद्वीप का युद्ध (१८०८–१८१४ ई०)—१८०८ ई० तक नेपोलियन की शक्ति बनी रही। सारे यूरोप में उसका प्रभाव स्थापित हो चुका था। परन्तु इस उत्थान के साथ ही उसके पतन का भी बीजारोपण शुरू हुआ। स्पेन तथा पुर्तगाल के प्रायद्वीप में हस्तक्षेप करने के कारण भीषण युद्ध शुरू हुआ जो प्रायद्वीपीय (पैनेन्सुलर) युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है।

विभिन्न घटनाएँ—आर्थर वेलेस्ली (लार्ड वेलिंगटन) के नेतृत्व में ३०,००० सैनिकों की एक बड़ी सेना फ्रांसीसियों से लड़ने के लिए पुर्तगाल भेजी गयी। उसने फ्राँसीसियों को विमीरों में परास्त कर दिया और उनसे सिन्तरा की सन्धि की। उसने फ्रांसीसियों को पुर्तगाल से शान्ति पूर्वक चले जाने के लिए छोड़ दिया। ब्रिटिश सरकार ने यह बात नापसन्द की और उसे वापस बुला लिया।

अब इस बीच स्पेनवासियों के राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचलने के लिए नेपोलियन

स्वयं एक बड़ी सेना के साथ स्पेन में आ गया और शीघ्र ही मैड्रिड पर अधिकार कर लिया। सर जौन मूर के नेतृत्व में अंग्रेजी सेना ने कोरूना में फ्राँसीसियों का सामना किया और उन्हें हरा दिया। लेकिन मूर रणक्षेत्र में ही मारा गया। फिर भी उसके सभी सैनिक एक अंगरेजी जहाज से सुरक्षित लौट गये। १८०६ ई० के अन्त में आस्ट्रियनों से लड़ने के लिए नेपोलियन को जर्मनी में लौटना पड़ा। अब स्पेन में केवल उसके कुछ प्रतिनिधि रह गये।

तेलावेरा का युद्ध १८०९ ई०—टॉरेसवेड्रस की दुर्ग पंक्तियां १८१०-१८११ ई०—स्पेन से अंगरेजी सेना चली जाने के बाद नेपोलियन ने समझा कि अब वहाँ का विद्रोह दब गया। लेकिन फिर दूसरी बार वेलिंगटन को स्पेन भेजा गया। उसने तेलावेरा में फ्राँसीसियों को परास्त किया लेकिन उसे पुर्तगाल वापस जाना पड़ा। वहाँ फ्राँसीसी सेनापति मसीना ने अंगरेजों को समुद्र में गिराने की कोशिश की; लेकिन वेलिंगटन की कूट नीति के सामने उसकी योजना ठहर न सकी। अंगरेजी सेना का आधार लिस्बन था। यह एक छोटे से प्रायद्वीप पर स्थित है और इसे एक संकरा भूभाग बाकी के प्रदेश से मिलाता है। वेलेस्ली ने इसी तंग भूभाग की नाकेबन्दी कर डाली। उसने कई दुर्ग पंक्तियों का निर्माण किया जो "टारेसवेड्रस" की दुर्ग पंक्तियों के नाम से मशहूर हैं। ये दुर्ग पंक्तियाँ शत्रु के लिए अभेद्य थीं। पहली दुर्गपंक्ति की लम्बाई २६ मील थी। एक जगह नदी में बाँध बाँधकर एक बड़ी झील निकाल दी गई थी और दूसरे स्थानों पर पहाड़ियों को काट-छाँट कर पूरा ढालू बना दिया गया। पहाड़ियों के दूनों को वृक्षों से पाट दिया गया और तोपें चढ़ाने के लिए कई बुर्जियाँ बना डाली गईं। अब फ्राँसीसियों के लिये अंगरेजों पर हमला करना असंभव सा हो गया। इन सभी बातों के सिवा उसने निकट के कई स्थानों को खाली करा दिया था जिसके कारण खाद्य पदार्थों के अभाव में फ्राँसीसियों को बड़ी तकलीफें झेलनी पड़ीं। किन्तु अंगरेजी सेना का आधार लिस्बन होने के कारण वे आसानी से खाद्य पदार्थों को प्राप्त कर सकते थे।

१८१० ई० में वेलेस्ली ने मेसीना को बुसाको में हरा दिया और दुर्ग-पंक्तियों के पीछे चला गया। मेसीना के लिये पार करना तो कठिन था। अतः वह एक महीने तक दुर्ग-पंक्तियों के बाहर पड़ा रहा। भूख और बीमारी दोनों ही उसकी सेना को सताने लगी और उसके २५ हजार सैनिक मर गये। अतः उसे दूसरे साल स्पेन लौट जाने के लिए विवश होना पड़ा। और अब वेलेस्ली का मार्ग सुगम हो गया। उसने फोन्तेदी उनोरो और एलब्युरा पर दो विजय और प्राप्त कर ली।

वेलिंगटन का आक्रमण १८१२ ई०—१८१२ ई० में वेलिंगटन ने स्पेन में

प्रवेश किया। रूस पर आक्रमण करने के लिए नेपोलियन ने वहाँ से अपनी बहुत सी सेना हटा ली थी। वेलिंगटन ने 'बादायोज' और 'स्यूवदाद रौड्रिगो' नाम के दो किले को दो सप्ताह में नष्ट कर दिया। ये दोनों किले पुर्तगाल से स्पेन की ओर आने वाली सड़कों पर स्थित थे। इसके बाद और आगे बढ़कर उसने फ्राँसीसियों को सेलमान्का के युद्ध में परास्त कर राजधानी में पहुँचा। उसके पहुँचते ही जौसेफ भाग गया और फ्राँसीसी सेनापति सूल्त भी अपने स्थान से हट गया। मैड्रिड पर अधिकार कर लेने के बाद वह पुनः उत्तर में बर्गास की ओर बढ़ा। परन्तु खराब तोपखाने के कारण उसे सफलता नहीं मिली और उसके हजारों सैनिक खेत आये। फिर भी उसकी सारी योजनाएँ विफल तो नहीं हुई क्योंकि स्पेन के दक्खिनी प्रदेशों से फ्राँसीसियों को हटना पड़ा था।

विटोरिया तथा पिरेनीज के युद्ध १८१३ ई०—इसी बीच फ्राँसीसी सेना ने सेलमान्का से भागकर विटोरिया में शरण ली। जर्मनी से युद्ध होने के कारण इस समय उनकी शक्ति और भी क्षीण हो गयी थी। वेलिंगटन ने विटोरिया की सेना पर आक्रमण कर बुरी तरह परास्त कर डाला। जौसेफ और उसकी सेना ने भागकर बड़ी कठिनाई से अपनी रक्षा की। इसके बाद फिर पिरेनीज की लड़ाई हुई और उसमें भी फ्राँसीसी पराजित ही हुए। अब वेलिंगटन ने फ्राँसीसी सीमान्त पारकर बेयोन पर धावा बोल दिया।

प्रायद्वीप के युद्ध का महत्त्व—(१) सैनिक कार्रवाइयों के लिये ग्रेट ब्रिटेन को सुअवसर—यह युद्ध यूरोप के इतिहास में बड़ा ही महत्वपूर्ण है। नेपोलियन के पतन का यह एक प्रमुख कारण हुआ। ब्रिटेन को अपनी स्थल सेना का उपयोग करने के लिए एक अच्छा क्षेत्र प्राप्त हो गया। अब तक जो जल शक्ति थी, प्रायद्वीप को पाकर वह स्थल शक्ति भी बन गयी। समुद्र की रानी को पृथ्वी का राज्य भी मिल गया। ब्रिटेन और प्रायद्वीप की सम्मिलित शक्ति का सामना करना नेपोलियन के लिए सम्भव न हुआ। ब्रिटिश स्थल सेना की प्रतिष्ठा पुनः स्थापित हो गयी और स्पेन-वासियों को फ्राँसीसियों का मुकाबला करने के लिए प्रोत्साहन प्राप्त हो गया।

(२) प्रथम राष्ट्रीय युद्ध—यह प्रायद्वीप का युद्ध यूरोप में नेपोलियन के विरुद्ध प्रथम राष्ट्रीय युद्ध था। सेना की शक्ति सीमित होती है किन्तु एक राष्ट्र की अपरिमित होती है। स्पेन, जर्मनी तथा इटली के जैसा छोटे-छोटे राज्यों का समूह नहीं बल्कि एक राष्ट्र था। वहाँ राष्ट्रीयता की विजय हुई और इसकी सफलता से यूरोप के दूसरे राष्ट्र भी विद्रोह करने के लिये उत्साहित हुए।

(३) प्रथम दीर्घ कालीन युद्ध—यह प्रथम दीर्घ कालीन युद्ध था जिसे फ्राँन्स को

सामना करना पड़ा। अब तक जितने युद्ध हुए थे वे सभी अल्पकालीन थे जिनमें सफलता प्राप्त करना आसान था।

(४) स्पेनवासियों में उदार विचारों के प्रति सहानुभूति नहीं—प्रायद्वीप के लोगों में यूरोप के कुछ अन्य देशों के जैसा, क्रान्तिकारी तथा उदार विचारों के प्रति कोई विशेष सहानुभूति नहीं थी। अतः आक्रमणकारियों को वहाँ की जनसंख्या के किसी भाग से भी सहयोग नहीं मिल सका।

(५) शत्रु की अपार क्षति—इस युद्ध में मित्र राष्ट्रों की क्षति साधारण हुई। किन्तु नेपोलियन की अपार क्षति हुई। उसके धन और जन प्रचुर मात्रा में नष्ट हुए। वेलिंगटन के अनुमान से नेपोलियन के पाँच लाख सैनिक मारे गये। नेपोलियन ने स्वयं इस युद्ध को घाव श्राव (रनिंग सोर) कहा था जिसने उसे विनष्ट कर दिया।

(६) आक्रमण के लिये प्रतिकूल भौगोलिक स्थिति—स्पेन के विषय में एक कहावत ठीक ही कही जाती है कि यदि कोई छोटी सेना के साथ स्पेन पर आक्रमण करेगा तो उसकी हार हो जायगी, और यदि बड़ी सेना के साथ आक्रमण होगा तो सभी लोग भूखों मर जायेंगे। देश का अधिकांश भाग पहाड़ी है, यहाँ की सड़कें नदियों के समानान्तर में नहीं; बल्कि उनकी घाटियों से होकर निकली हुई रहती हैं। अतः यातायात के साधनों में बड़ी कठिनाई होती थी, जिसके कारण आवश्यकता के समय शीघ्र सहायता पहुँचाना कठिन कार्य था। लेकिन ब्रिटेन समुद्र के द्वारा सेना और रसद भेज देता था और वह किनारे के निकट ही अधिकतर युद्ध किया करता था।

फ्रांसीसी शक्ति विभाजित—प्रायद्वीपी युद्ध के कारण फ्रांस की सैनिक शक्ति विभाजित हो गई। यदि नेपोलियन की सेना प्रायद्वीप में व्यस्त नहीं होती तो सम्भवतः केन्द्रीय यूरोप में उसकी विजय हो जाती।

कैथोलिकों की सहानुभूति में कमी—फ्रांस और स्पेन दोनों ही प्रबल कैथोलिक राज्य थे। फ्रांस में नेपोलियन को कैथोलिकों का समर्थन प्राप्त था। लेकिन स्पेन पर चढ़ाई करने से अब उनकी सहानुभूति नेपोलियन के प्रति कम होने लगी थी। इन सभी कारणों से प्रायद्वीप का युद्ध नेपोलियन की सबसे बड़ी भूल मानी जाती है।

अन्य घटनायें १८०९–१८१२ ई०—महादेशीय नियम से क्रमशः सभी राज्य संकट में पड़ गये। १८१० ई० में नेपोलियन ने हालैंड के राजा को जो उसका भाई था। पदच्युत कर दिया, क्योंकि वह महादेशीय नियम का विरोधी था। रूस ने भी इसका विरोध किया था। नेपोलियन ने ६००,००० की एक महान् सेना लेकर रूस पर चढ़ाई कर दी। रूसियों को बोरोडिनो के संघातक युद्ध में हरा कर नेपोलियन मास्को

पहुँचा। लेकिन रूसियों ने अपनी राजधानी को भस्मी भूत कर डाला था। नेपोलियन के जीतने के लिये अब कुछ रह न गया था, अतः उसे वापस लौटना पड़ा। वापसी यात्रा बड़ी ही कष्टपूर्ण थी। रूसियों ने पीछे से हमला कर दिया। प्रचण्ड सर्दी के कारण भी बहुत से सैनिकों को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। सैनिकों में ८० प्रतिशत मृत्यु के शिकार हुये। रूस की सीमा पार करते करते लगभग ६० हजार सैनिक बच रहे किन्तु नेपोलियन अपने ३ मित्रों के साथ एक भाड़े की गाड़ी में फ्रांस लौट सका। अतः इतिहास की दुर्घटनाओं में इसका भी एक प्रमुख स्थान है। ऊपरी तौर से देखने पर तो सैनिकों का ही नाश मालूम पड़ता है किन्तु इससे भी अधिक क्षति हुई। इन सैनिकों के विनाश में साम्राज्य का पतन भी निहित था। अब नेपोलियन असाधारण व्यक्ति के रूप में नहीं रह गया। सभी जगह उसके विरुद्ध विद्रोह होने लगे।
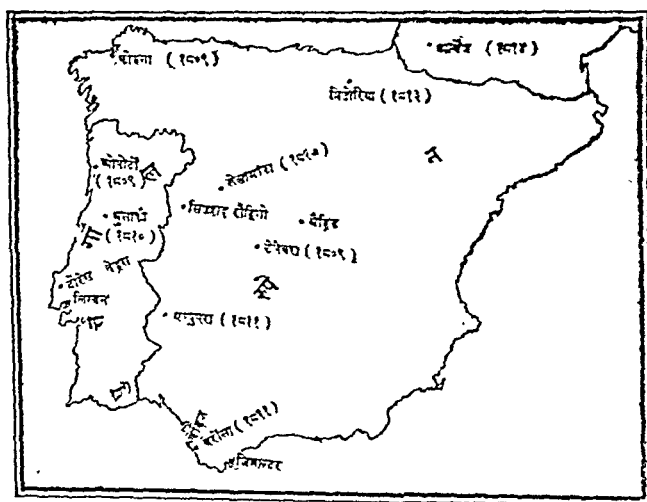
प्रायद्वीप का युद्ध (१८०८—१४ ई०)

चतुर्थ गुट्ट का निर्माण १८१२ ई०—१८१२ ई० में ब्रिटेन में कैसलरे वैदेशिक मन्त्री हुआ और १० वर्षों तक इस पद पर रहा। उसने फ्रांस के विरुद्ध रूस, प्रशिया आस्ट्रिया और स्वीडन को मिलाकर चौथे गुट्ट का निर्माण किया। यह बड़ा ही शक्तिशाली गुट्ट था। यही गुट्ट आखिरकार नेपोलियन को पराजित करने में समर्थ हो सका।

लिपजिग का युद्ध १८१३ ई०—१८१३ ई० में नेपोलियन के रूसी संकट से

फायदा उठाकर प्रशिया ने उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। और जर्मनी में राष्ट्रीय जागृति होने लगी। फ्रांस के विरुद्ध स्वतन्त्रता युद्ध छेड़ दिया गया और सभी राज्यों ने नेपोलियन की ओर से अपनी श्रद्धा हटा ली। अतः युद्ध शुरू हो गया। ड्रेसडेन में नेपोलियन ने विजय प्राप्त की किन्तु लिपजिग में वह बुरी तरह हार गया। लिपजिग का युद्ध राष्ट्रों के युद्ध के नाम से भी प्रसिद्ध है। वास्तव में यह पहला मौका था, जब कि नेपोलियन को स्वयं पराजित होना पड़ा। अब मित्र राष्ट्रों ने नेपोलियन को राईन सीमा देकर सन्धि करनी चाही लेकिन वह तैयार नहीं हुआ।

फ्रांस पर आक्रमण और नेपोलियन का राज्यत्याग १८१४ ई०—१८१४ ई० तक दो दिशाओं से फ्रांस पर आक्रमण कर दिया गया। बीस वर्षो के बाद अपनी सीमा की रक्षा करने के लिये उसे बाध्य होना पड़ा। दक्खिन पश्चिम से वेलिंगटन ने चढ़ाई की। उसने फ्रांसीसियों का पीछा किया और आर्थेज तथा तूलूज के युद्धों में उन्हें हरा दिया। उत्तर पूरब से हमला कर मित्रराष्ट्रों ने पेरिस को अपने कब्जे में कर लिया था।

पेरिस की प्रथम सन्धि १८१४ ई०—मई १८१४ ई० को पेरिस की प्रथम सन्धि हुई। इसके अनुसार नेपोलियन को अब गद्दी त्यागना पड़ा और उसे शासन करने के लिये टस्कनी के निकट एल्बाद्वीप दे दिया गया।

बोर्बन घराने के ही एक व्यक्ति को लूई १८ वें के नाम से फ्रांस की गद्दी पर बैठा दिया गया। यूरोप की राजनीतिक समस्या हल करने के लिये यह निश्चय किया गया कि वियना में एक यूरोपियन काँग्रेस बुलाई जाय।

आंग्ल-अमेरिकन युद्ध १८१२-१४ ई०—इसी बीच में १८१२ ई० में ब्रिटेन तथा संयुक्तराष्ट्र अमेरिका में भी युद्ध छिड़ गया। महादेशीय नियम के कारण अमेरिका और दूसरे तटस्थ राज्यों की स्थिति बड़ी भयावनी हो गई थी। यदि किसी तटस्थ राज्य का जहाज किसी बृटिश बन्दरगाह की ओर जाता या वहाँ से आता दीख पड़ता तो फ्रांसीसी उसे रोक देते और यदि उनकी दृष्टि में वह बच कर निकल जाता तो अंगरेज उसे पकड़ लेते। इसके सिवा अंगरेज अमेरिका के व्यापारी जहाजों की तलाशी भी किया करते थे। अतः १८१२ ई० में ब्रिटेन तथा अमेरिका के बीच युद्ध छिड़ गया। अमेरिकनों ने अंगरेजों के ५०० व्यापारी जहाजों को अपने अधिकार में कर लिया। परन्तु वे कैनाडा में स्थल युद्ध में विफल रहे। फिर १८१४ ई० में नेपोलियन के पद त्याग के बाद ब्रिटेन ने अमेरिका में एक विशाल जहाजी बेड़ा तथा कुशल सैनिक भेजा। लेकिन साल के अन्त तक दोनो देशों के बीच सन्धि हो गई।

१८१५ के सौ दिन—वियना में काँग्रेस की बैठक हो रही थी लेकिन मार्च

१८१५ ई० में नेपोलियन ८०० सेना के साथ एल्बाद्वीप से भाग कर फिर फ्रांस चला आया। लुई गद्दी छोड़ कर हट गया। अब नेपोलियन फिर इसपर बैठ गया और जून तक विराजमान रहा। मार्च से जून तक का यह पुनर्स्थापन काल 'सौ दिन' के नाम से प्रसिद्ध है। नेपोलियन ने कुछ शासन सुधार किया और शान्ति तथा उदारता की नीति घोषित की। उसके कई पुराने सैनिकों ने उसका साथ दिया। लेकिन अन्य किसी ने उसमें विश्वास नहीं किया और वियना काँग्रेस ने उसे विश्व-शान्ति का शत्रु घोषित कर दिया। युद्ध पुनः शुरू हो गया और मित्रराष्ट्र नेपोलियन का अन्त करने के लिये कटिबद्ध हो गये। मित्रराष्ट्रों की सेना में अधिकतर अंगरेज, डच, जर्मन और बेलिजियन थे और इसका सेनापति था वेलिंगटन। ब्लूखर नाम का एक प्रशियन सेनापति भी बड़ा योग्य था। किन्तु नेपोलियन ने प्रशियनों को लिगनों में हरा दिया और यह उसकी अन्तिम विजय रही। उसके दो ही दिन बाद १८ जून १८१५ ई० में वाटरलू का प्रसिद्ध युद्ध हुआ। नेपोलियन बहुत ही बुरी तरह से परास्त हुआ। उसने अंगरेजों के हाथ दूसरी बार आत्मसमर्पण कर दिया। अटलांटिक समुद्र स्थित सेन्ट हेलना द्वीप में ब्रिटिश सरकार ने उसे एक कैदी के रूप में भेज दिया। छः वर्षों के बाद वहीं पर उसकी मृत्यु भी हो गई।

वाटरलू के युद्ध का महत्त्व—यह युद्ध इतिहास के निर्णायक युद्धों में प्रमुख स्थान रखता है। अब नेपोलियन का पतन और उसके युद्ध का अन्त निश्चित रूप से हो गया। इससे इंगलैंड की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई। अब फ्रांस और ब्रिटेन की दुश्मनी का अन्त हो गया। और दोनों एक दूसरे के मित्र बने रहे। इस तरह वाटरलू का युद्ध आंग्ल फ्रान्सीसी नाटक का अन्तिम दृश्य प्रमाणित हुआ; अब एक युग का अन्त हो दूसरे युग का पदार्पण हुआ।

फ्रांस की सफलता विफलता के कारण—इस तरह २१ वर्षों तक लगातार भीषण युद्ध चलता रहा। प्रारम्भ से कुछ समय तक फ्रान्स को अद्भुत सफलता मिली किन्तु उसका अन्त उसकी बुरी तरह पराजय में ही हुआ। उसकी सफलता विफलता के तो कई कारण हैं किन्तु दोनों का मूल कारण महान् भावनाओं में निहित है।

सफलता के कारण-(१) उच्चआदर्श-प्रारम्भ में फ्रान्सीसियों के उद्देश्य बड़े ही महान् और उच्च थे। इन्होंने अपने देश तथा यूरोप में निरंकुशता के विरुद्ध 'स्वतंत्रता' समानता तथा भ्रातृत्व की भावनाओं का प्रचार किया। वे इन भावनाओं के कट्टर समर्थक थे। अतः सभी जगह पीड़ित तथा शासित जनता ने उनका मुक्तिदाता के रूप में हृदय से स्वागत किया। इटली, जर्मनी, हालैंड आदि सभी देशों में यही बात हुई। क्रान्ति की नई भावनाओं का युद्ध प्राचीन स्वेच्छाचारी शासन के प्रतिनिधि

राजाओं के साथ हुआ। अतः फ्रांसीसियों ने जनता की सहानुभूति अपनी ओर प्राप्त कर ली थी और सर्वत्र राजाओं की पराजय हो गई।

(२) यूरोप के राजाओं में एकता का अभाव—इसके सिवा इनकी सफलता के कुछ अन्य कारण भी थे। जैसा कि पहले हम लोग देख चुके हैं। यूरोप के राजाओं में एकता नहीं थी। पारस्परिक स्वार्थ को लेकर वे एक दूसरे के विरोधी थे। इनके न तो विचार एक समान थे और न इनकी योजनाएँ।

(३) पोलैंड की स्थिति—इसी समय पोलैंड की समस्या भी उठ खड़ी हुई थी और रूस, प्रशिया तथा आस्ट्रिया फ्राँस की अपेक्षा इसी समस्या को हल करने में व्यस्त थे।

लेकिन फ्राँसीसियों में क्रान्तिजनित भावनाओं के कारण नये जोश और उत्साह का संचार हुआ था। इनमें एकता थी। उन्हें नेपोलियन के जैसा प्रबल तथा कुशल नायक भी प्राप्त था।

विफलता के कारण—(१) फ्राँस की निरंकुशता—किन्तु समय और सफलता की प्रगति के साथ फ्राँसीसियों में महान् परिवर्तन होने लगा। यह एक प्रसिद्ध लोकोक्ति है कि उपदेश से उदाहरण अधिक अच्छा है। किन्तु फ्राँसीसी अपने महान् आदर्शों और उद्देश्यों से क्रमशः दूर होते गये। अब उनके उपदेश और व्यवहार में अन्तर पड़ने लगा। यह स्पष्ट हो गया कि वे अपने पूर्व के उद्देश्यों के विरूद्ध कार्य करने लगे। वे सर्वत्र हिंसात्मक तरीकों से राष्ट्रों की स्वतंत्रता कुचलकर अपनी दृढ़ सत्ता स्थापित करने लगे। लड़ाई के समर्थन में लड़ाई होने लगी। जनता के अरमान तथा भावनाओं की उपेक्षा की जाने लगी। और उनका हरेक तरह से शोषण किया जाने लगा।

(२) महादेशीय नियम—ऐसी ही परिस्थिति में नेपोलियन ने 'महादेशीय नियम' (कान्टीनेन्टल सिस्टम) प्रचलित कर बड़ी भूल की। इसके अनुसार महादेश के सभी बन्दरगाहों का निरोध कर डाला गया। इससे सामान्य व्यापार में बड़ी क्षति पहुँची। दैनिक जीवन की आवश्यक वस्तुओं के मूल्य में बहुत वृद्धि होने लगी। इससे सर्वसाधारण को असीम कष्ट होने लगा। और वे फ्राँसीसियों को बुरी दृष्टि से देखने लगे। एक व्यक्ति की महत्त्वाकाँक्षा की पूर्त्ति के लिये सभी लोग अपने भोग-विलास के रहन-सहन का त्याग क्यों करते।

(३) जागृत राष्ट्रीय देश भक्ति—अब फ्राँसीसी मुक्तिदाता तथा शुभ चिन्तक के बदले पीड़क और शोषक समझे जाने लगे। अब उनकी शक्ति का आधार भक्ति नहीं, भय मात्र रह गया। पहले का शासन यद्यपि निरंकुश था किन्तु स्वदेशी था। फ्राँसी-

सियों का शासन निरंकुश तो था ही, विदेशी भी था। अतः यूरोप के देशों में राष्ट्रीयता तथा देशभक्ति की भावनाओं को भीषण चोट पहुँचने लगी जिससे वे जाग्रत हो उठे। फ्रांसीसी क्रान्ति ने ही इन भावनाओं को जन्म दिया था। अतः फ्राँसीसियों के अत्याचार तथा अन्याय के कारण राष्ट्र विरोधी भावनाओं का विकास होने लगा। लेकिन यह विकास नेपोलियन की विशाल सेना के कारण अचानक न हुआ; बल्कि इसकी गति क्रमशः रही। अन्त में सारे यूरोप की जनता एक नृशंस और विदेशी शासक के प्रतिकूल हो गयी और अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध हो उठी। अब नेपोलियन का पतन निश्चित और अनिवार्य हो गया। स्पेन, जर्मनी तथा रूस इन सभी जगहों में नेपोलियन के विरुद्ध भीषण विद्रोह की आग धधक उठी। प्रायद्वीप युद्ध प्रथम राष्ट्रीय युद्ध था जिसने नेपोलियन को कई वर्षों तक विरोधी शक्तियों का सामना करने के लिये बाध्य किया और इसी समय से नेपोलियन के सर्वनाश का श्री गणेश भी हुआ। दूसरे राष्ट्र भी स्पेन तथा पुर्तगाल की उदाहरण की नकल करने लगे। लिपजिग के युद्ध में सभी प्रमुख राष्ट्र शामिल हुए थे जिसमें प्रथम बार नेपोलियन की स्वयं पराजय हुई। इसीलिए लिपजिग के युद्ध को ठीक ही राष्ट्रों का युद्ध कहा गया है। अब यह भी स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्रीय देश भक्ति की भावना ने ही नेपोलियन को विनष्ट किया।

(४) ग्रेट ब्रिटेन का निरंतर विरोध--(क) राष्ट्रीय देश-भक्ति की भावना—लेकिन फ्राँस तथा नेपोलियन की पराजय में ग्रेट ब्रिटेन का भाग नहीं भुलाया जा सकता। इसका अधिकांश श्रेय उसी को प्राप्त है। नेपोलियन के सर्वनाश में ब्रिटेन ही प्रधान साधन था। यह सत्य है कि यूरोप के अन्य राष्ट्रों ने भी फ्रांस के विरुद्ध लोहा लिया था। आस्ट्रिया ने युद्ध में विशेष समय तक सक्रिय भाग लिया था किन्तु लिपजिग के युद्ध के पहले चार बार पराजित होकर उसे सन्धि करने के लिये विवश होना पड़ा था। रूस तथा प्रशिया ने भी युद्ध में भाग लिया था लेकिन अल्पकाल के लिए ही। स्पेन तथा जर्मन रियासत अपना पक्ष बदलते रहते थे। सिर्फ ग्रेट ब्रिटेन ही अकेला एक देश था जो युद्ध में कमर कसकर निरन्तर डटा रहा और एँड़ी चोटी का पसीना एक करने पर भी नेपोलियन उसका बाल बाँका नहीं कर सका। सेन्ट-पीटर्सबर्ग, स्टौकहौम, क्रिश्चियाना तथा कुस्तुनतुनियाँ (कौन्सटेन्टनोपुल) को छोड़कर यूरोप की प्रत्येक राजधानी में फ्रांसीसी सेनाएँ प्रवेश कर चुकी थीं, किन्तु लन्दन तक इनकी पहुँच न हो सकी।

अंगरेजों में भी राष्ट्रीयता तथा देश-भक्ति की भावना काम कर रही थी। वे इसी भावना से प्रेरति होकर फ्राँस के विरुद्ध लड़ रहे थे। अतः उनमें अद्‌भुत उत्साह,

अध्यवसाय तथा धैर्य का संचार हुआ था। उनकी तथा मित्रराष्ट्रों की पराजय होती थी, फिर भी वे अपने उद्देश्य से विचलित तथा निराश नहीं होते थे। यह ठीक है कि राष्ट्रीयता तथा देश भक्ति की भावना ने ही नेपोलियन का सर्वनाश किया, किन्तु इस दिशा में भी इंगलैंड का ही नेतृत्व रहा था। इंगलैंड में यूरोप के अन्य देशों जैसा स्वेच्छाचारी शासन नहीं था। नेपोलियन को वहाँ के राजा से नहीं बल्कि समूचे अंग्रेजी राष्ट्र से सामना करना पड़ा था। अतः 'इंगलैंड ने ही बहुत से राज्यों के विजेता को यह सबक सिखाया कि किसी राष्ट्र को जीतना कितना कठिन है।'[1]

(ख) गुट्ट-निर्माण—ब्रिटेन ने फ्रांस के विरुद्ध चार बार गुट्ट निर्माण किया किन्तु स्थलीय युद्धों में नेपोलियन की जीत होने से गुट्ट शीघ्र ही भंग हो जाते थे और फ्रांस का सामना करने के लिये ब्रिटेन को अकेला ही विवश होना पड़ता था। जब एक गुट्ट टूट जाता था तो सुअवसर पाकर ब्रिटेन शीघ्र ही दूसरा गुट्ट निर्मित कर लेता था। इस तरह फ्रांस को वह कभी चैन और शान्ति की साँस नहीं लेने देता था।

(ग) आर्थिक सहायता—ब्रिटेन ने केवल गुट्टों का ही निर्माण नहीं किया, गुट्ट के सदस्यों को यथाशक्ति आर्थिक सहायता भी दी। औद्योगिक क्रान्ति के कारण वह दूकानदारों का देश बन गया था और उसके पास भरपूर धन-दौलत संचित हो रही थी। अतः दूसरे राष्ट्रों को भी धन से सहायता कर वह फ्रांस का विरोध करने के लिए समर्थ बनाये रखा।

(घ) स्पेन तथा पुर्तगाल को सहायता—ब्रिटेन ने प्रायद्वीप के स्पेन तथा पुर्त्तगाल को धन जन से खूब मदद की। वहाँ उसने देश-भक्ति की भावनाओं को जाग्रत किया, जिससे प्रेरित होकर वहाँ के लोग गुरिल्ला युद्ध करने लगे। इस तरह यह युद्ध दीर्घकाल तक चलता रहा। इससे यूरोप के दूसरे राज्यों को अपनी शक्ति संचित करने के लिए पूरा मौका प्राप्त हो गया।

इस युद्ध में विजय का श्रेय ब्रिटिश सेनापति वेलिंगटन को प्राप्त था। उसी के चमत्कारपूर्ण युद्ध कौशल से मित्रराष्ट्रों की विजय हुई और प्रायद्वीप से फ्रांसीसियों का बहिष्कार हो गया। १८१५ ई० में वाटरलू के अन्तिम युद्ध में भी उसी की तत्परता तथा जागरूकता के कारण मित्र-राष्ट्रों की जीत हो सकी और नेपोलियन की आशा पर सदा के लिए पानी फिर गया।

समुद्री शक्ति का उपयोग—लेकिन सबसे बढ़कर ब्रिटेन की प्रधानता उसकी सामुद्रिक शक्ति के ऊपर निर्भर करती है। फ्रांसीसी क्रान्ति तथा नेपोलियन के युद्धों के समय यह बात विशेष रूप से सिद्ध हो जाती है। इसी के बदौलत फ्रांसीसी आधि-

[1] टाउट 'ऐन ऐडवान्स हिस्ट्री ऑफ ग्रेट ब्रिटेन, ६०८

पत्य से ब्रिटेन तथा यूरोप की रक्षा हो सकी और नेपोलियन का हौसला धूल में मिल गया। विश्व तथा नेपोलियन के बीच विस्तृत समुद्र ही स्थित था जिस पर नेपोलियन अपना प्रभुत्व स्थापित न कर सका। अंग्रेजों ने समुद्र पर कई बार गौरवपूर्ण विजय प्राप्त की। १७९७ ई० में सेंट वींसेंट और केम्पर-डाउन की विजयों ने स्पेन तथा हॉलैंड की जलशक्ति को नष्ट कर डाला। इन्हीं राज्यों से जल सेना प्राप्त करने के लिए फ्रान्स को बड़ी आशा थी किन्तु अब वह आशा जाती रही। १७९८ ई० में नील की विजय ने नेपोलियन की पूर्वी देशों को जीतने की सारी योजनाओं का अन्त कर डाला। १८०१ ई० में कोपेनहेगेन की जीत से उत्तरी राज्यों का सशस्त्र तटस्थता नाम का गुट टूट गया और बाल्टिकसागर पर अंग्रेजों का आधिपत्य कायम रह गया। १८०५ ई० में ट्राफलगर की विजय ने फ्राँसीसियों की मिट्टी पलीद कर दी। समुद्र पर अङ्ग्रेजों का आधिपत्य सुरक्षित रह गया और अब ब्रिटेन पर आक्रमण होने का भय नहीं रह गया। इसके बाद में नेपोलियन ने ब्रिटेन के विरुद्ध पुनः समुद्री युद्ध करने का साहस नहीं किया। अपनी सामुद्रिक शक्ति के ही कारण स्पेन तथा पुर्तगाल को संकट के समय उचित सहायता देने में समर्थ हो सका। वास्तव में उसकी प्रबल जल-शक्ति ने ही उस पर कोई भीषण संकट नहीं उपस्थित होने दिया। और दुर्दिन के समय क्षति होने से उसकी रक्षा कर ली।

वियना कांग्रेस और पेरिस की सन्धि (१८१५ ई०)—वियना की कांग्रेस ने पेरिस की सन्धि का अपना कार्य समाप्त किया। फ्रान्स के साथ उदार व्यवहार किया गया। इसके दो कारण थे :—

(क) फ्रांस की गद्दी पर बोर्बन घराने के लूई १८ वें को ही फिर बैठाया गया अतः पुराने राजतंत्रीय फ्रांस से ही सन्धि की गयी, क्रान्तिकारी या नेपोलियन फ्रांस से नहीं।

(ख) ब्रिटेन के प्रतिनिध कैसलरे और विलिंगटन ने बीच बिचाव की नीति अपनायी ताकि फ्राँस भविष्य में बदला की भावना न रख सके।

सन्धि की शर्तें—फ्राँस को १७९१ ई० की सीमा लौटा दी गयी, क्रान्ति तथा नेपोलियन के समय के जीते हुए प्रदेश फ्रान्स को खोना पड़ा। बोर्बन काल के सभी प्रदेश सुरक्षित रखे गये।

ब्रिटेन ने बहुत से जीते हुए प्रदेशों को लौटा दिया, परन्तु निम्नलिखित स्थानों को अपने कब्जे में रखा :—

(क) यूरोप में—उत्तरी समुद्री स्थित हेलिगोलैंड (डेनमार्क से प्राप्त)

(ख) अमेरिका में—ट्रीनीडाड (स्पेन से प्राप्त)

(ग) अफ्रीका और भारतीय समुद्र में--केपकोलोनी और सिलोन (डचों से प्राप्त) मौरिशस (फ्रांस से प्राप्त)

इटली में बहुत से राजाओं के राज्यों को लौटा दिया गया, किन्तु मिलान, वेनिस तथा लोम्बार्डी आस्ट्रिया को दिया गया। प्रशिया को राइन नदी की बायीं ओर टान और पोजन के भाग और १७७२ ई० में प्राप्त पोलैंड के भाग मिले। जर्मनी
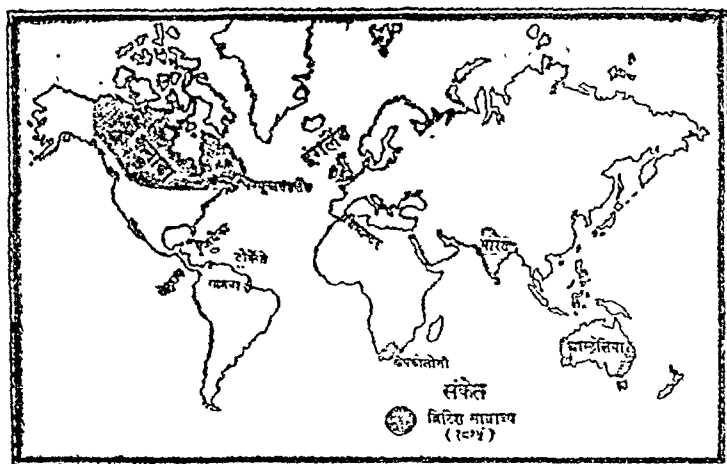
१८१५ ई० में ब्रिटिश साम्राज्य

में २४ राज्यों का एक संघ आस्ट्रिया के सभापतित्व में स्थापित किया गया। स्वेडन को नौरवे और रूस को फिनलैंड तथा वारसा राज्य का अधिकांश भाग दे दिया गया। वेल्जियम और हालैंड को मिलाकर एक संयुक्त राज्य स्थापित कर दिया गया।

इस प्रकार यूरोप के राजाओं ने जनता की उपेक्षा कर अपने स्वार्थ को ही सर्वोपरि रखा। अतः उपर्युक्त समझौते के द्वारा स्थायी शान्ति कायम न रह सकी।

अध्याय ३०

छोटे पिट का आलोचनात्मक अध्ययन

पिट यद्यपि पूर्ण रूप से आदर्श नहीं था, तो भी उसकी गणना बड़े प्रधान मंत्रियों में होती है। उसके कार्यों तथा नीति के आलोचनात्मक अध्ययन से उपर्युक्त कथन स्पष्ट हो जाता है।

(१) शान्ति सचिव के रूप में १७८३–९३ कैबिनेट का विकास—१७८३ ई० में २४ वर्ष की अवस्था में पिट प्रधान मन्त्री हुआ। पद ग्रहण करने के बाद मंत्रि-मण्डल की स्थापना में उसे बड़ी कठिनाई हुई। कौमन्स सभा में उसका बहुमत नहीं था। अतः लोगों का अनुमान था कि उसका शासन बहुत समय टिक नहीं सकेगा। परन्तु पिट अध्यव्यवसायी और आत्म विश्वासी था। कौमन्स सभा में हार हो जाने के बाद भी उसने कार्य स्थगित नहीं किया। वह न तो पदत्याग ही करता था, न कौमन्स सभा को भंग ही। अनुकूल समय आने पर ३ महीने के बाद ही उसने पार्लियामेंट भंग किया और अप्रैल १७८४ ई० में नया चुनाव हुआ। सम्पूर्ण राष्ट्र ने उस चुनाव में बड़ी ही दिलचस्पी से भाग लिया था। आधुनिक इतिहास में यह प्रथम निर्वाचन था जिसमें किसी विशेष राजनैतिक नेता में विश्वास या अविश्वास का प्रश्न उपस्थित हुआ था। पिट की पर्याप्त बहुमत से विजय हुई। वह पहले से राजा का तो विश्वासपात्र था ही, अतः उसकी यह विजय राजा की भी विजय थी। साथ ही इस विजय ने यह भी प्रदर्शित कर दिया कि वह राष्ट्र का भी विश्वासपात्र था। ह्विग लोग अपनी लोकप्रियता खो चुके थे और अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर विधान की पवित्रता पर कालिमा का दाग लगा चुके थे। पिट ने इसका विरोध किया था और राष्ट्र ने उसे निर्वाचित कर उसमें अपने विश्वास का परिचय दिया। इस प्रकार पिट प्रथम प्रधानमंत्री हुआ जो राजा और राष्ट्र दोनों ही का समान रूप से विश्वासपात्र था।

लेकिन यद्यपि पिट राजा का प्रियपात्र था और उसके विशेषाधिकारों का भी समर्थक था, फिर भी वह राजा का अन्धानुगामी नहीं था। वह राजा को सहयोग

देता था और उसके प्रति कृतज्ञ भी रहता था, फिर भी वह लार्ड नौर्थ के समान राजा की इच्छा की पूर्ति के लिये न तो साधनमात्र था और न तो न्यूकैसल के जैसा राजा का गुमाश्ता ही था। वास्तविक अर्थ में पिट प्रधान मन्त्री था। राजा के लिये वह अपनी अन्तः प्रेरणा कुचलने के लिये सर्वदा तैयार नहीं था और प्रायः अपने विचारानुसार ही काम भी करता था। उसने मंत्रिमंडल से राजा के पारिवारिक कर्मचारियों को निकाल बाहर कर दिया था और राजा की इच्छा के प्रतिकूल भी हिन्दुस्तान के गवर्नरजेनरल वारेन् हेस्टिंग्स के विरुद्ध अभियोग का भी समर्थन किया था। इस तरह उसने कैबिनेट में प्रधानमंत्री की प्रमुखता पर विशेष जोर देकर इस पद को दृढ़तर बना दिया।

पार्लियामेंटरी प्रणाली का पुनरुत्थान—उसने पार्लियामेंटरी प्रणाली की नींव भी सुदृढ़ कर डाली। १७८४ ई० के बाद से ही दो संगठित दलों की प्रतिद्वन्दिता अंगरेजी राजनीति की विशेषता बनने लगी। जार्ज तृतीय ने दलबन्दी प्रथा का अन्त नहीं किया था। यद्यपि ह्विग लोग अब कमजोर हो गये थे, लेकिन वे अब सुधर गये थे, और फौक्स जैसा व्यक्ति उनको नेता प्राप्त हो गया था। इधर पिट ने एक नई टोरी पार्टी का संगठन किया था जिसमें पुराने टोरी, बड़े पिट के अनुगामी ह्विग, और राजमित्र भी शामिल थे। इस प्रकार फौक्स और पिट दो प्रतिद्वन्दी दल के नेता थे। इन्हीं दोनों पार्टियों ने गत निर्वाचन में भाग लिया था और उसमें फौक्स के १६० समर्थकों की हार हो गयी थी और पिट को बहुमत प्राप्त हुआ था। इस तरह वालपोल के जैसा पिट कौमन्स सभा में बहुमत के द्वारा शासन करता था, परन्तु पिट का बहुमत बुरे तरीकों से खरीदा हुआ नहीं था बल्कि यह उसकी पार्टी की राजभक्ति पर निर्भर था।

वह पार्लियामेन्ट के अधिकारों का भी बड़ा समर्थक था। १७८८ ई० में जब राजा के प्रतिनिधित्व का प्रश्न उठा था तो उसने कौमन्स सभा में इस आशय का एक बिल पेश किया जिसके द्वारा प्रतिनिधि के अधिकारों की सीमा निश्चित कर दी गयी। इस प्रकार उसने पार्लियामेन्ट के अधिकारों को भी सुरक्षित किया।

वस्तुतः वह एक पार्लियामेन्टरी शासक था और पार्लियामेंटरी शासन के विकास में उसने एक नये युग का सृजन कर दिया। अतः यह स्पष्ट है कि उसके प्रधान मंत्रित्व के अभाव में ग्रेटब्रिटेन का राजनैतिक इतिहास दूसरा ही होता।

लौकिक जीवनस्तर का उत्थान—पिट ने केवल राजनैतिक क्षेत्र को ही प्रभावित नहीं किया बल्कि दूसरे क्षेत्र में भी उसके व्यक्तित्व की गहरी छाप पड़ी। उसने अपने पिता के समान सार्वजनिक क्षेत्र को परिष्कृत किया, उसके पिता ने

जिस कार्य को आरम्भ किया था उसमें उसने और आगे बढ़ने की चेष्टा की और राष्ट्र का नैतिक स्तर उच्चतर किया। अङ्गरेजी लोक जीवन के उन्नत करने में किन्हीं दो व्यक्तियों का इतना असर न पड़ा जितना इन दोनों पिता पुत्र का।

आर्थिक प्रगति—वह एक महान् अर्थशास्त्री था और आर्थिक क्षेत्र में उसके महत्वपूर्ण सुधारों को हम लोग पहले ही देख चुके हैं। उस समय की आर्थिक स्थिति बड़ी ही दोष पूर्ण थी किंतु उसके सुधारों से बहुत ही लाभ हुए। चोर बजारी रुक गई, घाटा की जगह बचत होने लगी। राष्ट्रीय साख पुनः स्थापित हो गई। अमेरिकन युद्ध से ब्रिटेन की जो अपार क्षति हुई उसकी पूर्ति सुविधापूर्वक शीघ्र ही होने लगी और फ्राँस की क्रान्ति जनित घोर संकटों का सामना करने के लिए ब्रिटेन सतर्क तथा उपयुक्त हो गया।

अर्थशास्त्री की दृष्टि से उसकी त्रुटियाँ—लेकिन एक निपुण अर्थशास्त्री होते हुए भी यहाँ उसने अपनी कुछ त्रुटि का भी परिचय दिया। उसने राष्ट्रीय ऋण चुकाने के लिए जो योजना बनाई वह विशेष सफल न हो सकी। शान्तिकाल के लिए वह योजना उपयुक्त थी, पर युद्ध काल के लिए बिलकुल नहीं क्योंकि युद्ध के समय वह कर्ज तीव्रगति से बढ़ने लगा। अतः सिंकिंग फन्ड की योजना त्याग देनी पड़ी। उसने युद्ध की अवधि के सम्बन्ध में गलत अनुमान कर नये टैक्सों को न लगाकर पुराने टैक्सों को ही बढ़ा दिया और बहुत कड़े सूद पर कर्ज लेना आरम्भ किया। इससे राष्ट्र की भीषण क्षति हुई। लेकिन युद्ध जनित विषम परिस्थितियों का ख्याल कर पिट की इन त्रुटियों पर विशेष जोर नहीं दिया जा सकता। उसकी योजना शान्ति काल के लिये ही बनी थी। पिट ने साम्राज्य सम्बन्धी समस्याओं को बड़ी ही कुशलता से हल किया। उसने कनाडा में बसनेवाले अंग्रेजो और फ्रांसीसियों के झगड़े को कम किया और उन्हें स्वायत्त शासन का कुछ अंश देकर औपनिवेशिक स्वराज्य का बीजारोपण किया।

साम्राज्यवादी पिट—उसने आस्ट्रेलिया में स्वतन्त्र नागरिकों की आबादी को प्रोत्साहन दे इस महादेश के विकास में सहायता पहुँचायी।

उस समय भारत की स्थिति भी संकटापन्न हो गयी थी। व्यापारिक कम्पनी के हाथ में राजनैतिक सत्ता जाने से अव्यवस्था फैलने लगी थी। पिट ने अपने सुधार नियम के द्वारा सुव्यवस्था स्थापित की। उसकी व्यवस्था की अच्छाई का सबूत इसीसे मिल जाता है कि वह १७८४ ई० तक जारी रही और यदि तथाकथित सिपाही विद्रोह न होता तो कुछ और समय तक जारी रहती। लार्ड कार्नवालिस तथा वेलेस्ली जैसे योग्य गवर्नर जेनरल को नियुक्त करने का श्रेय भी पिट को ही था।

सुधारवादी पिट और उसकी कमजोरियाँ—सुधारवादी की दृष्टि से उसे पर्याप्त सफलता न मिली और इसके लिए उसकी कटु आलोचना की जाती है। उसे धोखेबाज और विश्वासघाती समझा जाता है। वह उदार विचार का टोरी था और सुधार का पक्षपाती। देश भी सुधार के लिए उत्सुक था। अतः सुधारकों ने निर्वाचन में उसके ही पक्ष में अपना मत देकर उसे सफल बनाया। किंतु हाथ में जब सत्ता आयी, जब उसका उद्देश्य पूरा हो गया तब वह सुधार की ओर से उदासीन हो गया और इसके समर्थकों को निराश कर दिया। यदि १७९३ ई० तक कई सुधार हो जाते तो देश बाद की बहुत सी क्षतियों से बच जाता। सुधार के लिए वही उपयुक्त समय था। किन्तु पिट ने वैसा न कर देश को बहुत क्षति पहुँचायी।

१७९३ ई० के बाद ४० वर्षों तक सुधार कार्य्य बिलकुल स्थगित रहा। फ्राँसीसी युद्ध के समय अपने शासन के १० वर्षों तक[1] तो पिट स्वयं निरंकुश शासक बन गया। बृटेन जैसे रूढ़िवादी देश में अपूर्व दमन नीति अपनाकर आतंक का राज्य स्थापित कर दिया। इस तरह कठोर और अन्यायपूर्ण आलोचनाओं के द्वारा उसकी धवल कीर्ति में कलंक का टीका लगाया जाता है। परन्तु यदि व्यापक और उदारदृष्टि से विचार किया जाय तो पिट इन आलोचनाओं के योग्य नहीं दीख पड़ता।

पिट की शान्ति-प्रियता और सच्चाई—वह स्वभाव से शान्ति प्रिय व्यक्ति था। अतः वह अनावश्यक किसी से झगड़ा मोल लेना नहीं चाहता था। बल्कि, कुछ हानि उठाकर भी देश में आन्तरिक शान्ति स्थापित रखना चाहता था क्योंकि उसकी दृष्टि में यह एक बड़ी बहुमूल्य चीज थी। इसीलिए योजनाओं का विरोध होने पर भी वह संकटापन्न स्थिति उत्पन्न करना नहीं चाहता था। यह ठीक है कि पिट शक्ति-लोलुप और महत्वाकाँक्षी था, पर उसकी लोलुपता और महत्वाकांक्षा में भी महानता थी। जिसने ब्रिटेन के लौकिक जीवन का नैतिक स्तर ऊँचा किया, वह व्यक्तिगत स्वार्थ साधन की ही बात कब सोच सकता था। प्रारम्भ में ३ महीने तक वह राजा का ही सहारा पाकर प्रधान मंत्री रहा और इसी के लिये वह उसके प्रति कृतज्ञ भी बना रहा; तो फिर जिन निर्वाचनों का सहारा पाकर वह १९ वर्षों तक प्रधान मंत्री के पद पर आरूढ़ रहा, उनके प्रति वह कब और कैसे कृतघ्न बन सकता था! फिर भी, जब राजा के हस्तक्षेप करने से वह कैथोलिक मुक्ति सम्बन्धी अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने में असमर्थ रहा तो पदत्याग करने से भी वह बाज नहीं आया।

सुधार-योजनाओं की असफलता के कारण—पिट सुधार की आवश्यकता

[1] १७९३—१८०१ ई०

१८०४—१८०६ ई०

पूर्ववत् अनुभव करता था। इसके लिए वह प्रयत्नशील भी था और अपने विचारों को दूसरों के सामने उपस्थित करता था। लेकिन घोर विरोध होने पर वह उदासीन हो बैठ जाता था। जार्ज और फौक्स उसके सुधार के मार्ग में दो बड़े कण्टक थे। जार्ज के ही विरोध से वह कैथोलिकों को मुक्ति देने में और फौक्स के विरोध से आयरिशों के साथ व्यापारिक स्वतंत्रता स्थापित करने में असमर्थ रहा। इतना ही नहीं, उस समय कौमन्स सभा के सदस्य भी बहुत अधिक स्वतंत्र होते थे। वे अपने निर्वाचकों तथा पार्टी के नियमों की परवाह नहीं करते थे। इसलिए वे प्रायः सभी विषयों पर, लोकमत के विरुद्ध भी, अपनी बुद्धिके अनुसार मत दे दिया करते थे। १७८५–८६ ई० में पिट ने तीन आवश्यक तथा उपयोगी प्रस्तावों को उपस्थित किया किन्तु ये अस्वीकृत हो गये। उसके ही कितने समर्थकों ने भी प्रस्तावों के विपक्ष में मत प्रदान किया था। इस तरह यदि पिट का विरोध न होता तो बहुत से उपयोगी सुधार हो ही जाते। ऐसी स्थिति में सुधार योजनाओं की असफलता के लिए केवल पिट ही कहाँ तक उत्तरदायी हो सकता है!

सुधार के प्रति पिट की अन्यमनस्कता निर्विवाद है। लेकिन यह स्थिति विशेष रूप से पार्लियामेंट—सुधार बिल की हार के बाद से ही पैदा हुई। फिर भी यह उसके कोई हठ के फलस्वरूप नहीं उत्पन्न हुई थी। वह अपने राष्ट्र की नाड़ी परखता था। उस समय बहुत लोग सुधार के विरोधी थे। अतः तत्कालीन लोकमत भी उसकी सुधार विरोधनी नीति का समर्थक था। जब शान्तिकाल की ऐसी बात थी तो युद्धकाल की बात क्या पूछनी है! दीर्घकालीन महायुद्ध के समय ब्रूटेन के लिए भीषण संकट पैदा हुआ था। रूढ़िवादी अंग्रेजों का क्रान्ति की आशंका कर भयभीत होना स्वाभाविक ही था। वैसी स्थिति में सुधारों का स्थगन भी उचित था क्योंकि आन्तरिक सुधार के लिए वैसी स्थिति उपयुक्त नहीं होती। उस समय सुधार होने से हानि ही की विशेष सम्भावना थी। अतः पिट ने लोकमत के अनुसार ही कार्य किया। फिर पिट के ही मत्थे सुधार विरोधी होने का सार कारण कैसे मढ़ा जा सकता है!

आयरिश नीति—पिट की आयरिश नीति भी उसके उदार विचार का परिचय देती है। वह आयरिशों की मूल बुराइयों को दूर कर उन्हें सन्तुष्ट करना चाहता था। इसीलिए वह ग्रेटब्रिटेन तथा आयरलैंड के बीच पूर्ण व्यापारिक समानता कायम करना चाहता था। परन्तु इंगलैण्ड के व्यापारियों तथा फौक्स के विरोध के कारण वह सफल न हो सका। उसने कैथोलिकों को मताधिकार प्रदान कर दिया और उन्हें पूर्ण मुक्ति देने की प्रतीक्षा कर पार्लियामेन्टरी संयोग के पक्ष में किया। अतः उसी के सतत् प्रयत्न से दोनों देशों का पार्लियामेन्टरी संयोग हो सका लेकिन राजा के विरोध

से पिट अपनी प्रतिज्ञा पूरी न कर सका। यदि पिट की आयरिश नीति पूर्ण रूप से कार्यान्वित होती तो आयरिश स्कौटों के जैसा क्रमशः सन्तुष्ट हो जाते और दोनों देशों का सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण हो जाता। संयोग के बाद की विकट परिस्थित और उसके फलस्वरूप दोनों देशों के धन जन की अपार क्षति रुक जाती। अतः उसकी आयरिश नीति भी उसकी दूरदर्शिता तथा सद्भावना सूचित करती है।

(२) पर राष्ट्र सचिव के रूप में १७८३—९३ ई०—पिट के मंत्रित्वकाल के प्रथम दस वर्षों में वैदेशिक नीति की प्रमुखता नहीं थी क्योंकि शान्ति का समर्थक होने के कारण वह अन्तराष्ट्रीय झमेलों से दूर रहना चाहता था इसके सिवा अमेरिका की लड़ाई के बाद इसकी आवश्यकता भी वह महसूस करता था। फिर भी वह अपने देश तथा राष्ट्र के गौरव को नहीं भूला था। अमेरिका में ग्रेट बृटेन की हार से उसका जो गौरव खो गया था उसे उसने पुनः प्राप्त करने की कोशिश की। इसमें उसे बहुत कुछ सफलता भी मिली। उसने कई राष्ट्रों के साथ सन्धि कर अपने देश के अकेलापन और तटस्थता को दूर कर दिया। फ्राँस ब्रिटेन का पुराना दुश्मन था। उसके साथ उसने मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया। १७६३ के बाद प्रशिया बृटेन से रुष्ट था। उसे भी उसने रुष्ट किया। हौलैंड के साथ भी सन्धि कर उसे अपने पक्ष में स्पेनवासियों को दबाकर बृटिश कोलम्बिया में अंग्रेजो की स्थिति सुरक्षित करली। केवल पूर्वी यूरोप में रूस के साथ उसकी नीति सफल न हुई। उसने पोलैंड के बँटवारे और तुर्की साम्राज्य पर आक्रमण का विरोध किया था। किन्तु रूस की जारिना कैथोराइन ने उसके विरोध की परवाह न कर दोनों घटनाओं के होने में भाग लिया। फिर भी पिट प्रथम अंग्रेज राजनीतिज्ञ था जो रूस के उत्थान को आशंका तथा इर्ष्या की दृष्टि से देखता था और उसने उसकी नीति का विरोध किया था।

(३) युद्ध सचिव के रूप में १७९३-१८०१ ई०-और १८०४—६ ई०—युद्ध सचिव की हैसियत से छोटे पिट में कुछ विशेष कमी दीख पड़ी। अपने पिता की अपेक्षा वह कम योग्य तथा दूरदर्शी प्रमाणित हुआ। फ्राँन्स की राज्यक्रान्ति के शुरू होने के समय हो वह युद्ध की अवधि का ठीक अनुभव न कर सका। उसने समझा कि युद्ध थोड़े ही समय में समाप्त हो जायगा और इसी दृष्टि से उसने अपनी योजना भी तैयार करनी शुरू की। पहले तो उसने यहाँ तक ख्याल कर लिया था कि इस क्रान्ति का असर किसी दूसरे देश पर नहीं पड़ सकता। किन्तु उसके दोनों ही अनुभव गलत निकले। लेकिन बर्क ने तो क्रान्ति जनित युद्ध को दीर्घकालीन तथा खतरापूर्ण घोषित कर दिया था। इस तरह प्रारम्भ में ही पिट ने अपनी अदूरदर्शिता का परिचय दिया।

लेकिन जब युद्ध शुरू हो गया तो यह कमर कसकर फ्रांस का सामना करने के लिए तैयार हो गया। उसने फ्रांस के साथ जो मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया था उसका अन्त हो गया। उसकी युद्ध नीति के दो उद्देश्य थे—

(क) यूरोपीय राष्ट्रों का गुट संगठित कर उन्हें धन जन से मदद करना।

(ख) अपनी सामुद्रिक शक्ति का उपयोग कर फ्रांसीसी व्यापार को नष्ट करना, उनके उपनिवेशों को अधिकृत करना और अटलांटिक तथा भूमध्यसागर स्थित बन्दरगाहों पर चढ़ाई करना।

उसकी पहली योजना तो बड़ी ही त्रुटिपूर्ण थी। यूरोपियन गुट की योजना तथा उद्देश्य में सर्वदा एकता का अभाव रहता था। उसके सदस्य स्वार्थी तथा प्रतिद्वन्द्वी होते थे। प्रत्येक सदस्य भी अपने स्वार्थ साधन की ही चिन्ता विशेष करता था। इसके सिवा गुटसरकारों के द्वारा स्वेच्छाचारिता कायम रखने के लिये साधन मात्र था। इस लिए इसे राष्ट्र की सहानुभूति प्राप्त न थी। अतः गुट के सदस्यों में उत्साह की कमी थी।

दूसरी ओर इसे फ्रांसीसी राष्ट्र का सामना करना था जो देश भक्ति की भावना से ओत प्रोत थे। वे अपनी रक्षा तथा स्वतंत्रता के लिये लड़ रहे थे और सारे यूरोप में क्रान्तिकारी सिद्धान्तों का प्रचार करना चाहते थे। उनमें नया जोश और उत्साह पैदा हुआ था। अतः यूरोपियन गुट के द्वारा ऐसे राष्ट्र का सफलता पूर्वक सामना करना दुस्तर कार्य था फिर भी गुट के सदस्यों की सहायता करने में ब्रिटेन को अपरिमित धन खर्च करना पड़ा। इसका अधिकांश भाग तो व्यर्थ ही गया। इस विपुल धन का सदुपयोग अंग्रेजी सेना को शिक्षित करने तथा सुसज्जित बनाने में किया जा सकता था। युद्ध के सामान पर्याप्त नहीं थे। सर्दी से बचने के लिए सैनिकों को कोट तथा बूट का अभाव था। अस्त्र-शस्त्र की भी कमी थी। युद्ध में घायल हुए सैनिकों की सेवा-सुश्रूषा के लिये कोई प्रबन्ध नहीं था।

कितने सैनिक तथा सेनापति अशिक्षित तथा अनुभवहीन थे। कर्मचारियों की पदवृद्धि के लिए विचित्र तरीका था। जो कर्मचारी सैनिकों की एक निश्चित संख्या नियुक्त कर लेते थे उनकी पदवृद्धि कर दी जाती थी। इस तरह बहुत से सैनिक और सेनापति अयोग्य, उत्साहहीन तथा अधीर होते थे और उन्हें इस बात का ध्यान नहीं रहता था कि कहाँ और कब चोट करनी चाहिए। यौर्क का ड्यूक फ्रेडरिक और डन्डाज ऐसे ही व्यक्तियों की श्रेणी के थे। फ्रांसीसी सेनापति कार्नोट तथा बोनापार्ट के सामने इनकी कोई हस्ती ही नहीं थी।

करने की पूरी स्वतंत्रता नहीं थी। १८०४ ई० में नाजुक परिस्थिति देखकर वह तो राष्ट्रीय मंत्रीमंडल स्थापित करना चाहता था। फौक्स नामक ह्विग नेता एक योग्य व्यक्ति था जिसे वह मन्त्रिमंडल में शामिल करना चाहता था। लेकिन जार्ज का शत्रु था अतः उसने पिट को ऐसा नहीं करने दिया। इसलिए उसका यह दूसरा मन्त्रिमन्डल एकांगी और कमजोर था और ऐसे मन्त्रिमंडल के साथ उसे युद्ध के संकट का सामना करना पड़ा। 'फौक्स अपने समर्थकों के साथ पद-पद पर पिट का विद्रोह किया करता था फिर भी शान्ति तथा सफलता पूर्वक पिट युद्ध का संचालन करता रहा। पिट के मरने के बाद फौक्स ने युद्ध का अन्त करना चाहा, लेकिन नेपोलियन तैयार न हुआ। अब उसने भी पिट की बुद्धिमत्ता स्वीकार की और उसके विरोध करने की अपनी नीति के अनौचित्य को भी समझा।

अपने सीमित साधनों तथा उग्र विरोधों के होने पर भी पिट ने महायुद्ध जनित भयंकर स्थिति में ब्रिटेन का सफलतापूर्वक नेतृत्व कर अपनी अद्भुत शक्ति और प्रतिभा का ही परिचय दिया। अतः पिट यदि अपने पिता के समान कुशल युद्ध सचिव नहीं था तो भी वह वालपोल तथा ग्लैडस्टोन की अपेक्षा इस दृष्टि से कहीं अधिक योग्य था। लेकिन वालपोल तथा ग्लैडस्टोन का स्थान ब्रिटेन के बड़े प्रधान मन्त्रियों की श्रेणी में है। अतः इस श्रेणी में गणना के लिए पिट का कहीं अधिक दावा है।

(४) वालपोल और छोटे पिट का तुलनात्मक अध्ययन—वालपोल और छोटे पिट की तुलना मनुष्य और राजनीतिज्ञ की दृष्टि से की जा सकती है। दोनों ही दृष्टियों से दोनों में समता और विषमता दीख पड़ती है।

दोनों ही बुद्धिमान्, तेजस्वी और प्रतिभाशाली थे और लड़कपन से ही दोनों में होनहार के चिन्ह दीख पड़ते थे। दोनों ही शान्त तथा भीरु प्रकृति के थे। अतः अपनी योजनाओं की सफलता के लिये भगीरथ प्रयत्न नहीं करते थे और विरोध होने पर उन्हें स्थगित ही कर देते थे। दोनों ही शक्तिलोलुप थे। दोनों ही विवाद में प्रवीण थे और देश भक्त तथा कर्त्तव्य शील थे। दोनों ही अपने राजा के प्रति कृतज्ञ थे और सम्मानता का भाव रखते थे।

परन्तु दोनों में भिन्नता की ही मात्रा विशेष थी। वालपोल का जन्म धनी परिवार में हुआ था पर वह विद्वान् न बन सका था और बहुत लोभी था। पिट साधारण परिवार में जन्म लेकर भी विद्वान् और ईमानदार हो गया था। तर्कशास्त्री होने के साथ-साथ वक्ता भी था; परन्तु वालपोल में वक्तृत्व शक्ति का अभाव था। पिट के विचार नैतिक और पवित्र थे किन्तु वालपोल उसके ठीक प्रतिकूल था। अपने लक्ष्य-

पूर्ति के लिये वालपोल निम्नतम साधनों का भी उपयोग कर लेता था और उसने घूसखोरी को नियमित प्रथा के रूप में ही बदल दिया था। वालपोल में पिट की अपेक्षा शक्ति लोलुपता की भावना अधिक थी।

वालपोल और छोटे पिट दोनों ही कुशल राजनीतिज्ञ थे। दोनों ही दीर्घ काल तक अपने देश के प्रधान मन्त्री रहे—वालपोल २० वर्षों तक और पिट १९ वर्षों तक। दोनों ही सत्ता प्रेमी थे, दोनों ने ही अपने सहयोगी मंत्रियों पर पूरा नियन्त्रण रखा और कैबिनेट प्रणाली की प्रगति में योग दिया। वालपोल ने इस प्रणाली की नींव खड़ी की और पिट ने इसे सुदृढ़ किया। दोनों ही अर्थशास्त्र के विद्वान् और स्वतन्त्र व्यापार की नीति के समर्थक थे और दोनों ही ने आर्थिक क्षेत्र में सफलता पूर्वक कार्य किया। दोनों ही युद्ध विरोधी थे और अपने देश को वैदेशिक झमेलों से बचाना चाहते थे। युद्ध शुरू हो जाने पर दोनों को इसमें भाग लेने के लिये विवश होना पड़ा।

पिट की अपेक्षा वालपोल अधिक अनुभवी था। प्रधान मन्त्री होने के पहले कई वर्षों से विभिन्न पदों पर कार्य कर चुका था; परन्तु पिट तो २४ वर्ष की ही अवस्था में प्रधानमन्त्री बन गया था। वालपोल ह्विग सरकार का और छोटा पिट टोरी सरकार का प्रधान था। युद्ध संचालक की हैसियत से पिट वालपोल की अपेक्षा विशेष सफल साबित हुआ था।

अध्याय ३१

आयरलैंड (१७१४–१८१५ ई०)

हेनरी ग्रेटन और उसकी नीति—आयरलैंड के इतिहास में यह काल महत्व-पूर्ण स्थान रखता है। अब स्थिति में कुछ सुधार होना शुरू हुआ। इस काल में आयरिशों को हेनरी ग्रेटन नाम का एक प्रसिद्ध नेता प्राप्त हो गया। १७४६ ई० में उसका जन्म हुआ था। वह एक प्रोटेस्टेन्ट था और १७७५ ई० में पार्लियामेंट का सदस्य हुआ। राजनीतिज्ञ तथा वक्ता के नाते बड़े पिट से उसकी तुलना की जा सकती है। उसके विचार उदार थे जो कैथोलिक सहित सभी आयरिशों के लिए स्वतन्त्रता चाहता था। उसका दृढ़ विश्वास था कि कैथोलिकों के परतन्त्र रहते प्रोटेस्टेंट भी स्वतन्त्र नहीं रह सकते। वह पार्लियामेंटरी सुधार का पक्षपाती था, किन्तु प्रजातन्त्र शासन का समर्थक नहीं। वह बालिग मताधिकार का विरोधी था। वह अपने देश वासियों में अनुशासन की सुदृढ़ भावना स्थापित करना चाहता था। यदि उसके ये उद्देश्य पूरे हो जाते तो उसे ब्रिटेन के साथ रहने में कोई आपत्ति नहीं होती। वह ब्रिटेन के साथ आयरलैंड का सम्बन्ध स्थापित रखना चाहता था और युद्ध के समय ब्रिटेन को सहायता प्रदान करने के पक्ष में भी था।

आयरिशों का विरोध—जार्ज तृतीय के राज्यकाल के प्रारम्भ से ही आयरिशों ने विरोध करना शुरू किया। इसके लिए उन्होंने वैधानिक और अवैधानिक दोनों तरीकों को अपनाया। कई दलों द्वारा आर्थिक स्वरूप के विद्रोह किये जाने लगे जो अपने को 'ह्वाईट बोआएज', 'ओक बोआएज' आदि नामों से पुकारते थे। पार्लिया-मेंट में भी विरोध संगठित किया जाने लगा। १७६८ ई० में एक अष्टवर्षीय कानून (ओक्टेनियल ऐक्ट) पास कर पार्लियामेंट की अवधि आठवर्ष निश्चित कर दी गई।

अमेरिकन स्वातन्त्र्य संग्राम का प्रभाव—१७७५ ई० में अमेरिका का स्वातन्त्र्य-संग्राम छिड़ गया और इसके उदाहरण से आयरिश बहुत ही प्रभावित हुए। अब अटलान्टिक पार अंग्रेजी सेना भेजने की आवश्यकता पड़ी। अतः इसे आयरलैंड में रखना संभव न रहा। इसके सिवा तीन वर्षों के बाद ही फ्रांसीसियों ने ब्रिटेन के विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया था।

अतः यह आशंका होने लगी कि फ्रान्स आयरलैंड पर आक्रमण कर इसे जीतने की चेष्टा करेगा और इसी आधार से फिर ब्रिटेन पर भी आक्रमण कर सकता था। किन्तु ऐसी स्थिति में आयरिशों ने अपनी बुद्धिमत्ता का ही परिचय दिया। वे अंग्रेजों से बदला लेने के लिए फ्रान्सीसियों को अपने देश में नहीं बुलाना चाहते थे क्योंकि ऐसा करने से स्वामी का ही परिवर्तन होता, किन्तु स्थिति वही रह जाती। इसलिए ग्रेटन के नेतृत्व में कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट सभी मिलकर अपनी रक्षा की तीव्रगति से तैयारी करने लगे। स्वयंसेवक संघ संगठित किया जाने लगा। कितने भूमिपति इस संघ में शामिल हो गये और समाज में उनका महत्त्व भी बढ़ गया। एक ही साल के अन्दर स्वयं सेवकों की संख्या ४०,००० तक पहुँच गयी और १७८१ ई० तक यह संख्या दुगुनी हो गयी। इन संघों के संगठन करने में कोई सरकारी सहायता प्राप्त नहीं हुई थी और स्वातन्त्र-रूप से ही उनका विकास होने लगा। इस तरह के संगठन से तीन बड़े लाभ हुए। (क) घरेलू व्यवसाय को बहुत प्रोत्साहन मिला। क्योंकि स्वयंसेवकों को देश की ही बनी हुई वर्दी दी गई। (ख) फ्रान्सीसी आक्रमण रुक गया। (ग) ब्रिटेन में आतंक-सा फैल गया। संघ राजनैतिक वाद-विवादों के लिए उपयुक्त स्थान बन गया। एक आयरिश के ही शब्दों में 'इंगलैंड ने अपने कानूनों को अजगर के मुख में बोया (Dragons teeth) और उनसे सशस्त्र व्यक्ति पैदा हुए।' स्वयंसेवकों ने जब अपनी शक्ति पहचानी तब वे क्रौमवेल के लौह पक्ष के समान राजनीति में हस्तक्षेप करने लगे। उन्होंने व्यापारिक विधान के उठाने और स्वतन्त्र पार्लियामेंट के निर्माण की माँगें उपस्थित कीं। ब्रिटेन को इस बात की आशंका थी कि आयरिश भी अमेरिका की नकल कहीं न कर लें। अतः इसने उदार नीति अपनायी और आयरिशों को सुविधायें प्रदान की गयीं। १७७८ से १७८२ ई० तक के अन्दर दण्ड विधान की कड़ाई में बहुत नर्मी कर दी गयी। कठोर व्यापारिक प्रथा उठा दी गयी। आयरिश वाणिज्य-व्यवसाय सम्बन्धी सभी प्रतिबन्ध हटा लिए गये। आयरलैंड को व्यापारिक क्षेत्र में वे सभी सुविधायें प्राप्त हो गयीं जो स्कौटलैंड को संयोग के द्वारा प्राप्त हुई। १७८२ ई० में आयरिश पालियामेंट स्वतन्त्र कर दी गई। १४८७ ई० के पोयानिंग ऐक्ट और १७१६ ई० के डिक्लेयरेटरी ऐक्ट समाप्त कर दिये गये। अब आयरिश पार्लियामेंट अपनी सुविधानुसार कानून बनाने के लिए स्वतन्त्र हो गई।

फिर भी वे असन्तुष्ट—इस प्रकार आयरलैंड इंगलैंड से स्वतन्त्र तो हुआ लेकिन उसकी यह स्वतन्त्रता अभी वास्तविकता से दूर थी। आयरलैंड अभी भी ब्रिटेन के राजा के ही अधीन रहा और इसकी सरकार पर अभी भी ब्रिटिश मंत्रिमंडल का

दबाव रहा। आयरिश पार्लियामेंट के पुराने स्वरूप में कोई अन्तर न हुआ। इसमें प्रोटेस्टेंटों का ही बाहुल्य था और यह अल्पसंख्यक प्रोटेस्टेंटों की ही प्रतिनिधि सभा बनी रही। ब्रिटिश पार्लियामेंट से भी अधिक यह पार्लियामेंट कैथोलिक विरोधिनी थी। करीब दस वर्षों तक ग्रेटन आयरलैंड का सर्व-सर्वा था और छोटा पिट ब्रिटेन का प्रधान मंत्री। ग्रेटन कैथोलिक असुविधाओं को दूर करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ था और पिट भी उसके विचारों से सहमत था। लेकिन दोनों ही को आशातीत सफलता नहीं मिली। कैथोलिक प्रश्न पर न तो आयरिश प्रोटेस्टेंटों के बीच ही एकता थी और न पिट के सहकर्मियों के बीच। आयरलैंड में कैथोलिक प्रतिबन्धों की जंजीर से अपनी मुक्ति चाहते थे। प्रोटेस्टेंट पार्लियामेंट का सुधार चाहते थे, परन्तु आर्थिक बुराइयों का अन्त करने के लिए सभी आयरिश एकमत थे।

फ्राँसीसी राज्य-क्रान्ति का प्रभाव—१७८९ ई० में फ्रान्स की राज्य क्रान्ति प्रारम्भ हो गयी जिसने आयरलैंड को बहुत ही प्रभावित किया। इसने विश्व के सामने स्वतन्त्रता, समानता तथा भ्रातृत्व के सिद्धान्तों की घोषणा की। कैथोलिक तथा प्रोटेस्टेंट दोनों ही इस क्रान्ति का समाचार पाकर बहुत ही खुश हुए। कैथोलिक स्वतंत्रता के उपासक थे तो प्रोटेस्टेंट पार्लियामेंट के सुधार के समर्थक थे। १७९२ ई० में ब्योवाल्ड वुल्फटोन के नेतृत्व में 'यूनाईटेड आयरिश मैन' नाम का एक दल संगठित हुआ। वुल्फटोन बेलफास्ट का रहने वाला एक प्रोटेस्टेंट वकील था जिसके विचार उग्र थे। अतः उसे ग्रेटन की सहानुभूति प्राप्त न हो सकी। इस दल का यह उद्देश्य था कि विभिन्न श्रेणियों तथा धर्मों के सभी आयरिशों के बीच एकता स्थापित कर पार्लियामेंटरी सुधार तथा कैथोलिक मुक्ति के लिए आन्दोलन किया जाय। इतना ही नहीं, यह ब्रिटेन से अपने देशका सम्बन्ध विच्छेद भी कर लेना चाहता था। पिट ने उन्हें शान्ति करने की चेष्टा की, क्योंकि देश की आबादी में इन्हीं का बहुमत था। १७९३ ई० में एक कैथोलिक रिलीफ ऐक्ट पास कर उसने कैथोलिकों को मताधिकार प्रदान कर दिया। लेकिन वे अभी भी पार्लियामेंट में अपना सदस्य नहीं भेज सकते थे। अतः यह आधा सुधार हुआ जिसका पूरा होना अब अवश्यम्भावी हो गया।

फिज विलयम सम्बन्धी घटना १७९५ ई०—१७९५ ई० में पिट ने फिज विलियम को आयरलैण्ड का शासक बनाकर भेजा। फिज विलियम उदार विचार का एक ह्विग मंत्री था। वह ग्रेटन के विचारों से सहमत और कैथोलिकों की पूर्ण मुक्ति का पक्षपाती था। इसकी पूर्ति के लिए वह चेष्टा करने लगा। वह आयरिश पार्लियामेंट में इस आशय का प्रस्ताव पेश करना चाहता था। लेकिन ब्रिटिश सरकार की नीति निश्चित नहीं थी। ब्रिटेन तथा आयरलैंड के प्रोटेस्टेन्टों ने फिज विलियम

की नीति का घोर विरोध किया। अतः ब्रिटिश सरकार ने उसे आयरलैंड से वापस बुला लिया। ब्रिटिश सरकार को यह भय था कि यदि पार्लियामेंट में कैथोलिक प्रतिनिधि भेजे जायेंगे तो वे प्रोटेस्टेन्टों के विरूद्ध बदला लेने की भावना से प्रेरित होकर विद्रोह कर सकते थे।

लेकिन उसका यह भय उचित न था और उसकी नीति गलत थी। अब आयरलैंड के इतिहास में एक नई और संकटपूर्ण स्थिति पैदा हो गई। इसी समय फ्रांस के विरूद्ध निर्मित प्रथम गुट्ट असफल हुआ था और अब पिट की नीति से आयरिश क्रान्तिकारियों को भी ब्रिटेन के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए प्रोत्साहन और अवसर मिल गया। उदारवादियों के असफल होने पर उग्रवादी संयुक्त आयरिश दल के लिए कार्य करने का क्षेत्र सुगम हो गया। अब कैथोलिक बड़ी संख्या में संयुक्त आयरिश दल में शामिल होने लगे और यह दल गुप्त विद्रोही दल के रूप में परिणत होने लगा। अब यह निश्चित रूप से ब्रिटिश विरोधी भावनाओं का पोषक और जनतंत्र का समर्थक हो गया और इनकी पूर्तिहेतु फ्रांसीसी क्रान्ति के तरीकों का अनुसरण करने लगा। इसके सदस्य अंग्रेजों के विरुद्ध फ्रांसीसियों से पत्र व्यवहार करने लगे। होच नाम का एक फ्राँसीसी सेनापति भी ब्रिटेन पर आक्रमण करने के उद्देश्य से चला लेकिन भीषण तूफान उठ जाने के कारण वह असफल रहा।

ब्रिटिश अत्याचार—इस समय संयुक्त आयरिश दल के अधिकांश सदस्य कैथोलिक ही थे, अतः उनके अत्याचारों के कारण प्रोटेस्टेंट भयत्रस्त हो गये। इस लिए उत्तर के प्रोटेस्टेंट संघ कायम करने लगे जो औरेंज के विलियम की यादगारी में औरेन्ज लौजेज के नाम से प्रसिद्ध हो गये। इसलिए इसके सदस्य औरेंज मैन कहलाते थे। सरकार भी इनकी सहायक थी। अब संयुक्त आयरिश तथा औरेंज लोगों के बीच गृह युद्ध छिड़ गया। १७९७ ई० में अल्स्टर को निःशस्त्र कर दिया गया, वहाँ फौजी कानून लागू किया गया और विद्रोह को शान्त करने के लिए ब्रिटिश सरकार ने सेना भेजी। ब्रिटिश सैनिकों ने बड़े ही भयानक तथा घृणास्पद दुष्कर्मों को किया। अल्स्टर में सैनिक लोगों के घर में घुस जाते और नाना प्रकार से उन्हें तंग कर हथियारों को छीन लेते। फ्राँसीसी भाषा में एक पत्र मिलने के कारण राईट नाम के एक शिक्षक को सैकड़ों कोड़े लगाकर बन्दीगृह में भेज दिया गया। बड़ी ही अमानुषिक निर्दयता के साथ बागियों का खून बहाया गया। 'इस निर्दयतापूर्ण संहार के दृश्य की तुलना में पेरिस में स्थापित आतंक का राज्य एक तुच्छ घटना थी।'[1]

आयरलैंड का विद्रोह १७९८ ई०—लेकिन दमन तो एक ध्वंसात्मक तरीका है

[1] टेनेन ए हिस्ट्री ऑफ इंगलैंड, पृष्ठ ५१५

जिससे लाभ के बदले हानि ही होती है। अब आयरिशों ने और भी संगठित रूप से ब्रिटेन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। ब्रिटिश सरकार ने विद्रोह को दबाने के लिए जो सेना भेजी उसमें अधिकांश धर्मांध प्रोटेस्टेंट ही थे। इन्होंने बदला लेने की भावना से प्रेरित हो आयरिशों के साथ बड़ी ही कठोरतापूर्वक व्यवहार किया। विद्रोह एक महीने के भीतर दबा दिया गया। फ्रांसीसी सेना देर से पहुँची और लौट गई। तब तक विनेगर पहाड़ी पर विद्रोहियों की पराजय हो गई, उनके नेता गिरफ्तार कर लिए गये और वुल्फटोन को फाँसी दे दी गई। फिर भी यह स्मरणीय है कि यह विद्रोह पूर्व की तरह अल्स्टर तथा शेष आयरलैंड के बीच धार्मिक संघर्ष नहीं था। यह राष्ट्रीय संघर्ष था जिसमें कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट एक साथ मिलकर ब्रिटेन के विरुद्ध लड़ रहे थे।

इंगलैंड और आयरलैंड का मेल १८०० ई०—अब ब्रिटेन ने लार्ड कार्नवालिस को आयरलैंड का शासक बनाकर भेजा। वह अमेरिका में अंगरेजी सेना का नायक रह चुका था। उसके ऊपर यह भार सौंपा गया कि परस्पर विरोधी आयरिश कैथोलिकों तथा प्रोटेस्टेन्टों के बीच वह एकता स्थापित करे। कार्नवालिस की दृष्टि में आयरलैंड अल्पसंख्यक प्रोटेस्टेंटों का शासन असफल हो चुका था। अतः उसने आयरलैंड तथा ब्रिटेन के बीच पार्लियामेंटरी संयोग स्थापित करने की अपनी सम्मति प्रकट की। पिट भी उसकी राय से सहमत हो गया। वह स्वतन्त्र आयरिश पार्लियामेंट को इंगलैंड के लिए घातक समझता था। लेकिन कैथोलिक इसके लिए तैयार नहीं थे। ग्रेटन के नेतृत्व में प्रोटेस्टेंट भी संयोग के विरोधी थे, क्योंकि इससे उनके विशेषाधिकारों का अन्त हो जाता। लेकिन पिट ने दोनों को अपने पक्ष में किया। उसने संयोग के बाद कैथोलिकों को पूर्ण मुक्ति प्रदान करने की प्रतिज्ञा कर उन्हें अपने पक्ष में मिलाया। घूस तथा पुरस्कारों के द्वारा प्रोटेस्टेंट भी मिला लिये गये। इस तरह १८०० ई० में संयोग कानून आयरिश तथा ब्रिटिश पार्लियमेंट में पास हुआ।

अब १८ वर्षों के ही बाद ग्रेटन के द्वारा स्थापित डबलिन की स्वतन्त्र पार्लियमेंट के जीवन का अन्त हो गया और दोनों देशों का पार्लियामेंटरी संयोग हो गया। (क) कौमन्स सभा में १०० सदस्य और लार्ड सभाओं में ४ बिशप तथा सभी आयरिश पीचरों के द्वारा जन्म के लिए निर्वाचित २८ पीचर भेजने के लिए आयरलैण्ड को अधिकार मिला।

(ख) आयरिश चर्च तथा सेना भी ब्रिटेन के साथ मिला दिये गये लेकिन आयरलैंड की न्याय व्यवस्था तथा कार्यकारिणी अलग रही। फिर भी उस पर ब्रिटिश मंत्रिमंडल का प्रभाव रहा। (ग) आयरलैंड तथा ग्रेटब्रिटेन के बीच पूर्ण व्यापारिक

स्वतंत्रता स्थापित हुई और संयुक्त राज्य की आय का २/१७ भाग कर के रूप में आयरलैंड के द्वारा देने के लिए निश्चित हुआ।

परिणाम—स्कौट तो ब्रिटेन के साथ पार्लियामेंटरी संयोग से क्रमशः सन्तुष्ट हो गये क्योंकि संयोग के लिए स्वयं उन्होंने अपनी इच्छा प्रकट की और उन्हें अनेकों लाभ हुए। उनकी दिनोंदिन उन्नति होने लगी। ब्रिटेन को भी फायदे हुए। लेकिन आयरिश पार्लियामेन्टरी संयोग से संतुष्ट नहीं हुए। कैथोलिक या प्रोटेस्टेंट कोई भी इसके पक्ष में नहीं थे। लेकिन उन्हें विभिन्न प्रलोभनों द्वारा इसके लिए तैयार किया गया। संयोग होने पर भी आयरिशों को कोई खास लाभ नहीं हुआ, उल्टे नुकसान ही हुआ। स्कौटों को जो सुविधायें संयोग द्वारा मिली वे सुविधायें आयरिशों को २० वर्ष पहले ही मिल चुकी थीं। अतः १८०० ई० तक की वर्तमान बुराईयों के दूर होने पर ही आयरिश संयोग से संतुष्ट हो सकते थे। लेकिन उनकी कोई बुराई दूर नहीं हुई। पिट ने तो मुक्ति सम्बन्धी प्रतिज्ञा पूरी करने की कोशिश की और संयुक्त पार्लियामेन्ट की पहली बैठक में ही उसने इस आशय का प्रस्ताव पास कराना चाहा। लेकिन जार्ज तृतीय ने उसका घोर विरोध किया। उसके विचारानुसार कैथोलिकों की मुक्ति राज्याभिषेक के समय की गई उसकी शपथ के विरुद्ध होती। अतः जार्ज किसी की भी बात सुनने के लिए तैयार नहीं हुआ और उसने यहाँ तक घोषणा कर दी कि 'ऐसा प्रस्ताव करने वाले किसी भी आदमी को मैं अपना व्यक्तिगत शत्रु समझूँगा।' अब पिट दूसरा कोई चारा न देखकर १८०१ ई० में पदत्याग कर दिया। अतः ब्रिटेन तथा आयरलैंड का यह संयोग एकाँगी रह गया। इससे न तो आयरिश ही सन्तुष्ट हुए और न देश की कोई उन्नति ही हुई। आयरलैंड में प्रोटेस्टेंटों को प्रमुखता और कैथोलिकों की उचित शिकायतें ज्यों की त्यों बनी रहीं। इतना ही नही, स्थिति पहले की अपेक्षा भी खराब हो गई। आयरिशों की अपनी स्वतन्त्र पार्लियामेंट का नाश हो गया और कुलीन श्रेणी के प्रोटेस्टेंट ही जो कैथोलिकों से घृणा करते थे, ब्रिटिश पार्लियमेंट में उनके प्रतिनिधि स्वरूप भेजे जाने लगे। अतः कैथोलिक तो इस संकीर्ण संयोग के कट्टर विरोधी हो गये।

मेल के बाद की स्थिति (१८०१—१८१५ ई०)—१८०३ ई० में ब्रिटेन तथा फ्राँस के बीच फिर युद्ध शुरु हो गया था। नेपोलियन ने बृटिश साम्राज्य में गड़बड़ी पैदा कराने की कोशिश की, अतः डबलिन में विद्रोह का झंडा खड़ा करने के लिए उसने रोबर्ट एमनेट नाम के एक आयरिश को प्रोत्साहित किया। एमनेट १७९८ ई० के एक विद्रोही नेता का भाई था। उसने कैथोलिकों से सहायता पाने की बड़ी आशा

की थी, किन्तु उसकी आशा विफल हो गयी। अतः वह विद्रोह में सफल न हो सका। यह दबा दिया गया और एमनेट को पकड़ कर फाँसी दे दी गई।

१८०७ ई० में कैथोलिक मुक्ति के प्रश्न पर राजा से विरोध होने के कारण लार्ड ग्रेनविल को भी पदत्याग करना पड़ा। अब इसके बाद १८३० ई० तक ब्रिटेन में टोरियों का शासन रहा। १८१० ई० के बाद जार्ज राजकीय कामों के लिए असमर्थ हो गया और राजकुमार उसके प्रतिनिधि की हैसियत से राजकाज देखने लगा। कैथोलिक मुक्ति के विषय में वह भी अपने पिता के समान विरोधी ही था। १८१२ ई० में पाल आयरलैंड का सेक्रेटरी बनाकर भेजा गया। वह भी कैथोलिकों का विरोधी था और दमनकारी नियमों के द्वारा उन्हें दबाने की कोशिश की। इसलिए आयरिश लोग उसे औरेन्ज पील कहकर पुकारने लगे।

संक्षेप में १८१५ ई० तक कैथोलिकों को मुक्ति न मिली। आयरलैंड की भूमि सम्बन्धी समस्या हल न हुई और आयरिश राष्ट्र अभी तक असंतुष्ट ही रहा। यह स्थिति १२० वर्षों तक जारी रही। डिजरैली के शब्दों में आयरिश समस्या ठीक ही 'भूखी जनता, विदेशी चर्च तथा अन्यमनस्क कुलीन वर्ग की समस्या थी।'

अध्याय ३२

औद्योगिक क्रान्ति (१७५०–१८१५ ई०)

भूमिका—क्रान्ति का जो साधारणतः अर्थ समझा जाता है, औद्योगिक क्रान्ति वैसी नहीं थी। इतिहास में हमलोग अमेरिकन, फ्रांसीसी, रूसी और दूसरी कितनी क्रान्तियों का वर्णन पाते हैं। ये क्रान्तियाँ खास-खास समय में खास कारणों से हुई हैं। इनका सम्बन्ध पार्टियों, हथियारों, युद्धों, संधियों, खून-खतरे आदि बातों से रहता है। परन्तु ब्रिटेन की औद्योगिक क्रान्ति इन सभी क्रान्तियों से बिलकुल भिन्न थी। इसमें कोई युद्ध नहीं हुआ, कोई दल नहीं था, एक बूँद भी खून नहीं बहाया गया, किसी के साथ संधि नहीं हुई और न इसकी कोई खास तीथि या दिन ही हैं। फिर भी इसे क्रान्ति कही जाती है और यह यथार्थ भी है। क्रान्ति का अर्थ है किसी समाज के स्वरूप में क्रान्ति का बहुत या पूर्ण परिवर्तन। औद्योगिक क्रान्ति के द्वारा भी अंग्रेजों के जीवन और अंगरेजी समाज के स्वरूप में पूर्ण परिवर्तन हो गया। यह क्रान्ति शान्तिपूर्ण साधनों के द्वारा हुई थी। एक लेखक के शब्दों में 'यह क्रान्ति राजनीतिज्ञों या राजनैतिक संस्थाओं के कारण नहीं हुई थी, बल्कि विज्ञान के आविष्कारकों और उसके प्रयोग कर्त्ताओं की सम्मिलित चेष्टाओं के फलस्वरूप हुई थी।' इसीलिये यह कहा जाता है कि 'आधुनिक इंगलैण्ड के निर्माणकर्ता इसके आविष्कारक तथा इंजीनियर ही हैं।'

अठारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध से ब्रिटेन में बहुत से प्रसिद्ध वैज्ञानिक आविष्कार होने लगे, जिनके फलस्वरूप यन्त्रयुग का प्रादुर्भाव हुआ। इसके साथ ही जल और थल दोनों ही पर गतियुग भी प्रारम्भ हुआ। अंगरेजों के व्यवसायिक जीवन में कल-कारखानों का महत्व बहुत बढ़ गया। विज्ञान तथा उद्योग में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया। खेती करने की नयी-नयी बिधियाँ, उद्योग-धंधों के उत्पादन के लिये नये नये आविष्कार और आवागमन के उन्नत साधन, इन सबों ने मिलकर अंगरेजों के जीवन के मार्गों को बदल दिया। विचित्रता तो इस बात में है कि सभी परिवर्तन एक

ही साथ होने लगे और एक दूसरे से सम्बन्धित थे। ब्रिटेन के आर्थिक जीवन में इन परिवर्तनों का समूह ही औद्योगिक या आर्थिक क्रान्ति के नाम से प्रसिद्ध है।

इंगलैंड में क्रान्ति के सर्वप्रथम होने के कारण—अब प्रश्न यह उठता है कि ब्रिटेन में ही सर्वप्रथम यह क्रान्ति क्यों हुई? जिस तरह १८ वीं सदी में राजनैतिक क्रान्ति के लिये फ्रान्स में सभी उपयुक्त सामान मौजूद थे, वैसे ही ब्रिटेन में औद्योगिक क्रान्ति के लिये सभी उपयुक्त सामान पर्याप्त मात्रा में प्राप्त थे। जैसे—

(१) राजनैतिक दृष्टि से इंगलैंड सुरक्षित था। शासन प्रणाली सुदृढ़ थी। कोई ऐसे बाहरी खतरे का भय नहीं था जिसके लिये उसे दिन-रात परेशान होने की आवश्यकता थी।

(२) इंगलैंड एक द्वीप है, जिसके चारों ओर जल है। जमीन के भागों में समुद्र के घुस जाने से इसका किनारा विस्तृत और कटा हुआ है। इसीसे बड़े ही उपयोगी बन्दरगाह भी वहाँ पाये जाते हैं। वहाँ की नदियाँ भी शक्तिदायिनी हैं। अतः जहाज निर्माण के लिये सुविधा प्राप्त थी।

(३) यहाँ पूँजी की विशेषता थी। देश में कुशल तथा अकुशल दोनों प्रकार के मजदूरों की भरमार था। फिर फ्रान्स के प्रोटेस्टेंट शरणार्थी आकर इंगलैण्ड में बस गये थे। उनके आने से इंगलैंड के कौशल तथा पूँजी में और वृद्धि हो गई थी।

(४) बनी हुई मालों की खपत के लिये इसके आधीन बहुत से बाजार थे। जब कि दूसरे राज्य अपने घरेलू समस्याओं में व्यस्त थे, इंगलैंड अपना औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने में लगा था। अंगरेजी व्यापार भी बहुत से प्रतिबन्धों से मुक्त था।

(५) इंगलैंड में लोहा, कोयला आदि जैसे कच्चे मालों की भी प्रचुरता थी और वे बन्दरगाहों तथा एक दूसरे के निकट पाये जाते थे।

(६) ब्रिटेन में बहुत से वैज्ञानिक पैदा हुये जिन्होंने भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में बहुमूल्य आविष्कार किया और अंगरेजी समाज में उनका बहुत सम्मान होता था।

क्रान्ति के क्षेत्र

(१) कृषि सम्बन्धी परिवर्तन पुरानी प्रथा—१८ वीं सदी के पूर्वार्द्ध तक इंगलैंड ग्राम तथा कृषि प्रधान देश था। और वहाँ के लोगों का मुख्य पेशा खेती करना ही था। लेकिन उस समय तक प्राचीन तथा मध्यकालीन विधियों तथा औजारों से ही खेती की जाती थी। प्रचलित प्रथा के अनुसार जिस खेत में दो साल फसल

बोई जाती थी उसे तीसरे साल खाली छोड़ दिया जाता था। इसका उद्देश्य था कि उस खेत की खोई हुई उर्वराशक्ति फिर से प्राप्त हो जाय।

जमीन पर किसी एक किसान का आधिपत्य नहीं रहता था। सभी किसान मिलकर सहकारिता की भावना से प्रेरित हो खेत में काम किया करते थे। लेकिन खेत कई हल्कों में बँटे हुए होते थे और प्रत्येक हल्का दूसरे हल्के से किसी लकीर या किसी खास चिन्ह द्वारा अलग कर दिया गया था। प्रत्येक ग्राम में ऊपजाऊ जमीन के सिवा चरागाह या परती जमीन भी रहती थी। प्रत्येक किसान ऐसी जमीन से लाभ उठाने का अधिकारी था। वह अपने माल मवेशियों को चराता था तथा लकड़ी आदि चीजें भी संचित करता था।

लाभ—इस प्रचलित प्रणाली का महत्व इन बातों में था कि प्रत्येक ग्राम घरेलू उद्योग-धन्धों का केन्द्र था। कोई किसान बेकार नहीं था और उसके जोतनेबोने के लिये उसके पास जमीन होती थी। वह खेती कर शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करता था। इस तरह प्रत्येक ग्राम को दूसरे ग्राम पर निर्भर रहने की आवश्यकता न पड़ती थी।

हानियाँ—किन्तु इन लाभों की अपेक्षा विशेष क्षति ही हो रही थी। सहकारिता प्रणाली का एक बड़ा दोष यह है कि सभी लोगों में सहयोग की भावना पूर्णरूप से विकसित नहीं रहने पर प्रगति नहीं हो सकती। एक व्यक्ति के सुस्त होने पर दूसरा भी देखादेखी करने लगता है। इसके सिवा जुताऊ भूमि का एक तिहाई भाग प्रति वर्ष परती रह जाती थी और इसका बहुत सा भाग हल्कों की डर्रर में चला जाता था। हल्के भी साधारण तथा छोटे और एक दूसरे से अलग होते थे अतः वैज्ञानिक रीति से उनमें खेती नहीं हो सकती थी। खेत भी खुले हुए रहते थे, उसमें मेंड़े तथा बाड़े का कोई प्रबन्ध नहीं था। अतः माल मवेशी उसमें घुसकर फसल बर्बाद कर देते थे। बीजवपन की रीति भी त्रुटिपूर्ण थी। बीजों को मुट्ठी-मुट्ठी से लेकर खेत में छींट दिया जाता था, इससे बहुत अधिक बीज नुकसान हो जाते थे और उनके निकल जाने पर उनकी निकौनी करने तथा उनकी जड़ों में मिट्टी देने में बड़ी कठिनाई होती थी। जाड़ों में मिट्टी नहीं देने से पौधे कमजोर हो जाते थे, इस तरह अनाज का पैदावार ठीक नहीं होता था जिससे देश में अन्न की कमी रहती थी; साथ ही मालमवेशियों के लिये चारा का भी अभाव रहता था। इसके फलस्वरूप जाड़ा का आगमन होने के पूर्व गर्भधारी पशुओं को छोड़कर शेष सभी पशुओं का वध कर दिया जाता था।

सुधार आवश्यक—किन्तु १८ वीं सदी में कुछ ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई

जिससे कृषि सुधार करना आवश्यक हो गया। इंगलैंड की जन संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही थी। इसलिए प्रचुर मात्रा में अनाज की आवश्यकता पड़ने लगी। उस युग में युद्ध की प्रधानता थी जिसके कारण विदेशों से अनाज मँगाने में कई कठिनाईयाँ थीं। अतः अपने ही देश में अधिक अन्न पैदा करना आवश्यक था। जो अन्न प्राप्त था उसके मूल्य में भी विशेष वृद्धि हो गयी थी। अतः खेती अब एक लाभप्रद रोजगार बन गयी। अधिक गल्ला होने से किसानों को अधिक पैसे मिलने लगे। इससे मालिकों को लगान वसूल करने में सुविधा हो गई।

इन सब कारणों से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए और जुताऊ खेत को हर तीसरे साल परती न छोड़ने के लिए लोग नाना प्रकार के उपाय ढूंढ़ने लगे और उन्होंने अपनी चेष्टाओं में बहुत सफलता प्राप्त की।

सुधार—बर्कशायर में जेथ्रोटल नाम के एक व्यक्ति ने सर्वप्रथम कृषि की ओर ध्यान देना शुरू किया। वह खेत को अच्छी तरह जुतवाकर बड़ी सावधानी से बीजों को एक एक कर सीधी पंक्ति में गिराने लगा। अब एक एकड़ जमीन में पहले की अपेक्षा बीज एक चौथाई के अनुपात में लगने लगे और उनके निकल आने पर उनकी जड़ों में मिट्टी देना भी आसान हो गया। लेकिन अब मजदूरों का काम बढ़ गया। कुछ समय बाद उसने 'ड्रिल' नामक एक मशीन का आविष्कार कर लिया। अब इसके द्वारा फसलों की आसानी से निकौनी हो जाती और उनकी जड़ों में मिट्टी पड़ जाती। इसके सिवा उसने 'हो इंग' नाम की भी एक मशीन ढूँढ़ निकाली जिससे खेतों का जोतना आसान हो गया। कृषि के क्षेत्र में टाउनशेन्ड का नाम भी उल्लेखनीय है। उसने अपनी नौर्फोक की जमींदारी में चतुर्वर्ष चक्र की एक योजना का प्रयोग किया। वह एक ही खेत में क्रमानुसार गेहूँ, चुकन्दर या शकर कन्द, जौ या जई और दूब या अन्य घास की फसल उगाने लगा। इससे भूमि में पूरी खाद मिलने लगी, उसकी उर्वरा शक्ति बढ़ने लगी और मवेशियों को पर्याप्त चारा भी मिलने लगा। अपने इस नये अनुसन्धान के कारण टाउनशेन्ड टर्निप टाउनशेन्ड के नाम से पुकारा जाने लगा।

पशुओं के क्षेत्र में प्रगति—माल मवेशियों के क्षेत्र में भी महान् परिवर्तन होने लगा। पर्याप्त मात्रा में चारों के मिलने से उनके वजन में वृद्धि होने लगी। अठारहवीं सदी के पूर्वार्द्ध की अपेक्षा उत्तरार्द्ध में भेड़ों का वजन लगभग तीन गुना और पशुओं का दुगना बढ़ गया। इस क्षेत्र में रोबर्ट बेकवेल का नाम विशेष प्रसिद्ध है। वह लिसेस्टरशायर का रहने वाला था। उसका जीवन काल १७२५ से १७६४

ई० तक था। उसने मवेशियों तथा भेड़ों की नस्ल को उन्नत किया। उसके साँड़ और भेड़ लम्बे तथा मोटे होते थे जिन्हें देखने के लिए दूर दूर से लोग आते थे।

इस तरह कृषि तथा पशुओं के क्षेत्र में विशेष प्रगति होने लगी; खेतों के लिए नयी नयी खादें और गोरूओं के लिए खाद्य मिलने लगे। अतः गोरूओं के मांस में भी वृद्धि होने लगी। इनकी देख रेख करने के लिए स्मीथफिल्ड क्लब, सरकारी कृषि विभाग आदि कई संस्थायें खुल पड़ीं। आर्थर यंग ने कृषि सम्बन्धी कई लेखों को लिखा और घूम घूम कर उनका प्रचार किया। इतना ही नहीं, अभी और भी परिवर्तन हुए परती जमीन को जुताऊ बनाने की चेष्टा होने लगी। छोटी छोटी भूमि की टुकड़ियों को बड़े बड़े खेतों और फार्मों में परिवर्तित कर दिया जाने लगा। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि खुले खेतों के चारों ओर मेंड़े डालकर बाड़े बाँध दिए जाने लगे। इस तरह ७० लाख एकड़ जमीन घेर डाली गयी। जब कृषक इसका विरोध करने लगे तब पार्लियामेन्ट इसके लिए कानून बनाने लगी। पार्लियामेन्ट ने कई बार कानून बनाया लेकिन १८०१ ई० में एक जेनरल एनक्लोजर ऐक्ट भी पास कर दिया गया।

सुधारों से लाभ और हानि—उपर्युक्त सुधारों के कारण इंगलैंड की कृषि व्यवसाय में एक नये युग का पदार्पण हो गया। खेती बारी एक लाभप्रद पेशा हो गयी और लोग इसकी उन्नति के लिये पूरा खर्च करने लगे। अब देश की फसल में पहले से पाँच गुनी वृद्धि हो चली।

हानि—किन्तु कितनी नुकसानियाँ भी तो हुईं। छोटे २ किसान के दिन लद चुके। छोटी छोटी भूमि की टुकड़ों में नये ढंग से खेती करना सम्भव नहीं था; गरीब किसान अधिक खर्च नहीं जुटा सकते थे।

जमीन भी अधिक मंहगी हो गयी थी। अतः वे लोग अपनी जमीन बेच देने के लिए बाध्य हुए। लेकिन उन्हें अपना पेट तो चलाना ही था। अतः वे कल कारखानों तथा खेतों में मजदूरी करने के लिए विवश हुए अब गरीबों और मजदूरों की संख्या में वृद्धि हो गयी और छोटे छोटे किसानों का अन्त हो गया। परती जमीनों को जुताऊ बना देने और सभी खेतों को घेर देने से मवेशियों को चारा की कठिनाई होने लगी। अब उनके चरने के लिए भूमि का अभाव हो गया।

अन्य उद्योग धंधों सम्बन्धी परिवर्तन (क) कपड़े के व्यवसाय में—कृषि के बाद अन्य उद्योग धन्धों की भी उन्नति होने लगी। पहले कपड़े के ही व्यवसाय में परिवर्तन हुआ। अब तक सूत की कताई और कपड़े की बुनाई दोनों ही काम चरखे तथा करघे के द्वारा किए जाते थे। इसमें पुरुष, स्त्री, जवान, बूढ़े तथा

बालक सभी एक साथ काम करते थे किन्तु अब दोनों कामों के लिये नये नये आविष्कार हो गये।

शटल फलाइंग १७३३ ई०—१७३३ ई० में लंकाशायर का एक निवासी जौनके ने 'उड़ती हुई ढरकी' (फ्लाइंग शट्ल) का आविष्कार किया। यह ढरकी बिना हाथ के सहारे ही मशीन के करघे के दोनों बगल फेंकी जा सकती थी। अब सभी जुलाहे बड़ी तेजी से काम करने लगे और सूत की माँग बढ़ चली। इस कमी की पूर्त्ति के लिये अन्य आविष्कार हुए।

स्पिनिंग जेनी १७६४ ई०—१७६४ ई० में ब्लेकबर्न का निवासी जेम्स हारग्रीव्स ने एक कल का आविष्कार किया जिसे उसने अपनी पत्नी के नाम पर 'स्पिनिंग जेनी' कहा। इसमें एक पहिये के घूमने से १६ तकुए एक बार साथ ही घूमते थे।

वाटर फ्रेम १७६९ ई०—म्यूल१७७९ ई०—१७६६ ई० में प्रेस्टन के निवासी रिचार्ड आर्क राईट ने 'वाटर फ्रेम' नाम की कल निकाली जिसमें पानी की शक्ति द्वारा चरखा चलाया जाता और बेलनों के घूमने से कताई की क्रिया होती थी। हरग्रीव्स तथा आर्क राईट की मशीनों के आधार पर १७७६ ई० में बोल्स के निवासी क्रौम्पटन ने 'म्यूल' नाम की मशीन बनाई जिससे बारीक सूत अधिक परिमाण में निकलने लगा।

पावर लूम १७८५ ई०—अतः बुनाई की उन्नति लाने के लिये १७८५ ई० में एडमन्डकार्ट राइट ने पानी के सहारे चलने वाला एक करघा तैयार किया जो शक्ति करघा (पावर लूम) कहलाने लगा।

(ख) भाप की शक्ति में—लोगों को भाप की शक्ति का ज्ञान बहुत पहले से था। किंतु १७६६ ई० में जेम्सवाट ने इससे इंजिन चलाने का काम लिया। १७८५ ई० से कताई तथा बुनाई की मशीनों के चलाने में भी इसका प्रयोग होने लगा। कुछ वर्षों के बाद इससे स्टीमर (१८१२ ई०) तथा रेल (१८१४ ई०) की इंजिन भी चलाई जाने लगी। रेल का इंजिन भाप की शक्ति से चलने का श्रेय-गार्ज स्टीफेन्सन को प्राप्त हुआ।

(ग) लोहा तथा कोयले के व्यवसाय में—अब देश में कल कारखानों की क्रमशः वृद्धि होने लगी। किन्तु उसके चलाने के लिये लोहे तथा कोयले की आवश्यकता पड़ती थी। अतः इन व्यवसायों में भी खूब उन्नति हुई। अब तक लकड़ी के कोयले से लोहे गलाये जाते थे। लेकिन अब जंगलों के कट जाने से लकड़ी कम मिलने लगी और वह मंहगी भी हो गई। अतः एक नये प्रकार की भट्टी का निर्माण किया गया जिसमें पत्थल के कोयले तथा जले हुये कोक से काम लिया जा सके।

अब लोहे के उत्पादन में तीव्रगति से वृद्धि होने लगी और लौह युग का पदार्पण हो गया। धीरे धीरे हेनरी फोर्ड की चेष्टाओं से लोहे की ढलाई करने तथा उसके छड़ और चद्दरें आदि चीजें बनाने की विभिन्न प्रक्रियायें निकल पड़ीं। १७७६ ई० में पहले पहल लोहे का पुल और १७९० ई० में लोहे का जहाज बना।

अब हम लोग देखते हैं कि लोहे के साथ साथ कोयले की भी माँग बढ़ चली। अतः खानों से अधिक कोयला निकलने लगा। पहले तो विस्फोट और अन्धकार के कारण खानों में काम करना बड़ा ही संकटाकीर्ण था। किन्तु १८१५ ई० में हैम्फ्री-डैवी ने एक रक्षक बत्ती (सेफ्टी लैम्प) का आविष्कार किया जिससे खानों के भीतर काम करना अब आसान हो गया।

आवागमन सम्बन्धी परिवर्तन—कल कारखानो की देश में वृद्धि होने के कारण बहुत अधिक माल तैयार होने लगे जिन्हें विभिन्न जगहों में भेजने की आवश्यकता आ पडी। अतः आवागमन के साधनों को उन्नत प्रदान करना भी आवश्यक हो गया।

बुरी स्थिति—१८वीं सदी के प्रारम्भ तक आवागमन के साधन बड़ी ही बुरी दशा में थे। सड़कें बड़ी खराब थीं। वे प्रायः कच्ची होती थीं जिसके कारण जहाँ-तहाँ गढ़े हो जाते थे। बरसात में कीचड़ का ढेर लग जाता था जिससे गाडियों का चलना कठिन हो जाता था।

सुधार—अब इन बुराइयों को दूर करने की चेष्टा होने लगी और इस क्षेत्र में मेंटकाफ, टेलफौर्ड और मैकडम के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। मेटकाफ तथा टेलफौर्ड के पथ प्रदर्शन में अच्छी सड़कें बनाई जाने लगीं। टेलफोर्ड के उद्योग से पक्की सड़कें बनने लगीं। इस तरह १८ वीं सदी में कई अच्छी सड़कों का निर्माण हो गया।

किन्तु सड़कों पर भारी माल ढोने में अधिक समय और धन का खर्च करना पड़ता था, अतः ट्राम गाड़ियों के निर्माण की भी कोशिश होने लगी। पहले तो लकड़ी की लाईन पर ये गाड़ियाँ चलाई जाती थीं लेकिन १७७६ ई० के बाद लोहे की पटरी बनने लगी। इंगलैंड में भी १६४० ई० से घोड़े गाड़ी का प्रचार था। अब ट्राम गाड़ी के होने से यात्रियों के सफर करने में और भी सुविधायें हो गयीं। १७८४ ई० में पामर ने नई डाक की व्यवस्था की। इस तरह पहले की अपेक्षा समय और धन के खर्च में कुछ बचत तो हुई किन्तु स्थल मार्ग में अभी भी खर्च कोई कम नहीं था। अधिक समय और पूंजी लगाना पड़ता था। अतः अब जल मार्ग का भी विकास होने लगा। इंगलैंड में सर्व प्रथम १७५९ ई० में नहर बनाई गई। ड्यूक ऑफ ब्रिजवाटर कोयले की एक खान के मालिक थे। अतः उसी ने ब्रिन्डले

नामक एक इंजीनियर के पथ प्रदर्शन में वोर्सलो से मैनचेस्टर तक नहर बनवा डाली। अब इन जगहों में कोयले ढोने का खर्च बहुत कम हो गया। १८वीं सदी के अन्त होते होते कई नहरों का निर्माण हो गया और लन्दन, ब्रिस्टाल, लिवरपुल आदि जैसे बड़े-बड़े शहर नहरों के द्वारा एक दूसरे से सम्बन्धित हो गये। फोर्थ और क्लाईड नदियों से भी नहरें निकल गयीं।

क्रान्ति के प्रभाव—सामाजिक—आर्थिक लाभ

१. वाणिज्य व्यवसाय की उन्नति—हम लोग कृषि की नई विधियों, व्यवसायों के अद्भुत आविष्कारों तथा आवागमन के उन्नत साधनों को देख चुके। इन महान् परिवर्तनों के कारण इंगलैंड की सारी आकृति ही बदल गई। वह पहले एक कृषि प्रधान देश था किन्तु अब व्यवसायिक देश हो गया। अब कृषि का स्थान उद्योग धन्धों ने ले लिया। अतः औद्योगिक क्रान्ति के कारण इंगलैंड के वाणिज्य-व्यवसाय में अपूर्व उन्नति हुई और वह विश्व का बाजार ही (वर्कशोप) हो गया। हिन्दुस्तान तथा उपनिवेशों से भी वह अपने कल कारखानों के लिये कच्चा माल लेने लगा और इन जगहों में अपना तैयार माल भेजने लगा। इस तरह संसार के अधिकांश भाग के व्यापार तथा समुद्र पर उसने अपना आधिपत्य स्थापित कर रखा।

२. राष्ट्रीयसम्पत्ति की वृद्धि—वाणिज्य-व्यवसाय की उन्नति के साथ राष्ट्रीय सम्पत्ति की भी आश्चर्यजनक वृद्धि हुई। १६ वीं सदी के प्रारम्भ में इंगलैंड तथा स्कौटलैंड की सम्पत्ति का अनुमान दो अरब पौंड तक किया गया था। इस सम्पत्ति में उत्तरोत्तर वृद्धि ही हो रही थी इसी के बदौलत इंगलैंड अमेरिकन क्रान्ति जनित अपनी क्षति को शीघ्र पूरा कर सका। इतना ही नहीं, फ्रांसीसी क्रान्ति के कारण जो भीषण दीर्घ कालीन युद्ध हुआ उसका भी भार इंगलैंड आसानी से सह सका और उसने नेपोलियन को हरा कर सारे यूरोप की रक्षा की।

३. जनसंख्या में वृद्धि तथा केन्द्र परिवर्तन—देश जनसंख्या में भी तीव्र गति से वृद्धि होने लगी थी। १३७० ई० में इंगलैंड तथा वेल्स की जनसंख्या सब २१ लाख के लगभग थी। करीब २०० वर्षों में यह दुगुनी हुई। १७६० ई० में यह संख्या ७० लाख के लगभग थी किन्तु जार्ज तृतीय के राज्यकाल के अन्त तक यह संख्या दुगुनी बढ़ गई।

४. शहरों का विकास—जनसंख्या में वृद्धि होने के साथ केन्द्र भी परिवर्तित हो गया। कृषिप्रधान देश के लोग तो ग्रामों में रहा करते थे। किन्तु अब लोग ग्रामों से हटकर व्यवसायिक केन्द्रों में बसने लगे। इस तरह पहले दक्खिनी पूर्वी भाग की आबादी घनी थी। और नौर्फोक ब्रिस्टल आदि जैसे बड़े-बड़े नगर स्थापित हुए थे।

लेकिन अब उत्तरी पश्चिमी भाग की आबादी बढ़ने लगी। और इसी भाग में मैनचेस्टर लिवरपुल आदि जैसे बड़े-बड़े शहर बस गये।

५. कलकारखाने के युग का प्रादुर्भाव—व्यवसाय प्रधान देश होने का मतलब था कलकारखानों पर अधिक से अधिक निर्भर करना। जहाँ-जहाँ कारखाने खुले थे वहीं आबादी की वृद्धि हो गई और शहर बस गये। इस तरह इंगलैंड में कारखाने (फैक्टरी) का भरमार हो गया।

६. धन के आधार पर समाज विभाजन—कलकारखाने की अधिकता के कारण विस्तृत पैमाने पर मालों का उत्पादन होने लगा। बहुत से अंगरेज लाखपति और करोड़पति बनने लगे। अब धन के आधार पर समाज तीन भागों में बँट गया—पूँजीपति, मध्यमवर्ग और मजदूर।

७. मिश्रित पूँजी वाली कम्पनी की स्थापना—देश में मिश्रित पूँजी वाली कम्पनियों का भरमार हो गया। क्रान्ति के कारण पूँजी की माँग बहुत बढ़ गयी थी। हिस्सों के द्वारा ही अधिक से अधिक पूँजी प्राप्त की जा सकती थी। अतः मिश्रित पूँजी वाली कम्पनियाँ खुलने लगीं।

८. जीवन स्तर की ऊँचाई—अधिक परिमाण में मालों के उत्पादन होने से चीजें सस्ती हो गईं। अतः जैसा हमलोग देख चुके हैं अंगरेजी व्यापार और राष्ट्रीय सम्पत्ति में बड़ी तेजी से वृद्धि होने लगी। इससे पूँजीपतियों को तो असीम लाभ हुआ ही, मध्यम तथा निम्न श्रेणी के लोगों की भी उन्नति हुई। पहले की अपेक्षा सभी लोगों का जीवन स्तर ऊँचा उठ गया। अब सर्वसाधारण को भी सभी सुविधाऐं प्राप्त हो गयीं जिन्हें पहले कुछ थोड़े से भाग्यशाली ही पुरुष पाते थे। भोग विलास के माप दण्ड से ही मध्य तथा वर्तमान युगों को स्पष्ट रूप से बाँटा जा सकता है। मध्य कालीन युग में जो अमीर और धनी समझे जाते थे उन्हें भी भोग विलास के सामानों का सर्वथा अभाव था। बहुत कम घर में दो से अधिक बिछौने पाये जाते थे। 'दो सदी पूर्व हजार में एक भी व्यक्ति मोजा नहीं पहनता था। एक सदी पूर्व ५०० में एक व्यक्ति उसका उपयोग नहीं करता था। किन्तु अब हजार में से एक भी व्यक्ति बिना मोजा का नहीं मिलेगा।[1]

९. मजदूरों को लाभ—(क) पहले को अपेक्षा उन्नत व्यवस्था हो जाने से मजदूरों की संख्या में वृद्धि हो गयो और उनकी शक्ति का विशेष उपयोग होने लगा। उन्हें नियत समय पर कार्य मिलने लगा और उनकी मजदूरी भी बढ़ चली। (ख) मजदूरों का मानसिक विकास होने लगा। काम करने की नयी-नयी विधियों की खोज

---

१ 'इकोनोमिक डेव्हेल्पमेन्ट ऑफ इंगलैण्ड आर-एन-दुबे

होने लगी। वे आपस में मिलने जुलने लगे। सर्वव्यापक समस्याओं को सुलझाने के लिये पारस्परिक विचार विनिमय होने लगा। अतः उनमें संगठन की शक्ति विकसित होने लगी। वे आगे चलकर व्यवसाय संघ जैसी अपनी संस्था कायम करने लगे और अपनी असुविधाओं को दूर करने के लिए संगठित रूप से माँग करने लगे। ये तो सभी लाभ की बातें हुईं, नयी प्रणाली के साथ कितने दोषों का भी आगमन हुआ।

हानि

१. गृह व्यवसाय प्रणाली का अन्त—अब तक गृह व्यवस्था प्रणाली का प्रचार था। लोग अपने घर के अन्दर ही अपने बालबच्चों तथा स्त्रियों के साथ साधारण पैमाने पर माल का उत्पादन कर लिया करते थे। किन्तु कल-कारखाने के हो जाने से विशाल पूँजी तथा बड़े-बड़े घरों की आवश्यकता आ पड़ी। यह नयी स्थिति साधारण व्यक्ति के लिए अनुकूल न रही। इसके सिवा कारखाने के जरिये कम समय में अधिक माल का उत्पादन होने लगा। वे चीजें अधिक सस्ती होती थीं। अतः प्राचीन परिपाटी के लोगों के लिए इनकी प्रतियोगिता करना भी सम्भव न रहा। अतः अब फैक्ट्री प्रणाली के उदय के साथ गृहव्यवसाय का अन्त हो चला।

२. बेकारी की समस्या—गृह व्यवसाय के मारे जाने से कितने लोग बेकार हो गये। कल कारखानों में भी सभी मजदूरों के लिए स्थान मिलना कठिन था। जो काम अधिक समय में हजारों मनुष्य अपने हाथ से करते अब वह कल के जरिए थोड़े व्यक्ति थोड़े समय में करने लगे। इसके सिवा कल कारखानों में तो कुशल मजदूर ही अधिकतर लिए जाते थे और सभी मजदूर तो एक समान कुशल भी नहीं थे। अतः अब हजारों व्यक्ति बेकार होकर मारे-मारे फिरने लगे और खोटे भाग्य पर तरस खाने लगे।

३. चीजों की अच्छाई पर कमी—पूँजीपतियों को अपने मुनाफे की ही विशेष चिन्ता रहती थी। अतः मालों के अधिक उत्पादन में ही उनका स्वार्थ था। इससे मालों की संख्या पर जितना ध्यान दिया जाता था उतना उनकी अच्छाई पर नहीं।

४. मजदूरों की दासता—मजदूरों की दशा में जितना सुधार नहीं हुआ उससे कहीं बहुत अधिक उनकी हालत खराब हो उठी। मजदूरों की स्वतन्त्रता जाती रही। कल कारखानों के मालिक तो बड़े-बड़े पूँजी पति ही होते थे और वे सैकड़ों, हजारों तथा लाखों की संख्या में मजदूरों को काम करने के लिए भर्ती करते थे।

अतः दो प्रकार से उनकी स्वतन्त्रता का अपहरण हो गया। अब वे मिल-मालिकों और कलों दोनों के दास बन गये।

५. मिलों में स्त्रियों तथा बच्चों की बहाली—मजदूरों के दुख की कोई सीमा

नहीं थी। मिल-मालिकों को उनकी भलाई की कुछ चिन्ता नहीं थी। वे तो अपने स्वार्थ के वशीभूत हो अन्धे हो गये थे। हजारों की संख्या में स्त्रियों और बच्चों की नियुक्ति की जाती थी। इन्हें पुरुषों की अपेक्षा मजदूरी कम देनी पड़ती थी और इन पर नियंत्रण रखना आसान था। बच्चे कोमल शरीर के होते थे। अतः उनमें विशेष फुर्ति रहती थी और वे बड़ी तेजी के साथ चिमनियों को साफ किया करते थे। भूख और गरीबी से पीड़ित स्त्रियों और बच्चों के लिये दूसरा कोई चारा भी न था। वे कारखानों में काम करने के लिए विवश थे।

६. काम करने की अनिश्चित अवधि--किन्तु क्या पुरुष, क्या स्त्रियाँ और क्या बच्चे ! इन सबों की मजदूरी बहुत साधारण थी लेकिन काम बहुत कड़ा लिया जाता था काम करने की चरम अवधि निश्चित न थी। ७ से ९ वर्ष तक की उम्र के लड़के लड़कियों से सभी कारखाने तथा खानों में १२ घंटे तक काम लिया जाता था। कभी कभी तो ४ वर्ष तक के बच्चे काम ने लगा दिये जाते थे और १७ और १८ घन्टों तक मजदूरों से काम कराया जाता था। बच्चे दिन-दिन भर किवाड़ खोलते और बन्द करते या जंजीरों को अपने कमर में बाँध कर घुटनों के सहारे कोयले की भारी-भारी गाड़ियों को खींचते थे।

७. अस्वस्थ और संकटपूर्ण स्थिति--मजदूरों के दुखों का अभी यहीं अन्त नहीं होता। उनकी दशा तो बड़ी ही दयनीय थी। उनका रहन-सहन, खान-पान भी बहुत ही बुरा था। कारखाने का स्थान बड़ा ही गन्दा रहता था जहाँ शुद्ध वायु और प्रकाश का अभाव रहता था। भयानक मशीनों से रक्षा के लिये कोई प्रबन्ध नहीं था। खानों के घोर अंधेरे में भी लगातार कई घंटों तक काम करना पड़ता था।

मजदूरों का निवास स्थान भी बहुत ही गन्दा रहता था। उनके कमरे संकीर्ण होते थे जिसमें मर्द, औरत और बच्चे सभी एक ही साथ रहते थे। पारस्परिक दुर्गुणों का विनिमय होने लगा। शराब खोरी तो एक साधारण बात हो गयी थी और चरित्र हीनता में वृद्धि होने लगी थी। इन सब का परिणाम हुआ अंगरेजों का शारीरिक तथा नैतिक पतन तथा भावी सन्तान की शक्ति का ह्रास।

राजनीतिक प्रभाव—(१) प्रजातंत्र का विकास—राजनैतिक क्षेत्र में भी औद्योगिक क्रान्ति का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। जन संख्या में वृद्धि, केन्द्र परिवर्तन और मध्यवर्ग के उत्थान के कारण तत्कालीन राजनैतिक प्रणाली असामयिक हो गयी थी। उसमें सुधार होना आवश्यक था। इसके लिये पर्याप्त बिलम्ब हो रहा था। १८१५ ई० तक तो इस विलम्ब के कारण क्रान्ति और नेपोलियन के समय के युद्ध थे। १८१५ ई० के बाद भी परिस्थिति विषम हो गयी थी। किन्तु १८३२ ई० में राज-

नैतिक सुधार होकर ही रहा। उस सुधार का श्रेय औद्योगिक क्रान्ति को ही प्राप्त है। इसी क्रान्ति के प्रत्यक्ष परिणाम स्वरूप यह सुधार हुआ और यह सन्देह जनक है कि फ्राँसीसी क्रान्ति के अप्रत्यक्ष परिणाम स्वरूप वैधानिक सुधार होता।

(२) पूँजीपतियों का प्रभाव—पूँजीपति लोग राजनीति को प्रभावित करने लगे। निर्वाचन और प्रतिनिधित्व प्रणाली बड़ी ही दोषपूर्ण थी। अतः धन के बल से पूँजीपति मतदाताओं को बहुत प्रभावित करने लगे।

(३) नवीन सिद्धान्तों का विकास—अब व्यक्तिवाद के सिद्धान्त का ह्रास होने लगा और नवीन सिद्धान्त स्थापित होने लगे। पूँजीवाद, समाजवाद, साम्यवाद आदि जैसे सिद्धान्तों का विकास होना शुरू हुआ।

(४) साम्राज्यवाद का विकास—औद्योगिक क्रान्ति के कारण विस्तृत पैमाने पर मालों का उत्पादन होने लगा। अतः उन्हें खपाने के लिए बाजारों की आवश्यकता थी। बाहर से मशीनों के लिये कच्चे मालों की भी आवश्यकता पड़ती थी। अतः साम्राज्यवाद का भी विकास शुरू हुआ।

(५) शासन की सुविधा—मार्गों की सुविधा होने के कारण शासक वर्ग को शासन में भी बहुत सुविधायें मिल गई थीं। रोमन साम्राज्य के शासकों ने शासन व्यवस्था ठीक रखने के लिए साम्राज्य के एक छोर से दूसरे छोर तक सड़कें बनवायी थीं। प्राचीन काल में किसी बड़े देश को बहुत समय तक संगठित रखना असम्भव था। नित्य प्रति बलवे हुआ करते थे, साम्राज्य क्षीण होते रहते थे और धीरे-धीरे समाप्त हो जाते थे। अब मार्गों की सुविधा से खबर मिलने और पहुँचने तथा शान्ति रखने में बहुत सहायता मिल गयी।

(६) नेपोलियन के पतन में सहायक—औद्योगिक क्रान्ति के कारण इंगलैंड के धन दौलत में अपार वृद्धि हुई। अतः वह क्रान्ति तथा नेपोलियनिक युग के युद्धों का भार वहन कर सका और नेपोलियन को हराने में समर्थ हो सका। नेपोलियन साम्राज्य, शोषण और स्वेच्छाचारिता का प्रतीक था। अतः वह यूरोप की स्वतन्त्रता तथा सुरक्षा के लिए संकट था। इंगलैंड ने उस संकट को दूर कर यूरोप की रक्षा की।

अध्याय ३३

अठाहरवीं सदी में इंगलैंड की दशा

(क) आर्थिक दशा—१८ वीं सदी के पूर्वार्द्ध में इंगलैंड में कृषि की प्रधानता थी। लोग खेतीहर थे और भूमि का अधिक महत्व था। समाज में भूमि पतियों का बोलबाला था और सभी लोग शान्तिपूर्ण ग्रामीण जीवन व्यतीत करते थे। लेकिन इस सदी के उत्तरार्द्ध में महान् परिवर्तन हो गया। अब वह कृषि प्रधान देश न रहा, बल्कि वाणिज्य व्यवसाय का एक बहुत बड़ा और प्रसिद्ध केन्द्र बन गया। इसके परिणाम स्वरूप देश मालोमाल हो गया और उसकी आर्थिक उन्नति दिन दूनी रात चौगुनी होने लगी। कितने लोगों के भाग्य का सितारा चमक उठा, सैकड़ों व्यक्ति लाखपति और करोड़पति बन धन दौलत एवं समृद्धि की गोद में खेलने लगे। अब समाज में इन्हीं पूँजीपतियों का सर्वत्र बोल बाला हो गया।

सर्व साधारण की बुरी दशा—किन्तु ऐसा सौभाग्य तो कुछ थोड़े से ही व्यक्तियों को प्राप्त था। नये परिवर्तनों के कारण सर्वसाधारण की दशा बहुत बुरी और दयनीय हो गयी थी। स्वार्थी और लोलुप पूँजीपति उनके साथ बड़ा ही अमानुषिक व्यवहार करते थे। थोड़ी आय, अधिक खर्च और कड़ी मँहगी के कारण बहुत से लोगों को भूखों रहना या मरना पड़ता था। नई व्यवस्था ने कितने लोगों के काम स्थायी कर दिया लेकिन बहुतों की जीवनवृत्ति संदिग्ध हो गयी और बहुत से लोग तो बेकाम हो गये। बेकारी जोरों से फैलने लगी। कई श्रमियों की दृष्टि में इसका एकमात्र कारण मशीनों का आविष्कार था। अतः वे घूम घूम कर मशीनों को ही तोड़ने लगे और आविष्कारकों को तंग करने लगे। लेकिन इन तरीकों से तो बेकारी की समस्या हल नहीं हो सकती थी। इसे सुलझाने के लिए कुछ दूसरे रचनात्मक उपायों की आवश्यकता थी।

दारिद्र-विधान—१६०१ ई० में सर्वप्रथम एक दारिद्र-विधान पास किया गया था इसके द्वारा गरीबों और बेकारों की सहायता करने के लिए प्रत्येक पेरिश को उत्तरदायी बना दिया गया। इसकी देख भाल करने के लिए जस्टिसेज औफ दी पीस

भार सौंप दिया गया। लेकिन १८ वीं सदी में जस्टिसेज अपने कर्त्तव्य पालन पर विशेष ध्यान नहीं देने लगे और पात्र की योग्यता पर बिना विचार किए ही जिस तिस को सहायता मिलने लगी। १७७२ ई० में एक गिल्बर्ट विधान पास हुआ। इसके द्वारा दरिद्रालय केवल वृद्ध और अपाहिजों के लिए ही सीमित कर दिया गया। समर्थ बेकारों के लिये उनके घर के पास ही काम देने के लिए नियम बना। इसके फलस्वरूप बहुत से अनावश्यक कार्य बढ़ गये। इसके सिवा औद्योगिक क्रान्ति के कारण दरिद्रों तथा बेकारों की संख्या में भी वृद्धि हो गयी। १७९५ में ई० में स्पीन-हमलैंड की योजना का प्रचार हुआ। बर्कशायर के मजिस्ट्रेटों ने यह नियम बना दिया कि कारखाने के बाहर गरीब प्रार्थी को उसके परिवार की संख्या और अन्न के भाव के अनुसार ही सहायता देनी चाहिए।

स्पीनहमलैंड की योजना का कुपरिणाम—परन्तु यह नीति सफल न हुई। (क) लोग बिना किसी हिचकिचाहट के सहायता की याचना करने लगे। उनकी गरीबी का कोई सबूत नहीं देखा जाता था। अतः प्रार्थियों की संख्या बढ़ने लगी। (ख) मजदूरों को अपनी आय का कुछ हिस्सा बचाने की चेष्टा न रही। (ग) मज-दूरों को पर्याप्त मजदूरी नहीं मिलने लगी और कई जगहों में तो उनकी मजदूरी पहले से घटा भी दी गयी। (घ) इस नियम से परिवार की संख्या की वृद्धि में प्रोत्साहन मिला। (ङ) इन सब कारणों से सहायता के खर्च की रकम भी बढ़ गयी। कई जगहों में किसान खेत जोतना ही छोड़ने लगे क्योंकि उन्हें लगान ही इतना अधिक देना पड़ता था कि उसके बाद उनके पास कुछ बच नहीं जाता था।

(ख) सामाजिक दशा—खान-पान तथा पहनावे—अर्थ तथा समाज में बड़ा ही घना सम्बन्ध है। किसी देश की सामाजिक स्थिति उसकी आर्थिक स्थिति से बहुत प्रभावित होती है। व्यवसायिक क्रान्ति के कारण धन और गरीबी दोनों ही की वृद्धि हो रही थी।। अधिकांश लोग गरीबों की ही श्रेणी में थे जिनका जीवन-स्तर साधा-रण था। किन्तु धनी लोग और भी अधिक धनी हो रहे थे और इनका जीवन-स्तर बहुत ऊँचा उठ रहा था। धनी मानी लोग अमीरी और भोग-विलास का जीवन व्यतीत करते थे। इनका खान-पान और वेष-भूषा बड़ा ही खर्चीला था। ये बड़े ही शान शौकत से रहते थे और इनका पोशाक भड़कीला तथा आकर्षक होता था। लेकिन अब नकली बालों की टोपियों का प्रयोग बहुत कम हो चला था।

मनोविनोद—मनोविनोद के साधन कुछ विचित्र थे। रीछों के खेल, स्त्रियों की घूसेबाजी, मुर्गों के युद्ध आदि जैसे खेलों का विशेष प्रचार था। जुए का खेल भी प्रचलित था। ऐसे ही कठोर खेल तमाशों में लोग अधिक दिलचस्पी दिखाते थे।

(ग) सांस्कृतिक दशा—शिक्षा और साहित्य—शिक्षा के क्षेत्र में १७ वीं सदी की अपेक्षा कोई चमत्कारपूर्ण उन्नति नहीं हुई, बल्कि इसकी गति मन्द ही रही। अभी सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली का उदय नहीं हुआ था। संस्थाओं पर चर्च का बहुत प्रभाव था और चर्च ही इनकी देख-रेख करता था।

कविता और नाटक—किन्तु साहित्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। कविता की उन्नति हुई और इसमें समालोचना प्रशंसा तथा उपहास का समावेश पाया जाता था। अलेक्ज़ेन्डर पोप (१६८८–१७४४ ई०) इस समय के प्रसिद्ध कवि थे। लेकिन पोप के बाद के कवियों की शैली में कुछ विशेष कृत्रिमता आ गयी। नाटक में लोगों की विशेष अभिरुचि थी। शेक्सपियर के नाटकों का तो खूब प्रचार था ही, दूसरे नाटकारों ने भी कुछ नाटकों को लिखा। ओलिवर गोल्ड स्मिथ, ब्रिन्सले शेरीडन, डेविड गैरिक इस समय के प्रसिद्ध नाटककार थे।

गद्य—गद्य के क्षेत्र में कविता की अपेक्षा विशेष प्रगति हुई। अब एक प्रकार की गद्य शैली का निर्माण होने लगा था। समाचार पत्र, निबन्ध, उपन्यास और इतिहास के जरिये इस गद्य शैली का विकास और प्रदर्शन हो रहा था। समाचार-पत्रों का प्रचार बढ़ रहा था और इनमें तत्कालीन राजनीति पर विशेष प्रकाश दिया जाने लगा था। स्टील, एडिसन, स्वीफ्ट राजनैतिक विषयों के प्रसिद्ध लेखक थे। इस समय इतिहास में लेखकों की अभिरुचि कम थी किन्तु उपन्यास का प्रचार विशेष रूप से हो रहा था। डैविड ह्यूम ने इंगलैंड का एक इतिहास लिखा, लेकिन उपन्यास तो बहुत से लिखे गये। डेनियलडिफो, सैमुएल रिचर्डसन, हेनरी फील्डींग और गोल्डस्मीथ इस युग के प्रसिद्ध उपन्यास लेखक थे। सैमुएल जौन्सन तथा एडमंड बर्क बहु-प्रतिभा वाले व्यक्ति थे और ये दोनों ही गद्य साहित्य के महान् लेखक हुए।

उत्तरार्द्ध में परिवर्तन—१८ वीं सदी के उत्तरार्द्ध में ही साहित्य के क्षेत्र में विशेष परिवर्तन हुआ। अब कृत्रिमता दूर होने लगी, कविता में संगीत तथा भाव पर विशेष जोर दिया जाने लगा। गद्य साहित्य में ग्राम्य जीवन, सामाजिक रीतियों और प्राकृतिक मनोहारी दृश्यों का वर्णन होने लगा।

कला और संगीत—कला और संगीत के क्षेत्र में भी उन्नति हुई, किन्तु विशेष नहीं। शिल्प तो उन्नति दशा में था किन्तु पुनरुत्थान युग कालीन (रिनायसाँस) शैली का ह्रास हो रहा था। गोथिक शैली को भी प्रचलित करने की कोशिश हुई पर पूरी सफलता नहीं प्राप्त हुई। चित्रकारी की ओर भी विशेष ध्यान दिया जाने लगा और काँच तथा धातु की चीजों पर सुन्दर-सुन्दर चित्र बनने लगे। जोशुआ रेनौल्ड्स

ने विलियम होगार्थ के काम को और आगे बढ़ाकर एक राष्ट्रीय शैली स्थापित की। जौन फ्लैक्समैन ने वस्तु कला की नींव डाली।

(घ) धार्मिक दशा धार्मिक पतन—१७ वीं सदी में धर्म की प्रधानता थी अतः वह धार्मिक संघर्ष का युग था। किन्तु १८वीं सदी में धर्म के विरुद्ध प्रतिक्रिया उठ खड़ी हुई और इसके प्रति लोगों की रुचि कम हो गयी। अब नये चर्च का निर्माण या पुराने चर्चों में प्रार्थना करना बहुत कम हो गया। सभी धर्मों के प्रति सहन-शीलता की नीति बरती जाने लगी। अब धार्मिक संघर्ष न रहा। परन्तु देश धार्मिक तथा नैतिक अधःपतन की ओर झुक गया। जार्ज प्रथम के राज्यारोहण के समय फ्रांस के एक प्रसिद्ध दार्शनिक ने भी कहा था कि इंगलैंड में धार्मिक भावना सुषुप्त हो गयी थी।

धार्मिक सुधार की चेष्टाएँ—अतः धर्म तथा नैतिकता की ओर लोगों का विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करने के लिये चेष्टाएँ की जाने लगीं। इस दिशा में जौन वेस्ली, उसका भाई चार्ल्स वेस्ली और जोर्ज ह्विट फील्ड अग्रगण्य थे। इनमें भी जौन वेस्ली का नाम विशेष उल्लेखनीय है। धार्मिक क्षेत्र में वेस्ली का वही स्थान था जो बड़े पिट का राजनैतिक क्षेत्र में।

(क) मेथडिस्ट आन्दोलन—जौन वेस्ली का जन्म १७०३ ई० हुआ था। उसका पिता हाई चर्च का एक पादरी था। वेस्ली ने चार्टर हाउस और ऑक्सफोर्ड में शिक्षा प्राप्त की और उसके बाद किसी चर्च का पादरी बन गया। १७२९ ई० में उसे ऑक्सफोर्ड का फेलो बना दिया गया। इस साल उसने एक समाज स्थापित किया। इस समाज के सभी सदस्य बड़े ही नियम, अध्ययन और अनुशासन का जीवन व्यतीत करते थे। अतः ये सभी मेथडिस्ट कहलाने लगे। ये लोगों के व्यक्तिगत जीवन को उन्नति, नैतिक और धार्मिक बनाना चाहते थे। १७३६ ई० में वेस्ली अमेरिका चला गया और जार्जिया के उपनिवेश में पादरी हुआ। वहाँ उसने धार्मिक प्रचार करना शुरू किया। किन्तु आशातीत सफलता नहीं मिली। २ वर्षों के बाद वह अमेरिका से लौट आया १७३९ ई० में उसने लंदन में एक समाज और ब्रिस्टल में एक मठ स्थापित किया। अब जहाँ-तहाँ सभाएँ होने लगीं जिनमें हजारों व्यक्ति एकत्रित हो मेथडिस्टों के उपदेश सुनते थे।

जौन वेस्ली और जार्ज ह्विग फील्ड बहुत योग्य और सफल उपदेशक थे। १७९१ ई० में वेस्ली का देहान्त हुआ किन्तु उसने अपने जीवन के अन्तिम ५० वर्षों में लगभग ४० हजार उपदेश किया और सवा दो लाख कोस घोड़े पर भ्रमण किया। वह बुढ़ापे की अवस्था में भी एक बार स्कॉटलैंड तक गया था।

ह्विटफील्ड भी वैसा ही प्रभावशाली था। उसने भी ३४ वर्ष तक धर्मोपदेशक का जीवन बिताया और अपार जनसमूह के समय अपना भाषण दिया करता था। इन लोगों के कार्य का क्षेत्र केवल अपने ही देश में नहीं था बल्कि सारा संसार था। ये लोग समाज की बुराइयों और अत्याचारों की कटुआलोचना और घोर विरोध करते थे। इनके उपदेशों का लोगों के दिल-दिमाग पर बड़ा असर पड़ता था।

मेथडिस्टों का प्रभाव—मेथडिस्टों की चेष्टाओं के फलस्वरूप बहुत सी समाजिक बुराइयों का मूलोच्छेद हो गया। अब तक साधारण जनता उपेक्षा की दृष्टि से देखी जाती थी किन्तु अब उनके साथ मानवता का व्यवहार होने लगा। गुलामों और दलितों के प्रति पहले की अपेक्षा सहानुभूति दीख पड़ने लगी। पारस्परिक सेवा की भावना फैलने लगी और कितने लोग तो स्वार्थ हीन सेवा को ही विशेष महत्त्व देने लगे। सबसे बड़ी बात तो यह हुई कि धर्म में लोगों की खोई हुई श्रद्धा पुनर्स्थापित होने लगी। अब लोग इसाई धर्म उपदेशों को ग्रहण करने लगे और इस तरह व्यक्तिगत तथा राष्ट्रीय जीवन-स्तर ऊपर उठने लगा।

परन्तु मेथडिस्टों की प्रकृति कट्टरता पूर्ण थी जौन वेस्ली अपने जीवन के अधिकाँश भाग तक इंगलैंड के चर्च का समर्थक बना रहा था। लेकिन मेथडिस्टों को चर्च की सहानुभूति नहीं प्राप्त हो सकी। अतः वे अंगरेजी चर्च से क्रमशः दूर होते गये और अपना अलग चर्च कायम करने लगे। वेस्ली के मरने के पश्चात् वे अपनी अलग संस्था भी चलाने लगे।

(ख) इवानजेलीकल आन्दोलन—१८ वीं सदी के उत्तरार्द्ध में एक और आन्दोलन ने जोर पकड़ा जो इवानजेलीकल आन्दोलन के नाम से प्रसिद्ध है। इंजिल के नाम पर इस आन्दोलन का यह नाम करण हुआ था। इवानजेलीकलों और प्यूरिटनों में विशेष साम्य था। इवानजेलीकलों का उद्देश्य था लोगों का नैतिक जीवन उन्नत करना। अतः मेथडिस्टों से भी इनकी समता थी किन्तु इवानजेलीकल काल्विन के सिद्धान्तों के अनुयायी थे। अतः ये वेस्ली की अपेक्षा ह्विट फील्ड के ही अधिक निकट थे। परन्तु इवानजेलिकलों ने मेथडिस्टों के जैसा कोई अलग चर्च नहीं स्थापित किया फिर भी उनके उपदेशों से समाज और चर्च बड़े ही प्रभावित हुए। इन्हीं मेथडिस्टों और इवानजेलीकलों के ही आंदोलनों का परिणाम था कि देश में अनेकों महत्त्वपूर्ण सुधार हुए। जेलों में बहुत सी बुराइयों का विनाश और प्राचीन दास प्रथा का अन्त हो गया।

परिशिष्ट १

(क) स्टुअर्ट राजाओं की वंशावली (१६०३-१७१४) ई०

- हेनरी सप्तम (इंगलैंड का प्रथम ट्यूडर राजा)
  - हेनरी अष्टम
  - मार्गरेट (स्कॉटलैंड के राजा जेम्स चतुर्थ से विवाह)
    - जेम्स पंचम
      - मेरी, स्कॉटलैंड की रानी
        - जेम्स प्रथम (स्कॉटलैंड का षष्ठम और इंगलैंड का प्रथम स्टुअर्ट राजा) (१६०३—'२५ ई०)
          - हेनरी (मृत्यु १६१२ ई०)
          - चार्ल्स प्रथम (१६२५—'४९ ई०)
            - चार्ल्स द्वितीय (१६६०—'८५ ई०)
            - मेरी ऑरेंज के द्वितीय विलियम से विवाह
              - विलियम तृतीय (मेरी से विवाह) (१६८९—१७०२ ई०)
            - जेम्स द्वितीय (१६८५—'८८ ई०) दो विवाह
              - (१) एन हाईड
                - मेरी द्वितीय (१६८९—९४ ई०) विलियम तृतीय से विवाह
                - एन (१७०२—'१४ ई०) डेनमार्क के राजकुमार चार्ल्स से विवाह
              - (२) मेरी ऑफ़ मोडेना
                - जेम्स एडवर्ड (ओल्ड प्रिटेंडर) (मृत्यु १७६६ ई०)
                  - चार्ल्स एडवर्ड (यंग प्रिटेंडर) (मृत्यु १७८८ ई०)
          - एलिज़ाबेथ (पैलेटाइन के राजा फ्रेडरिक से विवाह)
            - सोफ़िया (हनोवर के एलेक्टर अर्नेस्ट से विवाह)
              - जार्ज प्रथम (इंगलैंड का प्रथम हनोवर राजा)

(ख) हैनोवर राजाओं की वंशावली

(१७१४–१८१५ ई०)

जार्ज प्रथम
(१७१४—१७२७ ई०)
|
जार्ज द्वितीय
(१७२७—१७६० ई०)

- फ्रेडरिक (मृत्यु १७५१ ई०)
  - जार्ज तृतीय (१७६०–१८२० ई०)
    - जार्ज चतुर्थ (१८२०—१८३० ई०)
    - फ्रेडरिक
    - विलियम चतुर्थ (१८३०—१८३७ ई०)
    - एडवर्ड, केंट का ड्यूक
      - विक्टोरिया (सैक्सको वर्ग के राजकुमार अलवर्ट से विवाह) (१८३७—१९०१ ई०)
        - एडवर्ड सप्तम (१९०१—१९१० ई०)
          - जार्ज पंचम (१९१०—१९३६ ई०)
            - एडवर्ड अष्ठम (स्वेच्छा से गद्दी त्याग) (१९३६—१९३७ ई०)
            - जार्ज षष्ठम (१९३७—...)
- कम्बरलैंड

परिशिष्ट २

१६८९ ई० के वाद के मंत्रिमंडल (१८१५ तक)

१.	ह्विग और टोरियों का संयुक्त मंत्रिमंडल	१६८९'—९६ ई०
२.	जन्टों का प्रथम ह्विग मंत्रिमंडल	१६९६—१७०१ ई०
३.	गोडोल्फिन मार्लबरा के अधीन विभिन्न संयुक्त मंत्रिमंडल	१७०१—१७०८ ई०
४.	गोडोल्फिन और मार्लबरा का ह्विग मंत्रिमंडल	१७०८—' १० ई०
५.	आक्सफोर्ड और बोलिंगब्रुक का टोरी मंत्रिमंडल	१७१०—' १४ ई०
६.	टाउनशेंड का ह्विग मंत्रिमंडल	१७१४—' १७ ई०
७.	स्टैनहोप का ह्विग मंत्रिमंडल	१७१७—' २० ई०
८.	वालपोल का ह्विग मंत्रिमंडल	१७२१—' ४२ ई०
९.	कार्टरेट का ह्विग मंत्रिमंडल	१७४२—' ४४ ई०
१०.	पेल्हम का ह्विग मंत्रिमंडल	१७४४—' ५४ ई०
११.	न्यूकैसल का ह्विग मंत्रिमंडल	१७५४—' ५६ ई०
१२.	डेवन शायर और पिट का ह्विग मंत्रिमंडल	१७५६—' ५७ ई०
१३.	पिट न्यूकैसल का संयुक्त मंत्रिमंडल	१७५७—' ६१ ई०
१४.	ब्यूट का ह्विग और टोरियों का संयुक्त मंत्रिमंडल	१७६१—' ६३ ई०
१५.	ग्रेनविल का ह्विग-प्रधान मंत्रिमंडल	१७६३—' ६५ ई०
१६.	रौकिंघम का ह्विग मंत्रिमंडल	१७६५—' ६६ ई०
१७.	चैथम का सर्वदलीय मंत्रिमंडल	१७६६—' ६८ ई०
१८.	ग्रैफ्टन का सर्वदलीय मंत्रिमन्डल	१७६८—' ७० ई०
१९.	नौर्थ का टोरी मिन्त्रिमन्डल	१७७०—' ८२ ई०
२०.	रौकिंघम का द्वितीय ह्विग मंत्रिमन्डल	१७८२ ई०
२१.	शेलबोर्न का मंत्रिमन्डल (चैथम के समर्थक राज-मित्र)	१७८२—' ८३ ई०
२२.	नौर्थ-फौक्स का ह्विगों-टोरियों का संयुक्त मंत्रिमन्डल	१७८३ ई०
२३.	पिट का प्रथम मंत्रिमंडल, (क्रमशः टोरी में परिवर्त्तित)	१७८३—१८०१ ई०
२४.	एडिंगटन मंत्रिमंडल (टोरी)	१८०१—१८०४ ई०
२५.	पिट का दूसरा टोरी मंत्रिमंडल	१८०४—१८०६ ई०
२६.	ग्रेनविल-फौक्स का ह्विग-टोरियों का मंत्रिमंडल	१८०६—१८०७ ई०
२७.	पोर्टलेंड का टोरी मंत्रिमंडल	१८०७—१८०९ ई०
२८.	पर्सिवल का टोरी मंत्रिमंडल	१८०९—'१२ ई०
२९.	लिवरपूल का टोरी मंत्रिमंडल	१८१२—'२७ ई०

परिशिष्ट ३

प्रसिद्ध घटनाएँ तथा तिथियाँ (१६०३—१८१५ ई०)

हैम्पटन कोर्ट कान्फरेंस	१६०४ ई०
बारूद का षड़यन्त्र (गनपाउडर प्लाट)	१६०५ ई०
रैले की फाँसी और तीसवर्षीय युद्ध का प्रारम्भ	१६१८ ई०
धर्मयात्रियों (पिलग्रिम फादर्स) का अमेरिका के लिये प्रस्थान	१६२० ई०
स्पेन के साथ युद्ध	१६२४ ई०
अधिकारपत्र (पेटीशन ऑफ राइट्स)	१६२८ ई०
राष्ट्रीय प्रतिज्ञा पत्र (सौलेम्न लीग ऐन्ड कोवेनेन्ट)	१६३८ ई०
बड़ी (लौंग) पार्लियामेंट	१६४० ई०
महान् विरोधपत्र (ग्रैंड रीमौन्सट्रैंस)	१६४१ ई०
स्ट्रैफोर्ड की फाँसी	१६४१ ई०
गृहयुद्ध का प्रारम्भ	१६४२ ई०
मार्स्टन मूर का युद्ध	१६४४ ई०
नेज्बी का युद्ध और लॉड की फाँसी	१६४५ ई०
द्वितीय गृहयुद्ध	१६४८ ई०
कर्नल प्राइड की सफाई (प्राइड्स पर्ज)	१६४८ ई०
चार्ल्स की फाँसी और प्रजातंत्र (कॉमनवेल्थ) की स्थापना	१६४६ ई०
जहाजी कानून (नेविगेशन ऐक्ट)	१६५१ ई०
शासन विधान (इन्सट्रूमेंट ऑफ गवर्नमेंट) और क्रौमवेल का संरक्षक बनाना	१६५३ ई०
प्रथम आँग्ल-डच युद्ध	१६५२–५४ ई०
विनीत प्रार्थना एवं परामर्श (हम्बुल पेटीशन एन्ड ऐडवाइस)	१६५७ ई०
क्रौमवेल की मृत्यु	१६५८ ई०
राज्य पुनर्स्थापना (रेस्टोरेशन)	१६६० ई०
लम्बी पार्लियामेंमेंट का अन्त	१६६० ई०

कैवेलियर पार्लियामेंट	१६६१ ई०
द्वितीय ऑग्ल-डच युद्ध	१६६५–६७ ई०
डोवर की गुप्त सन्धि	१६७० ई०
तृतीय ऑग्ल-डच युद्ध	१६७२–७४ ई०
टेस्ट ऐक्ट	१६७३ ई०
कैवेलियर पार्लियामेंट का अन्त; डैन्बी का पतन तथा हेबियस कारपस ऐक्ट	१६७६ ई०
राई हाउस प्लॉट	१६८३ ई०
मन्मथ का विद्रोह, सेजमूर का युद्ध	१६८५ ई०
महान् क्रान्ति	१६८८–८६ ई०
अधिकार विधान (बिल ऑफ राइट्स)	१६८६ ई०
बोयन का युद्ध	१६६० ई०
ग्लैन्को का हत्याकाण्ड	१६६२ ई०
रिज्विक की सन्धि	१६६७ ई०
उत्तराधिकार निर्णयक कानून (ऐक्ट ऑफ सेटूलमेंट)	१७०१ ई०
स्पेन के उत्तराधिकार की लड़ाई	१७०२–१३ ई०
ब्लेनहिम की लड़ाई, जिब्राल्टर पर आधिपत्य	१७०४ ई०
रैमेलिज की लड़ाई	१७०६ ई०
संयोग कानून (ऐक्ट ऑफ यूनियन)	१७०७ ई०
औडेनार्ड की लड़ाई	१७०८ ई०
मालप्लाके की लड़ाई	१७०६ ई०
गोडोल्फिन के ह्विग मंत्रिमंडल का पतन और टोरी मंत्रिमंडल की स्थापना	१७१० ई०
यूट्रेक्ट की संधि	१७१३ ई०
रानी एन की मृत्यु और हनोवर राजवंश का प्रारम्भ	१७१४ ई०
जैकोबाइट विद्रोह और बलवा कानून	१७१५ ई०
दक्षिणी समुद्र का बुलबुला	१७२० ई०
वालपोल का प्रधानमंत्री होना	१७२१ ई०
जार्ज प्रथम की मृत्यु और जार्ज द्वितीय का राज्याभिषेक	१७२७ ई०
जेंन्किन के कान की लड़ाई	१७३६ ई०
आस्ट्रिया के उत्तराधिकार की लड़ाई	१७४०–४८ ई०

वालपोल का पदत्याग	१७४२ ई०
जैकोबाइटों का अन्तिम विद्रोह	१७४५ ई०
डेन्टिन्जन का युद्ध	१७४५ ई०
कोलोडेन मूर का युद्ध	१७४६ ई०
एक्सला शैपूल की सन्धि	१७४८ ई०
सप्तवर्षीय युद्ध	१९५७–६३ ई०
बड़े पिट का मंत्री होना	१७५७ ई०
पोताध्यक्ष बिंग की फाँसी	१७५७ ई०
प्लासी में क्लाइव की विजय	१७५७ ई०
क्वीबेक की जीत	१७५६ ई०
जार्ज द्वितीय की मृत्यु और जार्ज तृतीय का राज्याभिषेक	१७६० ई०
पेरिस की संधि	१७६३ ई०
स्टाम्प ऐक्ट	१७६५ ई०
अमेरिका का स्वतंत्र्य संग्राम	१७७५–८३ ई०
अमेरिकन स्वतंत्रता की घोषणा	१७७६ ई०
साराटोगा में ब्रिटिश आत्मसमर्पण	१७७७ ई०
वर्साई की संधि	१७८३ ई०
पार्लियामेंट में वारेन हेस्टिंग्स पर अभियोग	१७८८ ई०
फ्रांसीसी राज्यक्रांति का श्रीगणेश	१७८६ ई०
छोटे पिट का प्रधानमंत्री होना	१९९३ ई०
नील नदी का युद्ध	१७९८ ई०
आयरलैंड और इंगलैंड का मेल	१८०० ई०
आमीन्स की सन्धि	१८०२ ई०
नेपोलियनिक काल के युद्ध	१८०३–१५ ई०
ट्राफलगर का युद्ध	१८०५ ई०
छोटे पिट की मृत्यु	१८०६ ई०
दास व्यापार का अन्त	१८०७ ई०
प्रायद्वीप का युद्ध	१८०८–१४ ई०
नेपोलियन का फ्रान्स से निर्वासन	१८१४ ई०
वाटरलू का युद्ध	१८१५ ई०

परिशिष्ट ५

कुछ प्रमुख व्यक्ति (१६०३–१८१५ ई०)

१. सर वाल्टर रैले	इतिहासकार, सैनिक, नाविक और राजनीतिज्ञ	१५५२—१६१८ ई०
२. जॉन चैपमैन	नाटककार	१५५६—१६३४ ई०
३. फ्रांसिस बेकन	दाशनिक, राजनीतिज्ञ और निबन्धकार	१५६१—१६२६ ई०
४. विलियम शेक्सपीयर	कवि और नाटककार	१५६४—१६१६ ई०
५. इनिगो जोन्स	शिल्पकार	१५७२—१६५३ ई०
६. बेन जॉन्सन	कवि और नाटककार	१५७४—१६३७ ई०
७. जोन इलियट	राजनीतिज्ञ	१५९०—१६३२ ई०
८. जॉन हैम्पडेन	,,	१५९४—१६४३ ई०
९. जैम्स शर्ले	नाटककार	१५९६—१६६६ ई०
१०. ओलिवर क्रौमवेल	सेनापति और राजनीतिज्ञ	१५९९—१६५८ ई०
११. रौबर्ट ब्लेक	नौ सेनापति	१५९९—१६५७ ई०
१२. जॉन मिल्टन	कवि	१६०८—१६७४ ई०
१३. लार्ड क्लेरेन्डन	इतिहासकार	१६०८—१६७४ ई०
१४. सैमुएल बटलर	व्यंग्य-लेखक	१६१२—१६८० ई०
१५. जेरिमी टेलर	धर्मोपदेशक	१६१३—१६६७ ई०
१६. एन्ड्रो मारवेल	कवि	१६२१—१६७८ ई०
१७. जॉन बनियन	गद्य लेखक	१६२८—१६८८ ई०
१८. जॉन ड्राइडेन	कवि और नाटककार	१६३१—१७०० ई०
१९. सर क्रिस्टोफर रेन	शिल्पकार	१६३१—१७२३ ई०
२०. जॉन लोक	राजनीति-लेखक	१६३२—१७०४ ई०
२१. थोमस शैडवेल	कवि और नाटककार	१६४०—१६९२ ई०
२२. विलियम विचर्ले	नाटककार	१६४०—१७१५ ई०

२३. सर आइजेक न्यूटन	ज्योतिषी	१६४२—१७२७ ई०
२४. नाथे नील ली	नाटककार	१६५०—१६६० ई०
२५. जॉन चर्चिल (मार्ल-बरा का ड्यूक)	सेनापति	१६५०—१७२८ ई०
२६. सर जार्ज रूक	नौ सेनापति	१६५०—१७०६ ई०
२७. सर जार्ज एथेरेज	नाटककार	१६५४—१६६१ ई०
२८. डेनियल डीफो	उपन्यासकार	१६६१—१७३१ ई०
२९. जोनाथन स्विफ़्ट	व्यंग्य-लेखक	१६६७—१७४५ ई०
३०. जोसेफ एडीसन	निबन्धकार	१६७२—१७१९ ई०
३१. सर रिचार्ड स्टील	आयरिश लेखक	१६७२—१७१९ ई०
३२. सर रोबर्ट वालपोल	राजनीतिज्ञ	१६७६—१७४५ ई०
३३. जॉन बर्कले	दार्शनिक	१६८५—१७५३ ई०
३४. अलेक्जेन्डर पोप	कवि	१६८८—१७४४ ई०
३५. सैमुअल रिचर्डसन	साहित्यिक	१६८९—१७६१ ई०
३६. लार्ड ऑनसन	भ्रमणकार	१६९७—१७६२ ई०
३७. विलियम होगर्थ	कलाकार	१६९७—१७६४ ई०
३८. जेम्स थौम्पसन	साहित्यिक	१७००—१७४८ ई०
३९. जॉन वेस्ले	धार्मिक	१७०३—१७९१ ई०
४०. हेनरी फिल्डींग	साहित्यिक	१७०७—१७५४ ई०
४१. लार्ड चैथम (बड़े पिट)	राजनीतिज्ञ	१७०८—१७७८ ई०
४२. डेविड ह्यूम	इतिहासकार	१७११—१७७६ ई०
४३. जेम्स ब्रिन्डले	इंजीनियर	१७१६—१७७२ ई०
४४. लार्ड रुडनी	पोताध्यक्ष	१७१८—१७९२ ई०
४५. सर जोशुआ रेनाल्ड्स	कलाकार	१७२३—१७९८ ई०
४६. जॉन स्मीटन	इंजीनियर	१७२४—१७९८ ई०
४७. लार्ड क्लाइव	राजनीतिज्ञ और सेनाध्यक्ष	१७२५—१७७४ ई०
४८. लार्ड हो	पोताध्यक्ष	१७२५—१७९९ ई०
४९. ओलिवर गोल्डस्मिथ	साहित्यिक	१७२८—१७७४ ई०
५०. कैप्टेन जेम्स कुक	भ्रमणकार	१७२८—१७७९ ई०
५१. एडमंड बर्क	राजनीतिज्ञ	१७२९—१७९४ ई०
५२. जोशिया वेजुड	कुम्भकार	१७३०—१७९५ ई०

५३. विलियम कौपर	कवि	१७३१—१८०० ई०
५४. सर रिचर्ड आर्कराइट	वैज्ञानिक	१७३२—१७९३ ई०
५५. जेम्स हारग्रीव्स	वैज्ञानिक	१७३२—१७८८ ई०
५६. वारेन हेस्टिंगस	राजनीतिज्ञ	१७३३—१८१८ ई०
५७. जेम्स वाट	वैज्ञानिक	१७३६—१८१९ ई०
५८. एडवर्ड गिब्बौन	इतिहास लेखक	१७३७—१७९४ ई०
५९. चार्ल्स जेम्स फौक्स	राजनीतिज्ञ	१७९४—१८०६ ई०
६०. जॉन फ्लैक्समैन	चित्रकार	१७५५—१८२६ ई०
६१. लार्ड नेल्सन	पोताध्यक्ष	१७५८—१८०५ ई०
६२. राबर्ट बर्न्स	कवि	१७५९—१७९६ ई०
६३. विलियम पिट (छोटे पिट)	राजनीतिज्ञ	१७५९—१८०६ ई०
६४. विलियम कॉबेट	राजनीति लेखक	१७६८—१८३५ ई०
६५. वेलिंगटन का ड्यूक	सेनाध्यक्ष और राजनीति	१७६९—१८५२ ई०
६६. विलियम वड्सवर्थ	कवि	१७७०—१८५० ई०
६७. सर वाल्टर स्कोट	उपन्यासकार	१७७१—१८३२ ई०
६८. एस० टी० कौलरिज	कवि	१७७२—१८३४ ई०
६९ डेनियल ओकोनेल	राजनीतिज्ञ	१७७५—१८४७ ई०
७०. हेनरी हैलम	इतिहास लेखक	१७७७—१८५९ ई०
७१. सर हम्फरी डेवी	रसायनज्ञ	१७७८—१८२९ ई०
७२. जार्ज स्टीवेन्सन	इञ्जीनियर	१७८१—१८४८ ई०
७३. लार्ड पामरस्टन	राजनीतिज्ञ	१७८४—१८६५ ई०
७४. लार्ड बाइरन	कवि	१७८८—१८२४ ई०
७५. सर रोबर्ट पील	राजनीतिज्ञ	१७८८—१८५० ई०
७६ पी० बी० शेली	कवि	१७९२—१८२२ ई०
७७. लार्ड जॉन रशेल	राजनीतिज्ञ	१७९२—१८७८ ई०
७८. थोमस कार्लाइल	इतिहास लेखक	१७९५—१८८१ ई०
७९. लार्ड मेकॉले	इतिहास लेखक	१८००—१८५९ ई०

परिशिष्ट ६

IMPORTANT QUESTIONS

(1603—1815)

1. Discuss the various religious parties existing in England in 1603 and trace James I's relations with them.

2. How far did religion influence politics under James I and Charles I ?

3. Analyse the causes of the quarrel between king and parliament between 1603 and 1629 A. D., and indicate the lines of advance of parliament during this period.

4. Point out the main causes of dispute between the Stuarts and the House of Commons before the meeting of the Long Parliament.

5. How did England get back her Parliamentary system in 1640 ? Give a critical estimate of the work of Long Parliament.

6. Why has the Government of Charles I between 1629 and 1640 been described as 'Eleven Years Tyranny' ? What led to its breakdown ?

7. Critically examine the services and the disservices of the Long Parliament.

8. Discuss the measures passed by the Long Parliament and show its responsibility for the civil war in the reign of Charles I.

9. Was the civil war under Charles I inevitable ? Show why Parliament triumphed ?

10. Estimate the main achievements, whether permanent or not, of the Long Parliament.

11. Estimate critically the roles of Strafford and Laud.

12. What led to the execution of Charles I ? How for was it a 'cruel necessity'?

13. Discuss the influence of religion on English politics during the first half of the seventeenth century.

14. What were the problems, domestic and foreign, that confronted James I on his accession ?

15. Examine the foreign policy of the first two Stuart kings and say what you can in favour of it.

16. Review the foreign policy of the early Stuarts and indicate its influence on the internal administration of the country.

17. Both Charles I and Cromwell found it impossible to govern with Parliaments. Why?

18. What were the main causes of the civil war between Charles I and his Parliament?

19. What led to the Long Parliament? Describe its history and sources of its strength.

20. Show that the Long Parliament was as irresponsible as Charles I.

21. Show that an irresponsible Parliament is as bad as an irresponsible king.

22. What part did the Puritans play in English politics? What were the effects of their revolution?

23. " Cromwell was more despotic than Charles I." Do you agree?

24. What were various experiments made on English constitution during the Commonwealth and the Protectorate?

25. "Both Monarchy and Commonwealth owed their downfall to Cromwell." Discuss.

26. " Cromwell was only Charles I writ large." How?

27. What were the chief difficulties that confronted Cromwell as protector and how did he try to solve them?

28. What were the causes of the failure of the Commonwealth?

29. Sketch the career of Cromwell and examine his title to be ranked with the greatest statesman and patriot of England.

30. To what causes do you attribute to Restoration of the monarchy in 1660?

31. Give an account of the political struggles which marked the reign of Charles II.

32. What led to the Restoration of 1660? Indicate its nature and importance.

33. "The Restoration was a forgone conclusion. How?

34. Show that 'it was more a Restoration of the Parliament than of the king'.

35. The Restoration brought Charles II to White Hall, in an instance the whole face of England was changed." How?

36. What was restored by the Restoration? Why the Restoration was universally popular?

37. "Charles II and James II both wanted to rule as absolute monarchs, but the former succeeded and the latter failed. Why?

38. James II came to the throne with every prospect of a successful rule, but he threw away his chances. Indeed he was responsible for his own misfortunes." Elucidate.

39. "Whilst Charles II regined for twenty five years and found himself in a stronger position at the end of his rule than he was at its beginning, James II's regin came to an abrupt conclusion in less then four years." Account for this difference.

40. Why has the revolution of 1688—89 been spoken of as "the glorious revolution"? Discuss its importance in the domestic history of England.

41. What were the main features of the revolution in England?

42. Give an account of the settlement of 1688 and show how far was it glorious?

43. 'The revolution of 1688 was as important an event in Europeon as in *English history.*' Discuss.

44. How far was the glorious revolution of 1688 a 'revolution' and 'glorious'?

45. "It is not at Restoration but at a revolution that the constitutional problem of Stuart period was solved." Do you agree?

46. Discuss the influence of religion on English politics during the second half of the 17th century.

47. Explain the doctrine of 'Divine Right of Kings.' How did it influence the reigns of James I and James II?

48. Give an estimate of the achievements of Oliver Cromwell at home and abroad.

49. Review the foreign policy of England between 1649 and 1688.

50. "England in the period of the Commonwealth had secured a position of great influence in Europe. With the returns of the Stuarts in 1660, she was soon to loose it." Elucidate.

51. Discuss the parliamentary legislation of the reign of William III. How far did it remedy the evils of the latter Stuart despotism?

52. What were the main changes in the constitution affected by the Bill of Rights and the Act of Settlement?

53. "The reign of William III is very important in the history of England." Explain.

54. Indicate the principal features of England's domestic policies during the reign of William III.

55. What important changes took place in the development of English constitution between 1689—1701 ?

56. Give a critical account of England's domestic politics during the reign of Queen Anne.

57. Estimate the importance of Anne's reign to England and Scotland.

58. What acts of the King were held to be abuses of his power in the Petiton of Rights and the Bill of Rights ? How was the personal liberty of the people safeguarded ?

59. In what ways, for what objects and with what results did Great Britain take part in the war of the Spanish succession ?

60. What circumstances led England to take part in the war of the Spanish succession ? Show how the Treaty of Utrecht can be regarded as one of the great land marks in British history?

61. Why are the following places important in the wars of William III and Queen Anne ?

The Boyne, La Hogue, Gibralter, Blenheim and Malplaquet.

62. With what justification has Godolfin's ministry (1702—10) been called 'one of the most glorious in English history' ? What were the causes of its fall ?

63. What is the difference between an impeachment and an act of attainder ? Give short accounts of important cases of impeachment during the Stuart period.

64. Narrate the circumstances that led to the formation of the Whig and Tory parties and writé a short note on their policies in the reigns of William III and Anne.

65. Describe the rivalry between the Whigs and the Tories during the reign of Anne. How did it terminate ?

66. Outline the history of the Whig and Tory parties from 1688 to 1714 showing the chief points on which they differed.

67. Give a careful account of the Anglo Scottish relations during (1603—88) and (1689—1714).

68. Trace the history of Scotland from the Personal Union to the Parliamentary Union (1603—1707).

69. Discuss the Anglo-Irish relations during the Stuart period.

70. Sketch briefly the history of English colonisation in North America during the seventeenth century.

71. Describe the social, ecocomic and cultural conditions of Great Britain under the Stuarts.

72. "England owes inestimable benefit to her two foreign Kings—William of Holland and George I of Hanover."—Expand.

73. "The accession of the Hanovarians marked a point of transition in the history of England"—Discuss.

74. What were the effects of the Hanovarian succession on England?

75. "The Act of settlement had given Britain a foreign sovereign, the presence of a foreign sovereign gave her a Prime Minister." Explain.

76. Account for the long Whig supremacy and indicate its nature and effects. What led to its break down?

77. Form an estimate of the character and achievements of Sir Robert Walpole.

78. Describe the political and constitutional significance of the career of Walpole. What circumstances led to his rise and fall?

79. Give an account of the administration and statesmenship of Sir Robert Walpole.

80. "Walpole's foreign policy opened up easier chances of attack than his prudent domestic administration." Discuss.

81. "Happy is the country whose history is dull." Justify with reference to the history of Walpole.

82. 'Walpole had been a great minister.' Do you agree? Give reasons for your answer.

83. "Twenty one years of Walpole's administration contain no history." Discuss.

84. What attempts were made by the Stuarts after 1688 to restore to the English Throne? Discuss their results.

85. Estimate the importance of Scotland on England in the first half of the Eighteenth century.

86. Give the causes and the effects of the risings of "Fifteen" and "Fortyfive." Why did they fail?

87. With what motives England entered into the Seven Years war? Account for her success in it. What were her gains and losses?

88. Discuss the Anglo-French relation from the treaty of Utrecht (1713) to the treaty of Versailles (1783).

89. What part did England take in the seven years war and with what results? In what respects did it improve the position of England?

90. Describe the character and policy of George III. How far was his policy influenced by his character and to what extent was it successful?

91. "George III was ambitious not only to reign but to govern." Discuss.

92. "Be a king." Did George III succeed in breaking down the limits of constitutional kingship ?

93. By what methods did George III destroy the power of the Whigs ?

94. What methods were adopted by George III to restore royal power and with what results ?

95. Account for the rapid changes in the ministry during the first ten years of George III's reign.

96. What were the causes, ultimate and immidiate, that led to the war of American Independence ? What were its effects on Britain and on her empire ?

97. Account for the failure of Britain in the war of American Independance. What were the losses she suffered and lessons she learnt ?

98. "The Wilk's case and the American riots were two shoots springing from the sapling of Democracy." Explain.

99. Discuss how far American war was inevitable.

100. Give an estimate of the political career, character and statesmanship of Pitt the Elder.

101. What do you know of Pitt the Elder as a war minister ? Briefly examine his strategy in conducting the Seven Years war.

102. "Pitt the Elder was in character and in policy, a great contrast to Walpole." Discuss, illustrating your answer with reference to historical events.

103. "If Walpole made England happy, Pitt the Elder made it great." Amplify.

104. "He was the first Englishman of his time and he made England the first country in the world." Examine this estimate of Pitt the Elder.

105. "The task of John Wesley and the Elder Pitt was to counteract the bad effects of Walpole's ministry." Criticise.

106. Form a critical estimate of the character, policy and achievement of Pitt the Younger.

107. Contrast the Foreign policy of Younger Pitt before and after the outbreak of the French Revolution and account for the change.

108. Sketch the career of Pitt the Younger. Why is he regarded as one of the greatest statesman that England has ever produced ?

109. 'Misguided and reactionary.' Is this a fair criticism of the domestic policy of Pitt the Younger after 1793 ?

110. "Younger Pitt, if not perfect, must be reckoned as one amongst the greatest Prime Ministers of England." Discuss.

111. Compare and contrast Walpole and Younger Pitt as men and statesmen.

112. Compare the achievements of William Pitt, Earl of Chatham with those of his son, Pitt the Younger.

113. Give an estimate of the services of the two Pitts to England.

114. How did French Revolution influence English history?

115. "The French Revolution made Pitt the Younger a Tory." Elucidate.

116. What was the attitude of England in the beginning towards the American revolt and the French Revolution and how did it change subsequently?

117. Describe the parts played by England in the overthrow of Napoleon.

118. What factors contributed to England's success in her wars against France between 1793 and 1815, and which of them, in your view, was the most decisive.

119. "England was the principal architect of Napoleon's ruin." Amplify.

120. "It was national patriotism that crushed Napoleon." Discuss.

121. Give a careful account of the Anglo-French relations during 1789–1815. Describe the resistance of Great Britain to the ambitions of Napoleon between 1803 and 1815.

122. Describe the importance of the Peninsular war in the history of England and indicate the parts played by England in it.

123. Distinguish between the motives that induced England to take part in the Spainish war of succession, war of Austrian succession and the seven years war.

124. "During the first fifteen years of the 19th century, England attained a colonial supremacy wider than ever dreamt by Chatham." How?

125. Explain how England's command of the sea, stood her.

126. What was the continental system? How far can it be said to have achieved its object?

127. Which do you consider to have played the greater part in the defeat of Napoleon, the success of British Navy or the campaigns in the Peninsula?

128. What were the social effects in Great Britain of the Revolutionary and Napoleonic Wars?

129. Trace the Anglo-Irish relations in the 18th century.

130. Describe the events leading up to Act of Union with Ireland in 1800. Were the Irish satisfied with the Union ?

131. What do you understand by the Industrial and Agricultural Revolutions. Discuss its socio-economic and political effects.

132. Write a note on the Economic revolution in England in the 18th century. How were the evils resulting from it sought to be remedied ?

133. Describe the principal features of the Industrial Revolution. Describe the changes brought about it.

134. "The founders of modern England are its inventors and Engineers." Justify.

135. Describe the social, economic and cultural condition of England in 18th century.

136. Write notes on :

'The wisest fool in Christendom,' Gunpowder Plot, Millenary Petition, Hampton Court Conference, 'No Bishop-no king,' Dissenters or non-confirmists, Pilgrim Fathers, New Imposition, Bate's case, Darnell's case, Five knight's case, Shipmoney, Bill of Attainder, Impeachment of Strafford, Root and Branch Bill, Grand Remonstrance, The execution of Charles I, 'Cruel Neccessity' (Cromwell), Navigation Act, Instrument of Government, Humble Petition and Advice, ' I do not want to go on my travels again' (Charles II), Convention, Cabal, Habeas Corpus Act, Exclusion Bill, Clarendon Code, The secret treaty of Dover, Declaration of Indulgence, Impeachment of Danby, Trial of seven Bishops, The Civil List, National Debt, Act of Settlement, Impeachment of Dr. Sacherverel, Treaty of Utrecht, South Sea Bubble, 'Every man has his price' (Walpole), The Peerage Bill, The cabinet system, The Jacobites, The Kings' Friends, The Middlesex Election, 'No Taxation without Representation,' 'I rejoice that Americe has resisted ' (Burk), The Boston Tea Party, Saratoga and its effects, 'With the triumph of Wolf, on the heights of Abraham began the history of the U. S. A.' Importance of victories won by Nelson, Continental System, Armed Neutrality, Battle of the Nile, Battle of Waterloo, Importance of England's sea power in the revolutionary and Napoleonic Wars, Methodism.

परिशिष्ट ७

SOME IMPORTANT QUOTATIONS

For Amplification and Elucidation

(1603—1815)

1. "The great event of the Stuart period is the struggle between king and Parliament." Tout, page 425.

2. "James I's reign saw the first establishment of New England beyond the sea, as well as extension of English influence over the three kingdoms of Britain." Tout, page 423—24.

3. "There were, however, many other causes besides religious differences for the struggle round which centres the chief interest of the 17th century, the struggle between king and Parliament" Warner, Marten and Muir, page 422.

4. "Mutterings of a conflict between crown and Parliament had been heard under Elizabeth (1547—1601) but with James I, the long conflict began openly." Carter and Mears, page 443.

5. "England's foreign policy during the first half of the seventeenth century was both inglorious and ineffective." Warner, Marten and Muir, page 432.

6. "The Commonwealth had done at all events to restore the prestige which England had lost in Europe under the first two Stuarts. Warner and Marten, sec. II Page, 400.

7. "Cromwell's foreign policy won England a position she had not had since the days of Elizabeth." Tout, Page 469.

8. "Cromwell's brilliant success abroad did not console him for his failure at home." Tenen, page 324.

9. "Though it was a failure at home, the Protectorate raised the prestige of England abroad to the highest point, it had ever reached."—Ramsay Muir, British History, page 286.

10 "Though one of the most arbitrary, Cromwell was one of the most efficient of all rulers and considering the narrow basis of his power, he accomplished great things."—Tout, page 468.

11. He (Cromwell) was great as a statesman as he had been as a general."—Tout, page 467.

12. "Cromwell's greatness at home was a mere shadow of his greatness abroad. (Clarendon)"—Warner and Marten, Sec. II, p. 400.

13. "The Restoration of Charles II was not only a Restoration of the Monarchy but a Restoration of the Parliament as well." —Warner and Marten, Sec II, page 411.

14. "The slow and unnoticed growth of English power in distant lands did not compensate for the many failures of the Restoration Government in dealing with the matters that were immediately before it."—Tout, page 481.

15. "James II was destined to lose, in the short space of three years, the throne which his brother had preserved and strengthened for 25 years."—Carter and Mears, page 504.

16. "The beginnings of the British Empire came with the Stuarts and the 17th century, from an imperial as well as domestic point of view is a very important period in English history."—Warner and Marten; Sec. II, page 403.

17. "The era of the Stuarts is not popular with Englishmen in our domestic history. But in imperial history it is memorable for the inauguration of our colonial expansion."—Basil Williams, The British Empire p. 38.

18. "During the Stuart era of barely a century the foundations of the British Empire had been well and truly laid."—Basil Williams, page. 67.

19. "The Revolution of 1688 ushered in a period of prolonged conflict for Great Britain." Warner and Marten, sec. II page 431

20. "One of the most important results of the Revolution was the increased part which England took in foreign politics."—Tout, page 503.

21. "The glorious Revolution had been accomplished without blood-shed and a new era in English history had begun."—Carter and Mears, p. 509.

22. "The struggle between allies so well matched was soon to prove itself one of the most memorable in history." Tout, page 512.

23. "The Treaty of Utrecht marked an epoch both in the history of Europe and of England."—Tout, page 520.

24. "The Treaty of Utrecht is one of the great landmarks in British and European history."—Carter and Mears, page 573.

25. "The settlement of Utrecht constituted an apparent victory for France, it was in fact the first and the greatest triumph of England."—Guedalla. page 99.

26. "From 1714 to 1761, none but Whigs held office." Tout, page 537.

27. "The accession of the house of Hanover meant not only the development of cabinet Government, but for some fifty years the predominance of the Whig party or Whig groups."—Warner and Marten, Sec III, p. 482

28, "It was fortunate for Great Britain that after she had waxed fat under a Walpole, she had a Pitt to inspire her to action." —Warner and Marten, Sec. II, page 490.

29. "Called to rule his covntry in a dark hour of her fortunes, Pitt in a few years, changed the history of Britain and of the world. —Carter and Mears, page 595.

30. "Pitt (the younger), however, if not perfect must be reckoned a great prime minister."—Warner, Marten and Muir, page 674.

परिशिष्ट ८

विस्तृत अध्ययन के लिये ग्रन्थ सूची १६०३–१८१५ ई०

Name of the author	Works.
G. N. Clark	(1) Early Stuarts.
S. R. Gardiner	(2) History of England (1603-42) in 10 Volumes.
"	(3) History of the Great Civil War (1642-49) in 4 Volumes.
"	(4) The Thirty Years War.
Holdesworth	(5) History of the English Law, Vol. V (For Coke).
Figgis	(6) Divine Right of Kings.
C. H. Firth	(7) Oliver Cromwell.
"	(8) Cromwell's Army.
S. R. Gardiner	(9) History of the Commonwealth & Protectorate (1649-'56) in 3 Volumes.
C. H. Firth	(10) Last Years of the Protectorate (1656-'58) in 2 Volumes.
S. R. Gardiner	(11) Cromwell's place in History.
"	(12) The Puritan Revolution.
H. Wakeman	(13) The Church & the Puritans (1570-1660)
F. Montague	(14) Political History of England, Vol. VII, (1603-'60)
A. Bryaint	(15) Charles Second.
D. Ogg	(16) England in the reign of Charles II.
Airy	(17) English Restoration & Louis XIV.
R. Lodge	(18) Political History of England, Vol. VIII (1660-1702).
Morris	(19) Age of Queen Anne.
G. N. Clark	(20) Later Stuarts.
W. H. Hutton	(21) History of the English Church (from Charles I to Anne).

G. M. Trevelyan (22) England under the Stuarts.

Bagwell (23) Ireland under the Stuarts.

W. L. Mathieson (24) Politics & Religion in Scotland.

" (25) Scotland & the Union.

I. S. Leadom (26) Political History of England, Vol. IX (1709-'60).

W. Hunt (27) Political History of England, Vol. X (1760-1801).

John Morley (28) Walpole.

F. Harrison (29) Chatham.

Basil Williams (30) Life of William Pitt.

Lord Rosebury (31) Pitt.

Brodrick & Fotheringham (32) Political History of England, Vol. XI (1801-'37).

A. Toynbee (33) Industrial Revolution.

Egerton (34) The American Revolution (Oxford, 1923).

L. B. Namier (35) England in the age of the American Revolution.

G. Robertson (36) England under the Hanovarions.

I. R. Seeley (37) Growth of British Policy (in 2 Vols).

" (38) Expansion of England.

Egerton (39) British Colonial Policy.

Capt. Mahan (40) Influence of Seapower on History.

Macaulay (41) A History of England.

G. M. Trevelyan (42) History of England (New Edition).

Tenen (43) A History of England.

I. R. Green (44) A History of the English People.

A. B. Mowatt (45) A New History of Great Britain.

भूल सुधार

पुस्तक की छपाई में यत्र-तत्र बहुत अशुद्धियाँ हो गई हैं। पाठक उन्हें यथा-स्थान संशोधन कर लेने की कृपा करेंगे। अगले संस्करण में इन भूलों का सुधार कर दिया जायगा।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्ध शब्द
२	१२	नवीन युग	नार्मन युग
४५	८	१६४३	१६४२
५३	७ नीचे से	लार्ड	लॉर्ड
७१	६	४७	४१
७२	४	स्वीकार किया	स्वीकार नहीं किया
८२	४	१६६० ई०	१६६० ई०
८२	६	ग्रीट	रीट
८६	२	असाधारण	साधारण
१२०	६ नीचे से	लार्ड	लॉर्ड
१४०	३	प्रेसहोल्डर	प्लेस होल्डर
१४७	१०	उत्तर पूरब नीदर लैंड	उत्तर पूरब में नीदरलैंड
१५८	६ नीचे से	व्यापार	व्यवहार
१६१	२	६०१३–१७१४	१६१३–१७१४
१६७	१२	श्री	ही
१६८	१	निर्भय	निर्मम
१६६	७	मेटरलैंड	मेटलैंड
१७१	६	उलेन्को	ग्लेन्को
१७३	१४	क्लेन्हीम	ब्लेनहम
१७६	२ नीचे से	लटा कर	कटाकर
१७८	१३ नीचे से	वेरकन	वेकन
१७६	१७	जेम्स	जोन्स

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्ध शब्द
१८७	४ नीचे से	इस प्रकार के सदस्य	तीन प्रकार के सदस्य
१८६	६	असम्भव	सम्भव
१६२	१	१६६२	१६६४ ई०
,,	३	१८१६	१७१६ ई०
२०३	१३	पीलड	पील
२१२	४	घरबार का	वे घरबार का
,,	५	१७६६ ई०	१७६६ ई० में
२१६	३ नीचे से	१७१४ ई०	१७५४ ई०
२२१	६	१४५४	१७५४
२२४	८ नीचे से	विजय का युद्ध	विजय का युग
,,	२ नीचे से	युद्ध	युग
२४३	११ नीचे से	स्थापित	उपस्थित
,,	४ नीचे से	अधिक वीरध	अधिकार वैध
२४५	५	१७७३-७३ ई०	१७७०-७३ ई०
२४६	१३ नीचे से	१७७५-८१ ई०	१७७५-८३ ई०
२४७	६	ट्रस्न	ट्रन्टन
,,	७	१७१६ ई०	१७७६ ई०
२४८	१३	१६८१ ई०	१७८१ ई०
,,	१५	१७८० ई०	१७८० ई० में
२५०	१	१७८०–८२४७	१७८०–८२ ई०
२५१	१५	दोनों प्रकार लिये	दोनों प्रकार के सुधारों के लिये
,,	१८	अमेरिकन के	अमेरिकन उपनिवेशों के
२५८	१०	भूभागों	भू भागों पर
२६२	१	शिक्षाओं	शिराओं
,,	३	राजसत्ता कर का	राजसत्ता का
२६८	२ नीचे से	१७८१–८०१ ई०	१७८३–१८०१ ई०
२७२	६	वार्साई	वर्साय (वेस्टील)
२७३	७ नीचे से	गृहस्थनीति	गृहनीति
२८०	२	आस्ट्रेलिया	आस्ट्रिया
२८५	२	एगिंठन	एडिंगठन

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध शब्द
२८८	६	गृद्ध	शुद्ध
,,	१५	टिलसिट	टिलसिट
,,	१ नीचे से	१८०१–१८०७ ई०	१८०६–१८०७ ई०
२६०	४ नीचे से	सिम्तरा	सिन्तरा
३००	११ नीचे से	नेपोलियन	नेपोलियनिक
३०४	३ नीचे से	१७८४ ई०	१८५८ ई०
३१४	१६	ब्योवाल्ड	ब्योवाल्ट
३२१	३ नीचे से	१६०१	१६०१ ई०
३३३	१ नीचे से	नोशुआ	जोशुआ
३३५	११ नीचे से	इनानजेलीकल	इवानजेलीकल
,,	१० ,,	,,	,,
३४१	२०	१७६३ ई०	१७८३ ई०

टिप्पणी—पृष्ठ २७३ में एक वाक्य में ही अशुद्धि हो गई है। छप गया है—एक समकालीन के तूफान के समय शब्दों से ही कोई अपना घर मरम्मत नहीं करा सकता। इसका शुद्ध रूप है—एक समकालीन के शब्दों में 'तूफान के समय में कोई अपना घर मरम्मत नहीं कर सकता।'

पृष्ठ २६८ पर नीचे की कुछ लाइनें छपी नहीं हैं। उनको सुधारने की कृपा करें।

पिट का प्रथम मन्त्रित्व १७८३–१८०१ ई०—नीति की दृष्टि से प्रथम मंत्रित्व-काल को दो भागों में बाँटा जा सकता है :—इसी के बाद नीचे लिखा मैटर छुटा हुआ है।

(क) १७८३ से १७६३ ई०। इस समय वह शान्ति तथा सुधार का समर्थक था।

(ख) १७६३ से १८०१ ई०। इस समय में उसकी नीति फ्रांस की क्रान्ति से बहुत प्रभावित हो गई। अब वह सुधार का विरोधी तथा दमन नीति का समर्थक बन गया।